प्रकाशक
ज्ञानमण्डल लिमिटेड
बनारस

प्रथमावृत्ति चैत्र २००५

मूल्य ४) रुपया

मुद्रक
ओंप्रकाश कपूर
ज्ञानमण्डल यन्त्रालय, काशी

पूज्य

बापू

की

अमर

स्मृति

में

मेरा विश्वास है, कि सन् १९४२ का प्रयत्न ही हमारी स्वतन्त्रताका कारण । चिरस्मरणीय ८ अगस्त सन् १९४२ के बम्बईके कांग्रेस अधिवेशनमें गान्धी- लक्ष्य प्राप्त करो अथवा मर मिटो" इस अमर प्रेरणाने ही भारतको करनेमें सफलता प्राप्त की है। बयालीस" का लिखना समाप्त होनेके पश्चात् मैंने, उनकी पाण्डुलिपि पढ़कर कहा था—"इससे ज्ञात होता है कि भारत ४२ के प्रयत्नसे स्वतन्त्र हो गया है जब कि ब्रिटिश सत्ताका ताण्डव नृत्य इस रूपसे जारी है। आपकी पुस्तक जब्त हुए बिना नहीं रहेगी।" उस समय- त छोड़नेकी कोई बातचीत ब्रिटिश सरकारकी ओरसे नहीं चलायी गयी थी। को उत्तर दिया था—"कुछ भी हो, किन्तु मेरा विश्वास है कि अंग्रेज अब कुछ वर्ष इस देशमें रह सकेंगे। दीपक बुझनेके पहले बड़े जोरसे प्रकाशित , इसी प्रकार ब्रिटिश सत्ताका भी यह दीप-निर्वाणकाल है।" यह सुनकर वे और असन्दिग्धताके साथ मुस्कुराये अवश्य, किन्तु कुछ प्रत्युत्तर नहीं दिया। की कृपासे मेरा यह धूमिल विश्वास, ज्वलन्त सत्यरूपमें प्रमाणित हुआ, और देश स्वतन्त्र है।

१०४ए/१८४ रत्नकुटीर
रामबाग, कानपुर
शीर्ष कृष्ण ५ संवत २००५

प्रतापनारायण श्रीवास्तव

भूल-सुधार

इस पुस्तकके तृतीय खण्डमें कई जगह भूलसे 'रहीम'के स्थानपर ''करीम' छप है। पाठक उसे सुधारनेकी कृपा करें।

—प्रकाशक

बयालीस

१

विक्रमादित्य [illegible]
[illegible]
[illegible]—[illegible]
[illegible] आनेको आधुनिक [illegible] था। [illegible] और उसका सिर [illegible]
[illegible]
[illegible] हैं, और अपने [illegible] और [illegible]
[illegible] रहती हैं। मेघोंका जल अविराम [illegible]
पूर्वक उन्मादके साथ क्रीड़ा कर रहा था; तथा [illegible] पंकिल और अगम्य
टेढ़ी-मेढ़ी पगडण्डियोंको यत्रतत्र जन्म दे रहा था। कहीं-कहीं छोटे-छोटे गाँव
[illegible] भाँति अपना सिर सगर्व उन्नत कर दूर तक प्लावित जल राशिको और [illegible]
देख रहे थे, जैसे पूँजीपति-मानव अपने ऊपर मानवोंकी हीनताकी ओर देखकर
मन प्रसन्न होते हैं, और मदमत्त होकर स्वगत कहते हैं कि हमारा स्तर कितना
है, और हम कितने श्रेष्ठ हैं ?

श्रावणकी पूर्णिमा रमईपुरके लिए एक महान दिवस होता है। यों तो वह समग्र
[illegible]के लिए एक महान जातीय दिवस है, किन्तु रमईपुरमें उसका एक विशेष अस्तित्व
टी-छोटी बालिकाएँ बड़ी उत्सुकतासे इस महान दिवसके आगमनकी प्रतीक्षा करती
। जैसे ही सूर्यकी रश्मियाँ उसके आगमनकी सूचना देती हैं—रमईपुर क्रीड़ामय
[illegible] जाग्रत रूप हो जाता है। दुर्दैवसे लड़ता हुआ किसान अपने सिरसे चिन्ताओंकी
तनिक देरके लिए उठाकर नीचे रखता है, और अपने चारों ओर बालक तथा बालि-
का अजस्र हर्ष-श्रोतमें प्लावित होकर क्षीण मुस्कानसे अपने हृदयकी चिर-गम्भीरता-
[illegible] देनेके निष्फल प्रयत्न करता है। ब्राह्मण जातिका चिरलुप्त ब्रह्मणत्व भी उस दिन
उ[illegible]ता है, और वे भी अपने रक्षा-कवचद्वारा अपने यजमानोंको निर्भय बना देनेका
[illegible] करते हैं। नारी जाति उस दिन अपने प्रतिद्वन्दी पुरुषोंको पवित्रता, स्नेह, और
क निरंगे सूत्रसे बांधनेका आयोजन करती है। भाई और बहनके पवित्र स्नेह-
[illegible] होता है—और दोनों सच्चे साथीकी भाँति दुरूह जीवनकी कर्कशताको मधुर
[illegible] बनानेके लिए प्रयत्नशील होनेका मौन निमंत्रण देते हैं।

आकाश मेघाच्छन्न होकर उस दिन प्रातःकालहीसे दिवसको संध्यामें परिणत
[illegible]हा था। वायुके वाहनपर काले-काले मेघ जलकी फुहारें लुटाते हुए बड़े वेगसे भागे
[illegible] थे। रात्रिभरकी अविराम वर्षाके पश्चात् प्रभात-काल कुछ काँपता-सा दृष्टि-
[illegible]र हो रहा था। अग्निकोणकी ओरसे प्रकाशकी एक क्षीण रेखा प्रस्फुटित हो रही थी,
वह भीमकाय बादलोंकी दीर्घताका अनुमान लगानेके लिए क्षुद्रमानवको उत्तेजित

कभी यह कहते कि "बेटी तू नाहक चिन्ता करती है। मेरी समझ कोई बड़ा भारी है, थोड़े दिनों बाद बढ़ेगा ही, अभी उसका शरीर तो पुष्ट हो जाय।" मनोहरकी हो जाती। मनोहरकी माँने जब अपना ऋण चुकानेके लिए भैंसें और गायोंको स्थिर किया उस समय रहीमने किसी भाँति उनको बेचने नहीं दिया। उसका कहना कि मनोहरको दूध पिलाना पड़ेगा चाहे घरमें कुछ रहे या न रहे। इन्होंने मनोहरके मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ाते हुए दस सेर रोजाना कर दी थी। वही दूध सारे अंगोंसे शरीरसे फटा पड़ता था। उसी दूधके बलसे वह अपनेसे दूने और तिगुनेको बातकी में पछाड़ कर चित कर देता था। रहीमको मनोहरपर नाज था, और मनोहरको रहीम- । मनोहरकी उद्दण्डतापर यदि किसीका नियन्त्रण था तो वह रहीमका था।

आज श्रावणकी पूर्णिमाको मनोहरकी कुश्ती होनेवाली थी। उसका प्रतिद्वन्द्वी एक पहलवान था, जो अपने बल व पराक्रमके लिए विख्यात था। उसका नाम था ...। रहीम काका अपनी जवानीमें इमामके पितासे हार गये थे, तभीसे उन्होंने लड़ना छोड़ दिया था। इमामबख्शके पिताका देहान्त हो चुका था, किन्तु उसने को अपना-सा बनानेमें कोई कसर बाकी नहीं रखी थी। इमामने भी खूब नाम कमाया। रहीमकी यह उत्कट कामना थी कि वह अपनी हारका बदला चुकावे, और वह मनोहर- अपने स्वार्थकी पूर्ति करना चाहता था। इसी आशासे वह मनोहरको तैयार कर रहा और आज उसकी चिर-संचित अभिलाषा पूर्ण करनेका सुयोग प्राप्त हुआ था।

इमामबख्शने रहीम काकाके निमन्त्रणको स्वीकार किया था, और वह कुछ के साथ आज उनका अतिथि था। रहीमने इमाम और उसके पिताकी प्रशंसा करते इसको मनोहरसे लड़नेके लिए ललकार दिया। यद्यपि इमाम प्रतिद्वन्द्विताके लोभसे रमईपुरमें नहीं आया था और वह भी रहीमको अपने पिताके तुल्य मानता था, परन्तु ललकारको उसने सहर्ष स्वीकार किया—और मुस्करा कर कहा—"काका तुम पुराने मैलको साफ नहीं कर पाये। मैं तो समझता था कि अब्बाके कूच करनेके तुम्हारा आइना-जैसा दिल साफ हो गया होगा, लेकिन अपनी हारका बदला क्या से चुकाना चाहते हो? मनोहर अच्छा जवान है, लड़ता भी अच्छा है, परन्तु क्या वह मेरी है? रहीम काका, जोड़ तो बराबरका ही अच्छा होता है। लड़नेकी तबीयत होती है, और दांव-पेंच दिखानेका मन होता है। इस दुधमुंहे लड़केसे लड़नेके लिए एक शिष्य ही काफी होगा।"

मनोहर जो सारे इतिहाससे अवगत था, और जो इसी दिनके लिए वर्षोंसे तैयारी रहा था, हँसकर बोला—"इमाम भाई, दुधमुंहे बच्चे एक दिन जवान होते हैं। उनको पेंच सिखाना, लड़ाना बड़े भाईका कर्त्तव्य है। आप बड़े हैं, आपकी बात मैं कभी नहीं। यह वचन दीजिये कि यदि आपके सब शिष्य हार जाय तो फिर आपको लड़ना पड़ेगा।" इमामबख्श हँस पड़ा। मनोहरके भोलेपनपर उसे तरस आया। हँसते हुए कहा—"शाबाश, मनोहर। यदि मेरे सब शागिर्द तुमसे हार जायँगे अवश्य तुमसे लड़ूंगा, हालां कि हमारा और तुम्हारा जोड़ नहीं है।"

इमामबख्शका विश्वास था कि उसके दो शिष्योंमेंसे कोई-न-कोई मनोहरको अवश्य हरा देगा।

रहीमने गम्भीरतापूर्वक कहा—"मैं इसको नहीं मानता। मनोहरको मैंने तुम्हारे मुकाबलेके लिए तैयार किया है......!"

मनोहरने बीचमें बात काटकर कहा—"नही काका, इमाम भाईकी बात मान लीजिये। पहले अर्जुन और अजीमको हराने दीजिये, फिर इमाम भाईसे लोहा लिया जायगा। अब आप कुछ न बोलिये। मैं और इमाम भाई आपसमें तय कर लेंगे।"

अर्जुनसिंह, और अजीमबेग, दोनों इमामबख्शके प्रख्यात शिष्य थे। बहुत वाद-विवादके पश्चात् पहली जोड़ मनोहर और अजीमकी निश्चित हुई। श्रावणकी पूर्णिमाका दिन भी निश्चित हुआ, और साथ-ही-साथ यह भी तय पाया गया कि यदि मनोहर अजीम-को हरा देगा तो दूसरी जोड़ अर्जुनसिंहसे होगी। इमामबख्शने अपनेको हँसके टाल दिया, और केवल कहा—"अगर मनोहर, अजीम और अर्जुन दोनोंको हरा देगा तो रहीम काकाके सामने मैं अपनी हार स्वीकार कर लूंगा।" किन्तु इससे न रहीमको सन्तोष हुआ, और न मनोहरको। दोनों एक दूसरेको कनखियोंसे देखने लगे।

आज श्रावणकी पूर्णिमा थी। मनोहरको बार-बार मेघोंपर क्रोध आ रहा था, वह बार-बार उनकी ओर देखता, और कहता,—"आजहीके लिए तुम भी तैयार बैठे थे। यों तो मनाये मनाये बरसते नहीं, लेकिन आज तुम बरसकर भी नहीं अघाते।" प्रातः-काल जब केवल फुहारें पड़ रही थीं, तब मनोहर अपनेको रोक न सका, और सीधा रहीम-की चौपालकी ओर भागा। जल-मिश्रित शीतल वायु उसके हृदयमें उल्लास और उमंग भर रहा था, और उसको अपना ही जैसा बलवान और साहसी बना रहा था। पूर्व दिशाका आलोक उसे तेजका वरदान देता आ पश्चिमकी ओर अग्रसर हो रहा था।

२

रमईपुरकी चहल-पहल उस दिन देखने योग्य थी। कई गांवोंके लोग वहां इकट्ठे होते थे, और दंगल देखनेके लिए लोग बहुत दूर-दूरसे आया करते थे। यद्यपि रात्रि कालकी अनवरत वर्षाने सहज-सुगम्य पथोंको दुर्गम्य बना दिया था किन्तु दर्शकोंकी भीड़ उन सब-पर विजय प्राप्त करती हुई चली आ रही थी। दर्शकोंमें किसान ही अधिक थे, और प्रायः सभी कसरती जवान थे, या मल्ल-युद्धके प्रेमी। अभीतक देहातोंका जीवन इतना नष्ट नहीं हुआ जितना कि शहरोंका हो चुका है। प्रकृतिके साथ-साथ चलनेवाले व्यक्तियों-का शरीर जितना हृष्ट-पुष्ट हो सकता है, उतना ही उनका था। लाठी, कुश्ती, और मल्ल-युद्धकी सर्वत्र चर्चा हो रही थी। लठबन्द जवानोंकी कमी नहीं थी। बातकी बातमें झगड़ा मोल लेनेके लिए तयार थे। यौवनकी सब शक्तियां उनमें मौजूद थीं, किन्तु केवल संचालन और नेतृत्वका अभाव था। जिससे वे बिखरी हुई निस्तेज-सी प्रतीत होती थीं।

वर्षा बन्द हो चुकी थी, और सूर्यकी प्रखर किरणें जल पीनेमें संलग्न थीं। गांवके बाहर नया अखाड़ा खोदा गया था, और उसके चारो ओर मनुष्योंकी भीड़ थी। एक अस्फुट कोलाहलसे मल्ल-प्रांगण ध्वनित हो रहा था। इमाम बख्शको देखनेके लिए सभी

इसके उत्तरमें पहले नवयुवकने कहा—"रामकृष्ण, तुमने खद्दर क्या पहन लिया, मानो यह कोई राज-मुकुट है। तुम्हारे ही जैसे जयचन्दोंने तो हिन्दुओंको, और उनकी संस्कृतिका नाश करवाया है। भला बताओ, कौन मुसलमान हिन्दूको अपने घरमें घुसने देता है?"

रामकृष्णने उत्तेजित होकर कहा—"अच्छा तुम्हीं बताओ, कौन हिन्दू मुसलमानके घरमें घुसकर उसकी सेवा सुश्रुषा करनेको तैयार है?" पहला युवक—जिसका नाम था काशीनाथ—उसने तिनककर कहा—"सैकड़ों हिन्दू तैयार हैं, मगर खुद मुसलमान उनको न आने देंगे। पहले तो घरकी दीवारके बाद ही परदेकी दीवार है, जिसका उल्लंघन करना दुरूह ही नहीं असम्भव है। हमारे घरकी बहू-बेटियां उनके सामने निकलती हैं, लेकिन किस मुसलमानकी बहू-बेटी हमारे सामने निकलने पाती है? जब निकलेगी तब परदेके अन्दर। अरे, रेलमें तो परदाके लिए झगड़ा करते ही हैं, और क्या कहा जाय।"

रामकृष्णने बड़े ही नम्र स्वरमें कहा—"यह बिल्कुल ठीक है कि मुसलमान औरतें परदा प्रथाको अधिक मानती हैं, किन्तु हिन्दू भी उसी प्रथाके कायल हैं। इसके अतिरिक्त हमको आवश्यक है कि एक दूसरेकी संस्कृतिकी हम रक्षा करें, मान करें, और उसको अपना ही जैसा मानें। दो सभ्यताएँ कभी एक नहीं हो सकतीं, किन्तु दोनों सभ्यताओंको साथ-साथ ले चलनेमें कोई कठिनाई पैदा न होगी; यदि केवल हम एक बातका ध्यान रक्खें कि दूसरी सभ्यता हमारे लिए उतनी ही पवित्र और माननीय है जितनी कि हमारी सभ्यता हमारे लिए माननीय है। एक दूसरेकी इज्जत करना ही हमारे जीवनका लक्षण है, और जहां विरोधाभास उत्पन्न होना आरम्भ आ वहां विनाश है, और उसके साथ प्रलय है।"

काशीनाथकी उत्तेजना बढ़ रही थी, किन्तु दर्शकोंमेंसे कोई भी अब उसकी बात सुननेके लिए तैयार नहीं था। रहीम अखाड़ेके अन्दर उतर चुके थे। उनके पीछे-पीछे मनोहर आ रहा था। मनोहरका चेहरा तेज और आशासे प्रदीप्त था। उधर इमामबख्श अपने शिष्योंके साथ अखाड़ेम उतरा। सब लोगोंने हर्ष-ध्वनिसे उनका स्वागत किया। मल्ल-प्रांगणकी ओर सभीके नेत्र उत्सुकतासे फिर गये। थोड़ी देरके लिए काशीनाथ और रामकृष्ण दोनोंकी वक्तृताओंको लोग भूल गये, और कुश्ती देखनेके लिए आतुर हो गये।

रहीमने अखाड़ेकी मृत्तिकाको मस्तक और कानपर मलते हुए कहा—"भाइयो, सलोनो या रखियाही या सावनी पूनम हमारे गांवमें एक बड़ा पवित्र दिन है। हमारी बहनें हमें राखी-डोरा बांधती हैं, और हमारे पुरोहित हमारी रक्षाके लिए हमारे हाथमें रक्षा-कवच बांधते हैं। इससे बढ़कर पवित्र और पुण्य त्योहार हमारे देशमें नहीं है। हमारे गांवमें हिन्दू-मुसलमानमें कोई भेद नहीं है। हम एक दूसरेकी शादी-गमीमें कन्धेसे कन्धा मिलाकर साथ देते हैं। आज हमारे लिए भी यह दिन त्योहारका है। इसी अवसरपर हम पहलवान भी अपनी परीक्षा जनताके सामने हमेशासे देते चले आये हैं। आज भी वैसी ही परीक्षा देनेके लिए तुम्हारे गांवका नेहार युवक मनोहर तुम्हारे सामने आवेगा। उसके प्रतिद्वन्दी हमारे भाई कल्लूके लड़के इमामबख्श और उसके दो शागिर्द अर्जुन और अजीम हैं। पहली जोड़ मनोहर और अजीमकी बदी है, नमेंसे जो जीतेगा वह अर्जुनसे लड़ेगा। मुझे

पूरा यकीन है कि मनोहर अपनी परीक्षामें उत्तीर्ण होगा। आपलोग देखिये, और
हो वैसा निर्णय कीजिये।" रहीमने मनोहर और अजीमकी ओर देखा। दोनों एक
के सामने पैंतरा बदलकर आ गये। दोनोंने हाथ मिलाये, और रहीमने दोनोंके हाथ
कर कहा—"पट्ठो, यह याद रखो, कि तुम एक दूसरेकी शक्ति और चातुर्यको
मानेके लिए अखाड़ेमें उतरे हो। तुम दोनों एक हो, और किसी प्रकारका मैल तुम्हें
समें न रखना चाहिये।" यह कहकर वे हट गये, और दोनों पहलवान एक दूसरेसे
गये। दांव चलने लगे, कोई भी दूसरेकी बातमें आनेके लिए तैयार न था। हाथ छुड़ाते,
लड़ाते, और सांड़ोंकी तरह एक दूसरेके सिरसे सिर भिड़ाते थे। विस्मित और विमुग्ध
ता अवाक् होकर उन दोनोंको देख रही थी। कोई कहता 'मनोहर गया', कोई कहता
ीम गया', कोई कहता 'पंजाबी तगड़ा है, उसके सामने मनोहर बच्चासा देख पड़ता
भला मनोहर कितनी देर ठहरेगा। आज ही तो मनोहरको मालूम हुआ है कि कोई
से भी तगड़ा मिला है। ऊंट जब पहाड़के नीचे जाता है, तभी उसको अपनेसे बड़ा कोई
ाथी पड़ता है।"

जनता इसी प्रकारकी आलोचनामें तल्लीन थी, कि सहसा बिजली-सी चमकी और
हरने अपना हाथ व सिर एक झटकेसे छुड़ाया और दूसरे ही क्षण अजीमको
ऊपर उठाकर फेंक दिया। अजीमको सँभलनेका मौका भी न मिला और वह प्रांगणमें
ा गिरा। मनोहरने उसकी छातीपर ठेहुना रख दिया, और दूसरे ही क्षण उठकर कहा—
ई अजीम उठो।"

रहीमके उल्लासका कोई ओर-छोर नहीं था। उन्होंने दौड़कर मनोहरको उठा
ा, और छातीसे लगाते हुए कहा—"शावाश, बेटा मनोहर, शावाश।"

फिर अजीमको उठाकर छातीसे लगाते हुए कहा—"वाह बेटा अजीम, खूब
। हार-जीत तो होती ही है, इसका ख्याल न करना चाहिये।"

अजीम हँस रहा था, किन्तु इमामबख्शकी आँखें क्रोध उगल रही थीं। उसने
ुनकी ओर देखा। अर्जुन उसका तात्पर्य समझ गया, और अखाड़ेमें उतरते हुए कहा—
नोहर, आओ अभी मैं बाकी हूँ।"

जन-रव जो उत्तरोत्तर बढ़ रहा था, किंचित् कालके लिए ठहर गया। दर्शकोंमें-
एकने कहा—"अरे मनोहर, इसको भी लेना, जाने न पावे। वाह, क्या दांव मारा है!
सब देखते ही रहे, और यह भी न देख पाये कि कब क्या हुआ। पहले क्षण तो दोनों
दूसरेसे भिड़े हुए थे, और दूसरे ही क्षण अजीम मियां धूल चाटते देखे गये। वाह!
सफाईसे दांव मारा है।"

अर्जुनने विशेष सतर्कतासे मनोहरसे मल्ल-युद्ध आरम्भ किया। मनोहर भी
र्क था। दोनों अपने-अपने दांव चलाते और बचाते हुए आगे पीछे घूम रहे
। एक दूसरेसे कोई भिड़ता न था। चारों ओर हर्ष-ध्वनि हो रही थी। कोई
त पीसता, कोई सिर हिलाता, कोई हाथके तोड़-मरोड़से अपने हृदयका भाव
शित करता, और कोई नेत्रोंसे ही अपने-अपने परिचित दांवोंको बता रहा
। इतनेमें अर्जुनने दौड़कर मनोहरको पकड़ लिया। लोगोंने चिल्लाकर कहा—

"अब मनोहर गया, उसकी हड्डी-पसली एक न बचेगी। किन्तु फिर एक आश्चर्य घटना-सी हुई। मनोहर अर्जुनकी टांगोंके अन्दर घुस गया, और जबतक अर्जुन सँभले सँभले, वह भी अखाड़ेकी भूमिपर चित गिर पड़ा। मनोहरने फिर अर्जुनकी छातीपर घुटना रक्खा, किन्तु इसी समय अर्जुन घूम गया। तुमुल कोलाहलसे दिशाएँ कांपने लगीं। कुछ लोग कहने लगे "यह ठीक नहीं, अर्जुन हार गया; कोई कहने लगा—"नहीं, अर्जुन चित नहीं गिरा, हाथके बल टेढ़ा गिरा है, अभी कुश्ती खत्म नहीं हुई है। रहीमने अखाड़ेमें कूदते हुए कहा—"बस मनोहर छोड़ दो। तुम जीत गये।"

इमामबख्शकी आँखोंसे अग्नि बरस रही थी। उसने मनोहरको रहीमसे अलग करते हुए कहा—"रहीम काकाकी बात ठीक है। अर्जुन हार गया है। शाबाश! अब आओ ज़रा मेरे साथ ज़ोर आजमाओ!"

रहीमने अर्जुनको अलग करते हुए कहा—"आओ बहादुर हमलोग अखाड़ेसे बाहर चलें।" फिर मनोहरसे कहा—"देखो मनोहर, होशियारीसे लड़ना। तुमको आज गरु-ऋण चुकाना है।"

इमामने सव्यंग्य कहा—"काका, तुम अब्बासे हारे थे, और मनोहर मुझसे हारेगा। अब कोई दूसरा पट्ठा तयार करना, वह चाहे भले ही तुम्हारा बदला चुका सके।

रहीम केवल सन्तोषके साथ हँसने लगे।

इधर मनोहर और इमामबख्श अपनी-अपनी घातमें लगे हुए थे। दर्शकोंके भी नेत्र उसी ओर थ। इमामके समक्ष मनोहर एक बालक-सा प्रतीत होता था। किसीको भी यह विश्वास न होता था कि मनोहर इमामको हरा देगा। मनोहरकी जान बचेगी, इसीमें बहुतोंको सन्देह था। मनोहरके चेहरेपर उल्लास और आशाका प्रकाश था, और इमाम क्रोधसे तड़प रहा था। उसके भाव भंगीसे यह स्पष्ट विदित होता था कि यदि मनोहर उसकी पकड़में आ गया तो उसके हाथ-पैर जरूर टूट जायँगे। मनोहर भी सतर्क था। उसकी शक्ति-का अभीतक बिल्कुल ह्रास नहीं हुआ था। रहीमने उसको घंटों लड़ा-लड़ा उसका दम बढ़ा रखा था। दर्शक इस समय स्तब्ध थे। एक शब्द भी कहीं सुनायी नहीं पड़ता था। अजीम और अर्जुन दोनों मनोहरको देखकर दांत पीस रहे थे। एक छोकरेने उन्हें बातकी बातमें हरा दिया। उन्हें यह आश्चर्य मालूम होता था कि दोनोंमेंसे कोई भी मनोहरका शरीर छू भी न पाया था। वही हाल इमामबख्शका था। इमाम यह चाहता था कि यदि एक बार भी मनोहर पकड़में आ जाय तो फिर उसको नीचे डालकर खूब रगड़े तथा शरीरके भारसे उसकी कोई पसली तोड़ दे; किन्तु मनोहरकी क्षिप्रता इस समय देखने योग्य थी। इमाम-के सारे दांव वह खाली कर देता था, और इमामका क्रोध उत्तरोत्तर बढ़ता जाता था। मल्ल-युद्धमें भी बुद्धिको विकार-रहित रखना उतना ही आवश्यक है जितना कि किसी अन्य युद्धमें। बुद्धिका समत्व नष्ट हो जानेसे उसकी आधी शक्ति क्षीण हो जाती है। मनोहर यही देख रहा था। ज्यों-ज्यों इमामके दांव खाली जाते, वह दांत पीसता हुआ दुबारा झपटता, और मनोहर फिर निकल जाता। सांप और नेवलाका-सा युद्ध था। इमाम-ने दौड़कर मनोहरको पकड़ा। वह बचा, किन्तु इमामकी टेंगड़ी लगी, और मनोहर भरभरा-कर गिर पड़ा। बातकी बातमें इमामने उसे धर दबाया। एक अस्फुट रव प्रांगणमें गूंज

और 'मनोहर गया,' 'मनोहर गया' की [illegible] ध्वनि चारों ओर गिरने लगी। अर्जुन
[illegible]सीमने चिल्लाकर कहा—"वाह उस्ताद, अब पकड़में आ गया। [illegible]
[illegible] छोड़ दीजिये। कुश्तीका [illegible] हो जायगा, और [illegible]
[illegible] नरकेंगे।" इमाम भी नसीर मनोहरकी पीठपर सवार होकर पकड़नेमें [illegible]
दर्शकोंको विश्वास हो गया कि मनोहर अब हार जायगा। वे चिल्लाने लगे।
[illegible]ने सबके रहीम और दर्शकोंकी ओर देखा। इधर उसका ध्यान बँटा, और मनो-
अवसर मिला। उसने विद्युत् गतिसे करवट बदली और दूसरी ओर [illegible] होकर
[illegible] दिया कि इमाम अखाड़ेमें बिल्कुल चित गिर पड़ा, और मनोहर उसकी छाती-
पर हो गया। कुछ कोलाहलसे दिग्-दिगन्त काँपने लगे। रहीमने दौड़कर मनोहर-
[illegible] लिया, और विक्षिप्तकी भांति अखाड़ेके चारों ओर फिरने लगा। उधर अर्जुन
अजीमने इमामको सँभाला। लज्जाके मारे उसका बुरा हाल था। रहीम काकाका
[illegible] बन्द नहीं होता था। आज उनके हृदयकी अग्नि शान्त हुई, जो वर्षोंसे अनवरत
[illegible]ही थी। आज उनका परिश्रम सफल हुआ, और तपस्या फलीभूत हुई। रहीमको चारों-
[illegible] बधाई मिलने लगी। मनोहरसे मिलनेके लिए दर्शक आकुल हो उठे। यद्यपि वह
[illegible] चिर परिचित था, किन्तु आज वह विजयी था। उसने तीन तीन पहलवानोंको पछाड़ा
सर्वत्र हर्ष-ध्वनिसे रामपुर मुखरित हो गया। मनोहरको खिलौनेकी भांति सब
[illegible]ने लगे।

३

दंगलसे सबसे प्रथम लौटनेवाली रहीमकी एकमात्र सन्तान नसीम थी, और
[illegible] सगी तथा सहोदरासे भी अधिक प्रिय, मनोहरकी बहन गुलाब। नसीम और गुलाब-
[illegible]हार्द रहीमको अत्यन्त प्रिय था। दोनोंकी वयस एक थी, रूप और शारीरिक दृढ़ता
पुष्टता भी एकहीसी थी। मनोहरकी भांति रहीम इन दोनोंको शारीरिक व्यायाम
कुश्तीके दांव-पेंच, लकड़ी व तलवार चलाना सभी सिखाते थे, और परीक्षा
[illegible]ते थे। नसीम और गुलाबकी जोड़ी देखने योग्य थी। प्रकृतिका साहचर्य, नित्य-
व्यायाम, और पौष्टिक भोजनने उनके सहज सौन्दर्यमें चार चांद लगा दिये
उनकी रूप-प्रभा चारों ओर बिखरी पड़ती थी, किन्तु उनके बलिष्ठ शरीर, और सुगठित
[illegible]व भी यह सूचित कर रहे थे कि वे आत्म-रक्षामें सर्वथा समर्थ हैं। गांवके उच्छृंखल
[illegible] उनसे सदा भयभीत रहते थे। इसके अतिरिक्त उनका अधिकांश समय एक साथ ही
[illegible]त होता था, तथा जब कभी वे बाहर या कहीं जातीं तो साथ ही-साथ जातीं। नसीमकी
[illegible]सौवन, और गुलाब तथा मनोहरकी मां गंगामें भी अपूर्व सौहार्द था।

गुलाबने दंगलसे वापस आते हुए रास्तेमें नसीमसे कहा—"आज भैय्याने बड़े-
दांव-पेंच दिखाये। रहीम काकाको आज कितनी प्रसन्नता हुई है!"

नसीमने उत्तर दिया—"अरे उन्होंने बरसोंका वैर निकाला है। इमाम और
[illegible] शागिर्दोंको मनोहर भैय्याने बातकी बातमें चुटकी बजाते धूल चटा दी; वाकई बड़ा

आश्चर्य मालूम होता है। अच्छा तुम बताओ, आज मनोहर भैयाको क्या पुरस्कार देना चाहिये ?"

गुलाबने हँसते हुए कहा—"भैय्याको हम क्या पुरस्कार दे सकती हैं ? हमारे पास क्या है पगली।"

नसीमने गुलाबके सहजारुण कपोलोंपर चपत लगाते हुए कहा—"वाह, यह खूब कहा। बहनके पास भाईको देनेके लिए क्या कुछ भी नही है ?"

गुलाबने चकित नेत्रोंसे उसकी ओर देखते हुए कहा—"मेरे पास तो कुछ भी नहीं है, मैं क्या दूँ ?"

नसीमने अपनी जेबसे राखी निकालते हुए कहा—"देखो, यह तीन कच्चे धागे हैं, एक सफेद है, एक लाल है, और एक पीला है। सफेद हमारे हृदयोंकी पवित्रताकी निशानी है, लाल हमारे अमिट स्नेहका चिह्न है,और पीत हमारी अमर क्षमा तथा करुणाकी आभा है। गुलाबी, यह तीन वस्तुएँ मैं आज मनोहर भैयाको दूंगी। तू भला क्यों देंगी,तेरेको जरूरत ही क्या है। मनोहर भैयापर तेरा तो जन्मसे अधिकार है, किन्तु मेरा तो नहीं है। मैं तो दूसरी जातिकी हूँ, दूसरे धर्मकी हूँ, मुझे तो आज मनोहर भैयाको अपना सगे भाईसे अधिक बनाना है। गुलाबी, आज मै तेरे भाईमें अपना भी हिस्सा रक्खूंगी।

कहते-कहते नसीमकी आंखें कुछ डबडबा आयीं। सगे भाईके अभावने उसके हृदयमें सबसे बड़े दुखको झंकरित कर दिया। यद्यपि नसीम आंखोंसे रो रही थी, किन्तु मुखसे हँस रही थी।

नसीमको अश्रुसिक्त देखकर गुलाब कुछ आवाक्-सी रह गयी थी, परन्तु जब वह हँसी तो उसने कहा—"नसीमा, तू यह क्या कहती है, मनोहर भैय्याको तो अम्माने उसी दिन रहीम काकाको दे दिया, जिस दिन बापू मरे थे। अम्मा कहती थी कि जब बापू मरे थे तब कोई पास भी न आया था। प्लेग, बड़ी छूतकी बीमारी होती है। उससे सबलोग दूर हटना चाहते हैं। उस समय रहीम काका ही तो गांववालोंको जाकर लाये थे, और बापूकी तब अन्त्येष्टि क्रिया हुई थी। सारा खर्च तो रहीम काकानेही दिया था। तुम्हारी अम्मा अगर मेरे घरमें तीन दिन न रही होतीं तो हमारा किसीका भी पता न चलता। अरे नसीमा, हम तो सबके सब तुम्हारे हाथ बिके हुए हैं। नसीमने पुनः एक चपत लगाते हुए कहा—"देखो मुसीबतका समय दूसरा होता है। मुसीबतमें खड़ा होना, कोई अहसान नहीं है; और उसके बलपर कुछ अधिकार जमाना या अधिकार मांगना, सदैव अनुचित और हीन है, मानवताके बिल्कुल खिलाफ है। एक दूसरेके प्रति सहायता करना ही मानवधर्म है, और कुरआनमें खुदाका यही आदेश है। जो मनुष्य दूसरे मनुष्यकी सहायता नहीं करेगा, उसको मुसीबतमें देखकर हँसेगा, या डूबते हुएको नहीं बचायेगा, या भूखेको खाना नहीं देगा, उसका बहिश्तमें गुजर नहीं होगा, क्योंकि खुदाका हुक्म है कि मेरे सारे बन्दे एक हैं, और मेरा उनपर एक-सा प्यार है, और एक-सी परवरिश है।"

गुलाबने हँसकर कहा—"अरे तुम तो इस तरह मौलवी साहबकी भांति बातें करती हो, जैसे तुम कोई आयत पढ़कर उसका अर्थ बतला रही हो।"

नसीमने गम्भीरतापूर्वक कहा—"एक बात, कुरआनकी सैकड़ों आयतोंमें नुदागत
ा साफ-साफ लिखा गया है। क्या तुम्हारे धर्ममें ऐसी शिक्षा नहीं है?"
ाबने मुस्कराते हुए कहा—"वाह है क्यों नहीं। गुसाईं जी कहते हैं "जे न मित्र
ाहिं दुखारी—तिन्हहिं बिलोकत पातक भारी।"
नसीमने जोशके साथ कहा—"यही बात है, केवल शब्दोंका हेर-फेर है। सत्य
,धर्म सब एक है, शिक्षा सब एक है, मनुष्य सब एक है, केवल जलवायुके अन्तर, और
सकी विभाजनताके कारण, मनुष्योंके रूप-रंग, रहन-सहन, और शिक्षा तथा ज्ञानके
में भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। यह बात भी साथ ही याद रखो, कि यह विभिन्नता
बाहरी आवरणपर है, किन्तु अन्तस्तलमें—इस बाहरी पर्देके भीतर अन्तर्निगत
ा है—सबमें एक ही मानवता है। गुलाबो, जरा सोचो तो, यह छुआ-छूत, छोटा-
ड़ाल और हराम सब सामाजिक नियम हैं, जो एक समाज-विशेषमें, उसकी विशेष
यतिके कारण उत्पन्न हुए हैं और जब वे परिस्थितियां मिट जायँगी तो वे सामाजिक
,उपनियम शिथिल होकर छिन्न-भिन्न हो जायँगे। दरअस्ल इन सबका कारण मानव-
की संकीर्णता है, और इसका जन्म इसलिए होता है, क्योंकि मनुष्योंका समुदाय एक
र सीमाबद्ध दशामें रहता है। यदि पृथ्वीतलके समग्र मनुष्योंका सम्बन्ध एक दूसरे-
सबलोग सब जगह आ जा सकें, विचार-विनिमय, वस्तु-विनिमय, और मानव-
य, ज्ञान-विनिमय, सब विनिमय होने लगें, तो यह संकीर्णता देखनेको नहीं मिलेगी।
न सामाजिक नियमोंके ऊपर है, वहांपर सच्ची मानवता है, इसीलिए उसकी शिक्षाएँ
ं, तथा उनमें कोई अन्तर नहीं है। कुछ खुदगर्जोंने धर्मके नामपर, उसकी ओटमें,
ेद-भावका जाल फैला रखा है और मजेसे मूर्खोंका नेतृत्व करते हैं तथा अपना
साधन करते हैं।"

गुलाबने चकित नेत्रोंसे उसकी ओर देखते हुए कहा—"अरी नसीमा, तुम तो लेक-
र हो गयी; यह परिवर्त्तन कबसे हुआ? मैं कितनी बड़ी मूर्खा हूँ कि तुम्हारे साथ रात-
रहते हुए भी तुम्हारा ज्ञान न जान पायी। सोलह वर्षोंसे हमारा साथ है, किन्तु तुम
ो गहरी हो, इसका ज्ञान आज ही हुआ है।"

नसीमने गम्भीर स्वरमें कहा—"यह विचार मेरे हृदयमें नये नहीं उठे हैं। इधर
महीनोंसे अपनेमें मैं एक परिवर्त्तन देखती हूँ, और अनुभव करती हूँ। अब्बा जब कुर-
पढ़कर हमें उसका अर्थ समझाते हैं तो मैं उन्हींपर विचार करती हूँ। तुम्हारी अम्मा
रामायण पढ़कर हमें सुनाती हैं तब भी मैं विचार करती हूँ। अपने और तुम्हारे धर्ममें
ोई अन्तर अनुभव नहीं करती। मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि दोनों धर्म एक दूसरे-
आभासे प्रभावित हैं। हमारा विषय एक है, विचार एक हैं, भाव एक हैं, केवल भाषा
है अथवा कलेवर भिन्न है। जब हममें इतनी एकता है तब फिर यह युद्ध क्यों होता है?
-भाईके खूनका प्यासा क्यों घूमता है? एक भाई दूसरेकी छातीमें छुरा घुसेड़नेके लिए
आकुल रहता है? इसका उत्तर मुझे नहीं मिलता।"

गुलाबकी ओर नसीम उत्सुक तथा आहत दृष्टिसे देखने लगी। गुलाबने धीरे-धीरे
ा आरम्भ किया—"इसका कारण हमें ढूँढ़ना पड़ेगा। मुझे तो यह मालूम होता

है कि कोई तीसरा व्यक्ति हमें साथ रहने नहीं देना चाहता। अभी उस दिन रामकृष्ण भया आय थ। रामकृष्ण भैयाको तुम जानती ही हो, जो कांग्रेसमें काम करते हैं। वे कहते थ--"अंग्रेज हिन्दू-मुसलमानोंको लड़ाकर अपना राज्य जमाये रहना चाहते हैं। वे हिन्दुओं-के खिलाफ मुसलमानोंको भड़काते हैं, और मुसलमानोंके विरुद्ध हिन्दुओंको जोश दिलाते हैं। नये-नये अधिकार, नयी-नयी लागें लगाते हैं, और फिर एकका पक्ष लेकर दूसरेसे लड़ाते हैं। प्रचार-कार्य वे ही करते है, आग वही सुलगाते हैं, और बुझाने भी वही दौड़ते हैं।

गुलाबकी ओर देखते हुए नसीमने कहा--"भैया रामकृष्णका कहना बिल्कुल सत्य है। अभी कुछ दिन हुए अब्बाके पास कानपुरसे मौलवी अनवर साहब आये थ। उन्होंन अब्बासे कहा--"देखो रहीम पहलवान, तुम्हें यहांके मुसलमानोंका नेतृत्व करना पड़ेगा। हमलोग शहरसे तुम्हारे लिए हथियार भेजेंगे। उन्हें अपने घरमें छिपा रखना। जब मौका आवे तो सारे मुसलमानोंको इकट्‌ठा करके हिन्दुओंपर चढ़ाई कर दो, और उनको अपना गुलाम बनाओ। पहले उन्हें मुसलमान बनाओ,और जब वे पवित्र इसलाम कबूल न करें तो उन्हें तलवारके घाट उतार दो। कुरआन रोज पढ़ो, पढ़ाओ। मालूद-शरीफ करो, और आसपासके सारे गांवोंके मुसलमानोंको इकट्‌ठा करो। हिन्दुओंको अपना जानी दुश्मन समझो, और उनको जड़से नाश कर देनेका बीड़ा उठाओ।" अरे वह न-मालूम क्या-क्या कहता रहा। पहले तो अब्बा उसकी सुनते रहे,फिर जब उसने नहीं माना तो अब्बाने कहा--"मौलवी साहब, यह आग आप अपने शहरतक ही रखें, इसको यहां न फैलावें। हम सीधे-सादे किसान हैं। हिन्दू-मुसलमानोंमें यहां कोई भेद नहीं है। धर्मका विषय अपना अपना है, उसके कारण हमारे आपसी व्यवहारमें कोई अन्तर नहीं पड़ता। जैसे एक मुसल-मानका दूसरे मुसलमानको मारना कुरआनमें गुनाह है, उसी प्रकार एक मुसलमानका अपने पड़ोसीको मारना भी गुनाह है।" ऐसी-ऐसी बहुत-सी बातें अब्बाने कहीं, मगर वह मौलवी अड़ा हुआ था। फिर उसने कई सौ रुपयोंके नोट अब्बाको देते हुए कहा--"अगर तुम यह काम करोगे तो तुमको सालाना एक हजार रुपये बतौर तुम्हारे मेहनतानेके दिये जायँगे।" अब्बाने उन रुपयोंको उठाकर फेंक दिया, और कहा--"इन तुच्छ रुपयोंके लिए मैं अपनी आत्माका खून नहीं कर सकता। बहुत बहस-मुबाहिसाके बाद मौलवी साहब चले गये।"

गुलाबन हँसकर पूछा--"तुमने इसके पहले कभी कुछ नहीं कहा ?

नसीमने उत्तर दिया--"क्या कहती ! मारे शर्मके मैं तो कह न सकी। अब भी कहनेकी हिम्मत नहीं पड़ती थी, बात चली, तो मुंहसे निकल गया। अरे गुलाबी, वह तो यहांतक कहता था कि तुम्हारा विश्वास हिन्दू करते हैं, इनकी बहू-बेटियां भगाकर कानपुर भिजवा दो तो थोड़ ही दिनोंमें मालामाल हो जाओगे। मनोहर भैयाको भी मुसलमान बनानेको कहता था।"

गुलाबने शरारत-भरी दृष्टिसे नसीमको देखते हुए कहा--"जब मनोहर भैया-का नाम उसने लिया तो वह कुछ मेरे लिए भी जरूर कहता होगा !"

नसीमने हँसकर कहा--"वह सुनकर तू क्या करेगी ?"

गुलावने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा—"वताओ, तुम्हें वताना ही पड़ेगा।"

नसीमने हँसते हुए कहा—"वह दुष्ट तुमको अपनी दुलहिन वनाना चाहता था। वोल उसकी दुलहन वनेगी?"

गुलावने उसके कपोलोंपर गुलचा लगाते हुए कहा—"जाओ, तुम तो हँसी करती हो।'

नसीम हँस पड़ी, और कहा—"जव सच कहती हूँ तो उसे हँसी मानती हो, और जव नहीं वतलाती तो पीछे पड़ती हो कि वताओ। सच गुलावी, तुमको वह मुसल्मानी वनाना चाहता था। अव्वाके जरिये तुम्हें भगाना चाहता था। तुमपर वह हजार जानसे फिदा है। और भला कौन तुमको देखकर रीझेगा नहीं?"

गुलावने वनावटी क्रोधके साथ कहा—"तुम्हारी ये वातें अच्छी नहीं लगतीं। अगर वह मेरे सामने पड़ जाय तो ऐसे जूते लगाऊँ कि छट्ठीका दूध याद आ जाय।"

नसीमने हँसते हुए कहा—"यह सजा हमारे वेचारे मौलवी साहवको ही दी जायगी, या तेरेपर जितने रीझनेवाले हैं उन सवको दी जायगी?"

गलावने हँसकर उत्तर दिया—"आजकल तुम्हारी शैतानी दिनपर दिन वढ़ती जाती है, तुम्हारी जवानमें लगाम ही नहीं है।"

नसीमने कहा—"यह लो, कोई वात पूछना भी मश्किल है। मेरे पछनेंम कौन दोप है, उत्तर देना या न देना तेरेपर निर्भर है।"

गुलावने कुछ कहनेके लिए मुंह खोला ही था कि सामनेसे यवकोंकी एक मण्डली आती हुई देख पड़ी। वे किसी दूसरे गांवके थ, जो रमईपुरका दंगल देखकर वापस जा रहे थ। इन दोनोंको देखकर वे लोग कुछ देरके लिए ठहर गये। उनमेंसे एकने कहा—"इनमें-से एकजो कुछ लम्वी है, वह रहीम काकाकी लड़की है, और दूसरी मनोहरकी वहन है।"

वे लोग खड़े होकर देखने लगे।

गुलावने अपने घरकी ओर मुड़ते हुए कहा—"चलो नसीमा, मेरे घर चलो इन दुष्टोंसे अपनी जान वचाओ। न-मालूम क्या कहें और क्या वकें।"

नसीमने गुलावका हाथ दवाते हुए कहा—"ठहरो, हमें इस प्रकार भागना उचित नहीं है। यही हमारी भीरुता तो वदमाशोंको वदमाशीके लिए उत्तेजित करती है। क्या इसी तरह डरनेके लिए ही अव्वाने तुमको और मुझको पहलवानी सिखायी है? क्या तुम्हें नहीं मालम कि वदमाश सदैव भीरु होता है, और वह जव किसीको अपने मुकावलेके लिए तयार पाता है तो तुरन्त ही पीठ दिखाता है?"

युवकोंकी मण्डली ठहरी नहीं, उनकी ओर देखती हुई चली गयी।

नसीमने हँसकर कहा—"देखो, भागे जाते हैं। वेचारे, तुमको देखनेके लिए ठहर गय थ, और तुम.......!"

नसीम आगे कुछ न कह सकी, गुलावने उसको चुटकी काट ली।

नसीमने क्षत स्थानको सहलाते हुए कहा—"यह तो वड़ी जवरदस्ती है। भला वताओ मैंने कौन-सा अपराध किया था जो मेरे चुटकी काटी?"

गुलाबने मुंह फुलाये हुए कहा—"तुम जो व्यर्थकी बातें करती हो। वे भला मेरे देखनेको क्यों ठहरेंगे?"

नसीमने गुलाबके कुछ कहनेके पूर्व ही कहा—"इसलिए कि तुम सुन्दरी हो। गुलाबको देखकर कौन भौंरा न रीझेगा।"

नसीम हँस पड़ी और गुलाबका मुख गुलाबके सदृश हो गया।

इसी समय नसीमका घर आ गया, और हँसती हुई वह गुलाबको अपने घरकी ओर घसीटकर ले गयी।

४

"संवत् १९१४ अथवा सन् १८५७ की राज्य-क्रान्ति भारतीयोंका पहला उद्योग था, अपनी दासताकी बेड़ियोंके तोड़नेका। अंग्रेजोंकी कूटनीतिका कटु अनुभव हिन्दू तथा मुसलमान दोनोंको हो चुका था, और उन्होंने एकत्र होकर इनको भारतके बाहर निकाल देनेका प्रयत्न किया था। अंग्रेजोंने भी अपना बोरिया-बँधना यहांसे जानेके लिए बिल्कुल बांध लिया था, किन्तु यातायातकी असुविधा और संचालनकी न्यूनताके कारण वह प्रयास निष्फल गया। इसके पश्चात् क्रान्तिके भावोंको दबानेके लिए जैसी बर्बरतासे काम लिया गया है—वह संसारके इतिहासमें अपना जोड़ नहीं रखती। कानपुरसे झांसी-तक, जितने वृक्ष राजमार्गके दोनों ओर पड़ते थे भारतीयोंके कंकालोंसे भरे हुए थे। विद्रोहियोंको प्रत्येक वृक्षकी प्रत्येक डालपर फांसी दी गयी, और उनके शवोंको सूखनेके लिए छोड़ दिया गया। उन कंकालोंकी आंखें, और जीभ बाहर निकली हुई अपनी व्यथाकी कहानी आज दिनतक कह रही हैं।"

उपरोक्त शब्दोंको बड़े जोशके साथ दलपति नरेन्द्रने अपनी समितिके विशेष अधिवेशनमें कहा। उसने अपने शब्दोंका प्रभाव देखनेके लिए सदस्योंकी ओर देखा। उनका रक्त खौल रहा था, उनकी भुजाएँ फड़क रही थीं, और उनके नेत्र अंगारकी भांति लाल थे।

नरेन्द्र फिर कहने लगा—"क्या उस खूनका बदला तुमको नहीं लेना है? जानते हो उन्होंने अपने जीवनकी आहुति किसके लिए दी, किस लोभसे वे समरांगणमें कूदे थे, किस स्वार्थसे उन्होंने विद्रोह खड़ा किया था? अपने किसी लोभसे नहीं, अपने किसी स्वार्थसे नहीं, वह महान प्रयास, वह महान क्रान्ति की गयी थी हमारे लिए—आनेवाली सन्ततिके लिए! और यदि आनेवाली सन्तति उनके जन्म दिये हुए कार्यको आगे नहीं चलाती, प्रसारित नहीं करती तो......?"

नरेन्द्रने श्रोताओंकी ओर बड़ी उत्सुकतासे देखा, और उत्तरकी प्रतीक्षा-सा करने लगा। श्रोताओंमेंसे एकने कहा—"तो उनका मर जाना उचित है?"

नरेन्द्र कहने लगा—"ठीक है! ऐसी निकम्मी और अयोग्य सन्ततिका नाश हो जानेमें ही संसारका कल्याण हैं। किन्तु नहीं, हम अपने कर्त्तव्यको समझते हैं, अपने उत्तरदायित्वको निभानेके लिए तैयार हैं। हम अंग्रेजी राजकी हुकूमतके खिलाफ विद्रोह खड़ा कर रहे हैं, और उसको मिटाकर ही शान्ति और विश्राम लेंगे।"

नरेन्द्रने थोड़ी देर ठहरकर फिर कहना आरम्भ किया—"आज हमारी सभ्यता-

का बड़ा पुण्यमय दिवस है, हमारी संस्कृतिका मनोहर दिग्दर्शन है। आज वह दिन है जब सबलकी सहायताके लिए निर्बल उनकी ओर उत्कंठासे देखते हैं, और उनको अपने सौहार्द्र-के रंगसे रँगकर अपना बना लेना चाहते हैं। आज वह दिन है जबकि कुलगुरु तुम्हारी रक्षाके लिए अपना चिह्न और आशीर्वाद देता है। आज वह दिन है जबकि समरांगणमें कूदनेके लिए सैनिक दीक्षित होता है, और उसको अनुशासन-पाशसे आवद्ध करता है। आज वही पावन दिवस श्रावणकी पूर्णिमा है। आज हमलोगोंको शपथ ग्रहण करना होगा कि हम अपने पूर्वजोंका वदला लेते हुए भारतको स्वतन्त्र करेंगे।"

"शत्रुपर वार करनेके लिए यह समय बड़ा ही उपयुक्त है। यूरोपीय महायुद्ध थोड़े समयमें संसार-युद्ध हो जायगा। पूर्व दिशामें जापान युद्ध छेड़ देगा, और वह विजय करता हुआ निर्वाध चला आवेगा। पश्चिममें हिटलरके वीर सैनिक इनका मद मर्दन करते हुए आ रहे हैं। उन दोनोंका सम्मेलन भारत अथवा मध्य पूर्वमें होना निश्चित है; अतएव इस समय यदि हम थोड़ा भी प्रयास करेंगे तो हमारी विजय निश्चित है। अंग्रेजोंका भाग्य-नक्षत्र अस्त होने जा रहा है। उनकी शक्ति ताशके पत्तोंकी तरह गिर रही है। हमारी क्रान्तिका यही अवसर है। हमें अपनी सेनामें सैनिक भरती करना है। गांव गांवमे जाकर स्वाधीनताका शंख वजाना है, और शक्ति संचय करके अंग्रेजोंपर आक्रमण करना है।

नरेन्द्र कुछ देर ठहरकर अपनी बातोंका प्रभाव आंकने लगा। एक सदस्यने कहा—"आज ही हमलोगोंको अपने-अपने स्थानपर चल देना चाहिए, और इस महायज्ञ-में देर करना उचित नहीं है।"

नरेन्द्रने उत्तर दिया—"हां, आज ही हम प्रस्थान करेंगे। हमारी गतिविधिको भारतीय पुलिस बड़ी सतर्कतासे निरख रही है, और उसने हमारे एक कार्यकर्त्ताको पकड़ लिया था, किन्तु उसने अपनी आत्महत्या करके अपनेको उसके जालसे स्वतन्त्र कर लिया। पहले हमको यह उचित है कि हमलोग इन विभीषणोंका नाश करें और इसके लिए मैं आदेश देता हूँ कि आपलोगोंमेंसे प्रत्येक सदस्य अपने-अपने कार्यक्षेत्रके विभीषणोंको यमलोकका रास्ता दिखानेमें कोई हिचकिचाहट न करें।

एक दूसरे सदस्यने कहा कि "यह तो गृह-युद्धमें परिणत हो जायगा। मेरे विचार-मे यह ठीक नहीं है। उचित यह है कि हमलोग ऐसे विभीषणोंकी सन्तानोंको अपने दलका अनुयायी वनायें, और उन्हींके द्वारा उनको अपने अधिकारमें लावें।"

नरेन्द्रने उत्तेजित स्वरमें कहा—"किन्तु इसके लिए इतना समय नहीं है। गेहूँके साथ घुन भी पिसता है। जब वे भारतीय होकर अपने देशके प्रति अपना कर्त्तव्य नहीं समझते तब उनको नष्ट कर देनेमें ही कल्याण है।"

उसी सदस्यने जिसका नाम चक्रधर था, कहा—"ठीक है, तव तो हमारा कार्य गुरुतर और कठिन हो जायगा।"

नरेन्द्रने उत्तर दिया—"अवश्य, किन्तु इसके यह अर्थ नहीं है कि हम भरतीका काम वन्द कर दें। नहीं, वह तो हमें करना ही है। एक विशाल सेना तैयार करनी है, यदि उसमें इन विभीषणोंकी सन्तान सम्मिलित हो सकें तो बिलकुल ठीक है। हमें वाद-विवादसे

ज्ञान नहीं रखता है, उचित तो यह है कि हम मातृभूमिके लिए [illegible] उनसे जान [illegible]।"

सभी सदस्योंने एक स्वरमें कहा—"[illegible]।"

नरेन्द्र फिर कहने लगा—"मैं आपलोगोंसे एक बार और कहना चाहता हूँ कि जो कोई अग्निमें कूदनेके लिए तैयार न हो, जिसे अपने घरका मोह हो, जिसे अपनी जान प्यारी हो, उसको उचित है कि वह अभी [illegible]। हम उसको कुछ न कहेंगे, किन्तु यदि [illegible] हमारा [illegible] देश भी रसातलको चला जायगा। इसमें संकोच तथा भयभीत और लज्जित होनेकी कोई बात नहीं है। जो कोई जाना चाहता हो, वही [illegible] जा सकता है।"

नरेन्द्र फिर सदस्योंकी ओर देखने लगा। उन्होंने एक स्वरमें कहा—"हमने सब समझकर ही इस ओर पैर उठाया है। हम मर जायँगे, किन्तु विश्वास-घात नहीं करेंगे।"

नरेन्द्र फिर कहने लगा—"आपलोगोंकी सच्चाईमें कोई सन्देह आजके पहले न कभी हुआ है, और न होगा। आपलोग सुशिक्षित और कर्त्तव्य-परायण युवक हैं, और मरना जानते हैं। जीवित वही रहता है, जो मरना जानता है। भारतीयोंको स्वयं अपनी शक्तिका ज्ञान नहीं। यही शक्तिका सन्देश आपको घर-घर जाकर सुनाना होगा, और सोयी शक्तियोंको पुनः जागरित करना पड़ेगा। सबसे पहले जो सदस्य जहांका रहनेवाला है, वहांपर अच्छी तरहसे जाने हुए युवकोंको अपने दलमें दीक्षित करे। इस समय भारतीय युवक क्रान्तिके लिए बिलकुल तैयार हैं। समय और परिस्थितिने वे सब साधन स्वयं पैदा कर दिये हैं। हमें ऐसे व्यक्ति चाहियें जो उनका नेतृत्व करें। अतएव आपलोग वह नेतृत्व ग्रहण करें, और भारतके एक सिरेसे दूसरे सिरेतक वह अग्नि प्रज्वलित करें जिसमें ब्रिटिश-सांड़ जलकर नष्ट हो जाय, जिन सींगोंसे वह हमें कुचल रहा है, वे सींग हमेशाके लिए तोड़ दिये जायँ।"

"उठो, और अपना कदम दृढ़ताके साथ आगे बढ़ाओ। तुमको विजय मिलेगी, और तुम भारतको स्वतन्त्र करोगे। हमारा उद्देश्य सत् है, अतएव हमें सफलता अवश्य मिलेगी। ईश्वरपर विश्वास रखो, और जीवन समर्पण करनेके लिए उद्यत रहो, तो एक ही रेलेमें हम शत्रुको परास्त कर देंगे। उठो, और आगे बढ़ो।" नरेन्द्रने अपना वक्तव्य समाप्त किया। चारो ओर एक अद्भुत सन्नाटा छा गया। सदस्य एक दूसरेको देखने लगे। उनकी आंखोंसे जोश बाहर उमड़ा पड़ता था। उनमेंसे एक दिवाकरने उठकर कहा—"दलपतिका आदेश हमलोगोंने सुना, और उसके अनुसार कार्य करनेको हम तैयार हैं। हमें अवसर दिया जाय, इस बीचमें हम नये सैनिकोंको दीक्षित कर अपनी रिपोर्ट देंगे।"

दलपति नरेन्द्रने कहा—"हाँ दिवाकर, एक सप्ताहमें हम फिर इसी स्थानपर मिलेंगे, और हमें कितनी सफलता मिली उसको देखना पड़ेगा। अब हिन्द माताकी ओरसे हमारे गुरुदेव मंगलानन्दजी आपको आशीर्वाद देकर दीक्षा-सूत्र अथवा रक्षा-कवच बांधेंगे। तब आपलोग प्रस्थान कर सकते हैं।"

इसके पश्चात् स्वामी मंगलानन्दजी एक-एक सदस्यके हाथमें राखी बांधन

मोटरको चारो ओरसे पीड़ित जनताने घेर लिया था। उनमेंसे एक कह रहा था—"राजा साहब आ गये, हमारी फरियाद सुनेंगे।"

ड्राइवरने किंचित भीत स्वरमें कहा—"हुजुरके इलाकेके किसान मालूम होते हैं।"

सर भगवान सिंहने स-क्रोध कहा—"उनसे हट जानेको बोलो।"

इसी समय एक वृद्ध किसान उनकी मोटरके आगे आकर कहने लगा—"अन्न-दाता! हमलोग बुरी तरहसे सताये गये हैं, हमारा घर लूट लिया गया, हमारी बहू-बेटियोंकी बड़ी बइज्जती हुई है........।"

सर भगवान सिंहने स-क्रोध कहा—"मैं कुछ नहीं सुनना चाहता यहांपर! यह सड़क है या कोई इजलास। रास्ता छोड़ दो नहीं तो.......?"

वृद्धके पास खड़े हुए एक युवकने कहा—"बँगलेमें हमलोग किसी प्रकार प्रवेश नहीं कर सके। फौजी पहरेदारने हमको अन्दर नहीं जाने दिया। इसीसे हम यहां खड़े होकर आपकी प्रतीक्षा कर रहे थे।"

माधवीने देखा कि युवक शिक्षित तथा सम्भ्रान्त है। उसकी वाणीमें एक विशेष विनय और नम्रता थी। अपने पिताके उत्तर देनेके पूर्व ही उसने कहा—"हमलोग आ गये हैं, अब कोई न रोकेगा। तुम्हारी फरियाद पापा अवश्य सुनेंगे। तुम लोगोंको हटा दो, ताकि हमारी मोटर चली जाय। हमलोग चलते हैं, और तुमलोग आओ। जाते समय मैं पहरेदारसे कह दूँगी, वे तुमको रोकेंगे नहीं।"

सर भगवान सिंह कुछ बोले नहीं। माधवीका यह कार्य उन्हें अच्छा नहीं लगा, किन्तु उसके ऊपर उनका अत्यन्त स्नेह था, इस कारण वे कभी-कभी उसके अप्रिय कार्य भी सहन कर लेते थे। वात्सल्य अन्धा है, जिसके प्रभावसे मनुष्य भी अन्धा हो जाता है।

उस युवकने अपने साथियोंसे हट जानेको कहा। अर्द्धनग्न किसानोंने मार्ग छोड़ दिया। मोटर आगे बढ़ी।

रास्तेमें माधवीने कहा—"पापा, इनकी फरियाद सुननी चाहिये। बिना किसी दुर्घटनाके ये लोग अपना घर छोड़नेवाले नहीं हैं।"

सर भगवान सिंहने उत्तर दिया—"माधवी, इन विषयोंमें तुम्हारा भाग लेना मैं उचित नहीं समझता। तुम्हारी भावुकता हमारे शासनको बिगाड़ देगी। शासन और भावुकतामें घोर शत्रुता है।"

माधवी चुप रही। मोटर बँगलेके अन्दर पहुँच चुकी थी। सर भगवान सिंहने मोटर-से उतरते हुए कहा—"मधु, तुम अन्दर जाओ, अपनी मांको डिनरमें चलनेके लिए तैयार कराओ। दिवाकर आया हो तो उसको मेरे पास भेज दो।"

माधवी अपनी मांके पास चली गयी। सर भगवान सिंहने माधवीके समक्ष अपनी प्रजाकी पुकार सुनना पसन्द नहीं किया।

उन्होंने बरामदेकी एक कुर्सीपर बैठते हुए कहा—"कल्यानपुरसे जो आदमी आये हैं उनको ले आओ। सबको गोल बनाकर आनेका कुछ काम नहीं है, उनमें जो मुखिया हों, उन्हींको लाना बाकी सबको फाटकके बाहर रखना।"

मखमलकी लाल वर्दीसे सु-सज्जित उनका मुंहलगा नौकर जहूर मोहम्मद बड़े तपाकसे आदेश पालन करनेके लिए चला गया।

सर भगवान सिंहके नेत्र क्रोधसे जल रहे थे, और चेहरा तमतमाया हुआ था। उन्हें ज्ञात था कि यह पुकार क्यों आयी है। इसलिए उससे मोर्चा लेनेके लिए, वे अपनेको तैयार करने लगे। उन्होंने अपना मन बहलानेके लिए एक समाचार-पत्र उठाया, कुछ देर पढ़नेका प्रयत्न किया, किन्तु हृदयका क्रोध उन्हें कुछ भी करनेके लिए आज्ञा नहीं दे रहा था। मनके विरुद्ध विवेकके उपद्रवमें क्रोधका जन्म निहित है। जिस युवकने माधवीसे बातचीत की थी वह और उसके साथ दो वृद्ध अर्द्धनग्न किसान–जिनको मनुष्य न कहकर नर-कंकाल कहनेमें किंचित अतिशयोक्ति न होगी—कांपते हुए सर भगवान सिंहके पास आये। वृद्ध पुरुषोंने जहां झुककर —पृथ्वीको छूते हुए प्रणाम किया, वहां युवकने साधारण रूपसे, केवल हाथ जोड़कर कहा—"नमस्ते।"

सर भगवान सिंहने उत्तर तो नहीं दिया, किन्तु दोनोंकी विभिन्नतापर अवश्य दृष्टिपात किया। उनके भ्रू कुंचित हो गये। उन्होंने युवककी ओर न देखते हुए कहा—"क्या कहना चाहते हो? तुमलोग गोल बांधकर क्यों आये हो?"

वृद्ध पुरुषोंने केवल उस युवककी ओर देखा। वे चुप रहे।

सर भगवान सिंहका विवेक लुप्त होने लगा। उन्होंने अधीरताके साथ कहा—"तुमलोग इस छोकरेका मुंह क्यों ताकते हो? मालूम होता है कि यही बदमाश तुमसे बहकाकर यहां लाया है, दरअसल तुमको कुछ कहना नहीं है।"

युवकने शिष्ठ किन्तु दृढ़ स्वरमें कहा—"नहीं, आपका विचार सही नहीं है। हम सबलोग अपना दुख निवेदन करनेके लिए आये हैं। आप हमारे स्वामी हैं, हम आपकी प्रजा हैं। स्वामी और प्रजाका.....!"

सर भगवान सिंहका विवेक क्रोधके रंगसे रँगा जा चुका था। उन्होंने सक्रोध कहा—"मुझे मालूम हो गया कि तुम मुझको पाठ पढ़ाने आये हो। तुम शायद कांग्रेसमें काम करते हो, तभी बदमाशी तुम्हारे चेहरेसे टपकी पड़ती है। जानते हो, एक इशारेसे मैं तुमसे आजन्म जेलमें चक्की पिसवा सकता हूँ। मेरे खिलाफ तुम बगावतका झंडा खड़ा करना चाहते हो? जहूर मोहम्मद! इन बदमाशोंको जूते मारकर निकाल दो, और इस बदमाशको पकड़कर थानेमें बन्द करवा दो। दारोगासे कहना कि किसी जुर्ममें फांसकर सजा करवा दे।"

इतना कहकर वे सवेग उठकर जाने लगे। जहूर मोहम्मद दूने उत्साहसे आज्ञा पालनके लिए व्यस्त हो उठा।

युवकका चेहरा क्रोधसे लाल हो गया—उसका नवीन रक्त उबलने लगा। उसने कुछ तीव्र स्वरमें कहा—"हमारे घर लूटे जा रहे हैं, हमारी बहन-बेटियोंपर अत्याचार हो रहा है, आपके सिपाही हमें उजाड़ रहे हैं, और जब हम आपके पास उनकी शिकायत लेकर आते हैं तो आप हमारे साथ बुरा व्यवहार करते हैं। अब हमें ज्ञात हो गया, कि वे सिपाही निर्दोष हैं, और केवल आप उत्तरदायी हैं.....।"

सर भगवान सिंह क्रोधसे कांपते हुए वापस लौट पड़े, उन्होंने गर्जकर कहा—"हां, मेरे हुक्मसे होता है। तू मेरा क्या कर सकता है? जहूर, इसको यहीं मेरे सामने पेड़में बांधकर इतने जूते लगाओ कि इसका मिजाज दुरुस्त हो जाय।!"

जहूरने युवकको पकड़ लिया, किन्तु युवक सबल था, उसने अपनेको छुड़ाते हुए कहा—"खबरदार जो मेरे शरीरपर हाथ लगाया। मैंने कोई अपराध नहीं किया है, यदि अत्याचारके विरुद्ध आवाज उठाना अपराध है तो मैं ऐसा अपराध बार बार करना चाहता हूँ। दादा, चलिये, यहांपर न्यायकी आशा नहीं है।"

जहूर अपनेको कमजोर देखकर, पहरेकी सशस्त्र गारदके जवानोंको बुला लाया, जिन्होंने जाते हुए वृद्ध पुरुषों और युवकको पकड़ लिया। युवक अपनी आत्मरक्षाके लिए तैयार हो गया, और उसने एक झटकेसे अपनेको मुक्त कर लिया। वृद्ध चिल्लाने लगे, जिनके शब्द सुनकर कल्यानपुरकी जनता जो बँगलेके बाहर खड़ी थी, वेगसे इनकी सहायताके लिए बढ़ी। सशस्त्र गारदके जवानोंने अपनी बन्दूकें सँभाली। जहूर मोहम्मदसे पहले ही मालूम हो गया था कि उनके मालिकका क्या आदेश है, इसलिए वे निर्भीक थे। उन्होंने अविलम्ब बन्दूकोंसे फायर करना शुरू कर दिया। जनता तितर-बितर हो गयी। अभागे दरिद्र किसान अपने प्राण बचानेके लिए भागने लगे, और वे शान्तिके रक्षक शान्ति स्थापनामें लीन हो गये। एक दो, तीन चार, पांच, छः निरपराध जीर्ण-शीर्ण नर-कंकाल, वास्तविक कंकाल होनेके लिए पृथ्वीपर गिर पड़े। युवक और दोनो वृद्ध भी अर्द्ध मृत अवस्थामें सर भगवान सिंहके बँगलेकी सुन्दर मखमली घासको अपने रक्तसे रँगनेका अपराध करने लगे, किन्तु श्रावणकी पूर्णिमाके काले-काले बादल निशाके साथ मिलकर उसकी लालिमाको छिपानेके लिए उत्सुकतासे पूर्णचन्द्रके प्रकाशको निगलने लगे।

(६)

सर भगवान सिंहके आदेशानुसार माधवी अपनी माके पास गयी। उसकी मां-शारदा, अपने साथ कुछ पुरानापन लिये हुए संसार-यात्रा कर रही थी। उनके विचार सुलझे हुए थे, और यथासम्भव वे अपने पतिके साथ-साथ चलनेका प्रयत्न करती, तथा इसमें उन्हें आशातीत सफलता भी प्राप्त हुई थी, किन्तु उनका नारी-हृदय शुद्ध भारतीय था. और उनके गुणोंका प्रकाश माधवीमें सम्पूर्ण रूपसे देखनेको मिलता था। माधवीने उनके कमरेमें जाकर कहा—"अम्मा! अभीतक तुम बिल्कुल बेफिक्रीसे बैठी हो, आज गवर्नर साहबके 'भोज' में नहीं चलोगी?"

माधवीकी मां शारदा अपने सामने चांदीकी थालीमे राखी, अक्षत, फूल और रोचना लिए बैठी थी। सामने सोफापर दिवाकर बैठा हुआ था। दोनों इस समय चुप थ, किन्तु उनके मुखसे यह विदित हो रहा था कि वे सप्रेम किसी उलझनको सुलझानेम व्यस्त है।

शारदाने माधवीकी ओर वात्सल्य आलोलित मुस्कानसे कहा—"मधु, तुम अपने पिताके साथ रहकर अपनी प्राचीन सभ्यता भूलती जा रही हो? आज रक्षाबन्धनका पवित्र त्योहार है, ईश्वरकी कृपासे तुम्हारे कार्त्तिकेयके समान भाई है, और अभीतक तुमने राखी

नहीं बांधी। न-मालूम कितनी आशाएँ लेकर स्त्री-जाति इस पवित्र त्योहारकी प्रतीक्षा किया करती है जब वह अपनी क्षमा, प्रेम, और सेवाके प्रतीक सूत्रोंसे अपने भाईको बांधती है। मधु, तुम्हारे हृदयमें वह उत्साह नहीं है, इससे मुझे हार्दिक कष्ट होता है।"

माधवी मांकी भर्त्सनासे संकुचित होकर ग्लानि और खेदसे पृथ्वीकी ओर देखने लगी। दिवाकरका स्नेह माधवीपर अत्यधिक था। उसने समीप जाकर उसकी पीठपर हाथ फेरते हुए कहा—"मधु, तुम अम्माकी बातका कोई ख्याल न करो। आज सबेरेसे मैं खुद गायब था, यदि अपराध किसीका है, तो मेरा है। अम्मा! बेचारी मधु मुझे कहां कहां ढूंढ़ती फिरे। आओ मधु। मुझे राखी बांधो, और मैं तुम्हें उपहारमें जानती हो, क्या दूंगा?"

माधवीके हृदयकी ग्लानि भाईके प्रेम-वारिसे प्रक्षालित हो गयी। उसकी सजीवता पुनः उसके नेत्रोंसे झाँकने लगी। उसने नाचती हुई आंखोंसे अपनी मांके सामने रखी हुई थालीसे रोचना उठाकर भाईके मस्तकपर लगाया, और स्नेह-सूत्र उसके मणिवन्धपर बांधते हुए कहा—"भैया, अपनी बहनका अपराध क्षमा करना। पापा, मुझे अपने साथ ले गये थे।" कहते कहते उसके आयत लोचन कुछ आर्द्र-से हो गये।

दिवाकरने उपहारमें सोनेकी घड़ी, और एक छोटी रिवाल्वर देते हुए कहा—"मधु, तुम मेरी घड़ीपर अपनी आंख जमाये थी, आज वह घड़ी तुम्हें देता हूँ। अपने भाईका स्नेह-चिह्न समझकर अपने पास रखो; और मय लाइसेंसके, यह एक रिवाल्वर दे रहा हूँ, जिसकी आवश्यकता शीघ्र ही पड़ सकती है अपनी आत्मरक्षाके लिए, अथवा आततायियों-के वधके लिए, जिसके लिए हम क्षत्रिय युवकों तथा युवतियोंको सदैव उद्यत रहना चाहिये, क्योंकि यह हमारा जन्म-सिद्ध अधिकार है।"

शारदा भाई-बहनके स्नेह-विनिमयको देखकर प्रसन्न हो रही थी। उसके नेत्रोंसे वात्सल्यकी धारा प्रवाहित होकर उनको प्लावित कर रही थी। थोड़ी देरके लिए वह अपना दुख—कि वह भाई-विहीन है—भूल गयी। नारी-हृदय भाईके लिए कितना पीड़ित रहता है, कौन कह सकता है। उसी प्रकार पुरुषके जीवनमें एक बड़ी न्यूनता रहती है—जो यावज्जीवन पूर्ण नहीं होती—यदि उसके कोई बहन नहीं होती। भाई-बहनका पवित्र स्नेह-सम्बन्ध कितना स्वार्थ-रहित और उज्ज्वल है! उसका जोड़ इतर मानव-सम्बन्धोंमें नहीं मिलता।

माधवीने सहर्ष दोनों वस्तुएँ ले लीं, और रिवाल्वर खोलकर उत्सुकतासे देखने लगी। दिवाकरने फिर कारतूसोंका एक छोटा डिब्बा देते हुए कहा—"इसमें सौ कारतूस हैं। पहले तुम निशाना साधना सीखो। यह काम मैं तुम्हें स्वयं सिखाऊँगा, और फिर हाथ जम जानेपर तुमको दूसरे कारतूस दूंगा। मधु! यह समय बड़ा कठिन है, और शीघ्र ही वह अवस्था तैयार हो रही है जिसमें हर एक युवक तथा युवतीको अपना जीवन बलिदान करनेके लिए समरांगणमें अग्रसर होना होगा।"

शारदाने उनकी बात-चीत सुनकर कहा—"क्या कहता है दिवाकर।"

दिवाकरने एक मन्द मुस्कानसे कहा—"कुछ नहीं, अम्मा! मैं मधुको आनेवाले युद्धके लिए तैयार कर रहा हूँ।"

शारदाने चिन्तित कण्ठसे पूछा—"कौन-सा युद्ध ?"

दिवाकरने हँसकर बात टालनेकी चेष्टा करते हुए कहा—"अरे यही जर्मन जो अपनी विजय-पताका फहराते हुए चले आ रहे हैं। आजकल जैसा युद्ध हो रहा है, उसकी विस्तृत आलोचना मैं क्या करूँ, तुम रोज ही रेडियोपर सुना करती हो। यदि वह अग्नि बढ़ती हुई यहांतक चली आयी तो हम सबको उससे मोर्चा लेना पड़ेगा।"

शारदाने कहा—"उससे लड़ेगी हमारी सरकार; और उसके सिपाही ! हमको क्यों लड़ना पड़ेगा ?"

दिवाकरने माधवीकी ओर देखते हुए कहा—"यह ठीक है, परन्तु अब युद्ध रण-क्षेत्रहीतक सीमित नहीं है। माधवीको शस्त्र-शिक्षा देना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए सबसे उपयुक्त स्थान हमारा इलाका है, जहां शून्य है, एकान्त है, और हाथ साफ करनेके लिए पशु-पक्षी हैं।"

शारदाने हँसते हुए कहा—"तू अब मधुको अपने-जैसा घुमक्कड़, और निरपराध पशु-पक्षियोंकी हत्या करना सिखाना चाहता है। नहीं, यह अपराध हमको नहीं करना चाहिये। गान्धीजीका अहिंसाव्रत धारण करनेमें ही मानव-जातिका कल्याण है।"

दिवाकरने कमरेसे बाहर जाते हुए कहा—"अथवा वीरत्वको नष्ट करनेका सबसे सरल उपाय है।"

इसी समय बाहर बन्दूकोंकी फायरिंग सुन पड़ी। माधवी और शारदा दोनों एक दूसरेका मुंह देखने लगीं, और दिवाकर वायु, वेगसे बाहरकी ओर भागा।

दिवाकरने देखा कि सन्तरियोंकी बन्दूकें आग उगल रही हैं, और अर्द्धनग्न मनुष्योंका झुण्ड त्राहि-त्राहि करता हुआ आगे भाग रहा है। पिस्तौल अर्दली, जहूर मोहम्मद पिस्तौलसे तीन व्यक्तियोंको आहत कर फाटककी ओर भागा जा रहा है। बँगलेके बरामदे-में उसके पिता खड़े उनकी ओर देख रहे हैं।

दिवाकरने फाटककी ओर भागते हुए चिल्लाकर कहा—"फायरिंग बन्द करो। यह हमारी रियाया है शायद.......!"

सर भगवान सिंहने कठोर स्वरमें कहा—"दिवाकर, तुम वापस आओ, तुम्हारे हस्तक्षेपकी कोई आवश्यकता नहीं है।

दिवाकर इस समयतक भूमिशायी युवक तथा दोनों वृद्धोंतक पहुँच चुका था। तीनों मृतप्राय अवस्थामें लोहू-लुहान पड़े थे। वह उनके समीप बैठकर उनकी हृदयगति-की परीक्षा करने लगा। प्राणोंको अवशेष देखकर उसकी उद्विग्नता कुछ कम हुई। वह फाटककी ओर दौड़ा। सैनिक पहरेदारोंने अपनी चांदमारी बन्द की। फाटकके बाहर कई किसान पड़े हुए थे। उनमेंसे कितने जीवित थे, कौन कह सकता है। शेष भेड़-बक-रियोंकी तरह इधर-उधर भागे जा रहे थे, जैसे वनके पशु अपनेको सिंहोंसे अकस्मात् घिरा हुआ पाकर छटपटाते हैं। दिवाकरने ऐसा दृश्य कभी नहीं देखा था। उसकी वाक्‌शक्ति अवरुद्ध हो गयी; वह विस्फारित नेत्रोंसे मानव-शिकार देखने लगा। उसका रक्त, जिसमें यौवनका उतावलापन था, उबलने लगा। वह अपनेको रोक न सका। उसने एक सैनिक-चौकीदारके हाथसे बन्दूक छीनते हुए सक्रोध कहा—"मुमताज, यह क्या है।

तुमको क्या अधिकार है कि निरस्त्र जनतापर जो सर्वथा शान्त है, और जो 'मेरी प्रजा' है, हथियार उठाओ, यही नहीं उनका खून करो।"

मुमताज और दूसरे सैनिक ठहर गये। वे चकित होकर उसकी ओर देखने लगे। उन्होंने जहूर मोहम्मदके आदेशसे गोली चलायी थी। उन्होंने पास ही खड़े हुए जहूरसे उत्तर देनेके लिए कहा।

दिवाकरने गम्भीर स्वरमें पुनः पूछा—"इसका उत्तर क्यों नहीं देते हो जहूर। इन पहरेदारोंने तुम्हारे हुक्मसे गोली चलायी है,यहांकी स्थिति साफ साफ प्रकट कर रही है, अतएव मैं तुमसे पूछता हूँ कि तुमको कबसे गोली चलवानेका अधिकार प्राप्त हुआ है?"

जहूरके उत्तर देनेके पहले ही पीछेसे सर भगवान सिंहने स्थिर स्वरमें कहा—"गोली मेरे हुक्मसे चलायी गयी है। इसकी सारी जिम्मेवारी मेरे ऊपर है। तुम इस मामलेमें हस्तक्षेप मत करो। लड़कोंकी तरह चुप बैठो।"

दिवाकर हतबुद्ध रह गया। वह शून्य दृष्टिसे अपने पिताकी ओर देखने लगा। उसे विश्वास न हुआ कि यह हत्याकाण्ड उसके पिताके आदेशसे जान-बूझकर हुआ है। वह निर्वाक् उनकी ओर देखने लगा।

जहूर मोहम्मदने, अपने पीछे अपने स्वामीको देखकर, शिष्ट तथा शान्त स्वरमें कहा—"कुँवर साहब, अल्लाहने बड़ी खैर की, वरना जो हंगामा आज बरपा होता उसका अन्दाजा हरगिज नहीं हो सकता। पहले इन बदमाशोंने बँगलेको घेर रखा था। आमादा फिसाद थे, बमुश्किल तमाम इनको समझा बुझाकर बाहर रखा गया, क्योंकि हजूर हवाखोरीके लिए बाहर गये थे, और आप भी नहीं विराजते थे। इसी दर्मियान हुजूरकी सवारी वापस पधारी, तो बदमाशोंने रास्तेमें मोटर रोक ली, और आमादा फिसाद हुए। अगर चरन सिंह जैसा होशियार ड्राइवर न होता, तो शायद कोई नागहानी जरूर वाके होती; मगर खुदाको खैरियत मंजूर थी,वह चालाकीसे मोटर निकाल लाया। हमारे हुजूर अपनी रियायाकी खातिर और परवरिश इतनी करते हैं कि जिसकी कोई हद नहीं; आपसे भी ज्यादा उनको प्यार करते हैं। जब हुजूरने उनका दुखदर्द सुननेके लिए बुला भेजा, तो वे तीनो यहां आकर हुज्जत करने लगे; जिनमें वह जवान-सा खद्दरिया छोकरा तो बस जहरकी पुड़िया है। यहांपर हुजूरको वाही-तबाही बकने व धमकियां देने लगा। मैंने हजार मना किया, मगर ये जुनूनी हैं कब किसीकी सुनते हैं; रिवाल्वर दिखाकर जानसे मार डालनेकी धमकी देने लगा, और इसी वक्त जाहिलोंकी फौज भी पहरेदारोंपर ईंटें व पत्थर बरसाने लगी। इनको मना किया गया पर ये किसी तरह मानते ही नहीं थे, और बराबर ईंटें और पत्थर चलाते रहे। लिहाजा हारकर अपनी हिफाजतके ख्यालसे गोली चलानी पड़ी।"

जहूर मोहम्मदने कनखियोंसे अपने स्वामी सर भगवान सिंहकी ओर देखा; यह जाननेके लिए कि उसने अपना कर्त्तव्य समुचित रूपसे पालन किया है या नहीं।

सर भगवान सिंहने कहा—"दिवाकर, तुम अभी लड़के हो, राजकाजके मामलोंमें मैं.............।"

वे अपनी बात पूरी न कर पाये थे, कि अस्तव्यस्त अवस्थामें घबरायी हुई शारदा

और माधवी वहांपर आ गयीं। माधवीका हृदय धड़क रहा था, और उत्तेजनामें उसके हाथ-पैर कांप रहे थे।

माधवीने अपने पिताको पकड़ते हुए पूछा—"पापा, यह क्या हुआ?"

सर भगवान सिहने उन दोनोंको बँगलेकी ओर ले जाते हुए कहा—"कुछ नहीं। इतना क्यों घबरा रही हो। वही बदमाश हैं जिन्होंने मोटर रोकी थी। चलो, तुमलोग अन्दर चलो। पुलिसको फोन करना है, जो आकर स्थितिका चार्ज ले।"

दिवाकर मूक होकर शून्य दृष्टिसे देख रहा था।

शारदाने उसके समीप आकर कहा—"क्यों दिवाकर, यहां इस तरह क्यों खड़े हो, चलो हमलोग भीतर चलें।"

दिवाकरकी चेतना जागी। उसने शून्य दृष्टिसे अपनी मांकी ओर देखा।

शारदाने भयाकुल स्वरमें कहा—"दिवाकर, क्यों इस तरहसे देखते हो? चलो अन्दर चलें।"

दिवाकरने अपनेको छुड़ाते हुए कहा—"नहीं अम्मा, मेरे लिए घरमें बैठना सर्वथा अनुचित है। मेरा कर्त्तव्य मुझे पुकार रहा है। इन गरीबोंको अस्पताल भेजनेका प्रबन्ध शीघ्र से शीघ्र करना चाहिये, नहीं तो न-मालूम कितने ही—जो अभीतक जीवित हैं, जिनकी जीवन-रक्षा हो सकती है—मर जायँगे।"

इतना कहते ही उसका कर्त्तव्य-ज्ञान भीम वेगसे जागरित हो उठा। वह दौड़-कर फाटकके बाहर चला गया। शारदा अवाक् होकर देखती ही रही।"

सर भगवान सिहने दिवाकरको भागते हुए देखकर कहा—"दिवाकर, तुम वापस आओ। मैं सब इन्तजाम कर दूंगा।"

किन्तु दिवाकर चला गया था, उसने कोई उत्तर नहीं दिया। यह भी नहीं कहा जा सकता कि उसने कुछ सुना या नहीं।

शारदाने आकुलताके साथ कहा—"मुझे डर लगता है। ईश्वर ही रक्षा करे। उसका चेहरा बड़ा भयावना था। मैं उसे पहचानती हूँ। यह चोट वह बरदाश्त न कर पायेगा। उसका हृदय बड़ा कोमल है।"

सर भगवान सिह इस नयी विपत्तिसे विचलित हो गये। उन्होंने सक्रोध कहा—"तुमलोगोंका यहां काम नहीं है। पुलिस आनेवाली है। शीघ्र अन्दर चलो। दिवाकर अभी वापस आ जायगा। मधु, तुम भी अन्दर जाओ।"

सर भगवान सिहके स्वरमें आदेशकी कठोरता और रुक्षता थी। शारदा और माधवी दोनों निरुपाय होकर चली गयीं। सर भगवान सिह टेलीफोनसे पुलिस स्टेशन-को इस दुर्घटनाका समाचार देने लगे। जहूर मोहम्मद और सरकारी गारदके सिपाही, हताहतोंमें जीवित और मृतका निर्णय करनेमें व्यस्त हो गये।

७

सन्ध्याकी घटनाओंकी प्रतिच्छाया माधवीके कोमल हृदयपर इतनी गहरी पड़ी थी कि वह ज्यों-ज्यों उन्हें भुलानेकी चेष्टा करती, त्यों-त्यों वे सजग और सचेत होकर

उसका सोना हराम करने लगीं। यद्यपि रात्रिका तीसरा पहर था, किन्तु उसकी आंखोंमें नींदका चिह्न ढूंढ़नेसे भी नहीं मिलता। वह भीत दृष्टिसे अकस्मात् चारों ओर देखने लगती—चौंककर कान खड़े कर सुननेका प्रयत्न करती, उसे वार-वार गोली चलनेका भ्रम हो जाता, और उसके निराकरणके लिए वातायनपर आती; चारों ओर वाहर देखती, किन्तु प्रकृति सर्वत्र निस्तब्ध और शान्त थी। गोमतीकी धारा उसी तरह निःशब्द और गम्भीर चालसे चली जा रही थी, पूर्णिमाकी चांदनी दोनों हाथोंसे सुधा-सीकर अंशुओंद्वारा महीतलपर लुटा रही थी, जहां-तहां वादलोंके टुकड़े आपसमें खेलते हुए वायुके साथ उड़े जा रहे थे। प्रकृतिका वह सुन्दर हास्य माधवीको उस समय प्रसन्न न कर सका।

एक सुन्दर तथा कीमती कांचकी हांडीके अन्दरसे विजलीका प्रकाश छन-छनकर वाहर माधवीका उत्पीड़ित मुख देख रहा था और विजलीका पंखा एक ही स्वरसे चलकर उसकी चिन्ताओंको एकत्रित नहीं होने देता था, वरन् उन्हें विखेरनेमें उत्सुकतासे सहायता कर रहा था। माधवीने अपना मन वहलानेके लिए पहले एक मासिक पत्र उठाया, फिर एक रोचक उपन्यास, किन्तु सर्वत्र उसको वन्दूकोंकी गड़गड़ाहटका शब्द सुनायी पड़ रहा था। अशान्त अन्तःकरण, वाह्य उपचारोंसे शान्त नहीं होता, माधवीको यह ज्ञात न था।

यद्यपि उस दिन विशेष गर्मी न थी, किन्तु माधवी उससे आकुल होती जा रही थी। अविराम गतिसे चलता हुआ पंखा शीतलताकी अपेक्षा गर्मी अधिक दे रहा था। उसको ऐसा विदित हो रहा था, जैसे कोई उसका गला दाव रहा हो, और शुद्ध वायुकी अत्यन्त कमी हो। उसने उठकर कमरेकी सारी खिड़कियाँ खोल दीं। पूर्वीय पवन नाचता हुआ कमरेके अन्दर आकर पंखेके साथ हँसने और नटखट वालककी भांति हल्की-हल्की वस्तुओंको विखेरने लगा। माधवीको प्रकाशकी किरणें भी अखरने लगीं, उनका उज्ज्वल प्रकाश असह्य हो उठा; उसने स्विच दवाकर उसका प्रवाह भी स्थगित कर दिया। चांदनी जो अभीतक छिपी हुई थी सजग होकर उसके साथ समवेदना प्रकट करने लगी। आराम कुर्सीपर वैठ कर वह वाहरका मूक निस्तब्ध दृश्य देखने लगी। न-मालूम कव उसका मस्तिष्क विभिन्न विचारोंका रणक्षेत्र हो उठा, उसे स्वयं ज्ञात न हुआ। वह सोचने लगी—

"मानव-जीवन कच्चे सूत्रसे भी अधिक कमजोर है, एक क्षण पहले वह था, और दूसरे क्षण वह नहीं है। जो एक क्षण पूर्व चलता-फिरता, जीता-जागता मानव कहलानेवाला व्यक्ति था, वह दूसरे क्षण मृत, किसीके योग्य नहीं, स्थिर, मिट्टीका एक खण्ड हो जाता है, उसका स्थान जीवित मनुष्योंके मध्य नहीं रहता, वरन् उसको शीघ्र-से-शीघ्र नष्ट कर देनेके लिए सभी आकुल हो जाते हैं। जो अपने जीवित रहते तुच्छ सुई भी देनेको तैयार नहीं था, वही मरनेके वाद संसारके राज्यकी रंचमात्र परवा नहीं करता। कितना अन्तर है! संसारका सारा झगड़ा, वैमनस्य, प्रेम, विग्रह, अशान्ति, भय, क्रोध सब प्रकारके भाव-कुभाव केवल उसी समयतक हैं, जवतक मानव कहलानेवाले व्यक्ति जीवित हैं, जीवनके पश्चात् वह निरपेक्ष है, निर्विकार है, और उदासीन है, उसी प्रकार जैसा कि ब्रह्म है। एक घटमें व्याप्त आकाश—उसका आकार-प्रकार आवद्ध होनेके कारण, उस घटपर प्रकृतिकी जो क्रिया-प्रतिक्रिया होती है, उससे वह प्रभावित होता है, उसी प्रकार ब्रह्म जव किसी आकारमें चाहे वह मानव हो, और चाहे मानवेतर कोई अन्य प्राणी, आवद्ध हो जाता है—तव वह

मृत्यु पर्यन्त, अथवा उस आकारके विसर्जन पर्यन्त तज्जनित भाव कुभावको भोग करता है उससे प्रभावित होता रहता है, और जैसे घटके टूट जानेसे वह आबद्ध आकाश, ब्रह्माण्ड-व्यापी आकाशमें लीन हो जाता है, अथवा उस घटसे सम्बन्ध विच्छेद हो जानेपर वह अनन्ता-काशमें लीन होकर स्वयं अनन्त हो जाता है, उसी प्रकार ब्रह्म मानव आकारको त्यागनेके पश्चात् अनन्त सर्वव्यापी ब्रह्ममें लीन होकर वैसा ही अनन्त और सर्वव्यापी हो जाता है। जीवन ओर मृत्युका क्या यही रहस्य है ?"

"मानव जीवन स्फुट है, या एक आबद्ध शृंखला ? क्या उसकी उत्पत्ति आकस्मिक है ? क्या वह तत्वोंके विशेष समीकरणसे स्वयं उत्पन्न हो जाता है ? या एक निश्चित परि-पाटी—अथवा निश्चित मार्गपर चलता हुआ अनेक जन्म, मरणके चक्रसे व्याप्त एक शृंखला है ? यदि वह स्फुट है, तब भाग्य और कर्मका कोई अस्तित्व नहीं रहता, यदि प्रभाव रहता भी है तो उसकी मृत्युतक ही सीमित रहता है, किन्तु यदि वह शृंखलाबद्ध है, तब वह भाग्य और कर्मका खिलौना मात्र रहता है, उसका निजत्व कुछ नहीं रहता। यदि कुछ निजत्व है तो भी वह नगण्य-सा है। स्फुट जीवनमें, पूर्वजन्म तथा परजन्मका कोई स्थान नहीं है। संसारमें इन्हीं दो विचारोंकी प्रधानता है। संसारका पश्चिमी भाग स्फुट जीवनमें विश्वास करता है, और पूर्वीय भाग शृंखलाबद्ध जीवनमें। इसीको दूसरे शब्दोंमें कह सकते है कि जिन धर्मोंका जन्म भारतवर्षमें हुआ है, वे मानव-जीवनको शृंखलामय मानते हुए कर्म, और भाग्यको प्रधानता देते हैं, और जो एशियाके पश्चिमीय भागमें प्रकट हुए हैं वे स्फुट जीवनको ही सत्य मानते है। परन्तु प्रश्न यह है कि वास्तवमें सत्य क्या है ?"

"जीवनका उद्‌गम कहां है,और कैसे होता है ? यह भी एक विचारणीय प्रश्न है। ब्रह्माण्डका प्रत्येक कण, प्रत्येक अणु जीवनसे ओतप्रोत है। कहींपर वह हमारी दृष्टिसे ओट है,वह इतना सूक्ष्म है कि बड़ेसे बड़े वैज्ञानिक यंत्रोंद्वारा भी दृष्ट नही है, और कहीं सहज ही देखा जा सकता है। तत्वोंका कोई विशेष अनुपात, उनका कोई समीकरण सुप्तसे जीवन-को प्रकट कर देता है, और तब हम अपने नेत्रोंद्वारा अथवा वैज्ञानिक यन्त्रोंद्वारा देख सकते है। वायु और पृथ्वी, अग्नि और जल यद्यपि दोनों ही एक दूसरेके विरोधी हैं, किन्तु इन्हींके संसर्गसे इन्हींके विशेष अनुपातसे, जीवनकी उत्पत्ति होती है। मैंने गोबर और सूर्यके उत्तापमे जीवन प्रकट होते देखा है। गोबर और दहीके संसर्गसे वृश्चिक जैसा भयंकर कीट उत्पन्न होता है। प्रथम वर्षाके पश्चात् असंख्य वीर बहोटी इस पृथ्वी खण्डपर कहांसे उत्पन्न हो जाती है? कितने प्रकारके जन्तु और कीट जन्म लेते है,इसकी गणना कौन कर सकता है। इन सब कारणोंसे तो यही निश्चित होता है कि ब्रह्माण्डका कण, अणु तथा परमाणु सब जीवनमय है। हमारे देशने इस सत्यका सबसे प्रथम अन्वेषण किया था, इसी कारणसे उसने जीव मात्र, ब्रह्माण्डके प्रत्येक परमाणुके साथ समीकरणमें ही अपना कल्याण माना है, और मानवताको साम्य भावका सन्देश दिया है। जैसा मैं हूँ, वैसा ही ब्रह्माण्डका एक एक परमाणु है, उनमें और हममें कोई अन्तर नहीं है, यही भारतीय समत्वका स्पष्ट और निश्चित ज्ञान है।"

"जब यह ब्रह्माण्डके परमाणुके सम्बन्धमें सत्य है, तब मानवके आपसी सम्बन्धमें कितना निश्चित सत्य है। मनुष्य-जाति तो एक ही प्रकारके अवयवोंसे बनी है, एकहीसा

आकार, है, एक ही प्रकृति है, और एकहीसी अनभूति है। तब फिर यहां इतना विरोध क्यों है: इतना पार्थक्य क्यों है, इतनी विभिन्नता क्यों है। संसारमें देखा यह जाता है कि मानव-जातिमें जितना विरोध, विवाद, वैमनस्य, और कटुता है, उतनी किसी अन्य जीवधारी जातिमें नहीं है। ज्ञानका किरीट पहने हुए मानव कितनी अज्ञानताके साथ आपसमें व्यवहार करता है!"

"क्या एक मनुष्यको अधिकार है कि वह दूसरे मनुष्यका प्राण हरण कर ले? क्या अपने स्वार्थ-साधनके लिए एक मनुष्य दूसरेका खून कर सकता है, उसकी सम्पत्ति हरण कर सकता है, उसको अपना दास बना सकता है, उसके शरीर, मन और आत्मापर अपना प्रभुत्व जमा सकता है? यदि हम ईश्वरवादी हैं, और ज्ञानका आभास हमें है, तो हमारा यह प्रयत्न सर्वथा अन्यायपूर्ण है।"

"गुलामीका अन्त करना प्रत्येक मानवका कर्त्तव्य है। किन्तु गुलामी क्या है? मानवोचित अधिकारोंको जब एक मानव कुचलकर दूसरेके शरीर और मनपर अपना अधिकार स्थापित करता है, उसको अपने अनुकूल चलनेके लिए बाध्य करता है—अथवा जिन अधिकारोंको वह स्वयं भोग करता है, वही जब वह दूसरोंको भोगने नहीं देता तब यह अनधिकार चेष्टा ही गुलामी है। स्वार्थ-समूहका नाम मानव है। वह अपने स्वार्थ-साधनमें इतना रत रहता है कि वह उसकी पूर्तिके लिए अपने सिद्धान्तोंका, अपने ज्ञानका, और अपनी आत्माका खून करनेमें कोई संकोच नहीं करता। यही पाप तो आज पापाने किया है?"

"क्या पापाका निःशस्त्र प्रजापर गोली चलवा देना न्यायानुकूल है? किस स्वार्थ-साधनके निमित्त उन्होंने यह अत्याचार किया है? कौन जाने! मुझे पूछनेका अधिकार नहीं है। माता-पिताके कार्योंकी आलोचना करना, सन्तानका धर्म नहीं है। आह! वह खद्दरधारी युवक कितना परिमार्जित और प्रभावशाली था या है, कौन जाने कि वह जीवित है, या मृत। उसका उन्नत ललाट, बड़े बड़े निर्भीक नेत्र, गम्भीर और संयतवाणी सभी उसकी उच्चता और महानताका परिचय स्वयं दे रहे थे। उच्च शिक्षा और उत्कृष्ट विचार; सौरभकी भांति उससे स्वयं प्रकट हो रहे थे। स्वच्छ परिमार्जित रुचि, और हृदयकी महानता उसके अवयवोंसे बाहर झांक रही थी। वह न्याय और सत्यका सैनिक है, इसी कारण इतना निर्भीक है। वह दूसरेकी गुलामीकी शृंखलाओंको तोड़ना चाहता है, इसीलिए वह इतना साहसी है। वह अपने, तथा अपने-जैसे पददलितके अधिकारोंको मांगता है, उसके लेनेके लिए आकुल है, इसी हेतु वह इतना उन्नत है और इतना महान है। वह युवक हमारी प्रजा है, किन्तु हमारा गुलाम नहीं है, उसमें और मुझमें कोई अन्तर नहीं है।"

"राजा, और प्रजाका क्या सम्बन्ध है? क्या वह गुलामीका सम्बन्ध है? हमारी प्राचीन सभ्यतामें राजाका स्थान सर्वोपरि रखा गया है; क्या किसी पूंजीपतिका यह कार्य है? कहा तो यही जाता है। किन्तु वास्तवमें मुझे तो यह सत्य नहीं मालूम होता। राजा, प्रजाका नेता है। किसी कार्य-संचालनके लिए आवश्यक है कि सब कार्यकर्त्ता, एक मन एक विचार, और एक साधनसे उसमें रत हों, और उसके लिए एक नेताकी आवश्यकता होती है। वही नेता राजा है, जो परम्परागत होनेके कारण स्थायी और एक वंशीय हो गया। किन्तु वास्तवमें वह किसी भांति भी अपनी प्रजासे उच्च नहीं है, उसको कोई अधिकार

नहीं है कि उसके अधिकारोंको कुचलकर अपना स्वार्थ साधन करे। दमनका कोई कार्य यदि वह स्वार्थ-रहित है, और बहुसंख्याके हितके निमित्त है, तब वह न्याय-विहित है, किन्तु यदि उसमें अपने स्वार्थका किंचित् लवलेश भी है तो वह अन्याय है, हिंसा है, और पाप है।"

"पापाने आज क्यों गोली चलवाया? निःशस्त्र, निरपराध, मूक, अर्द्धनग्न, भूखे, सदैव दुखी रहनेवाले मनुष्योंपर गोली चलाकर उनके प्राण हरणकी चेष्टा, कितनी पाप-पूर्ण है, कितनी नीच है, और पूर्ण रूपसे अमानुषिक है। उनको अधनंगा, और भूखा रखनेका कौन जिम्मेवार है। उनका प्राप्य जो कानून विहित है, उनसे कौन अपने छल, बल कौशलसे छीनकर उनको इस दुरवस्थामें रखता है? उत्तर यही मिलेगा, नेता अथवा राजा! जैसे पिता अपनी सब सन्तानके भरण-पोषण और आवरणके लिए उत्तरदायी है, उसी प्रकार राजा भी अपनी प्रजाके प्रति उसी रूपसे, और उतना ही उत्तरदायी है। क्या पिताजी अपना कर्तव्य अपनी प्रजाके प्रति पालन करते हैं? इसकी आलोचना करना क्या मेरा कर्त्तव्य नहीं है? पिताके अन्यायको मौन होकर सहन करना, उसके विरोधमें आवाज न उठाना, क्या सन्तानका धर्म है? राजा या पिता क्या कभी कोई अपराध नहीं करते? उनका गुरुतरसे गुरुतर अपराध क्या अपराधकी श्रेणीमें नहीं आता, वे सर्वथा मुक्त हैं, स्वच्छन्द हैं क्या? और क्या अपराधको भी न्याय-विहित कहना, अथवा मानना, गुलामी नहीं है? उसका विरोध करना क्या दासता नहीं है? दिवाकर भैयाका तो यही मत है कि अन्याय प्रत्येक कालमें प्रत्येक पात्रके साथ अन्याय ही रहेगा, उसके विरोधमें अपनी सारी शक्ति लगा देनी चाहिये, और यदि इस प्रयासमें प्राण भी जाते हैं तो वही सफल जीवन है; वह मृत्यु नहीं, जीवन है।"

"तभी आज दिवाकर भैयाने सबसे पहले अपने ऊपर उन आहत व्यक्तियोंकी सेवा-सुश्रुषाका भार ग्रहण किया। पापा बहुत रुष्ट हुए, किन्तु वे तनिक विचलित नहीं हुए। ऐम्बुलेन्स कारमें उनको उठा-उठाकर रखते थे, और उन्हींके साथ मेडिकल कालेज चले गये। उन्होंने भोजनतक नहीं किया। अम्मा और मेरे अनुरोधपर कर्णपात नहीं किया। पापा दांत पीसते थे, किन्तु उनपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। वे मन, वचन, कायसे अपने कर्तव्यमें लीन थे। आज प्रत्यक्ष रूपसे पापा और भैयामें मतभेद हुआ है, इसका परिणाम क्या होगा? पापाने तो यहांतक कह दिया कि मैं इसका मुंह देखना नहीं चाहता। नहीं जानती कि भैयाने यह सुना या नहीं। अम्मा और मैं दोनों ही मुंह ताकती रहीं, और दिवाकर भैयाने किसी तरह नहीं माना, उन घायलोंके साथ-साथ चले गये। पिताजी, दिवाकर भैयाको उद्दण्ड, और कुलांगार कहते हैं, वंश और पिताघाती कहनेमें कोई संकोच नहीं करते! क्या दिवाकर भैयाके इन कामोंसे, सेवाकार्यसे वंश और पिताका नाम डूबता है, क्या उनकी मर्यादा नष्ट होती है, क्या यह भी कोई पाप-कार्य है, अनुचित है और न्यायानुकूल नहीं है? अपनी प्रजाकी सेवा करना, पिताके अपराधोंका प्रायश्चित्त करना, कभी वंशकी मर्यादाके विपरीत नहीं हो सकता।"

"पिताके अपराधोंका प्रायश्चित्त!"---यह मेरे मुखसे कैसे निकल गया! इस कथन-से तो मैं अपने पिताको दोषी प्रमाणित कर चुकी। क्या यह मेरे लिए उचित है? अम्माने

तो यही सदैव सिखाया है कि पिताके कार्योंकी आलोचना करना सन्तानका धर्म नहीं है। यही उपदेश उन्होंने सदैव दिवाकर भैयाको दिया, जब-जब वे पिताके कार्योंकी आलोचना करते। इन दोनोंकी विचार-धारामें जो विरोध बढ़ रहा था, उसके मिटानेका सतत प्रयत्न अम्मान किया है, किन्तु वह तो उत्तरोत्तर बढ़ता ही गया। इनके बीचकी खाईं बढ़ती ही गयी, और बढ़ती जाती है। इसका परिणाम क्या होगा ? कौन जाने।"

माधवी सोचती, सोचती सिहर उठी। भविष्यका अन्धकार अनेक भयावने चित्र अंकित करने लगा। वह सुदूर मन्थर गतिसे बहती हुई गोमतीकी धारासे चन्द्रमाका हास-परिहास देखनेका प्रयत्न करने लगी, किन्तु इसी समय पूर्व दिशासे काले-काले बादलोंका एक दल अ सर होता हुआ चला आ रहा था, जिनसे बचनेके लिए मुर्ग अपने तीव्र स्वरसे बारम्बार चन्द्रकी ओर देखता हुआ सनेत करने लगा। प्रातःकालका आगमन ध्वनित हो रहा था, और माधवीकी क्लान्ति, प्रखरताके साथ अपना प्रभाव उसपर जमा रही थी। उसके नेत्र मुँदने लगे, और उसी कुर्सीपर बैठी हुई सो गयी। बेला, मालती, जूही तथा चमेलीका सौरभदान लिये हुए पवन माध ीकी खुली हुई अलकावलियोंके साथ खेलता हुआ उसके निद्रामग्न होनेमें सहायता प्रदान करने लगा।

८

दूसरे दिन प्रातःकाल दैनिक पत्रोंमें विशेष सम्वाददाताओंद्वारा प्रेषित यह समाचार प्रकाशित हुआ।

"एडवाइजरके बँगलेपर सशस्त्र आक्रमण !" "बागियोंका एडवाइजर तथा उनकी कन्याके मारनेका प्रयत्न।"

"कल सन्ध्याको क्रान्तिकारियोंके एक दलने यू.पी. गवर्नमेण्टके एडवाइजर सर भगवान सिंहके बँगलेको घेर लिया। इन बागियोंमेंसे अनेक उन्हींके इलाकेके रहनेवाले थे, इससे उनको रोका नहीं गया, वरन् उनको अवसर दिया गया कि वे ठहरकर उनकी प्रतीक्षा करें। जब क्रान्तिकारियोंको मालूम हुआ कि एडवाइजर साहब बाहर गये हैं, तो वे उनकी प्रतीक्षा बँगलेके बाहर करने लगे, हालाँकि उनसे कहा गया कि वे अन्दर चले आवें, परन्तु उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया। कुछ देर बाद सर भगवान सिंह अपनी कन्या मिस माधवीके साथ घर वापस आ रहे थे कि दंगाइयोंने हठात् उनकी मोटर घेर ली, और आगे बढ़नेसे रोका। मोटर ड्राइवर चरनसिंह एक चतुर और साहसी व्यक्ति है, जिसने परिस्थितिका अनुमान कर लिया, और मोटरको रोका नहीं, वरन् तेजीसे बचाकर बँगलेके अन्दर दाखिल हो गया। पीछे दंगाई, ईंटें व पत्थरद्वारा आक्रमण करते रहे, जिससे मोटरका शीशा टूट गया, और ड्राइवरके भी कुछ चोट आयी। इसके पश्चात् जब दंगाई असफल रहे, तब उन्होंने ईंटों व पत्थरोंसे, बल्लम व लाठियोंसे बँगलेके पहरेदार गारदके सिपाहियोंपर आक्रमण किया, और तीन व्यक्ति सर भगवान सिंहतक पहुँचनेमें सफल हुए। उन तीन व्यक्तियोंमें एक युवकने उनपर रिवाल्वरसे हमला किया, व कई गोलियां छोड़ीं, परन्तु शरीररक्षक जहूर मोहम्मदकी तत्परता, तथा साहसके कारण वे वहाँ भी असफल रहे। गारदके सिपाहियोंने पहले हवामें फायर किये, किन्तु इससे आक्रमणकारी रुके नहीं,

वरन् दूने उत्साहसे हमला करने लगे। अन्तमें आत्मरक्षार्थ उनको भी गोलियां चलानी पड़ी, जिससे कई व्यक्ति घायल हो गये, और वे आक्रमण विफल करनेमे सफल रहे। मामला स्थानीय पुलिसमे दे दिया गया है, और आशा है कि षड़यन्त्रका भंडाफोड़ शीघ्र ही होगा। एडवाइजर साहब मय अपनी कन्याके सुरक्षित है, कुछ थोडी-सी चोट आयी है।"

मेडिकल कालेजके हाउस-सर्जन कुँअर रणजीत सिंहके कमरेमें बैठे हुए दिवाकरने ऊपरका समाचार पढा। सत्य कितनी शीघ्रतासे मिथ्या आवरणसे ढँका जा सकता है, इसका ज्वलन्त उदाहरण उसके सामने प्रत्यक्ष था। निरीह, सन्तप्त, निःशस्त्र रियायाको क्षणभरमें सशस्त्र क्रान्तिकारीके रूपमे परिणत कर दिया गया, और जो अपना दुख निवेदन करने आये थे, दुर्वृत्त, अत्याचारी कारिन्दों तथा प्यादोके अत्याचारकी कहानी, अपने स्वामीको सुनाने आये थे, वे आक्रमणकारी तथा क्रान्तिकारीकी उपाधिसे विभूषित किये गये। उनको विद्रोही, दंगाई बनाकर पहले तो मारा गया, फिर दुर्गतिको पूर्ण करनेके लिए पुलिसके सुपुर्द किया गया। इस प्रकार सत्यका गला घुटते देखकर दिवाकर सिहर उठा।

वह सोचने लगा—"मनुष्य क्या इतना नीच हो सकता है? सत्यको क्या इस भांति छिपाया जा सकता है? आजकलके समयमें प्रचार-कार्यकी ओटमे मिथ्याको सत्यमे परिणत किया जा सकता है। इसी भांति यह अंग्रेज सरकार विदेशोंमें हमारे विपरीत प्रचार कर हमें स्वशासनके लिए सर्वथा अयोग्य सिद्ध कर रही है। यहांपर भी हमारे जाने-बूझे हुए तथ्यको केवल इसी प्रचारके बलपर वह मिथ्या कर रही है। जिस प्रकार पिताजीने समाचार लिखवाया उसी प्रकार वह प्रचारित किया जा रहा है। निरीह व्यक्तियोको दंगाई बनाया जाता है, और उनकी पुकार-फरियादको आक्रमण। कैसा अन्धेर है भगवान्! और यह सब मेरे पिताद्वारा हो रहा है।"

"मेरे पिताकी मनोवृत्ति दिनपर दिन अधःपतित होती जा रही है, इसका कारण समझमे नही आता! यदि यह कहा जाय कि उनको धनकी कमी है, सम्मानकी कमी है, तो यह सत्य नहीं है। वे अवधके सबसे बड़े ताल्लुकेदार हैं, और आज वे यू. पी. सरकारके सलाहकार है। उनका यह पतन! मुझे विश्वास नही होता कि वे इतने नीच हो सकते है। क्या उनका अन्तःकरण क्षणमात्रके लिए भी अनुतप्त नही होता? अपनी नीच वृत्तियोके प्रति उन्हे घृणा नही होती?"

"मेरा और उनका, पुत्र-पिताका सम्बन्ध है। अम्माने मुझे सदा यही उपदेश दिया है—"पिता स्वर्गोपिता धर्मो, पिताहि परमं तपः।" और अभीतक उसपर मै अमल भी करता रहा, किन्तु अब मेरे सामने कलकी घटनासे एक नया प्रश्न, और एक नयी समस्या उपस्थित हो गयी है। क्या मुझे अपने सिद्धान्तोकी हत्या करना उचित है, या पिताके विरुद्ध उनके सिद्धान्त और उनकी स्पष्ट आज्ञाके विपरीत मार्ग ग्रहण करना उचित है?"

"मै क्रान्तिकारी दलका एक सदस्य हूँ, मैंने वर्त्तमान अंग्रेजी सरकारको नष्ट कर देनेका बीडा उठाया है। छल, बल, कौशल, सभी उपायोंमे इस राजको समाप्त कर जनताका राज्य स्थापित करनेका गुरु भार मैंने ग्रहण किया है। इस प्रयासमें न मालूम हमें कितनोके प्राण-हरण करने पडेंगे। मै क्षत्रिय सन्तान हूँ, राजपूती खून मेरी नसोमें प्रवाहित हो रहा है, मैं समरसे पीछे हट नही सकता। प्राण लेनेके लिए तथा देनेके लिए कटिबद्ध हूँ। किन्तु

इस युद्धमें तो मुझे अपने पितासे विरोध करना पड़ेगा, उनसे भी लोहा लेना पड़ेगा। वे उस सरकारके विशिष्ट अंग हैं, जिसका नाश करनेके लिए मैं तुला हुआ हूँ। यह तो पिता-पुत्रमें युद्ध होगा।"

"पिता-पुत्रका युद्ध--यह कोई नवीन तथा अद्भुत बात नहीं है। इतिहासके आदिसे होता आया है, और शायद अन्ततक चला जायगा। अपने-अपने सिद्धान्तोंकी रक्षामें पिता-पुत्रमें युद्ध हुआ है। हिरण्यकशिपु तथा प्रह्लादका युद्ध तो इतिहास-प्रसिद्ध है, किन्तु प्रह्लादका युद्ध सत्याग्रह और निष्क्रिय प्रतिरोधके रूपमें था। उसने पिताके सिद्धान्तोंको नहीं माना, किन्तु उनके विरुद्ध अस्त्र भी ग्रहण नहीं किया; परन्तु यहां तो सक्रिय प्रतिरोध है। तलवारका जवाब तलवारसे है, शक्तिका नाश शक्तिसे किया जायगा।"

"पिता-पुत्रका सम्बन्ध कितना निकट है। पुत्र तो पिताका प्रतिरूप होता है, उसके भाव, विचार, रक्त सब तो पिताके द्वारा मिलते हैं, उन दोनोंमें अन्तर कुछ नहीं होता; परन्तु सिद्धान्तोंके राज्यमें पिता और पुत्र दो भिन्न-भिन्न व्यक्ति हैं। दोनों समाजके स्वतन्त्र व्यक्ति हैं--वहांपर विभिन्नता होना कोई आश्चर्यजनक घटना तो नहीं मालूम होती। इसीलिए मुझमें और पिताजीमें इतना मतभेद है।"

"अपनी प्रजाको सब प्रकारसे सन्तुष्ट रखना, राजाका प्रथम कर्त्तव्य है। उसका राजत्व प्रजाका शोषण करनेमें नहीं है किन्तु उनकी सेवामें है । राष्ट्रके सर्वोच्च पदपर वह आसीन किया जाता है, इसलिए कि वह उनका नेता है, पथ-प्रदर्शक है, दुख-दर्द दूर करनेवाला है, और राष्ट्रका वह बिन्दु है, जहां सब व्यक्ति और कार्य आकर सम्मिलित होते हैं, तथा वहांसे हर-एकका संचालन होता है। सारे राष्ट्रका केन्द्र होनेके कारण सब उसपर अवलम्बित हैं, और वह स्वयं सबपर अवलम्बित है। पारस्परिक निर्भरता, और पारस्परिक शक्तिका प्रतीक है।"

"राजसत्ता और उसके अधिकारोंका उद्गम कहां है ? क्या वह ईश्वर-प्रदत्त है ? हिन्दू शास्त्रोंमें कहीं इसका उल्लेख नहीं है। उसको ईश्वरका प्रति-रूप अवश्य माना है, वह भी केवल एकत्वके लिए, जिसमें राष्ट्रकार्य समुचित रूपसे हो सके। जहां राजाको राष्ट्र-की विभूति माना है, वहां राजाको भी ऐसे कठोर नियमोंसे बांध दिया है कि उसका अस्तित्व केवल एक सेवकके अतिरिक्त कुछ नहीं रहता। राजा और प्रजा दोनोंके लिए एकसे नियम बनाये गये हैं, किन्तु शक्तिका अन्तिम स्रोत प्रजाहीमें निर्णीत हुआ है। यदि राजा राष्ट्रके नियमोंके अनुसार अपना कर्त्तव्य पालन नहीं करता तो प्रजाको सम्पूर्ण रूपसे अधिकार है कि वह उसे च्युत कर दूसरा कोई उपयुक्त मनुष्य नियुक्त करे। यह भी आवश्यक नहीं है कि वह उसीके वंशका हो--अथवा उसका पुत्र ही हो, या और कोई सम्बन्धी। वैदिक कालमें तो राजा मनुष्योंके मत अथवा वोटद्वारा निर्णीत होता था, उसके मरनेके पश्चात् जन-साधारण दूसरे मनुष्यको चुनता था। राजाका पुत्र राजा नहीं घोषित होता था। उप-निषत् तथा ब्राह्मण-कालमें भी यह प्रणाली चली आयी किन्तु इसमें प्रायः राजाका पद वंश-परम्परागत हो गया। राजा फिर भी स्वेच्छाचारी तथा स्वतन्त्र नहीं था। राजनीतिज्ञ ब्राह्मण तथा अन्य नीति-निपुण व्यक्ति, और मन्त्री उनके अधिकारोंपर प्रतिबन्धरूप रहे। कोई भी राजा इनके प्रतिकूल आचरण नहीं कर सकता था, और यदि किसीने किया भी

तो उसको राज्यासनसे उतारकर प्राण-दण्डतक दिया गया है, इसका भी प्रमाण इ
इतिहासके बिखरे हुए पृष्ठोंमें वर्त्तमान है। सार्वभौमिक सत्ता और साम्राज्यकी स्थ
बहुत ही नयी व्यवस्था है। उसमे भी उसको स्वेच्छाचारी होने अथवा शोषण क
कहीं अधिकार नहीं है। पराजित राजाके साथ विजयी राजाका बराबरीका व्य
करना अनिवार्य था. वह अपने राज्य-संचालनमे, वैदेशिक नीतिमें सर्वथा स्वतन्त्र
पराजय-चिह्नमें वह केवल नाममात्रके लिए कर देता था. परन्तु इस कालमें भी
रंजन,सम्राटका मुख्य कर्त्तव्य था। राजन् शब्दका अर्थ ही है जो रंजन अथवा
करे। यदि राजा प्रजा-रंजनमे असमर्थ है तो उसको पदच्युत करना प्रजाका सर्वो
धर्म है, कर्त्तव्य है।"

"राजाके पास सैनिक शक्ति होती है, कोष होता है, जिसके द्वारा वह अपनी प्र
अत्याचार कर सकता है. और शक्ति पाकर कौन स्वेच्छाचारी नही होता ? ऐसे र
लिए यह आदेश है कि प्रथम वह उससे असहयोग करे, सैनिक उसकी आज्ञा न मानें,
प्रजा उसको कर न दे। यदि इतना होनेपर भी वह अपना स्वेच्छाचार त्याग नहीं क
तो प्रजाको अधिकार है कि वह राजाके विरुद्ध, अस्त्र ग्रहण करे।"

"इन्ही सब कारणोसे हमारे गांवोकी प्रजाको पूर्ण अधिकार है कि वह मेरे पि
विरुद्ध आन्दोलन करे। परन्तु सैकड़ों वर्षोकी दासतासे प्रजा अपना अधिकार भूल ग
और भेड़-बकरियोकी भांति राजाकी स्वेच्छाचारिता सहन करती है। जो धन, खे
उपजका जो हिस्सा, कर-रूपमे वह राजाको देती है, उसका व्यय आजकल उनके दुः
करनेमें नहीं होता वरन् राजाके ऐश, आराम और विलास-क्रीड़ामे होता है। गाढी क
उनके मस्तिष्ककी विचित्र व अद्भुत सनक निवारणमे व्यय होती है, उनके कीमती व
अथवा कुत्तोंके पालन-पोषणमे अथवा जुआ, घुड़-दोड़में, अथवा मदिरा-पान और व
चारमें, अबाध रूपसे व्यय की जाती है। उफ् ! कितना अन्तर आ गया है।"

"अब मेरा कर्तव्य क्या है ? क्या इसी प्रकार अज्ञानकी धाराको बहने
शताब्दियोंसे इसी अज्ञानकी ओटमे राजा और जागीरदार अपना स्वार्थ-साधन करते
हैं। पूंजीपतिके रूपमें उन्होने अपनी प्रजाका रक्त चूसनेमे कोई कसर नहीं
जहांतक बना है, और जैसे भी वे समर्थ हुए है, छल,बल, कौशल सब तरह उन्होने उ
रक्त-शोषण किया है। पडितों तथा मौलवी-मुल्लाओद्वारा उन्होने अपनेको ईश्व
प्रतिरूप प्रसिद्ध किया और अपने विरुद्ध किसीको बोलने नही दिया। सिपाही और प्य
द्वारा उन्होंने उनका घर लुटवाया, पथका भिखारी बना दिया, और यदि उसके विरो
उन्होंने उँगलीतक उठायी तो पाशविक बलसे उनको कुचल दिया। आह. यही तो कल पि
जीने भी किया है। दीन-हीन. नंगे और भूखे, त्रस्त और विपन्न, मूर्ख, अशिक्षित किस
विरोधके रूपमे पिताजीके पास आये थे। उन्हें विश्वास था कि सारा अत्याचार, जोर-ज
उनके कारिन्दे करते हैं, अपनी इच्छासे, स्वामीकी इच्छा या उनके आदेशसे नहीं। अत
उनका कर्त्तव्य है कि वे उसकी सूचना अपने स्वामीको दें, और वह उन्हें निवारण कर दे
किन्तु उनको यहां क्या उपहार मिला? प्राण लेनेवाली गोलियां,पुलिसद्वारा यन्त्रणा, मुक
और कठिन कारावास। विदेशी राज भला कब प्रजाकी सहायता करेगा। जमीदार, जाग

ताल्लुकेदार और राजा तो उसकी सत्ताके प्रधान स्तम्भ हैं। वह उन्हींके द्वारा शासन
हैं, और वे बड़ी तत्परतासे उसको नष्ट करनेमें सहयोग देंगे।"

दिवाकर निमग्नतासे कमरेके द्वारकी ओर देखने लगा। वह खुला और
र आते हुए कुँवर रणजीत सिंहने कहा—"भाई साहब, आपरेशन कुशलपूर्वक हो गया।
की गोली निकल आयी, कोई विशेष हानि नहीं हुई। दस-बारह दिनमें पूर्ण रूपसे
य हो जायगा, भयकी कोई बात नहीं है।"

फिर समाचारपत्र उठाते हुए कहा—"क्या यह आजका पत्र है?"

दिवाकरकी इच्छा न थी कि उसका बाल्य सहचर रणजीत उस समाचारको पढ़े
कलकी दुर्घटनाके सम्बन्धमें प्रकाशित हुआ था। किन्तु रणजीतकी पहली दृष्टि उसीपर
।। वह पढ़ने लगा। दिवाकरका आनन बार-बार अपना रंग बदल रहा था। घृणा,
र क्रोधसे उसका बुरा हाल था। अपने मित्रकी दृष्टिमें वह कितना तुच्छ हो जायगा!
के पिताका, अनर्गल मिथ्या दोषारोपणद्वारा उसके अनौचित्यके सुधारनेका प्रयत्न
तना भद्दा और निष्फल प्रतीत होता था—उन पंक्तियोंके भीतरसे सत्य झाँकता हुआ
ह रहा था कि यह आवरण मिथ्या है!

रणजीत सिंहने पत्र पढ़कर, मेजपर रख दिया, और प्रश्नसूचक दृष्टिसे उसकी
ार देखा।

वह अपने नेत्र उसके सम्मुख न कर सका, वह भूमिकी ओर देखने लगा।

रणजीत अपने मित्रकी भावुकतासे परिचित था। उसने उसकी टिप्पणी करनेका
यत्न नहीं किया।

दिवाकरने उठते हुए कहा—"चलो, जरा उस युवकको मैं भी देख आऊँ। देखनेमें तो
ह सुशिक्षित और समझदार मालूम होता है। अच्छा, उन वृद्ध किसानोंकी क्या दशा है?"

रणजीतने चाय पीते हुए कहा—"उन सबकी हालत ठीक है। दो के तो कोई
ंघातिक चोट नहीं लगी। पैर और हाथमें कुछ चोट आयी है। मरा कोई नहीं। शेष
ोगोंके छर्रे लगे हैं, जो दो ही तीन दिनमें आराम हो जायँगे। चलो, तुमको दिखा लाऊँ।"

रणजीत सिंहके साथ दिवाकर कमरेके बाहर हो गया।

९

सर भगवानसिंहने सक्रोध शारदाके कमरेमें प्रवेश करते हुए कहा—"जरा अपने
सपूतका पत्र तो पढ़ो!" यह कहते हुए उन्होंने एक पत्र उनके सामने फेंक दिया। शारदा
इन दिनों पिता-पुत्रके मध्य गहरी-खाँईके पुलका काम दे रही थी। जैसे पुलको जलका वेग,
और वायुकी थपेड़े दोनों सहन करना पड़ता है—उसी प्रकार पिताके क्रोधकी अधिक
मात्रा उसपर ही बीतती थी, और पुत्रका दृढ़ताके साथ विरोध-वेग वह स्वयं सहन करती
हुई उसकी उद्दंडताको मिटानेका उद्योग करती थी। शारदाने धीरताके साथ पत्र लेकर पढ़ना
आरम्भ किया—

"पूज्य पिताजीके श्री चरणोंमें सादर प्रणाम,

संसारकी रचना ईश्वरने मनुष्योंके कर्म करनेके लिए की है, इसका प्रमाण हमारे

धार्मिक ग्रन्थोंमें पग पगपर मिलता है। "उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधत"—उठो, जागो और कर्ममें रत हो—यह सार तत्त्व हमारे आचार्योंने सब समयके लिए निर्धारित कर दिया है, अतएव संसार कर्मक्षेत्र है और मनुष्य कर्त्ता। फलाफलकी विवेचनाका अधिकार कर्मिष्ठ मानवको नही है, जैसे परीक्षामें बैठे हुए विद्यार्थीका धर्म है केवल प्रश्नोंका उत्तर देना, अपनी बुद्धि और ज्ञान-बलके अनुसार।

घरमें बैठे बैठे तबियत नही लगती, इसलिए मैंने यह निश्चय किया है कि गाँवोंमें जाकर स्वयं देखूँ कि हमारे कारिन्दे कहाँतक सच्चाई और ईमानदारीसे काम करते है, और इसके अतिरिक्त मेरी इच्छा है कि मै गगॉववासियोंको अधिक निकटसे देखूँ, और उनको पहचाननेका प्रयत्न करू,उनसे मिलकर उनका दुखदर्द पूँछू,जानूँ,और उसका निराकरण करूँ। कारिन्दोके भरोसे अपनी प्रजाको छोड़ देना कदापि न्यायसंगत नही है। आशा है कि आप मेरे कार्यका अनुमोदन करेंगे, और अपने राज्यसे उन दुर्गुणोंको मिटानेके प्रयत्नमें सहयोग देंगे, जिनकी आलोचना यदाकदा समाचारपत्रोंमे हुआ करती है।

इच्छा थी कि मैं माताजीका आशीर्वाद लेकर, और आपकी शुभकामनाएँ लेकर इस महायज्ञमें प्रस्थान करूँ, किन्तु समय नही है। कुँअर रणजीत सिंहके गाँव हमारे इलाकेके पास ही हैं, वे भी हमारे साथ जा रहे हैं, इसलिए इस त्रुटिके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ। मैं अपने कार्यका विवरण आपकी सेवामे बराबर भेजता रहूँगा।

माताजीको मेरा सादर प्रणाम निवेदन कीजियेगा, और मधुको आशीर्वाद!

विनीत,

दिवाकर"

शारदाने पतिकी ओर देखते हुए कहा—"इसमे कोई ऐसी बात तो नही है, जिसमे आपको क्रोध उत्पन्न हो। यह तो बड़ा शुभ समाचार है कि वह अपने कर्त्तव्यकी ओर अग्रसर हो रहा है। प्रजाकी रक्षा करना कारिन्दोके उत्पातसे, हमारा परम धर्म है।"

सर भगवान सिंहने व्यंग्य सहित कहा—"हाँ,कुछ कर्त्तव्य आप कर रही है, और कुछ आपके पुत्ररत्न! यह आपकी ही शिक्षाका फल है कि वह इतना आवारा हो गया है। एम० ए० पास करनेके बाद मैंने उससे कहा कि सरकारी नौकरी कर लो। असिस्टेण्ट सेक्रेटरीकी जगह दिलवा रहा था, जिसके लिए हजारों लोग लालायित रहते है, मगर उसने न माना, और यही उत्तर देता रहा कि "मैं सरकारी नौकरी नही करूँगा।" तुमने भी उसका पक्ष लिया है,और उसकी हाँमें हाँ मिलाकर कहा—"नौकरी करनेकी क्या आवश्यकता है।" आखिर नतीजा यही हुआ कि वह मारा-मारा फिरता है, और उसके दिमागमें फासिद ख्याल जड़ पकड़ते गये।"

शारदाने नत नेत्रोंसे कहा—"उसके मस्तिष्कमे कौन-सा बुरा विचार भरा हुआ है। मेरा बेटा तो साधुओंका जीवन व्यतीत करता है। सादासे सादा भोजन करता है. और मोटा कपड़ा पहनता है। क्लब, तमाशा, सिनेमा, नाच रंगके पास नही जाता; या तो पुस्तकें पढ़ा करेगा, या एकान्तमें बैठा हुआ गगनके तारे गिनता है। जो अवगुण दूसरे जागीरदारोंके घरानोंमें देखनेको मिलते है, उनमेसे एक भी मेरे लालमें देखनेको नही मिलेंगे, और उनकी गन्धतक न मिलेगी। उस जन्मका कोई पथ-भ्रष्ट योगी है, जो...!"

सर भगवान सिंहने हँसते हुए कहा—"हाँ, जो तुम्हारी कोखसे प्रगट हुआ है !" सर भगवान सिंहका व्यंग्य कमरेको प्रतिध्वनित करने लगा। शारदा कुछ शर्मा गयी। वे फिर कहने लगे—"हाँ, मैं यह स्वीकार करता हूँ कि उसमें वे दुर्गुण नहीं हैं, जिनके लिए ताल्लुकेदारकी सन्तान वदनाम होती है। अगर ये दोष उसमें होते तो शायद मैं उतना दुखी न होता, जितना कि उसका यह एकान्तवास मुझे खटकता है। एकान्तवासी पुरुष कभी कभी भयंकर काम करते देखे गये हैं, उसकी भावभंगी, आचार विचारोंपर जब मैं ध्यान देता हूँ तो मुझे यह प्रतीत होता है कि वह कहीं क्रान्तिकारी न हो जाय, जो सबसे वड़ा भयंकर अपराध है। हमारी ब्रिटिश सरकारके प्रति उसके हृदयमें राजभक्तिके भाव नहीं हैं। हरएक अंग्रेजसे वह लड़नेके लिए तैयार रहता है। अभी उस दिन मिस्टर अलेक्जेण्डरसे जो मेरा सेक्रेटरी है, वात ही बातमें लड़ बैठा, और हमारी सरकारकी बड़ी कटु आलोचना करने लगा, जिनसे स्पष्ट राजद्रोह प्रगट हो रहा था। इसका फल यह हुआ कि गवर्नरतकने मुझसे कहा—'अपने पुत्रकी गतिविधिपर आप सतर्कतासे दृष्टि रक्खें'।"

शारदाने दवे हुए स्वरमें कहा—"हाँ, उसका स्वभाव बड़ा उग्र है। देशके प्रति उसकी बड़ी उच्च भावनाएँ हैं। वह स्वतन्त्र भारतका स्वप्न देखा करता है। कमसे कम मैं इसमें कोई दोष नहीं देखती। वह क्षत्रिय-सन्तान है, राजपूती खून उसमें दौड़ रहा है, वह यदि स्वदेश-सेवाके लालायित है तो इसमें हानि ही क्या है ?"

सर भगवान सिंहने क्रुद्ध स्वरमें कहा—"तभी तो कहता हूँ कि तुम्हीने उसको वरबाद किया है, और उसके इन विचारोंको पुष्टता दी है। इस स्वदेश-भक्तिका परिणाम क्या हो सकता है, जानती हो ? एक दिन कुँवर साहब कैद होंगे, कौन जानता है निर्वासित हों या फाँसीपर झूलें ! तमाम जायदाद जब्त होगी, और हम सब पथके भिखारी हो जायँगे। उस समय यह स्वदेश-भक्ति कितनी महँगी पड़ेगी। कांग्रेस और क्रान्तिदल वेकार तथा निठल्ले लोगोंकी संस्था है, जिनको कुछ काम नहीं रहता, और जो चन्दोंसे अपना पेट पालते हैं, उनके लिए वहाँ जगह है, और वही उसकी शोभा है। तभी तो मैं इसका दमन करता हूँ, और सरकारकी सारी ताकत लगाकर इसको नाश कर देना चाहता हूँ। ये संस्थाएँ नवयुवकोंको पथभ्रष्ट करती हैं, और उनसे चन्दा वसूल कराकर नेता कहलानेवाले व्यक्ति अपना उदरपोषण करते हैं। देशमें सर्वत्र अराजकता फैलाते हैं, और कानून तथा जेलका भय दूर कराकर डाकाजनी करना चाहते हैं। गोली चलानेका हुक्म कल मैं हरगिज न देता, परन्तु वे अभागे लाये थे अपने साथ एक खद्दरधारी नवयुवकको, जो मुझे प्रजापालनका उपदेश देने लगा। गाँववाले इन खद्दरपोश भेड़ियोंसे बचे रहें, इसीलिए उनको इतना कठोर दण्ड दिया गया है। अब उनको यह हौंसला कभी न होगा कि वे जमात वनाकर यहाँ आवें, या किसी कांग्रेसीके चक्करमें फँसें।"

उन्होंने शारदाकी ओर सगर्व देखा। शारदाने धीमे स्वरसे कहा—"क्षमा कीजियेगा, किन्तु यह दण्ड तो अपराधकी गुरुतासे कहीं अधिक था, जो न्यायसंगत कदापि नहीं कहा जा सकता।" आलोचनाकी प्रखरताने उनको विचलित कर दिया। उन्होंने उत्तेजित स्वरमें कहा—"न्याय तथा अन्यायका निर्णय मैं तुमसे करवाना नहीं चाहता। ज्वरकी औषधियाँ प्रायः कड़ुवी हुआ करती हैं। शासनमें न्याय तथा अन्यायका विचार नहीं करना

होता। जिस प्रकारसे शासन सुदृढ़ हो, वह मार्ग अवलम्बन करना नीतियुक्त है। शिथिल शासन अशान्तिकी जड़ है और अराजकताकी जननी। मुझे केवल यही भय है कि दिवाकर कहीं गाँवोंमें अराजकताका प्रचार न करे।"

शारदाने मृदु मुस्कानसहित कहा—"वह अपने हाथसे अपने पैरोंमें कुल्हाड़ी न मारेगा। वह पिताके विरुद्ध कभी कोई आचरण नहीं करेगा। युवावस्थाका जोश है, जो थोड़े दिनोंमें ठण्डा हो जायगा। अब हमें उसके विवाहका प्रबन्ध शीघ्र करना चाहिये।"

सर भगवान सिंहने कहा—"विवाह करनेके लिए वह कहाँ राजी होता है। यदि उसका विवाह हो जाय, तो शायद यह पागलपन शीघ्र ही समाप्त हो जाय। एकसे एक उत्तम सम्बन्ध आ रहे हैं, किन्तु जब तुम्हारे योगी महाराज तैयार हों, तब तो कोई स्थिर किया जाय।"

शारदाने मुस्कराते हुए कहा—"विवाहकी ओरसे तो वह उदासीन नहीं है। उसका विचार किसी राजकुमारीसे विवाह करनेका नहीं है।"

सर भगवान सिंहने सक्रोध कहा—"तब उसके लिए मैं भंगिन कहाँसे लाऊँ? साधारण हैसियतका आदमी क्या हम लोगोंका आदर-सत्कार कर सकेगा? मेरे एक ही लड़का है, किसको निमन्त्रित नहीं करूँगा? गवर्नर, जागीरदार, राजा, महाराजा, बड़े-बड़े अफसरान, सभीको ले चलना होगा। इसके अतिरिक्त सम्बन्ध हमेशा बराबरीवालोंसे ही करना उचित है। नीच घरकी लड़की अपने साथ नीचता लेकर आवेगी, जिससे वह और भ्रष्ट हो जायगा।"

इसी समय माधवीने उस कमरेमें प्रवेश किया। उसका निस्तेज आनन स्पष्ट रूपसे कह रहा था कि उसके हृदयपर कड़ी चोट लगी है। दिवाकरके प्रति असन्तुष्ट रहनेके कारण सर भगवान सिंहका वात्सल्य विशेष रूपसे माधवीकी ओर उमड़ रहा था। वे उसमें अपने भावों तथा विचारोंका प्रतिबिम्ब देखना चाहते थे। उसका मलीन मुख देखकर उनके मुँहकी बात मुँहमें ही रह गयी। उन्होंने उत्कंठित स्वरमें पूछा—"मधु, क्या तुम्हारी तबियत खराब है? क्या बात है?"

माधवीने अपने मनके भावको छिपाते हुए कहा—"नहीं पापा, कोई विशेष बात नहीं है. कल मच्छरोंकी वजहसे सो न सकी, इसीसे सिरमें कुछ दर्द है। थोड़ी देर-में अपने आप अच्छा हो जायगा।"

सर भगवान सिंह आकुलताके साथ उसकी नाड़ी-परीक्षा करने लगे। पितृ-सुलभ सन्तान-प्रेमके आवेशसे कहा—"कुछ ज्वर मालूम पड़ता है। डाक्टरको अभी बुलवाता हूँ।" फिर शारदासे उपालम्भके स्वरमें कहा—"मधुकी ओर तुम नितान्त उदासीन रहा करती हो। सवेरेसे उसकी तबियत खराब है, और तुमने डाक्टर तक नहीं बुलवाया।"

माधवीने सकुचाये हुए स्वरमें कहा—"नहीं पापा, कोई विशेष बात नहीं है। अभी ठीक हो जायगा।"

किन्तु सर भगवान सिंहने उसके कथनपर कर्णपात नहीं किया। वायुवेगसे वे पारिवारिक डाक्टरको टेलीफोनसे बुलानेके लिए चले गये। शारदा माधवीके शरीरकी परीक्षा करने लगी।

१०

साप्ताहिक बाजार शुक्रवारको रमईपुरमें लगा करती थी, जिससे वह दिन विशेष रूपसे चहल-पहलका था। चार-पाँच कोसकी दूरीसे क्रय व विक्रयवाले आया करते थे। हरएक वस्तु वहाँ बिका करती थी। बाजारके अग्निकोणमें एक बहुत बड़ी मसजिद शाही जमानेकी बनी हुई थी, जिसमें आजकल विशेष रूपसे बाजारमें आये हुए, तथा रमईपुरके रहनेवाले मुसलमान नमाज पढ़ने जाते थे। कुछ वर्ष पहलेतक वह मसजिद प्रायः शून्य ही सी पड़ी रहती थी। परन्तु इधर दो-तीन सालसे एक मुल्ला अब्दुलगनीने उसपर अपना अधिकार जमा लिया था।

अब्दुलगनी कहाँसे आया, और किस अधिकारसे उसने मसजिदपर कब्जा किया, इस सम्बन्धमें प्रायः किसीने उत्सुकता प्रगट नहीं की। यदि कोई कभी भूलेभटके पूछ बैठता कि 'मौलवी साहब, आप कहाँके रहनेवाले हैं. और यहाँक्यों आये हैं' तो अब्दुलगनी बड़े शौकसे अपनी बैसाखी रख देता, लकड़ीकी टांग फैलाकर जमीनपर बैठ जाता और करुणा जाग्रत करनेवाले स्वरमें कहता—"बुगदादकी लड़ाईमें, मेरा बटालियन जब सन् १९१६ में भेजा गया, तो मैंने हजार कोशिश की कि अपना नाम फौजसे कटा लूँ, क्योंकि वह लड़ाई मुसलमानोंके खिलाफ थी। मैं लड़कपनसे ही कुरआन पढ़ा करता था, बहुत जहीन होनेके कारण मुझको हिफ्ज हो गयी, जिससे बारह वर्षकी अवस्थामें मैं हाफिज कहलाने लगा। फौजमें भी मैं पाँचो वक्तकी नमाज पढ़ा करता था, और इस लिहाजसे मैं वहाँभी मुसलिम भाइयोंका अगुआ था। मजहबी मामलोंमें मैं अपने अफसरोंसे भी लड़ जाता था, और फौजी कानूनको बालाए-ताक रख दिया करता था। आखिर जर्मन फौजसे लोहा लेते वक्त एक जहरीली गोली मेरे पैरमें लग गई, जिससे यह मेरा पैर काटा गया और मुझे पेन्शन भी मिल गयी। बुगदादसे जब वापस लौटा तो हज करने गया, और वहाँपर हजरतकी कब्रपर नमाज पढ़ा और इबादत की। इबादत करते करते मुझे इलहाम हो गया। मुझे ऐसा मालूम हुआ कि हजरत साहब मेरे सिरहाने खड़े होकर मेरी पीठपर हाथ फेर रहे हैं। वल्लाह क्या तरावट थी, मानों बर्फके हाथ हों। मेरा दुखदर्द, पैरकी पीड़ा सब काफूर हो गयी। मैंने हाथ जोड़कर पूछा–"बन्देके लिए क्या हुक्म होता है?" तो गैबसे आवाज आयी—"इसलामकी रोशनी कुछ धीमी पड़ रही है, इसलिए तू जाकर सच्चा इसलाम फैला। बस तेरे लिए यही हुक्म है।" इसके बाद मुझे कुछ होश न रहा, जब थोड़ी देर बाद होश आया, तो बस मुतवातिर यही एक ख्याल जोर मार रहा है कि चलो, आगे बढ़ो, इसलाम जहाँ कमजोर पड़ता हो, वहाँके गुमराहोंको सच्चा रास्ता दिखाओ।" बस तभीसे घूम रहा हूँ। हालाँकि मेरी एक टाँग लकड़ीकी है, बैसाखीके बल चलता हूँ, मगर खुदा-कसम अपने जिस्ममें इतनी ताकत महसूस करता हूँ कि जितनी एक कद्दावर नागौरी साँड़में होती है। गदा, लाठी, तलवार, सभीके पैतरे जानता हूँ, और बन्दूकका निशाना लगानेमें तो यकता हूँ, तमाम उम्र गोली चलायी है। चाँदमारीमें मैं हमेशा अव्वल रहा। मेरे पास तमगोंका ढेर था। सुनहले और रुपहले दोनों थे। मगर मैंने उनको अपने पास रखना मुनासिब नहीं समझा, क्योंकि वे हिर्स और लोभ पैदा करते हैं, और फिर जब मैंने फकीरी

ले ली तब इन चीजोंसे क्या मुराद ! गर्ज कि जो सोना चाँदी उनको गलानेसे मिला वह गरीबों-को ख्वाजा साहबकी दरगाह अजमेर शरीफमें उर्सके अवसरपर बाँट दिया। वल्लाह, ख्वाजा साहबकी भी मेहरबानी हुई, उन्होंने भी ख्वाबमें हजरत रसूलकी तरह मुझको वही हुक्म दिया कि इसलामका प्रचार करो। ख्वाजा साहबकी दरगाहसे कोई नाउम्मीद होकर नही लौटता। हाथोंहाथ परिचय मिलता है।"

गनी,—अब्दुलगनीकी बातें समाप्त ही नहीं होती थीं। जहाँ एकबार सिलसिला छिड़ा नहीं कि तीन चार घण्टोंतक धाराप्रवाहकी भाँति चला करता। कभी मिस्रका जिक्र है, तो कभी कुस्तुनतुनियाँका। कभी खिलाफतका, कभी वहाबियोंका, कभी लंका, कभी जावा, और कभी पंजाब, सिन्ध, बंगाल आदि देशोंकी चरचा होती थी। इस भाँति उसने अपना प्रभाव रमईपुरकी जनतापर जमा लिया था। वह क्या हिन्दू, क्या मुसलमान, सबसे प्रेमपूर्वक मिलता था, और गाँवभरके सब बच्चोंको गंडे, ताबीज, काला डोरा आदि बाँटा करता था, बिच्छू-साँप झाड़ता था, भूत, पिशाच, जिन्न, ब्रह्मराक्षसकी बाधाएँ मिटाता था, पागलोंका इलाज करता था, और हर जुमेरातको शाह साहबकी कब्रपर चिराग जलाता और वहाँ कव्वाली गवाता था। शाह साहबका भी उद्‌घाटन उसीने किया था। न-मालूम कितने समयसे मस्जिदसे थोड़ी दूर एक पक्की कब्र बनी हुई थी, जो समयके प्रभावसे कहीं कहीं टूट गई थी, ईटें झाँक झाँककर बाहरी संसार देखने लगी थीं। सहसा एक दिन गनी वहाँपर खड़े दिखायी दिये। अपने हाथसे कब्रको उन्होंने झाड़ा बुहारा, और बिखरी हुई ईटें यथास्थान रखने लगे। चूँकि वह कब्र गाँवकी आबादीसे ज्यादा दूर न थी, इसलिए बातकी बातमें वहाँ मनुष्योंकी, जिनकी आँखोंसे उत्सुकता उमड़ रही थी, भीड़ जमा हो गयी। एक हिन्दूने पूछा—"क्यों हाजी साहब, क्या हो रहा है ?" अब्दुलगनीने कोई जवाब नहीं दिया। वह अधिक तन्मयतासे काम करने लगा। दर्शकोंकी उत्सुकता न मानी, वे कारण जाननेके लिए अधीर हो उठे। गाँवोंके रहनेवाले प्रायः उत्सुक स्वभावके हुआ करते हैं। एक ही प्रकारका जीवन व्यतीत करनेवाले गाँववासी किसी नवीन घटनाकी ओर बड़ी शीघ्रतासे आकृष्ट हो जाते हैं। दर्शकोंकी भीड़ बढ़ती गई। जैसे वर्षाकालमें तालाब-की ओर चारों ओरसे छोटे-बड़े जलके स्रोत आकर अविराम मिलते रहते हैं, उसी प्रकार खेतोंकी ओर जाते हुए प्रायः सभी किसान वहाँ आकर खड़े हो गये। सब एक दूसरेसे पूछते कि बात क्या है, परन्तु कोई उत्तर देनेमें समर्थ नहीं था। खेतोंपर जानेके लिए उन्हें शीघ्रता थी। बैल आगे चलनेके लिए उतावले हो रहे थे, प्रातःकालका समीर उन्हें बरबस खेतोंकी ओर घसीट रहा था, मगर उनके अभिभावक किसान वहाँसे हटते ही नहीं थे। रातभरकी भूखी मक्खियाँ उन्हें काट रही थीं, जिनको वे अपनी पूछोंसे और गर्दन हिला-हिलाकर उड़ानेका प्रयत्न कर रहे थे। ग्रीवा-आन्दोलनसे उनकी घंटियाँ सुमधुर शब्दसे बजती हुई अपनी उत्सुकता प्रगट कर रही थीं और उनका नाद उस अस्फुट गुंजनमें वाद्य तथा तालका काम कर रहा था।

महीपत सिंह मुखियाने आगे बढ़कर किंचित् उच्च स्वरमें पूछा—"अरे हाजी साहब, आप आज क्या कर रहे हैं ? आप तकलीफ न कीजिये, आप हुक्म दीजिये, पलक मारते सफाई करवा दूँगा।"

जब अब्दुलगनीने देखा कि भीड़ पर्याप्त हो गई है, और रहस्योद्घाटनका उचित अवसर है, तब वह कब्रका साफ करना बन्द करके उनके सामने एक शिलाखण्डपर बैठ गया, और लम्बी दाढ़ीपर हाथ फेरकर कहने लगा--"अरे मुखियाजी क्या बताऊँ, मैंने कल रातको एक अजीब ओ गरीब ख्वाब देखा। आप लोगोंको यकीन चाहे न हो, मगर जो हकीकत है, वह हर वक्त हमेशा हकीकत रहेगी।"

मुखियाके साथ साथ दूसरे हिन्दू-मुसलमान बोल उठे--"वाह, आप झूठ क्यों कहेंगे। आप फकीर औलिया हैं,झूठ किसलिए बोलेंगे। हाँ, अगर देखते कि आपके बाल-बच्चे हैं, परिवार है तो कुछ समझमें भी आता कि आप झूठ बोल सकते हैं। गृहस्थी चलाने-में सभी छल कपट करना व झूठ बोलना पड़ता है। क्योंकि बिना झूठका आश्रय लिये बच्चोंका पेट नहीं पाल सकते। किसानोंको लूटनेके लिए सब मुँह बाये तैयार रहते हैं। अगर झूठ न बोलें तो घरमें एक दाना भी न बचने पावे, और बाल-बच्चे तड़प तड़पकर मर जायँ। परन्तु आप क्यों झूठ बोलेंगे ? आखिर बतलाइये तो आपने क्या ख्वाब देखा है। सब खैरियत तो है ?"

'खैरियत' शब्दने अब्दुलगनीकी कल्पनाका द्वार उन्मुक्त कर दिया। वह बड़े जोशसे कहने लगा--"गाँवकी खैरियतका सवाल न होता,तो भला मैं लँगड़ा आदमी इतनी तबालत मोल लेता। हरगिज मैं अपनी मस्जिदके बाहर कदम न रखता। यह तो आप लोगों-को मालूम है कि मैं अपना सारा वक्त इबादत-पूजामें सर्फ करता हूँ, कहीं आता जाता नहीं। आप लोगोंमेंसे जो मेहरबान रूखा, सूखा टुकड़ा दे देता है, खाकर जिन्दगीके दिन गुजारता हूँ। इन्सानका फर्ज है कि अगर कोई उपकार करे तो वह उसको माने, और हमेशा यही कोशिश करे कि वह उस उपकारका बदला चुका दे। मैं अपाहिज, लँगड़ा, आप लोगोंकी क्या खिदमत कर सकता हूँ, जो अहसान मेरे ऊपर आप लोग मेरी परवरिश करके कर रहे हैं, उसका बदला तो मैं हरगिज हरगिज नहीं चुका सकता, अगर अपनी खालकी जूतियाँ बनाकर आप लोगोंको पहिनाऊँ तो भी वह कम है...।"

अब्दुलगनी आगे बोलने न पाया, मुखियाने कहा--"वाह, साँई साहब, आप क्या फरमाते हैं! हमारे गाँवका भाग्य तेज था, जो आप-जैसा बेलौस फकीर इस गाँवमें ठहरा है। आपने क्या कम हमारा उपकार किया है। गंडे तावीज देते हैं, भूत चुड़ैल निकाल देते हैं, साँप-बिच्छू झाड़ते हैं, गाय-बैलोंकी नजर तोड़ते हैं! अरे, जितना आप करते हैं उसका सैकड़वाँ हिस्सा भी तो हम नहीं कर पाते। करें कहाँसे साँई साहब,हमारे घरोंमें चूहे कसरत कर रहे हैं, बाहर जिमींदारके सिपाही, पुलिस चौकीदार, महाजन, सभी तो हमारा खून पीनेके लिए तैयार घूमते रहते हैं। हमेशा मन मारकर रह जाना पड़ता है।"

अब्दुलगनी उस दिनसे हाजी साहबसे साँई साहब हो गये। कौन-सा गाँववासी मुखियाके दिये हुए खिताबकी अवहेलना कर सकता था। हाजी साहबसे साँई साहब कहना उन्हें घरोआ और परिचित प्रतीत होता था।

अब्दुलगनीने बड़ी नम्रता व विनयके साथ कहा--"यह तो जमाना ही ऐसा है। जबसे फिरंगी आये तबसे हमारा सोनेका मुल्क राख का ढेर हो गया। मुसलमानी बाद-शाहोंके वक्तमें कितना अमनचैन था, लोग कितने खुशहाल थे। एक आनामें सब परिवार-

का पालन-पोषण होता था। एक रुपयेका दस सेर घी, बारह मन गेहूँ बिकता था। लगान बहुत कम था, सभी आराम थे। खेत पकते थे, पानी बरसता था, जानवर कभी बीमार न होते थे, और ताउन प्लेग, हैजा वगैरह महामारियोंका नामतक न था, मगर आज क्या हालत है? बरसात कभी वक्तसे नही होती, पानी बरसा तो बीज नहीं उगते। दो मन बीघा-की पैदावार रह गई है। अनाजमें वह ताकत नही रह गई, हमारी औलाद दिनपर दिन कमजोर होती चली जा रही है। भाइयो, यह सब अंग्रेजी हुकूमतका असर है। हमें अंग्रेजी अमलदारी मिटाकर फिरसे मुगल बादशाहोंका राज कायम करना है। जब अकबर बादशाह-जैसा राज कायम होगा तब हम लोगोंकी दुख-दरिद्रता मिटेगी। खैर, अल्लाहकी मर्जी होगी तो सब दुरुस्त होगा। हाँ, मै आप लोगोंसे यह कह रहा था कि कल मैंने एक ख्वाब देखा है, बड़ा भयावना ख्वाब था। उसकी याद आते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं, और हाथ-पैर काँपने लगते हैं।"

मुखिया और अन्य गाँववासियोंकी उत्सुकता चरमसीमाको पहुँच चुकी थी। उन्होंने चिल्लाकर कहा—"साँई साहब, कहिये जल्दी कहिये। आपने क्या सपना देखा है?"

अब्दुलगनीने मन ही प्रसन्न होकर कहा—"भाइयो, जो हाल मैंने देखा है उससे साफ नतीजा निकलता है कि इस मुल्कपर बड़ी भारी आपदा आनेवाली है। मुझे ऐसा मालूम हुआ कि आसमानसे एक फरिश्ता, जिसका चेहरा बिजलीकी तरह चमक रहा था, उतरा और मुझे हिलाकर कहा—"अरे, अभीतक तू सो रहा है। सँभल जा, होशियार हो जा, देख वह जलजला, भूकम्प आ रहा है, समुद्रकी लहरें बढ़ती हुई मुल्कका मुल्क गर्क करने, डुबानेके लिए आ रही हैं, पहाड़ काँप रहे हैं, जमीन झूलेकी तरह हिल रही है। सत्य ही जो मैंने अपने चारो तरफ देखा तो प्रलयका नजारा था। बड़े बड़े पहाड़ ऐसे हिल रहे थे कि जिनको देखनेसे अन्देशा होता था, कि अब गिरे, अब गिरे। जमीन जगह जगह फट रही थी, पतिंगोंकी तरह आदमी उनमें समा रहे थे, इन्सान, जानवर, परिन्दे सभी मर रहे थे, लाशोंका ढेर चारो ओर लगा हुआ था। मै डरसे कांप रहा था, तब फरिश्तेने कहा कि जरा ऊपर देख, जो नजर ऊपर दौड़ाई तो क्या देखता हूँ कि आसमानभरमें आग लगी हुई है, जिनसे आगके बड़े बड़े शोले गिर रहे हैं और जो आदमी पानी व भूचालसे बचकर भाग रहे हैं, उनको वे जला रहे है। ऊपरसे जहाँ एक शोला गिरा, वहाँ भकसे आग लग गयी और हजारों आदमियोंके झुण्ड बातकी बातमें जलकर खाक हो जाते। उफ! बड़ा भयावना नज्जारा था। फिर देखा कि कहीं कुछ नही है, न जलजला है, न तूफान है, और न आगकी बारिश है। सब शान्त है। थोड़ी देर बाद क्या देखता हूँ कि मनुष्योंके झुण्डके झुण्ड न मालूम कहांसे भागे चले आ रहे हैं। उन्हें आदमी कहा जाय कि पिशाच। उनके बदनमें सिवाय हड्डियोंके पञ्जरके या ऊपरके चमड़ा और गोश्तका नाम-निशान न था। आदमी, औरतें, बच्चे सभी इसी तरह थे। मालूम होता था कि इन्होंने कभी कुछ नहीं खाया-पिया है। फिर इसके बाद सब छिप गया। मेरी आँख मूँद गयी। जब दुबारा आँख खुली तो देखा कि लाखों आदमी फटाफट मर रहे हैं, चारो तरफ रोने चिल्लानेकी आवाज आ रही है, ताउन, हैजा, कालाजार, सभी बीमारियाँ एक साथ उमड़ पड़ी हैं, जिनसे आदमी तड़ातड़ मर रहे हैं। मैंने मारे डरके आँखें बन्द कर लीं। फिर आवाज आई, 'डरो नहीं, तेरा बाल

बाँका न होगा। तेरे ऊपर खुदाकी मेहरबानी है, हजरत रसूलकी सिफारिश है।' इन लफ्जों-को सुनते ही दिलकी धड़कन दूर हो गयी, डर हिरन हो गया। आँख जो खुली तो क्या देखता हूँ कि एक बहुत ही बड़े बूढ़े-बुजुर्ग, जिनकी सन-जैसी सफेद दाढ़ी तोंदी तक लटक रही है, बहुत ही लम्बे हाथ पैर हैं, आँखें चमकीली और कशिशदार हैं, जो हरएकका दिल अपनी ओर खींच लेती हैं, असाके सहारे बैठे हुए हैं। उनकी आँखोंमें अमृत बरस रहा था। मैं हाथ जोड़-कर उनके सामने खड़ा हो गया। उन्होंने मुझे बैठनेका इशारा किया, मेरे बैठ जानेपर वे मेरी ओर खिसक आये और मेरी पीठ सहलाने लगे। इससे मुझे एक नई ताकत, नया जोश पैदा हो गया। फिर मुझसे कहा—'जो आजाब तुमने देखे हैं, उनसे मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा। तुम हरगिज न घबराना। मैं इसी मसजिदमें आजसे तीन सौ साल पहले रहा करता था। पहले यहाँ जंगल था—इसीके किनारे बैठा हुआ मैं धूनी तापा करता था। शाहंशाह अकबरकी फौज यहाँसे गुजर रही थी, उस वक्त रसदकी कमी पड़ गई, तो वह मेरे पास आया, मैंने कुदरत गैबसे उसका इन्तिजाम कर दिया। तब उसने यहाँ यह मस्जिद बनवा दी, और मैं यहींपर जिन्दगीके दिन गुजारने लगा। वक्त पूरा होनेपर, पासहीकी कब्रमें आराम करने लगा। उस वक्तसे मैं इस गाँवकी बराबर हिफाजत करता हूँ। दरअस्ल इस गाँवका नाम रहीमपुर है, जिसको लोग रमईपुरके नामसे पुकारते हैं। मगर गाँवके बाशिन्दे मेरी कोई खबर नहीं लेते, मेरी कब्र टूट गई है, जंगली झाँड़-झँखाड़ उग आये हैं, गाँवके जानवर वहाँ गलाजत फैलाते हैं। लेकिन तूने अब फिर मेरी खाली गद्दी संभाली है, इसलिए तू मेरा इन्तिजाम कर, कब्रको दुरुस्त करवा, कमसे कम हर जुमेरातको चिराग जलाया कर, और सालमें एक मेला भराया कर। मेरी धूनीकी राख जो मस्जिदके मगरिबी हिस्सेमें दफनाई है, खोद ले, और गरीबोंको, जिनका कोई इलाज करनेवाला नहीं है, बाँटा कर, हर मर्जमें फायदा होगा; भूत, आसेब, दूरसे ही भाग जायँगे। जो मेरी कब्रपर हरेक जुमेरातको चैादर, बताशा चढ़ावेगा या जो भी रुपया पैसा प्रेमभक्तिसे चढ़ावेगा, उसकी उम्मीद पूरी होगी, और जितने हंगामे, तूफान, भूचाल, गोलोंकी बरसात, देखा है, एक भी सताने नहीं आवेगा। यह गाँव मेरा बसाया हुआ है, इसलिए मैं इसकी हिफाजत करता हूँ।' बस यह कहते कहते वे कहीं गायब हो गये। और मेरी आँख भी खुल गई। यही किस्सा है, आज उस जगह खोदकर देखा तो दरहकीकत धूनी बनी हुई नजर आई, जिसमें अजहद राख भरी हुई है। सच्चाईका परिचय जब मिल गया तो फिर यहाँ शाह साहबकी कब्रकी सफाईमें लगा हुआ हूँ।"

इसका प्रभाव उन भोले किसानोंपर इतना पड़ा कि उसी दिन शामसे शाह साहबकी मजार हिन्दू-मुसलमानोंकी बोलवा-मन्नतका केन्द्र हो गया, और अब्दुलगनीकी आमदनी-का एक बेलौस जरिया खुल गया। अब्दुलगनी, साँई साहब बनकर अपना प्रभाव जमाने लगे।

११

साँई अब्दुलगनी मस्जिदके प्रांगणमें बैठा हुआ गाँजाकी पुड़िया खोल रहा था। पास ही रमईपुरके तीन आवारे, नशेबाज, गाँजाकी दम लगानेके लिए उत्सुक

बैठे थे। कुछ ही दिनोंसे मस्जिदमें हर तरहके नशाखोर इकट्ठा हुआ करते थे। अफीम, गाँजा, चरस, और कभी कभी चंडू पीनेवाले भी वहाँ आते थे, जिनको अब्दुलगनी, मुक्त-हस्तसे प्रचुरताके साथ दिया करता था, और जो एक ही तरहका नशा करते थे उनको दूसरा नशा करनेके लिए उत्साहित करता था, कभी कभी जबरन भी पिलाया करता। अगर किसी चीजकी कमी थी, तो वह शराबकी थी, क्योंकि इसलाममें उसके लिए स्थान नहीं मिला था। शराबके बारेमें अब्दुलगनी कहा करता था कि वह हराम हैं, और उसको पीकर इन्सान हैवान बन जाता है, मगर गाँजा वगैरह पीनेसे ईश्वर-भजनमें बहुत ध्यान लगता है, इसलिए वह महज ध्यान जमानेके लिए उसे पीता है। शाह साहबके मजार-की बदौलत रुपया-पैसा,कपड़े-लत्ते और खाने-पीनेकी कोई कमी नहीं रह गयी थी। रमईपुर-से दूर दूर उस मजारकी प्रसिद्धि हो गयी थी. और प्रत्येक बृहस्पतिवारको सैकड़ों रुपये उसपर चढ़ा करते थे।

गाँजा मलते मलते एकने कहा--"साँई साहब बड़े ताज्जुबकी बात है कि कलके छोकरे मनोहरने इतने बड़े बड़े तीन पहलवानोंको हरा दिया है।"

अब्दुलगनीने बड़े ही सन्तोषके साथ हँसते हुए कहा--"अरे, इसका भेद तुम क्या जानो। मनोहरकी क्या हकीकत थी जो उन पंजाबियोंको हराता।"

तीनों नशेबाज एक साथ बोल उठे--"आपको साँई साहब, सब मालूम है, मगर आप कुछ कहते नही कभी।"

गनीने अभिमानमिश्रित स्वरमें कहा--क्या करूँ भाई, तुम लोगोंसे कुछ छिपाना मेरे लिए हराम है. जिस बातका हुक्म मिलता है, वही कहता हूँ, बाकी मन-मारे चुप रहता हूँ। तुम मेरे दिली दोस्त हो, मगर मजबूर हूँ।"

ईदूने गाँजाको सेंकनेके लिए आगपर रखकर कहा--"आपको किसके हुक्मकी जरूरत है साँई साहब?"

गनीके उत्तर देनेके पहले ही बकरीदी बोल उठा--"ईदू, तुम निरे बछियाके ताऊ हो। साँई साहबकी कदमबोसी करते हुए बर्षों बीत गये, मगर शऊर जरा नामको भी न आया।"

बेचारा ईदू स्तंभित होकर उसकी ओर देखने लगा। बकरीदी और गफूर--उसके दोनों साथी जोरसे हँस पड़े। साँई अब्दुलगनीके मुखपर करुणासे ओतप्रोत मन्द मुस्कान दिखायी दी। ईदू कुछ लज्जित-सा हो गया। उसने सकुचित स्वरमें कहा--"जो बात समझ-में नहीं आती, उसे पूछना ही पड़ता है। पूछनेमें क्या पाप लगता है?"

बकरीदीने बड़ी गम्भीरतासे कहा--"तुम क्या नही जानते कि शाह साहबकी कितनी मेहरबानी हमारे साँई साहबपर है? सारा काम साँई साहब उनके हुक्मसे करते हैं।"

ईदूने प्रसन्नतापूर्ण स्वरमें कहा--"यह तो मैं भी जानता हूँ। जो मैं जानता हूँ वह तुम्हारे फरिश्तोंको भी न मालूम होगा। एक दिन आधी रातके बाद मैं जरा अपने खेतोंपर गश्त देने जा रहा था, क्योंकि उन दिनों सूअर बहुत लगते थे। हालाँ कि मेरे खेतोंका रास्ता इधरसे नहीं है, मगर साँई साहबसे मिलनेके लिए इधर ही चला आया। सोचा कि अगर जागते हों तो एक चिलम चढ़ाकर चलूँ। मैं जब मस्जिदके पास आया तो मालूम

हुआ कि दो आदमी बातें कर रहे हैं। एक तो यही साँई साहब थ, और दूसरेको मैंने नहीं पहचाना। दरवाजेके पास कान लगाकर सुनने लगा, उसी समय एक कमबख्त उल्लू बड़े जोरसे बोल उठा, और मुझे चारो ओरसे भूत, आसेब नजर आने लगे। मैं अपनी जान लेकर भागा। दूसरे दिन साँई साहबसे जिक्र किया तो वे हँसने लगे, और कहा कि छिपकर जो कोई मेरी बातें सुनेगा, उसीको मेरे जिन्नत परेशान करेंगे? बस तभीसे मैंने कान पकड़ा और जब आता हूँ रात-बिरात तो साँई साहबको दूर हीसे आवाज दे लेता हूँ। क्यों साँई साहब यही बात है न?"

गनीको अवसर मिला, उसने तुरन्त कहा—"हाँ भाई ईदू, तुम ठीक कहते हो। बस खैरियत उस दिन यही हो गयी कि मेरे जिन्नातोंको तुम्हारा हाल मालूम था कि तुम मेरे पास नित्यके आनेजानेवालोंमेंसे हो, नहीं तो तुम्हारी जानकी खैर नहीं थी। यों तो वे किसीसे कुछ नहीं बोलते, मगर चूँकि तुम चोरीसे मेरे और शाह साहबकी गुफ्तगू सुन रहे थे, इसलिए उन्होंने तुमको सिर्फ डराकर छोड़ दिया, और भाग जानेका मौका दिया, नहीं तो वे तुम्हारी गर्दन पकड़कर मरोड़ देते।"

ईदू उस दिनकी घटनाको याद कर सिहिर उठा। उसने गाँजेकी चिलमपर अग्नि-का एक स्फुलिंग रखते हुए कहा—"लीजिये साँई साहब, दम लगाइये। जबतक आपकी मेहरबानी है तबतक कौन मेरा नुकसान कर सकता है। वाह, आपकी तावीज जबतक मैं पहने हूँ तबतक किसी जिन्न, भूत-प्रेतका असर हो ही नहीं सकता। हाँ उस दिन जरूर मैं बेवकूफी कर बैठा था। यों भी दो आदमियोंकी बातचीत छिपकर सुनना ठीक नहीं होता, फिर आपकी शाह साहबके साथ गुफ्तगू सुनना दरअस्ल गुनाह था।"

साँई अब्दुलगनीने कसकर दम लगाई। चिलमकी लौ एक बालिश्त ऊँची उठकर अपने भक्तोंका मुँह देखने लगी। बारी बारीसे तीनोंने दम लगाई। सबके नेत्र आवेशसे लाल हो गये।

चिलम झाड़ते हुए, बकरीदीने पूछा—"हाँ साँई साहब, आपने यह तो बताया ही नहीं कि मनोहर कैसे उस दिन रखियाँईको पंजाबी पहलवानोंके मुकाबलेमें जीत गया।"

साँई अब्दुलगनीका सुरूर उन्हें सैर-ए-फलकका आनन्द दे रहा था। उन्होंने लम्बी उड़ान भरते हुए कहा—"अरे वह शाह साहबकी मेहरबानी थी। यह तो मैं तुमको पहले ही बता चुका हूँ कि इस गाँवकी हिफाजत शाह साहब करते हैं। उन्हें भला कब मंजूर है कि उनके गाँवका आदमी—चाहे हिन्दू हो चाहे मुसलमान, आखिर है तो उनकी रियाया—शिकस्त खाये। मेरे दिलकी भी यही लगन थी कि मनोहर जरूर जीते। मैंने उस रातको शाह साहबसे इस बातका जिक्र किया, तो उन्होंने हँसकर कहा—"तुम्हारी दुआ कुबूल हुई। एक जिन्नको उसकी हिफाजतके लिए मुकर्रर किये देता हूँ, जो ऐन वक्तपर उसकी मदद करेगा। और वही हुआ भी। तभी तो मनोहरने पलक मारते तीनोंको चित कर दिया।"

गफूर जो अभीतक चुप बैठा था, बोल उठा—"जरूर मनोहरको जिन्नातकी मदद मिल गयी थी। मैं भी कुश्तीके दाँव-पेंच समझता हूँ, पहले पहलवानी करता था, मनोहरको इमाम बख्शने जिस तरह दबाया था, उसकी तोड़का दाँव है ही नहीं, लेकिन मनोहरने इतने बड़े पहवानको गेंदकी तरह उठा कर फेंक दिया, और मजा यह कि वह चित

गिरा। जरूर यह सारा काम उसी जिन्नका था जिसे शाह साहबने उसकी हिफाजतके लिए मुकर्रर कर दिया था।"

दम लगानेके बाद वह सभा बिखरने लगी। सबसे पहले ईदूने उठते हुए कहा—"आज शामको बम्बा लगाना है, इसलिए दिन रहते रहते सब ठीक करदूँ, नहीं तो पानी बेकार जायगा। अब जाता हूँ, रातको किसी वक्त आऊँगा।"

ईदू यह कहकर चला गया। बकरीदीने भी कोई बहाना बताकर अपनी राह पकड़ी। सिर्फ गफूर साँई साहबके पास बैठा रहा।

१२

रहीमकी गृहिणी नसीबन दूरदर्शी और समझदार स्त्री थी। घरका सारा प्रबन्ध उसके हाथमे था, और रहीम भी अपनेको सर्वथा अयोग्य पाकर उसका भार उसके ऊपर छोड़कर सम्पूर्ण रूपसे निश्चिन्त हो गये थे। उनका अधिक समय अखाड़ेमें बीतता था, भोजन आदिके लिए वे घर आया करते थे।

नसीबन अतिथि-सत्कारके लिए प्रसिद्ध थी। चाहे जितने मेहमान आ जाते, उसके मस्तकपर एक शिकन न पड़ती थी। जो जिस योग्य होता उसको वैसा ही भोजन मिलता, और जो उसके यहाँ भोजन न कर सकते थे, उनके लिए 'सीधा' का प्रबन्ध होता था। उसकी गृहस्थी भी बहुत बड़ी थी। दस भैंसियाँ और पन्द्रह गायें, दो घोड़े और चार जोड़ी नागौरी बैल, आठ स्थाई नौकर और दो नौकरानियाँ थीं। बड़े ठाठ बाटसे रहीम काकाकी गृहस्थी चलती थी।

नसीबनका हृदय दयालु, और स्वभाव भी विनययुक्त नम्र था। गाँवका ऐसा कोई व्यक्ति न होगा, जिसपर नसीबनका कोई न कोई अहसान न हो। वह सदैव हर एक छोटे बड़े, गण्य नगण्य, हिन्दू-मुसलमान, सबकी समान रूपसे सेवा शुश्रूषाके लिए कटिबद्ध रहती थी। पुराने रीति-रिवाज ज्योंके त्यों अक्षुण्ण उसकी गृहस्थीमें बने हुए थे। सबेरे चार बजे उठकर खानेका सारा आटा, दस बारह सेरसे कम न होता, अपने हाथों पीसा करती थी, जिससे उसके भुजदण्ड और फेफड़े पुष्ट तथा मांसल थे। उसके बाद वह कुछ भैंस और गायें दुहती, और तुरन्त ही पति तथा कन्या नसीमको पिलाती। रहीमको दूधसे अत्यन्त प्रेम था। इस अवस्थामें भी पाँच-छः सेर दूध रोजाना पीते थे, और नसीमको भी उन्हींके साथ बराबर पीना पड़ता था। पानी और सफाई इत्यादिका काम नौकर करते थे, किन्तु वह निगरानी बराबर रखती थी, भोजन वह स्वयं बनाती, और जब मेहमानोंकी संख्या बढ़ जाती तो नौकरोंसे सहायता लेती। दोपहर शाम जब कभी जरासा अवकाश मिलता तो खेतोंकी देखरेख नित्यप्रति करती, और रोजाना कामका एक कार्यक्रम था, जिसका पालन कड़ाईके साथ होता था। नसीबनके अनुशासनका परिणाम प्रत्यक्ष था, कहीं भी कोई स्थान स्खलित नहीं था, उससे उसकी गृहस्थी बड़े सुचारुरूपसे चल रही थी।

नसीबनके पुत्रसन्तान नहीं थी। बच्चे तो कई हुए, परन्तु जीवित नहीं रहे। सबसे अन्तकी सन्तान नसीम थी, जो जीवित रही। रहीमको पहले जीवनमें सन्तानकी ओरसे सुनसान कुछ खटकता था, किन्तु नसीमके जन्मके पश्चात् वह बहुत अंशोंमें

कम हो गया, और उन्होंने अपने पुत्रसन्तानकी कमी नसीमके द्वारा पूर्ति करनेका संकल्प किया। नसीमका लालन-पालन पुत्रकी भाँति हुआ था। कसरत और पहलवानी सिखानेमें उन्होंने कोई कोरकसर नहीं बाकी रक्खा। नसीमकी मित्र गुलाबपर भी रहीमका सन्तानवत् प्रेम था। दोनोंको एक ही समय कसरत करवाते, और कुश्ती लड़ाया करते थे। गुलाबको नसीमके बराबर दूध तथा अन्य पौष्टिक आहार उनके घरसे मिला करते थे। गुलाब और नसीममें पति-पत्नी दोनों कोई भी अन्तर न रखते थे।

नसीबनका स्नेह गुलाबकी माँ गंगासे विशेष रूपसे था। दोनों एक दूसरेके सुख-दुखमें भाग लेनेवाली बहनोंकी भाँति थीं। दिनमें एक बार मिलकर अपनी चिन्ताओंका पारस्परिक विनिमय करती थीं। जबसे मनोहरके पिता ठाकुर जगपालसिंहका देहान्त हुआ, तबसे गंगाको केवल नसीबनके अम्लान स्नेहका ही सहारा रह गया था, और नसीबन उस सम्बन्धको अभीतक निभाती चली आ रही थी। यहाँतक कि मनोहरके खेतोंकी देखभाल भी वही करती थी, क्योंकि गंगा उच्च क्षत्रिय होनेके कारण घरके बाहर नहीं निकल सकती थी, और मनोहरको अखाड़ेसे ही अवकाश न मिलता था। मनोहर घरका कोई काम यदि करता था तो वह था भैंसोंको दुहना। धारोष्ण दूध पीकर वह अखाड़े चला जाता, और फिर दोपहरको भोजन करनेके लिए घर आता था। खा-पी कर सो जाता, फिर तीन चार बजेतक अखाड़े पहुँच जाता, और एक पहर रात जानेके बाद वापस घर आता! इसका जीवन प्रारम्भ कालसे ही ऐसा बना था, और यदि कोई इसमें हस्तक्षेप करता तो रहीम उसके सिर हो जाते। अंग्रेजी पढ़ाने लिखानेके प्रति रहीम कभी विशेष रूपसे उत्सुक नहीं रहे। धर्मके प्रति उनकी विशेष श्रद्धा रहनेके कारण अरबी तथा संस्कृतकी ओर उनकी रुचि थी। वे कुरआनके साथ साथ हिन्दू धर्मके ग्रन्थोंका भी मनन करते थे, और व्यावहारिक जीवनमें उनका उपयोग करनेका सदैव प्रयत्न करते थे। नसीबनने गंगाकी हार्दिक पीड़ाको जो अपनेको अकेले पाकर हुई थी, बहुत अंशोंमें कम कर दिया था। उसका जीवन नीरस न रहकर कुछ सजीव हो गया था। दोनों अवकाश मिलनेपर धार्मिक चरचा करती थीं। गंगा रामायण पढ़ती, और नसीबन बड़े प्रेमसे सुनती थी। उसके शब्द, भाव, भाषा, इतने परिचित थे कि नसीबन आनन्दमें विभोर हो जाती। सीताकी करुण कहानीमें वह इतनी लिप्त हो जाती कि उसकी आँखोंसे आँसू बहने लगते। वे चित्र कितने घरेलू थे, कितने परिचित थे!

एक दिन दोनों सखियोंने यह अनुभव किया कि गुलाब और नसीम विवाहयोग्य हो गयी हैं, और शीघ्र ही उसका प्रबन्ध होना आवश्यक है। नसीबनने गंगाके साथ यह स्थिर किया कि वह अपने पतिसे इस विषयको छेड़ेगी। उसी मन्त्रणाके अनुसार जब रहीम दोपहरको भोजन करनेके लिए घर आये तो नसीबनने भोजनकी थाली उनके सामने रखते हुए कहा—"क्या आपको इतना काम है कि जरा भी अवकाश नहीं मिल सकता।"

रहीमके लिए यह एक अद्भुत प्रश्न था। गृहस्थीका कौन काम है, यह विचार उनके मस्तिष्कमें कभी आया ही न था। वे चकित होकर अपनी पत्नीकी ओर देखने लगे।

नसीबनने मृदु मुस्कानसहित कहा—"मेरी ओर क्या देखते हो?"

रहीमने हँसकर कहा—"और किस ओर देखूँ। आजके पहले तो कभी कोई काम-

के संबंधमें मुझसे अवकाशके लिए नहीं पूछा गया, यह एक नयी बात है, इससे देखता हूँ। तुम जितनी पटुतासे सारी गृहस्थी चलाती हो, उस तरह मेरे फरिश्ते भी नहीं कर सकते। मैं तो इसके लिए सर्वथा अयोग्य हूँ।"

नसीबनने लजाकर कहा—"अपनी तारीफ सुननेके लिए मैंने बात नहीं छेड़ी है। तुमको हमेशा मजाक ही सूझता है।"

रहीम—"मैंने मजाककी बात तो कुछ नहीं कहा, जो सत्य है वही कहा है। कहो, किस जगह मेरी आवश्यकता है। मैं आपका हुक्म सर-आँखों पर उठाऊँगा।"

नसीबनने हँसते हुए कहा—"इस तरह कहोगे तो मैं कुछ न कहूँगी। कोई मामूली काम होता तो मैं कर उठाती, तुमको तकलीफ नहीं देती, मगर यह मामला नसीमा और गुलाबीकी शादी का है, जिसका भार तुम्हें ही उठाना पड़ेगा।"

रहीम—"नसीमा, और गुलाबीका विवाह तो करना ही है। अब दोनोंकी आयु विवाहयोग्य हुई है।'

नसीबन—"बहुत दिनोंतक कुँआरी लड़कियोंको रखना उचित नहीं है। देखते ही हो कि आजकलका कैसा भयंकर समय लगा हुआ है।"

रहीम—"भयंकर वयंकर समयसे मैं रत्तीभर नहीं घबड़ाता। दोनों लड़कियोंको इस तरह पाला गया है कि यदि दो एक क्या, दस बीस, जवान भी घेर लें, और इनके हाथमें एक लकड़ी भर हो तो, उन जवानोंकी क्या मजाल है जो उनका बदन भी छू सकें। सबके सब या तो धराशायी होंगे, या भागते ही नजर आवेंगे।"

नसीबन—"यह तो बिल्कुल ठीक है कि उनका कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता, किन्तु एक बातकी ओर कुछ ध्यान दिया है?"

रहीम—"वह क्या?"

नसीबन—"तुमने तो इनको कसरत करा और कुश्ती सिखाकर शेरकी तरह बहादुर और जीवट बना दिया है, परन्तु क्या यह भी सोचा था कि इनके अनुरूप वर सहज नहीं मिलेगा। जबतक इनका वर इनसे एक्कीस न हो तबतक जोड़ी कैसे बनेगी?"

रहीम जी खोल कर हँसने लगे। उनका अट्टहास उस घरको कम्पित करने लगा। रहीम दिल खोलकर हँसना जानते थे, क्योंकि उनका बाह्य और अन्तरंग दोनों दर्पणकी भाँति स्वच्छ थे। मनके साथ हास्यका अत्यन्त निकटका सम्बन्ध है। जिसका मन जितना साफ होगा, उतना ही हास्य मुक्त और सशब्द होगा। मानसिक मलिनताके साथ हास्य भी मलिन होगा।

नसीबनने भोजनकी वस्तुएँ परोसते हुए कहा—"तुम्हारी हँसी भी बड़ी विचित्र है। पास पड़ोसके सभी घरोंमें.......।"

बात काट कर रहीमने कहा—"पड़ोसके लोग कहते होंगे कि रहीम हँस हँसकर अपनी बुढ़ियाको खिजा रहे हैं! क्यों?"

नसीबनकी गंभीरता तिरोहित हो गयी। वह भी उनके साथ हँसने लगी। फिर कहा—"तुम्हारी आदत हमेशासे हँसकर बात उड़ा देनेकी है।"

रहीमने गंभीर बननेकी चेष्टा करते हुए कहा—"आजसे कभी तुम्हारे सामने

न हँसूंगा, अगर कदाचित् हँसी आ जावे, तो तुम उस दिन मुझको रोटियाँ खानेको मत देना। समझ गयी ?"

नसीबन स्वयं हँस पड़ी। किन्तु वे गंभीर बने बैठे रहे।

नसीबनने हँसी रोक कर कहा—"क्यों, हँसनेकी क्या नसमुन कसम खाली ?"

रहीमने गंभीरतापूर्वक कहा—"अन्नदाताका तो हुक्म हमेशा मानना पड़ता है। निठल्लूके रूपमें तो मेरा जीवन व्यतीत हुआ है, और कुछ करने धरनेके योग्य मैं हूँ नहीं, तब भला बिना हुक्म माने काम चलेगा। जिसका खाते अन्न, उसको करे प्रसन्न।"

नसीबनने कोई उत्तर नहीं दिया। वह दूध का कटोरा पुनः भरने लगी।

रहीम—"सबसे दुश्मनी हो सकती है, लेकिन जनाब दूध साहबसे नहीं। उनकी तो हमेशा खुशामद ही करूँगा। दूधके बाद फिर खुशामद आपकी करूँगा, क्योंकि अन्न देनेवाली आप हैं।'

नसीबनने उठते हुए कहा—"तुम्हारे पास बैठकर गृहस्थी करना मुश्किल है। हँसी हँसीमें सब बात उड़ा दोगे।"

रहीमने उसका हाथ पकड़कर बैठाते हुए कहा—"अरे इतना नाराज न हो। कहो, मैं सब सुनूँगा। अरे यही नसीमा और गुलाबीकी शादीकी बात है। तुमने कहा, मैंने सब समझ लिया। तुम्हारा कहना है कि नसीमा और गुलाबीके योग्य, सम्पत्त, सुन्दर, रंगीला, गठीला युवक चाहिये। नसीमाका भार तो मैं लेता हूँ कि उसके अनुरूप ही मैं वर पा जाऊँगा, परन्तु गुलाबीकी समस्या कुछ कठिन है। एक तो वह ऊँचे खान्दानकी राजपूत लड़की है, जिसकी शादी उसीके वंशके अनुसार होगी,दूसरे मैं जातिपाँतिके झगड़ोंको नहीं जानता। मनोहरकी माँसे कहो कि वर तो वह तलाश करे, बाकी सारा खर्च मैं दूँगा। मनोहर और गुलाबी तो मुझे नसीमासे भी ज्यादा प्यारे हैं,क्योंकि नसीमाका बाप अभी जिन्दा है, और वे दोनों बे-बापके हैं। जगपाल थोड़ी ही उम्रमें मर गया, नहीं तो आज मुझे भाईकी कमी महसूस न होती।" कहते कहते रहीमकी आँखें आर्द्र हो गईं और कण्ठ भारी हो गया। नसीबनके भी हृदयमें बड़ी चोट पहुँची। बिसरा हुआ दुख कुछ सजीव हो गया। गंगा नसीबनको प्राणोंके समान प्रिय थी। उसका वैधव्य उसे सदैव खटका करता था। वह कहने लगी—"यही तो मुश्किल है कि वह भी बेचारी कहां ढूंढ़ने जाय। घरसे बाहर निकल सकती नहीं, और मनोहरका ध्यान इस ओर कभी जाता ही नहीं। उससे कुछ कहो तो वह यह कहकर टाल देता है कि—"मैं इस बारेमें कुछ नहीं जानता, जो कहना करना हो काकासे कहो।" जब तुमसे कहती हूँ तो तुम कहते हो कि इस विषयमें तुम कुछ नहीं जानते। अब बताओ कैसे काम चले ?"

रहीमने चिन्तासे अपना सिर खुजलाते हुए कहा—"देखो, इस विषयमें मैं महिपाल सिंहसे बातचीत करूँगा, क्योंकि वह उनका भाई है। जगपाल सिंहसे उसका बैर अवश्य था, किन्तु उसके बच्चोंसे उसे न रखना चाहिये। मैं उसको ऊँच-नीच दिखाकर सब समझाऊँगा, और उसको गुलाबीके योग्य वर ढूँढ़नेकी सलाह दूँगा। ये लोग खर्चसे घबड़ाते होंगे, मगर मैं उनसे यह कहकर उस ओरसे निश्चिन्त करा दूँगा कि भाई जगपाल मरनेके पहले मुझे पाँच हजार रुपये धरोहररूपमें दे गये थे, उन्हीं रुपयोंको गुलाबीकी शादीमें दूँगा।"

नसीबनने उत्फुल्ल होकर कहा—"हाँ, यह उपाय ठीक है, खूब सोचा। इसमें कोई नाम नहीं धरेगा, और सहज ही काम हो जायगा। बहन गंगा भी अब कुछ आपत्ति न कर सकेगी। मर्दोंमें तुम कहना कि रुपये जगपाल लाला नसीमाकी अम्माके पास रख गये थे, और औरतोंमें मैं कहूँगी कि वे नसीमाके अब्बाके पास रख गये थे, इससे अभीतक यह भेद नहीं मालूम हो सका। यह रकम वे गुलाबीके विवाहके लिए रख गये थे, इसलिए इसको छिपा रक्खा था। वाह खूब सोचा, मैं मान गई।"

रहीम और नसीबन दोनों सन्तोषके साथ हँसने लगे।

नसीबन—"महिपालको अगर तुम कुछ लोभ दोगे तो वह वर ढूँढ़नेमें जल्दी करेगा, क्योंकि वह जरा लोभी है।"

रहीमने भोजन समाप्त कर दिया था। उन्होंने कहा—"अब उस ओर मैं सब ठीक कर लूँगा। रुपया क्या नहीं करा लेता। मैं जरा जाति-पाँतिके पचड़ोंसे पीछे हटता था, परन्तु अब महिपाल या उसका कोई दूसरा भाई गुलाबीका वर ढूँढ़ेगा।"

नसीबन प्रसन्न मनसे उमंगके साथ रसोई घरकी ओर चली गई, और रहीम बाहरवाले बैठकेमें सोने चले गये।

१२

माधवीने करवट बदलते हुए कहा—"अम्मा! बड़ी प्यास लगी है।"

शारदाने सुराहीसे पानी गिलासमें डाला, और उसके पास ले जाकर कहा—"मधु, पानी थोड़ा ही पीना।"

माधवीने पानीकी दो घूँट पीकर कहा—"अम्मा, सिरमें बड़ा दर्द है। फटा जाता है।" शारदा उसके सिरहाने बैठकर दाबने लगी। उसके रूखे बाल चारों ओर बिखरे हुए थे, उन्हें एकत्रित करने लगी। माधवी उस दिनसे बीमार है, जबसे उसने गोली-काण्ड अपनी आँखोंसे देखा था। माधवीके कोमल कलेजेपर इतना गहरा प्रभाव पड़ा था कि उसको ज्वर भीषण वेगसे चढ़ आया। डाक्टर मलेरियाका अनुमानकर उसका इलाज कर रहे थे। इन्जेक्शन और दवाइयाँ चल रही थीं परन्तु उसकी अवस्थामें उन्नतिका कोई लक्षण देख नहीं पड़ता था। शारदा सब कुछ भूलकर उसकी परिचर्यामें लग गई थी। दो नर्सोंकी व्यवस्था की गई, जो बारी बारीसे उसकी सेवा-शुश्रूषा करतीं, किन्तु माँके हृदयको नर्सोंकी नियुक्तिसे कोई बोध नहीं होता। शारदाने अपने जीवनका यह नियम बना रक्खा था कि वह अपने पतिके किसी काममें हस्तक्षेप न करेगी। अपनी इच्छाको अपने पतिकी इच्छामें निमज्जित करके चलनेमें ही अपना व परिवारका कल्याण देखती थी।

शारदाके पिता उदयपुर राज्यके एक सामन्त थे। कुम्भलगढ़के समीप उनका ठिकाना था, और उनका बाल्यजीवन अरावलीकी घाटियोंमें बीता था। संवत् १९१४ के स्वातन्त्र्ययुद्धमें शारदाके पितामह ठाकुर अरिदमन सिंहने प्रमुख भाग लिया था, और साथ तथा अजमेरकी अंग्रेजी फौजको हराकर अपना झण्डा फहरा दिया था। यह उनका [illegible] जोधपुर तथा उदयपुर नरेशोंने साथ नहीं दिया था, इसका कारण

राजनैतिकके साथ जातिगत विद्वेष भी था। जब अंग्रेजी फौजने पुनः विजय प्राप्त किया तो ठाकुर अरिदमन सिंहका ठिकाना जब्त कर लिया गया। बादमें दूसरे जागीरदारोंके उद्योग-से कुछ ठिकानेका दस आना भाग तो राज्यमें जब्त रहा, और छ आना हिस्सा ठाकुरको मिल गया। इस विद्रोहसे उनकी सम्पत्तिका एक बड़ा भारी भाग नष्ट हो गया, और दरिद्रता आ गयी। ठाकुर अरिदमन सिंहके सामने ही शारदाका जन्म हो गया था। वे दिन अभीतक उसको स्पष्ट रूपसे याद थे, जब वह अपने दादाकी गोदमें बैठकर उनकी श्वेत दाढ़ीसे खेलती थी, और वे उसको 'गदर' की कहानियाँ सुनाया करते थे। उसको उन कहानियोंसे इतना प्रेम हो गया था कि जबतक वह उन्हें सुन न लेती, रातको सोती न थी। उसका शुद्ध राजपूती रक्त धीरे धीरे वे गुण ग्रहण कर रहा था जो राजपूत जीवनकी प्रभा है—अपने देश और धर्म-के लिए लड़ते लड़ते मर जाना। अंग्रेजोंके प्रति उसके मनमें कोमलता तथा मित्रताके भाव न थे। ठाकुर अरिदमन सिंहने वह नींव लगाई थी, जिसने शारदाके जीवनका दृष्टिकोण ही बदल दिया था। प्रायः सीसोदिया वंशज अपनी कन्याओंका विवाह संयुक्त प्रान्तके क्षत्रियों-के साथ नहीं करते, किन्तु कई ऐसे कारण आ गये थे, जिससे उसका विवाह सर भगवान सिंहके साथ हो गया था। एक तो इतना बड़ा ठिकाना दूसरी जगह नहीं मिलता था, दूसरे सर भगवान सिंहकी भुआ जोधपुर राज्यके एक उच्च ठिकानेमें ब्याही हुई थी, उनके प्रभावसे, यह विवाह सम्पन्न हुआ था।

शारदाने विशुद्ध राजपूत नारीका हृदय पाया था। देश और धर्मपर बलिदान हो जानेका मन्त्र उसने अपनी सन्तानको दिया था। सर भगवान सिंह जितने राजभक्त थे, उतना ही शारदा उनकी सत्तासे विरोध करती थी। परन्तु फिर भी उसने अपनेको नत करके पतिकी इच्छामें अपनी इच्छा मिला दी थी, जिससे विरोधाभास मिट जाय, क्योंकि पारिवारिक जीवनकी शान्ति इसीपर निर्भर है।

माधवीकी बीमारीका कारण भी उसे ज्ञात था, किन्तु उसका कोई उपाय न था। यदि कुछ उपाय था तो वह यही कि शान्तिके साथ कुछ दिन बीतने दिये जायँ। समय प्रत्येक आघातके लिए औषधिरूप है। गहरेसे गहरे घाव भी समयके साथ भरते हैं।

माधवी भी चुप थी, और शारदा भी चुप थी। दोनों अपनी अपनी उलझनें सुलझानेमें व्यस्त थीं। माधवीने शारदाका शीतल हाथ पकड़कर अपने मस्तकपर दबा लिया। वात्सल्य विद्युत्-प्रवाह द्वारा उसके ज्वरकी ज्वालाको शान्त करने लगा।

थोड़ी देर बाद माधवीने कहा—"अम्मा, भैयाका उस दिनसे कोई पत्र नहीं आया?" माधवीकी आँखोंमें व्याकुलता झाँक रही थी।

शारदाने बोध देनेवाली हँसी हँसते हुए कहा—"वह कहीं दूर तो है नहीं, जो रोज रोज पत्र भेजे। अपने ही इलाकेपर तो गया हुआ है। रणजीत सिंह और यशोधराको तू अच्छी तरह जानती है, उन्हींके पास लखनापुरमें वह रहता है। क्या तू नहीं जानती कि रणजीत उससे कितना प्रेम करता है?"

माधवीने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह अपने विचारमें मग्न हो गई। शारदा भी सोचती हुई उसके मस्तकपर हाथ फेरने लगी।

माधवीने थोड़े समय बाद कहा—"अम्मा, उस 'गोलीकाण्डका परिणाम क्या

४

हुआ; कुछ मालूम हुआ? बहुत दिन तो बीत गये हैं। उन्हें सजा अवश्य हो गयी होगी। पापाका हुक्म कौन टाल सकता है! अम्मा, वे सब निरपराध थे।" उसके मुखसे एक गहरी साँस निकल गई, जिसकी ओटसे उसकी मार्मिक पीड़ा झाँकनेका प्रयत्न कर रही थी। शारदा भी तलमला उठी। उसे साहस न हुआ कि वह माधवीको कुछ उत्तर दे। वह चुपचाप उसकी लटोंको सुलझाने लगी।

माधवी फिर चुप हो गई। उसके हृदयका स्पन्दन बड़े वेगसे हो रहा था।

थोड़ी देर चुप रहनेके बाद माधवीने फिर कहा—"अम्मा, जहूर बिल्कुल झूठ बोलता है। उस युवकके पास कोई शस्त्र नहीं था। वह तो बड़े अनुनय-विनयके साथ बात कर रहा था। जब मोटर रुकी थी तब पापाके साथ मैं भी थी। उन्होंने कोई हमला नहीं किया, यह मैं भलीभाँति जानती हूँ। वह युवक बड़ा सुशिक्षित जान पड़ता था। उसकी बोलीसे शत्रुताका कोई भाव प्रदर्शित न होता था। हाँ, उन अभागोंका वह नेता बनकर अवश्य आया था, जिसका प्रसाद उसको तुरन्त मिल गया। जहूरकी गोलीसे वह मरा नहीं, केवल जलकी यन्त्रणा सहन करनेके लिए। इससे तो उसका मर जाना ही श्रेष्ठ था।"

शारदाने उसको बोलनेका अवसर दिया। आज पहला दिन था, जब माधवीने उस गोली-काण्डकी चरचा की थी। उद्वेग निकल जानेसे मन हल्का हो जाता है, इससे शारदाने उसके कथनमें कोई रुकावट नहीं डाली।

माधवी नेत्र बन्द किये हुए कहने लगी—"अम्मा, निरपराधोंके मारनेमें बड़ा पाप होता है, यह तो तुम हमेशा कहा करती थी। रणक्षेत्रमें शत्रुको ललकारकर मारनेसे कोई पाप नहीं लगता, परन्तु निरपराध, अधनंगे, भूखी प्रजाका वध करनेमें कितना पाप होगा, अम्मा! पापाने यह हत्याकाण्ड हमीं लोगोंके लिए किया है न? इसका दण्ड तो हमको ही भोगना पड़ेगा। निरपराधियोंके आहोंकी ज्वाला बड़ी भयंकर होती है अम्मा! मेरा सारा शरीर जला जाता है, ऐसा मालूम होता है कि जैसे किसीने कलेजेमें जलता हुआ अंगारा रख दिया हो। अम्मा, अब सहन नहीं होता। हृदय बहुत जलता है।"

शारदा सन्तानकी छटपटाहट देखकर मन ही मन तड़प रही थी। माँका हृदय रो रहा था, किन्तु आँसूका एक कण भी बाहर निकालनेका साहस उसे न था। मसोस मसोस कर वह रह जाती। उसने बड़ी कठिनतासे सँभालकर कहा—"मधु, तुम इतना क्यों घबड़ाती हो? सब ठीक हो जायगा। उन बातोंको याद मत करो। इस संसारमें प्रत्येक मनुष्य कर्मभोगके लिए आता है। उन अभागोंका कर्म-विपाक ही ऐसा कुछ होगा, जिसका उन्हें यह फल मिला है। तुम क्यों व्यर्थमें चिन्तित होती हो? तुमको तो मालूम है कि मलेरिया ज्वरमें शरीर कितना जलता है। यह ज्वरकी जलन है। परसाल मैं भी तो इसी रोगसे बीमार पड़ी थी, तुम्हें याद है कि मैं कितना चिल्लाती थी, और तुम मुझे कितना धीरज देती थीं। आज जब तुम बीमार पड़ी हो तब इतना घबड़ाती हो।"

माधवीके पुनः चुप हो जानेसे कमरेमें पुनः नीरवता व्याप्त हो गयी। माता-पुत्री दोनों अपनी अपनी चिन्ताओंमें लीन हो गयीं।

थोड़ी देर बाद माधवी पुनः कहने लगी—"अम्मा, मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैं

अब नहीं बचूँगी। पिताके अपराधका प्रायश्चित्त सन्तानको करना पड़ता है। मेरे जीवन देनेसे पापा उस घोर अपराधसे मुक्त होंगे अम्मा ! मेरे मरनेमें ही कल्याण है।"

शारदा अब अपनेको रोक न सकी। उसका बँधा हुआ प्रवाह वेगसे उमड़ पड़ा। उसने रोते हुए कहा—"मधु, मधु, यह क्या कहती हो ? ऐसा न कहो बेटा। तुम उत्तेजित न हो। तुम उस घटनाको न सोचो, न कहो। तुम्हारे पिताने कोई अपराध नहीं किया है। राजाको शासन करना पड़ता है। शासनमें कोई पाप नहीं लगता। डाकू, चोरको सजा देनेसे कहीं न्यायाधीश अपराधी होता है ? यह तुम्हारी गलत धारणा है मधु ! इस विचारको अपने मनसे निकाल दो। इसके अतिरिक्त कितनी ही बार मैं तुम्हें बता चुकी हूँ कि पिताके कार्योंकी आलोचना करना, उसके प्रभुत्वके विषयमें प्रश्न करना, सन्तानका धर्म नहीं है। एक तो तुम्हारे पापाका कोई अपराध है ही नहीं, और यदि तुम्हारे कहनेके अनुसार मान लूँ कि है,तो यह कहाँ लिखा हुआ है कि पिताके अपराधोंका प्रायश्चित्त सन्तानको करना पड़ता है। यह तो तुम बिल्कुल गलत सोचती हो, और इसी भ्रमके वश होकर तुम इतना मानसिक दुख उठा रही हो।"

माधवी अपनी माँके तर्ककी सत्यता परखने लगी।

इसी समय नर्सने आकर कहा—"रानी साहबा, दवा पीनेका समय हो गया है। राजकुमारीको दवा पिला दीजिये। आज आप ही पिलाइये, मेरे हाथसे नहीं पीती।"

माधवीने नेत्र खोल नीरस, शुष्क और हृदयहीन नर्सकी ओर देखा।

शारदाने दवाका प्याला लेते हुए कहा—"आजसे मैं दवा पिलाया करूँगी, मिस डेविड !"

माधवी अपनी माँको इनकार नहीं कर सकी। उसने शिष्ट बालिकाकी भाँति दवा पी ली।

माधवीने करुण स्वरसे कहा—"अम्मा, मैं भी यहाँ न रहूँगी। मुझे यहाँसे दूर ले चलो।" फिर कुछ रुककर कहा—"जहाँ भैया है, वहाँ मैं भी जाऊँगी। भैयाके बिना यहाँ मेरा जी नहीं लगता। यहाँपर मुझे ऐसा मालूम होता है कि वे सब किसान मुझे चारो ओरसे घेरे हुए डरा रहे हैं। अम्मा, मैं यहाँ न रहूँगी। मुझे दूर ले चलो, मुझे दूर ले चलो।"

इसी समय सर भगवान सिंहने डाक्टरके साथ प्रवेश किया। माधवीका अन्तिम शब्द उन्होंने सुना। उन्होंने नर्सकी ओर देखते हुए पूछा—"क्या बात है मिस डेविड ?"

नर्स कहने लगी—"अभी दवा पीकर राजकुमारी कहने लगी कि मैं यहाँ न रहूँगी, मुझे कहीं दूर ले चलो। इस घरसे दूर ले चलो। ज्वरकी अधिकतासे प्रलाप कर रही है।"

डाक्टर धीरताके साथ माधवीकी नाड़ी-परीक्षा करने लगे।

सर भगवान सिंहने चिन्ताकुल स्वरसे पूछा—"ज्वर तो उग्र है ही, क्या कारण है कि इतनी मूल्यवान औषधियोंसे कोई लाभ होता दिखायी नहीं पड़ता। क्या स्थान, परिवर्तनसे कोई लाभकी सम्भावना आपको दृष्टिगोचर होती है ?"

डाक्टरने उत्तर दिया—"स्थान-परिवर्तनसे लाभ तो अवश्य होगा। रोगीकी मानसिक अवस्थापर इसका विशेष प्रभाव पड़ेगा। राजकुमारीके हृदयपर कोई बड़ी भारी चोट

पनी है, जिससे यह विकार अच्छा नहीं होता। कल रक्तकी परीक्षा भी करा लेना उचित होगा। यदि यह ज्वर मलेरियाका है तो फिर उसीका इलाज किया जाय।"

सर भगवान सिंहने माधवीके पास जाकर बड़े प्रेमसे पूछा—"मधु, कहाँ चलना चाहती हो? कहो, मैं तुम्हें वहीं ले चलूँगा।"

माधवीने कोई उत्तर नहीं दिया।

सर भगवान सिंहने शारदासे पूछा—"क्यों, मधु तुमसे चलनेको कहती थी?"

शारदाने धीमे स्वरमें कहा—"हाँ, इसको यहाँसे ले चलना ही उचित होगा। यहाँपर आराम होनेमें देर लगेगी।"

डाक्टरने भी शारदाकी बातका अनुमोदन किया और कहा—"शीघ्रसे शीघ्र आप राजकुमारीको यहाँसे किसी अन्य स्थानमें ले जायँ।"

माधवीकी प्रसन्नता कुछ कुछ वापस आने लगी। उस घरको वह छोड़नेके लिए आतुर थी।

सर भगवान सिंहने पूछा—"मधु, कहाँ चलोगी, बताओ।"

माधवीने शुष्क ओष्ठोंसे कहा—"अपने इलाकेपर चलिये। हम लोग अपनी कोठीपर बहुत दिनोंसे नहीं गये हैं, वहीं जानेके लिए मेरा दिल छटपटा रहा है।"

सर भगवान सिंहने सप्रेम उसके सिरपर हाथ फेरते हुए कहा—"मधु, हम वहीं चलेंगे। तुम्हारी इच्छाकी अवहेलना क्या आजतक कभी की गयी है?"

माधवीने सस्नेह पिताका हाथ अपने मस्तकपर दबा लिया। डाक्टर और नर्स दोनों कमरेसे बाहर चले गये।

———:०:———

द्वितीय खण्ड

१

दिवाकर अपने शिरपर चिन्ताओंका बोझ लेकर कुँवर रणजीत सिंहके साथ उनके गाँव लखनापुर आया था। दिवाकर और रणजीत सिंह दोनों बाल्यबन्धु थे, और दोनोंने साथ-साथ शिक्षा पायी थी। दिवाकरने एम. ए. पास किया था, और रणजीत सिंहने एम. बी. बी. एस.। इस समय वे लखनऊमें मेडिकल कालेजमें 'हाउस सर्जन' नियुक्त थे, क्योंकि उन्होंने अन्तिम परीक्षा प्रथम श्रेणीमें उत्तीर्ण की थी। दोनों एक दूसरेके घरोंमें अबाध रूपसे आते जाते थे, और घरके सभी सदस्योंसे भलीभाँति परिचित थे।

इधर कई वर्षोंसे दिवाकरका आना लखनापुरमें नहीं हुआ था, क्योकि सर भगवानसिंह स्थायी रूपसे लखनऊमें बस गये थे। उन्होंने एक प्रकारसे अपने इलाकेमें रहनेका विचार ही छोड़ दिया था, और तन्मयताके साथ सरकारकी सेवामें तल्लीन थे।

दिवाकरको वह परिचित घर भी कुछ अपरिचित-सा मालूम होता था, क्योंकि वह बहुत दिनोंमें आया था।

दोनों मोटरसे उतर कर बृहत्कोठीमें पहुँचे। रणजीतसिंह तो घरके अन्दर चले गये, किन्तु दिवाकर बाहरी कमरोंमें—जहाँ मेहमानोंके ठहरनेकी व्यवस्था रहती है—ठहरा रहा। रणजीतसिंहके बहुत कहनेपर भी वह अन्दर जानेके लिए तैयार नहीं हुआ, क्योकि उसका विवाह हो चुका था, और उसकी पत्नी उन दिनों वहाँ थी। दिवाकर स्त्रियोके सामने आने-जाने, बातचीत करनेमें सदैव सकुचाया करता था। अपनी माँ और बहनके अतिरिक्त वह किसी अन्य स्त्रीसे—चाहे वह परिचारिका ही क्यों न हो—ठीकसे बात नहीं कर सकता था। यह सकुचाहट परिचय घनिष्ठ हो जानेके साथ, नित्य निकट आते रहनेके साथ, शनैः कम हो जाया करती थी, किन्तु वह अपनी दृष्टि फिर भी ऊँची नहीं कर सकता था।

रणजीतसिंहके जानेके पश्चात् वह एक आराम कुर्सी पर बैठकर अपनी चिन्ताओंमें निमग्न हो गया। सहसा एक श्वेत खद्दरधारिणी नवयुवतीने उस कमरेमें प्रवेश करते हुए हाथ जोड़कर कहा—"दिवाकर भैया, नमस्ते।"

दिवाकरका शिर सहसा घूम गया। विस्मित नेत्रोंसे नवागन्तुका रमणीकी ओर देख दूसरे ही क्षण एक ओर खड़ा होकर खिड़कीके बाहर देखने लगा।

रमणीने हाथ जोड़े हुए आगे निस्संकोच बढ़ते हुए कहा—"दिवाकर भैया, नमस्ते। इतनी जल्दी आप हम लोगोंको भूल गये?"

यदि दिवाकरने आँख भर कर देखा होता, तो संभव था कि वह उसे पहचान जाता, परन्तु सिवाय एक उड़ती हुई नजरके उसने उसकी ओर कौन कहे, उस ओर देखा तक न था।"

युवती बढ़ती हुई उस आराम कुर्सीके पास आकर खड़ी हो गयी, जहाँ दिवाकर बैठा हुआ था। उसने शरारतभरी आँखोंसे देखते हुए कहा—"दिवाकर भैया, आजकल लखनऊके वासी हो गये हैं, इसलिए गाँवोंकी रहनेवाली मूर्खोंको पहचाननेका कष्ट नही करते। अच्छा, मेरे प्रणामके उत्तरमें आशीर्वाद न दीजिये, किन्तु यह तो बताइये कि माधवी-दीदी तो अच्छी तरह हैं, रानी अम्मा तो सकुशल हैं?"

दिवाकरका मस्तिष्क भीषण विचारोंका केन्द्र बन रहा था। बवण्डरकी भाँति एक भीषण विचार आता, और उसके जाते ही दूसरा उससे भी उग्र प्रगट हो जाता। 'माधवी' और 'रानी अम्मा' शब्दोंने उसके मस्तिष्कका वह कक्ष खोल दिया, जहाँ उसके बाल्य-कालकी स्मृतियाँ बिखरी हुई अवस्थामें पड़ी थीं।

उसे विश्वास हो गया कि रमणी कोई उसके सब परिवारसे परिचित है, अतएव वह कोई उसके लिए भी अपरिचित नहीं है। उस रमणीकी ओर देखनेका साहस उसे हुआ। फिर भी आँख चुराते हुए उसने उसको ध्यानपूर्वक देखा, फिर पहचान कर मन्द मुस्कानसे कहा—"अरे, यशो, तू है?"

रमणी खिलखिला कर हँस पड़ी। निष्पाप मनकी पवित्रता हास्यके साथ निकल कर उस कमरेके वायुमण्डलमें बिखर गयी।

उसने हँसते हुए कहा—"दिवाकर भैया, इतनी देर बाद पहचाना! अरे पहचान लिया यही कौन कम है! हाँ, मैं वही तुम्हारी यशोधरा हूँ, जिसको तुम अपनी पीठपर लादे हुए घूमा करते थे, और मैं तुम्हें घोड़ा बनाये हुए कपड़ेका कोड़ा जमाती थी। क्यों याद है?"

किशोरावस्थाकी घटनाएँ सजग होकर स्मृति-पटपर अंकित होने लगीं।

दिवाकर अपनी मूर्खतापर क्रुद्ध होने लगा।

इसी समय रणजीतसिंहने वहाँ आकर कहा—"यशो, तू यहाँ आकर गप लड़ाने लगी। अपने दिवाकर भैयाका जलपान तक नहीं लायी।"

यशोधराने उत्फुल्ल नेत्रोंसे कहा—"भैया, जलपान किसके लिए लाऊँ। जो हम लोगोंको भूल जाता है, उसको मैं भी जलपान नहीं कराती।"

दिवाकरने हँसते हुए कहा—"सचमुच रणजीत, दुनियाँका सबसे बड़ा मूर्ख मैं हूँ। भला बताओ मूर्खताकी कोई हद है, कि मैं यशोधराको न पहचान सकूँ। जिसके साथ इतना खेलता था, जो सदैव मेरी पीठपर चढ़ी हुई दिखायी पड़ती थी, उसको न पह-चानना मेरे लिए कितनी लज्जाकी बात है!"

रणजीतसिंह हँसने लगा। फिर कहा—"यशोकी चपलता अभीतक गयी नहीं। अपनी भौजाईको इतना परेशान करती है कि वह बेचारी कभी कभी रोने लगती है।" यशोधराकी भौजाईसे तात्पर्य अपनी पत्नीसे था।

यशोधराने हँसकर कहा—"मालूम होता है कुँवरानी साहवाने मेरे विरुद्ध कोई जबरदस्त अभियोग लगाया है, लेकिन अब मैं डरनेवाली नही हूँ। मेरा बड़ा भाई मेरी पैरवी करके मुझे निर्दोष प्रमाणित कर लेगा।"

रणजीतने बनावटी क्रोधमे कहा—"यशो, शरारत तो तुम्हारी छठीमें रक्खी गयी थी, ऐसा मालूम होता है। हम लोगोंने अभीतक जलपानतक किया नही, सफरकी थकावट दूर नहीं होने दी, और सबको तंग करने लगी।"

दिवाकरने हँसकर कहा—"कोई सौ-दो सौ कोसकी मंजिल मार कर नही आये हैं। लखनऊ यहाँसे दूर ही कितना है, और फिर कारपर तो आये हैं, ऐसी कोई थकावट नहीं मालूम पड़ती। बहुत दिनोंमें यशोको देखा है, उसे बैठने दो। जलपान लानेके लिए क्या वही है? मालूम होता है कि तुम्हारे पति-पत्नीके संसारमें वह एक परिचारिकाकी हैसियतसे रहती है?"

यशोधराकी आँखें विजयोल्लासमे चमकने लगीं। पहले भी तो दिवाकर रणजीत भैयाकी मारसे उसकी रक्षा करते थे। पुरातन स्नेह नवीनताके साथ चमकने लगा।

रणजीत सिहने विहँस कर कहा—"तुमने सदा उसका पक्ष लिया है, और इसी कारणसे उसका शरारती स्वभाव उग्र होता गया।"

यशोधराने जाते हुए कहा—"दिवाकर भैया, अब तुमको जरूर जलपान कराऊँगी। अपने हमदर्द और सहायककी खातिर करना सर्वथा उचित है।"

यशोधराका लड़कपन पुनः आ गया। पहलेकी चपलताके साथ वह सवेग कमरेके बाहर हो गयी।

२

दिवाकरको रणजीतके साथ रहते हुए कई दिन व्यतीत हो गये। वह अभीतक कोई कार्यक्रम स्थिर न कर पाया था। न-मालूम कितनी चिन्ताएँ उसके पीछे हाथ धोकर पड़ी थीं कि उनसे उसकी निवृत्ति होती ही न थी, प्याजके छिलकेकी भाँति सदैव नयी नयी पैदा होती जाती थीं। लखनऊसे यही स्थिर करकेआया था कि वह कल्याणपुरके किसानोंकी खोज-खबर लेगा और उनके ऊपर जो अत्याचार हुआ है उसका प्रायश्चित्त करनेका उद्योग करेगा। परन्तु लखनापुरमें आकर वह बिलकुल निश्चेष्ट-सा हो गया। सदासे संकोची स्वभाव इस अत्याचारके सम्मुख और भी संकुचित हो गया। अपराधीके मनमें जिस प्रकारकी भीरुता जन्म लेती है, लगभग वही भीरुता उसको कर्त्तव्य-प्रांगणमें जानेसे रोक रही थी।

लखनापुरसे कल्याणपुर केवल दो कोसकी दूरीपर बसा हुआ था। वह सर भगवानसिंहके इलाकेका पाट गाँव अथवा राजधानी थी। वे कल्याणपुरके राजाके नामसे प्रसिद्ध थे। कल्याणपुर एक बहुत बड़ा गाँव था, जिसकी जन-संख्या पाँच हजारसे भी अधिक थी,

और वह पाँच नगलोंमें आबाद था। मध्यका थोक अथवा नगला बड़ी बाजारके नामसे विख्यात था। बड़ी बाजारके मध्यमें सौ फुट ऊँचा एक बहुत बड़ा टीला था, जो चारों ओर दो गजकी मोटी दीवालोंसे घिरा हुआ था। पूर्व दिशाकी ओरसे टीलेके ऊपर जानेका ढालू मार्ग बना हुआ था, और टीलेके ऊपर बड़ा भव्य तथा प्राचीन राजभवन बना हुआ था। राजभवनके ऊपरसे दो-दो कोस दूरतक देखा जा सकता था। लखनापुरका राजभवन भी वहाँसे अस्पष्ट-सा दिखायी पड़ता था।

कल्याणपुरके राजा सदैवसे राजभक्त होते आये थे। पहले मुगल बादशाहोंकी अधीनता मानते थे, और फिर लखनऊके नवाबोंको कर देते थे। वे मुसलमानोंसे कभी लड़े नहीं जिससे उनकी क्षति भी कभी नहीं हुई। उनके राजमहलोंपर कभी आक्रमण नहीं हुआ और न वे कभी भूमिसात् होने पाये, वरन वे हर एक पीढ़ीके शासनमें उत्तरोत्तर ऊँचे उठते गये। उनका इलाका भी कभी नहीं लूटा गया, क्योंकि उनके राजा स्वयं लूटकर आक्रमणकारियोंकी माँग पूरी कर देते थे। इसके अतिरिक्त वे अपनी प्रजाके रक्तशोषण-में विशेष पटु थे। जितनी लागें वे लगा सकते थे, उतनी तो पहले ही लगायी जा चुकी थीं, और एक न एक नयी लाग, नया कर प्रत्येक राजा लगानेमें चूकता न था। उनका सारा शौर्य प्रजापर अत्याचार करनेमें निकलता था। कोई भी अच्छी तरह खा-पी नहीं सकता था। यदि किसीके यहाँ कुछ अधिक धन होनेका समाचार मिलता था, तो पहले सीधे-सीधे उससे हिस्सा मांगा जाता, इनकार करने या टालटूल करनेसे दूसरे अवैध उपायों, मसलन चोरी-डकैती, आग लगानेका आश्रय लेना पड़ता था। चारों ओर आतंक छाया रहता था। जिस किसीके नाम जब राजमहलसे बुलावा आता था, तब वह पहले भयसे संकुचित हो जाता,और कोई-कोई तो बेंतकी तरह काँपने लगते थे। कोई न जानता था कि कब, और क्या हुक्म किसके विरुद्ध निकल आयगा। कल्याणपुरके राजा इसको 'शासन' के नामसे पुकारते थे, और अपने शासनकी दृढ़तापर उनको विश्वास था, गर्व था और नाज था। किसानोंका अविच्छेद सम्बन्ध पृथ्वीके साथ होनेसे वे सब अत्याचार सहन करते थे, परन्तु अपने पुरुषोंकी जमीन छोड़नेके लिए तैयार न थे। अत्याचारने अपनी प्रखरता उनके लिए छोड़ दी थी, क्योंकि वह तो एक नित्यका व्यवसाय हो चुका था। वे सब प्रकारका अपमान सहन करनेके लिए आदी हो गये थे, और मनुष्यताका वह ज्ञान जहाँ मान तथा अपमानका विचार होता है सदैवके लिए कुंठित हो गया था।

कल्याणपुर निवासी कभी खुशहाल नहीं थे। उनके घर प्रायः कच्चे और टूटे-फूटे थे। कच्चे तथा टूटे-फूटे घरोंकी गन्दगी कभी दूर नहीं होती। यद्यपि मनुष्य स्वभावसे ही सफाई पसन्द है, परन्तु जब सफाईका काम उसकी शक्तिसे परे हो जाता है तब उसकी ओरसे उसको उदासीन हो जाना पड़ता है। यही उदासीनता क्रमशः आलस्यमें परिणत होती है और गन्दगीका ढेर उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। इस कारणसे कल्याणपुर कहीं परिष्कृत नहीं था। गाँवका वह हिस्सा, जो राजमहलके जानेवाले राजमार्गपर बसा हुआ था, कुछ मामूली अच्छा था, क्योंकि वहाँ दूकानें थीं, और छोटी मण्डी थी। शेष भाग तो कंकालकी भाँति हड्डी पंजर खोले हुए राजमहलकी भव्यतापर व्यंग्य भय विद्रूप करता हुआ अलसताके साथ जीवन बिता रहा था। उन घरोंका व्याधिमय वातावरण अपने मूकस्वरमें

घोषित कर रहा था कि "सामनेका आकाशचुम्बी राजमहल हमारी हड्डियोंकी ईंटोंसे, और हमारे खूनसे सने हुए गारेसे बनाया गया है।" राजमहलको सुदृढ़ बनानेमें कल्याणपुर-के राजाओंने कभी कोई कमी नहीं रक्खी थी। चारों ओर दो गज मोटी दीवाल तो उठी हुई थी ही, उसके पश्चात् भी जो महलकी खास दीवाल थी, वह भी बहुत मोटी और दोहरी थी, जिनके बीचमें गंगाकी बालुका भरी हुई थी, जिसमें सेंध तो लग ही नहीं सकती थी, छोटी-मोटी गोलाबारी भी उसका अनायास कुछ बिगाड़ नहीं सकती थी। जगह जगह बुर्जे बनी हुई थीं, और वहाँपर पहले तोपें चढ़ी हुई थीं, परन्तु आजकल जबसे अंग्रेजी राज हुआ और शस्त्र रखना कानूनके विरुद्ध हो गया, तबसे वे केवल बरसातकी बहार देखनेके स्थानोंमें परिणत हो गयीं। ईशानकोणकी बुर्जपर अब भी एक पुराने चालकी तोप रक्खी हुई, अपने पुरातन जीर्ण जीवनका परिचय दे रही थी, जो किसी शुभ अवसरपर सलामीके लिए दागी जाती थी। इधर जबसे सर भगवान सिंहने ब्रिटिशराजकी कृपा हस्तगत की तो उन्होंने उसके उपयोग करनेका विशेष अधिकार प्राप्त कर लिया था। वे जब कभी अपनी राजधानीमें प्रवेश करते तो दो तोपोंकी सलामी दागी जाती, और जब अकेले रानीका वहाँ पदार्पण होता तो उनके स्वागतमें एक तोप चलती थी। सर भगवान सिंहके गाँव अधिकतर कल्याणपुरके उत्तर, पूर्व तथा ईशानकोणमें बसे हुए थे, इससे तोप चलनेपर इलाकेभरके निवासियोंको सूचित हो जाता था कि 'सरकार' राजधानीमें पधार गये हैं।

राजमहल दो भागोंमें बँटा हुआ था। एक मर्दानी ड्योढ़ीके नामसे प्रख्यात था, और दूसरा जनानी ड्योढ़ीके नामसे। दोनोंके मध्यमें फिर एक सुदृढ़ दीवाल थी, जिसके दोनों ओर बहुत बड़ा, लगभग चार बीघेका बाग था, जिससे राजमहलका वायुमण्डल सर्वदा परिष्कृत और सुवासित रहा करता था। बागमें सभी प्रकारके फूल और फलोंके पेड़ थे, जिनको वहाँके राजाओंने दूर दूर देशोंसे मँगवाकर लगवाया था। सर भगवान सिंह बड़ी सतर्कतासे उस बगीचेकी रक्षा करते थे, क्योंकि उन्हें उससे बहुत प्रेम था। उन्होंने उसको सजानेमें कोई उपाय उठा नहीं रक्खा, और न खर्च करनेमें कोई कोताही ही रक्खी। वे गाँवके कलुषित वातावरणको अपने इस बागकी सुवासित वायुद्वारा परिष्कृत करनेका उद्योग करते थे।

कल्याणपुरमें यद्यपि सर भगवान सिंहका पूरा दौर-दौरा था, किसी प्रकारकी राजनैतिक आन्दोलन-प्रवेश करनेकी आज्ञा नहीं थी, परन्तु जाग्रतिकी लहर किसी न किसी रूपमें वहाँतक पहुँच गयी थी। यद्यपि कोई सम्मिलित प्रयत्न संघ-सभा इत्यादिके रूपमें वहाँ नहीं होने पाया था, परन्तु फिर भी किसान अपने अधिकारोंको नये प्रकाशमें परखने लग गये थे। यह प्रश्न लगभग सबकी जिह्वापर था कि यदि प्रजाके सौ कर्त्तव्य राजाके प्रति हैं, तो क्या राजाका एक भी कर्त्तव्य प्रजाके प्रति नहीं है? क्या प्रजाका धर्म केवल राजाका कोष भरनामात्र है? ऐसे प्रश्नोंके पीछे ही तो जाग्रतिकी ज्योति दिखायी पड़ती है।

लाल कपड़ेको देखकर जितना बैल नहीं भड़कता है, उससे कहीं अधिक सर भगवानसिंह राष्ट्रीय कांग्रेसके नामसे बिचकते थे। उनके जीवनका यह अहर्निशि कार्यक्रम था कि वैध तथा अवैध उपायोंसे इस राष्ट्रीय संस्थाका नाश करें। अपने सरकारी नौकरीके कालमें इस ध्येयको उन्होंने हर प्रकारसे पूर्ण किया। उनकी इजलाससे कोई भी कांग्रेस-

आन्दोलनकारी अछूता बचकर नहीं जाने पाया। अमानुषिक सजाएँ देनेके लिए वे सरकारी क्षेत्रोंमें प्रख्यात थे, और इसी गुणके कारण उनकी पदोन्नति शीघ्रताके साथ होती गयी, यहाँ तक कि इस समय वे 'प्रान्तीय सलाहकार' के पदपर आसीन थे।

उन्होंने अपने गांवोंके कारिन्दों तथा अन्य कर्मचारियोंको यह आज्ञा स्पष्ट रूपसे दे रक्खी थी कि जब कभी तुम्हें कोई भी राजनैतिक आन्दोलनकी गन्ध आवे,तो तुरन्त उसको पाशविक बलसे कुचल दो। यदि उसमें नर-संहार हो जावे तो उसकी परवाह न करो, यदि तुम्हें घर जलाना पड़े तो तुम्हें उसकी भी आज्ञा है। लाठी चलाना तो साधारण बात है, जिसके लिए किसीके अनुमतिकी आवश्यकता ही नहीं है। इतने अधिकार पाकर कारिन्दे अपने आपेसे बाहर हो गये थे। वे मनमानी करते थे, घर लूटते थे, आग लगाते थे और हर प्रकारसे प्रजाको सताया करते थे। पुलिसकी जैसी वहाँ गुजर होती थी उतनी दूसरे दूसरे गाँवोमें न होती थी, इसलिए वहाँ पुलिसके सिपाहियोंके आने जानेका ताँता बँधा रहता था। कारिन्दे भी गाँववासियोंको त्रस्त करनेके लिए जान-बूझकर पुलिसको वहाँ बुलाया करते थे, उनसे स्नेह करते थे और उनकी खातिर भी करते थे। पुलिसको यह विश्वास था कि जितनी सहायता वे राजा साहबकी करेंगे, उतनी शीघ्रतासे उनकी उन्नति होगी, इस प्रकारके आश्वासन भी उनके कारिन्दे दिया करते थे।

इतने प्रबन्धके पश्चात् भी राजनैतिक जाग्रति उस गढ़में प्रविष्ट हो गयी थी। समाचारपत्रोंका प्रवेश वैध रीतिसे बन्द तो नहीं हो सकता था, परन्तु उनका पढ़ा जाना सुदृष्टिसे देखा नहीं जाता था। कारिन्दे किसी न किसी तरह, यह अवश्य संकेत कर देते थे कि समाचारपत्र पढ़ना कल्याणपुरके निवासियोंके लिए वर्जित है। गांधी टोपी पहनना राज-विद्रोहका पहला रूपक था। यह नहीं कहा जा सकता कि नात्सी जर्मनीमें, गेस्टापों-का शासन इससे कठोर था। मित्र राष्ट्रोंने जर्मनीके विरुद्ध युद्ध-घोषणा कर दी थी। संसारके राष्ट्र इस युद्धकी ओर दृष्टि लगाये थे, क्योंकि संसारके सभी दलित राष्ट्रोंकी सहानुभूति जर्मनीके साथ थी। यद्यपि वे जर्मनीको अपना बन्धु नहीं मानते थे, और न कोई अच्छे व्यवहारकी आशा ही उन बर्बरोंसे करते थे, परन्तु अंग्रेजी समाजवादसे वे इतने असन्तुष्ट थे कि मन ही मन उनके अकल्याणकी कामना करते थे। भारतको भी उसकी इच्छाके विरुद्ध युद्धमें सम्मिलित कर लिया गया था, क्योंकि यहींके जन तथा धनबलकी सहायतापर वे विश्व-विजयका भी साहस करते थे। राष्ट्रीय कांग्रेसने इसके विरुद्ध आन्दोलन भी वैयक्तिक सत्याग्रहद्वारा आरम्भ कर दिया था। युद्धकी सहायता हर प्रकारसे न देनेका आदेश अखिल राष्ट्रीय महासभाने भारतीय जनताको दिया था, औरसर-कारी अफसर उसके कृपापात्र बननेके लिए अधिकसे अधिक पैसा वसूल करनेमें निरत थे।

सर भगवानसिंह उन सरकारी अफसरोंमें थे, जिनका सतत प्रयत्न यही रहता है कि किस भाँति वे अपनी राजभक्ति दिखा सकें। उनके लिए राष्ट्र और देश कुछ नहीं था। अपने कारिन्दोंको उन्होंने यह आदेश दिया था कि तुम जितना अधिक चन्दा वसूल कर सकोगे, उतना ही तुम्हें पुरस्कृत किया जावेगा। कोई एक संख्या परिमित नहीं की गयी थी, जिससे अधिकसे अधिकका कोई अनुमान हो ही नहीं सकता था।

सर भगवानसिंहका आदेश पाकर कारिन्दे म्यानके बाहर हो गये, और अत्याचार करनेके लिए वे आकुल हो उठे। चन्दावसूलीमें उनको दोहरा लाभ था, स्वामीकी आज्ञाका पालन होता था, और उनका घर भी भरता था। वसूल किये हुए चन्देका दशमांश या उससे भी कम सरकारी खजानेम जाता था, शेष उनके घरोंमें। मनमानी रकम वसूल करते थे, न देनेपर अथवा देनेकी शक्ति न होनेसे कोई सुनवाई न होती थी। उनके घर लूटे जाते थे,आग लगायी जाती थी और सारी उपजका अनाज खड़े खड़े बाजारमें बेंच दिया जाता था। इस अत्याचारको जनताने पहले अपने स्वामीको बता देना उचित समझा, और जिन जिन कृषकोंके घर लूटे गये थे, जिन्हें घर-विहीन किया गया था, वे एकत्रित हुए और उन्होंने लखनऊ जाना स्थिर किया। उन आपत्तिग्रस्त किसानोंमें ठाकुर शार्दूलसिंह भी एक थे। शार्दूलसिंहकी नसोंमें राजपूती रक्त बह रहा था, और वे गाँवके उन इने-गिने व्यक्तियोंमें थे, जिनको किसानी व पेट पालनेके अतिरिक्त दूसरी बातोंसे भी प्रेम रहता है। उनके पिताने संवत् १९१४ के विद्रोहमें भाग लिया था, और लखनऊकी फौजमें हवलदारके पदपर प्रतिष्ठित थे। अंग्रेजोंको वे 'सफेद चूहा' के नामसे पुकारते थे, क्योंकि खाई बाँध कर लड़नेका उपाय उन्होंने उनके यहाँ देखा था। विद्रोह समाप्त होनेपर और अंग्रेजी हुकूमतके पुनर्स्थापनके साथ वे पकड़े गये और उन्हें फाँसीकी सजा हुई थी। उस समय शार्दूल सिंह नितान्त अबोध बालक थे। उनकी माता उनको छिपाये हुए किसी प्रकार इधर उधर मारी फिरती थी। सर भगवान सिंहके पिता राजा विन्ध्येश्वरी सिंहने दया करके उसको कल्याणपुरमें बसा लिया, और ठाकुर होनेके नाते गुजारेके लिए थोड़ी जमीन दे दी। ठाकुर शार्दूलसिंहका पैतृक रक्त अपनी माँसे गदरकी कहानियाँ सुन-सुनकर अंग्रेजोंके विरुद्ध उबला करता था, परन्तु समयकी गति देखकर वे मन मार कर रह जाते थे। वे एक मेहनती और उद्यमी पुरुष थे, और उसीके बल उनकी आर्थिक अवस्था भी अच्छी हो गयी थी। उन्होंने अपने एकमात्र पुत्र जंगबहादुरको शिक्षित करनेका प्रयत्न किया। वह मेधावी और कु-शाग्र बुद्धिका था। हिंदी मिडिलकी परीक्षासे ही उसको छात्रवृत्ति मिलती थी, और उसीके बलेसे उसने गत वर्ष लखनऊ विश्वविद्यालयसे एम.ए. व कानूनकी दोनों परीक्षाएँ एक साथ पास की थीं। राजनैतिक विचार उसके बाल्यकालसे ही पुष्ट हो रहे थे, और लखनऊमें रहने तथा सुशिक्षाके कारण वे अधिक प्रखर हो रहे थे। वह बड़ा प्रभावशाली वक्ता था और अच्छा लेखक। लखनऊके कांग्रेस-मण्डलमें उसका एक विशिष्ट स्थान था, और वह प्रत्येक आन्दोलनका आगीवान होनेके लिए तत्पर रहता था।

सर भगवानसिंहके कारिन्दे उससे सतर्क रहते थे, और उसके कारणसे ठाकुर शार्दूलसिंह भी उन लोगोंके कृपापात्र नहीं थे, यद्यपि उन्होंने जंगबहादुरको स्थानीय मामलोंमे हस्तक्षेप करनेको निषेध कर दिया था। चंदा-वसूलीका जब समय आया तो कारिन्दोंको वह सुयोग प्राप्त हो गया जिसके लिए वे प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्होंने ठाकुर शार्दूलसिंहसे एक साथ एक सौ एक रुपयोंकी माँग कर दी। शार्दूलसिंह एक पैसा भी देनेके लिए तैयार नहीं थे। कांग्रेसका निर्णय उन्हें ज्ञात था। बस फिर क्या था, दीवान गोपीनाथने सिपाहियोंके साथ उनके मकानपर धावा बोल दिया, और पुलिस भी सहायताके लिए बुला ली गयी। उन्होंने रबी बोनेके लिए जो अन्न बीजरूपमें सुरक्षित रखा था, लूट लिया। शार्दूलसिंहने

यशोधराने साहस बटोरते हुए कहा—"भैया,आप सशस्त्र क्रान्ति करनेके फेरमें पड़े हैं, और इसी उद्योगमें हैं, परन्तु शस्त्रद्वारा भारतका उद्धार हो सकेगा इसमें सन्देह है। निशस्त्र भारतको तो निशस्त्र होकर ही लड़ना पड़ेगा। शक्तिका केन्द्र क्या अस्त्रोंके प्रयोगमें है ? कायर तथा कापुरुष तो हथियार लिये हुए भी रणक्षेत्रसे भागता है। अस्त्र मनुष्यको बल प्रदान नही करते। तब बल और शक्तिका केन्द्र अस्त्र-शस्त्रके अतिरिक्त और कुछ है—वह है मन, और उसके ऊपर आत्मा। जब मन और आत्मा बलवान हैं तब मनुष्य भी बलवान है। अस्त्र-शस्त्र उसीके सहायक हैं। अस्त्र-शस्त्र भी दो प्रकारके हैं, एक पाशविक,और एक दैविक। पशुओंकी रक्षाके लिए ईश्वरने सींग, नाखून,मुँह, सूँड़ इत्यादि प्रदान किये हैं, परन्तु मानवोंको केवल मस्तिष्क दिया है। मानव अपने मस्तिष्कके बलसे नाना प्रकारके अस्त्रोंका सृजन करता है, यह उसकी पाशविक प्रवृत्तिका द्योतक है, क्योंकि मानवका निर्माण पशुत्व और देवत्वके संमिश्रणसे हुआ है। देवत्व प्रकृति केवल मानसिक और आत्मिक बलपर निर्भर है, जिसके शस्त्र हैं सत्य और अहिंसा। सत्यकी तलवारके समक्ष मिथ्या कब ठहर सकता है, और पाशविक अस्त्रप्रहारकी रक्षा अहिंसाकी ढालसे हो सकती है। जिस प्रकार मनुष्य जंगलमें विचरनेवाले हाथी, भैंसा, बैल इत्यादिको जो पशुत्व शक्तिके द्योतक हैं,अपने मस्तिष्कके बलसे वशीभूत कर लेता है,उनकी हिंसक वृत्तियाँ नष्ट कर उनको उपादेय पशुओंमें परिणत कर देता है, उसी प्रकार अहिंसा दूसरे मनुष्योंकी हिंसा-प्रवृत्ति निवारण करनेमें सर्वथा समर्थ है। यहाँतक कि कुछ परिश्रमसे उनकी शत्रुताको मित्रतामें परिणत कर लेगा। भैया, पशुत्व तो पशुत्वको ही जन्म देगा, और देवत्व देवत्वको। अतएव देवत्व मार्गद्वारा भी तो भारतका उद्धार हो सकता है। इस ओरसे उदासीनता केवल इसलिए है, क्योंकि यह प्रचलित नहीं है। अभीतक मनुष्य पशुत्वकी श्रेणीसे ऊँचा नहीं उठ पाया है। इसलिए वह बार-बार पशुसंज्ञक अस्त्रोंका निर्माण करता है, और उसका अनुयायी रहा, परन्तु पूर्व तो सदैव आत्मिक उन्नति और ज्ञानका उत्थानक रहा है, ज्ञान-प्रकाशकी प्रथम रेखा यहाँपर ही प्रस्फुटित होती है, इस कारण संसारके रणप्रांगणमें इस नवीन दिव्य-अस्त्रका प्रयोग भारतमें हो रहा है, और होना भी उचित है।"

दिवाकर विस्मयके साथ यशोधराकी ओर देखने लगा। उसके मनने प्रश्न किया कि क्या यही यशोधरा उसकी चिरपरिचित, सदा हँसमुख रहनेवाली यशो है। गम्भीर ज्ञानकी धारा किस शान्तिके साथ उसके मस्तिष्कमें प्रवाहित हो रही है।

दिवाकरने यशोधराकी पीठपर सप्रेम हाथ फेरते हुए कहा—"शाबाश यशोधरा, देखता हूँ कि मुझे अपने विचारोंमें कुछ परिवर्तन करना पड़ेगा।"

यशोधरा पुलकित होकर हँसने लगी। इसी समय एक नौकरने आकर कहा—"कल्याणपुरसे एक सिपाही पत्र लेकर आया है।"

दिवाकरने यशोधराकी ओर देखकर कहा—"शायद अम्माका, या माधवीका पत्र आया।"

यशोधराने नौकरको उसे वहींपर ले आनेका आदेश दिया।

४

रहीमने शान्त स्वरमें कहा—"देखिये अनवर साहब, आप शहरके रहनेवाले, आलिम फाजिल हैं, मौलवी हैं, रोज कुरआन और सच्चे मुसलमानकी भाँति पाँचो वक्त नमाज पढ़ते हैं। ऐसे आलिमके विचार इतने महदूद और संकीर्ण कैसे हो सकते हैं, यह समझमें नहीं आता।"

अनवर साहबकी आँखोंमें ललाई आने लगी। उसने तैशके साथ कहा—"रहीम पहलवान, मैं तो यही कहूँगा कि तुम मुसलमान नहीं बल्कि काफिर हो।"

रहीमने बड़ी शान्तिसे उत्तर दिया—"अगर अपने पड़ोसी, अपने भाईके खून करनेसे, हलाक करनेसे, उसके घरमें अग्नि लगानेसे, उसका घर लूटनेसे कोई इन्सान मुसलमान बन सकता है, तो बेशक मैं वैसा मुसलमान होनेसे बाज आया। काफिर होकर मरना ही अच्छा है। मगर जहाँतक मेरी इन्सानियत कहती है, वहाँतक मैं तो यही समझता हूँ कि इसलाममें हरगिज इन बातोंकी गुंजाइश नहीं है। जिस धर्ममें छोटे-बड़ेका कोई भेद नहीं, जिस मजहबमें खुदाके सब बन्दे बराबर हैं, उसमें पड़ोसीका घर फूँककर उनकी जलती हुई लाशोंपर नाचनेका हरगिज हुक्म नहीं हो सकता।"

अनवरकी आँखोंसे ज्वाला निकलने लगी। उसने सक्रोध कहा—"जब इसलाममें तुम कुफ्र फैलाते हो, तब तुमसे बात करना बेकार है, मगर इतना याद रखना कि एक दिन तुम कुत्तोंकी मौत मारे जाओगे। काफिरोंकी गर्दनें उड़ा देनेके पहले तुम्हारी गर्दन साफ की जायगी।"

अनवर उठकर जाने लगा।

रहीमने हँसकर कहा—"बेशक, हमारे गाँवके एक भी आदमीके मरनेके पहले मैं ही मरूँगा। मेरे जीवित रहते, आपकी यह आग यहाँ भड़कने नहीं दूँगा। यह झगड़ा आप शहरोंमें रखिये। अंग्रेजोंसे लम्बी तनख्वाहें लेकर इसलामको बदनाम कीजिये, और दूसरोंकी जानें खपाइये, और खुद दोनों वक्त हलुआ, पुलाव व जरदा उड़ाइये। जाहिल बेसमझ मरेंगे, उनके घर बरबाद होंगे, उनके बच्चे यतीम व दाने दानेको मोहताज होंगे, उनकी बवाएँ बिलबिलाती फिरेंगी, आपका तो कुछ बिगड़नेका नहीं। आग लगा, जमालो दूर खड़ी। लड़ेंगे बेचारे गरीब मुसलमान और हिन्दू। इस मुल्कके जानी दुश्मन मजा करेंगे। इस गाँवको ही लीजिये, हिन्दूके बगलमें मुसलमानका खेत है, दोनों एक दूसरेकी इमदाद करते ह, साथ ही बोते हैं, सींचते हैं और काटते हैं। अगर दोनोंको आप लड़ा देंगे मजहबके नामपर, जब मजहबका कोई सवाल नहीं है, तब एक दूसरेका दुश्मन होकर दोनों एक दूसरेके खत उजाड़ देंग, घर जला देंगे और दोनों बरबाद हो जायँगे। अनवर साहब, क्या आपको मालूम नहीं है कि लड़ाईमें दोनों दल बरबाद होते हैं? यह वह आग है जो दोनोंको एक-सा जलाती ह। यहाँके मुसलमान इस आगसे जलनेके लिए तैयार नहीं हैं।"

अनवर जो उठकर खड़ा हो गया था, कमरसे छुरा लेकर मारनेके लिए लपका। रहीमने उसका वार बचाते हुए उसकी कलाई पकड़ ली। एक नस दबाई, छुरा छनछनाकर नीचे गिर पड़ा।

५

इमामबख्शने शीघ्रतासे कहा—"वह क्या मैं देखता नहीं ? बड़े भागसे ऐसी औरत मिलती है। मगर अम्मासे इजाजत लेना है।"

रहीमने प्रसन्न होते हुए कहा—"अगर सिर्फ तुम्हें अपनी वालदाका ख्याल है तो बेशक बहुत दुरुस्त है। हर एक लड़केका फर्ज है कि वह अपने वाल्दैनका ख्याल रक्खे। उनकी इज्जत करनेसे खुदकी इज्जत बढ़ती है। अच्छा, उस तरफसे तुम कोई फिक्र मत करो। मैंने उनकी इजाजत मँगा ली है। आज ही उनका खत आया है, और मेरी दरख्वास्त मन्जूर कर ली है। अब सिर्फ तुम्हारी इजाजतकी जरूरत है।"

इमामबख्शको अब कोई बहाना याद नहीं आया। उसने धीमे स्वरमें कहा—"काका, आपका हुक्म मैं कैसे टाल सकता हूँ ? जब अम्माने मंजूर कर लिया है, तब मुझको भी मन्जूर है।"

रहीम गद्गद हो गये। उनकी इच्छा आज पूर्ण हो गयी। इमामबख्शके मनसे हारका दुख मिटानेका, और मनोहर तथा उसको सदाके लिए प्रेम-पाशमें आबद्ध कर देनेका इसके अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय नजर नहीं आता था।

रहीमने प्रसन्न कण्ठसे कहा—"बेटा, तुमने मुझे आज वह मौका दिया है कि मैं तुमको साबित कर दूँ कि मैंने तुमको जलील करनेके लिए नहीं बुलाया था। दरअस्ल तुमको मैंने नसीमाका विवाह करनेके लिए बुलाया था। तुमको अपने पास कुछ दिनोंतक रखकर यही चाहता था, कि नसीमा और तुम दोनों एक दूसरेको देख लो, अपनी जोड़ीका अन्दाजा कर लो और चूँकि पहलवानोंका काम ही दंगल लड़नेका होता है, इसलिए कुश्ती भी हो गयी।"

इमामबख्शने हँसकर कहा—"अब तो घर जाना मुल्तवी रहेगा।"

रहीमने उठकर जनाने हिस्सेकी ओर आवाज लगाकर कहा—"अरे सुनती हो!"

नसीमाने अन्दरसे पूछा—"अब्बा, आप किसको बुलाते हैं ?"

रहीमकी प्रसन्नता बाहर बिखरी पड़ती थी। उसने कहा—"अपनी अम्माको भेजना जरा।"

नसीबनने कमरेके अन्दर आकर पूछा—"क्या है ?"

रहीमने हँसते हुए कहा—"लो, तुम्हारी नसीमाका विवाह तय हो गया। घर बैठे गंगा आ गयी। इमामने तुम्हारा दामाद बनना मंजूर कर लिया है। अब तो मिठाई खिलाओ।"

नसीबन भी अवाक् रह गयी। इमामबख्श उसकी नसीमासे शादी करनेके लिए तयार हो जायगा, उसे भी विश्वास नहीं था। उसने इस बारेमें कभी सोचा ही न था।

रहीम—"अब क्या सोचती हो ? ज़ल्दीसे रोचना लगाकर रस्म पूरी कर दो। हम लोग मुसलमान जरूर हैं, मगर रिवाज तो मुल्की है। हिन्दू और मुसलमान दोनोंके लिए एक है।"

नसीबनने प्रसन्नतासे कहा—"मगर गाँवमें इत्तिला तो करने दो, गाना बजाना तो होने दो। लोगोंको इकट्ठा करो। कोई सगुनका काम बिना बाजेके नहीं होता।"

रहीमने कहा—"इत्तिला अभी करता हूँ, लोग अभी इकट्ठा होंगे, दावत सिर्फ वादमें दी जायगी। रह गयी तुम्हारी यह दलील कि सगुनके काममें वाजा होना जरूरी है, तो तुम इमामको रोचना लगाओ, और मैं वाहर खड़ा होकर ढोलक पीटे देता हूँ। मनोहरको वुलाये लेता हूँ, वह शंख वजा देगा, चलो वाजा पूरा हो गया। अव क्या अड़चन है?"

नसीवन और इमामवख्श दोनों हँसने लगे।

रहीम वाजाका प्रवन्ध करने व गाँववालोंको शुभ समाचार देनेके लिए वाहर चले गये।

नसीमाके साथ पंजावी पलहवान इमामवख्शका विवाह तय होनेका समाचार क्षणमात्रमें गाँवमें चारो ओर फैल गया। मसजिदमें वैठे हुए साँई और अनवरने भी सुना। ईदू सदाकी भाँति आज भी गाँजेकी दम लगाने गया था। किन्तु जव उसने अनवरको वहाँ वैठे हुए देखा, तो समझ गया कि दम लगानेका मौका नही है, मन मसोसकर वह जाने लगा।

उसको जाते देखकर अनवरने उससे कहा—"अरे ईदमोहम्मद, जरा वैठो, तुम तो मुझको देखते ही चल दिये।"

अनवरने साँई अब्दुलगनीकी ओर संकेत-दृष्टिसे देखा, और फिर कहा—"शायद दम लगानेके लिए आये थे, अरे साँई साहव, गाँजा-वाँजा हो तो निकालिये।"

ईदूने शुष्क हँसीके साथ कहा—"गाँजा तो खुदाकी वरकत है। दम लगानेके वाद काममें वहुत मन लगता है। हाँ अगर मिल जाय तो जरूर पीऊँगा।"

यह कहकर वह वैठ गया।

साँईने गाँजा देते हुए कहा—"लो ईदू, इसको मलो, तवतक मैं जरा धूनीमें कडे रखता हूँ।"

अनवरने वड़ी गम्भीरतासे कहा—"कहो ईदमोहम्मद, गाँवका क्या हालचाल है? तुम्हारे गाँवके हिन्दू वड़े सरकश हैं। तुम लोग भी नमाज वगैरह नही पढ़ते। तुम मुसलमान हो, मुसलमान अपने मजहवका पक्का होता है। हिन्दू काफिरोंके साथ मेलजोल रखनेकी शरियतमें सख्त मुमानियत है।"

ईदूने अनवरकी ओर देखा, और उसकी हाँमें हाँ मिलाते हुए कहा—"यह हिन्दुओंका गाँव है, वे सरकश होंगे ही।"

अनवर—"यहाँ मुसलमानोंके कितने घर है?"

ईदू—"कोई तीस-चालीस घर होंगे।"

अनवर—"इनमेंसे जवान कितने होंगे?"

ईदू—"छोटे वड़े मिलाकर कोई पचास आदमी होंगे।"

अनवर—"क्या रहीम पहलवानका उनपर असर है?"

ईदू—"रहीम काकाके खिलाफ भला कौन जा सकता है और उनके ऐसा आदमी कहाँ मिलेगा?"

अनवर—"क्यों, क्या खास बात है ?"

ईदू—"वे हरएककी बीमारी, तकलीफ, जरूरतपर खड़े होते हैं, जान देनेके लिए तैयार रहते हैं। रुपये-पैसेसे, अनाज-गल्लेसे, आदमीसे और खुद अपने डीलसे हरएककी मददके लिए तैयार रहते हैं। रहीम काका आदमी नहीं हैं, देवता हैं, फरिश्ता हैं।"

अनवर—"हूँ! मगर जो काफिरोंसे मिल्लत रखता है, वह भी काफिर है। कुरआनमें काफिरको मार डालना, उसके घरमें आग लगाना, उसका माल असवाव लूट लेना सव जायज है, हलाल है। इसलिए रहीम अगर हिन्दुओंकी तरफदारी करता है तो वह भी काफिर है। जो काफिरको सजा दी जाती है वही उसको भी देनी चाहिये।"

ईदू—"मगर इस गाँवका क्या, आसपासके कितने ही गाँवोंके आदमी रहीम काकाके खिलाफ कभी नहीं जा सकते।"

अनवर—"अगर रहीम इतना सरकश है, तो मै वाहर, शहरसे आदमी लाऊँगा और पहले रहीमको दुरुस्त किया जायगा। तुम लोग क्या हमारा साथ दोगे ?"

साँई अब्दुलगनीने अनवरका इशारा पाकर कहा—"ठीक तो है ईदू, रहीमको शरियतके लिहाजसे सजा देना वहुत जरूरी है। अरे मौलवी साहव, मैं सव ठीक कर लूँगा। यहाँके मुसंलमान हिन्दुओंसे परेशान है, वे उनके खेत वैलोंसे चरवा लेते हैं, रातको फसल काट लेते ह,और खतोंकी मेड़ तोड़कर अपना कब्जा वढ़ाते जाते हैं। क्यों ईदू ठीक है न ?"

ईदूका मन साँईकी वात सकारनेका नहीं हो रहा था, मगर गाँजासे लाचार था। उसकी हाँमें हाँ नहीं मिलानेसे,उसे डर था कि साँई गाँजा-पिलाना वन्द कर देगा। वह चुप रहा और गाँजाकी टिकिया आगपर सेकने लगा।

अनवर—"क्यों ईदमोहम्मद, साँई साहव तो इसी गाँवमें रहते है, क्या वह झूठ कहते हैं ?"

ईदूने फिर भी उत्तर नहीं दिया। उसका मन वहाँ बैठनेको नही हो रहा था, मगर गाँजाकी चढ़ी हुई चिलम भी नहीं छोड़ सकता था। उसने चिलम भरकर साँईकी ओर वढ़ाया। साँईने पहले उसको ही दम लगानेका आदेश दिया।

ईदूने दम लगायी। नशेका भन्नाटा मस्तिष्कमें आया, और उसके सत्-असत् विचार नशेकी भँवरमे पड़कर डूबने-उतराने लगे।

अनवरने अपने प्रश्नको दोहराया।

ईदूने उत्तर दिया—"हाँ, करीव-करीव ऐसा ही है।"

अनवर—"हिन्दू क्या तुम्हें दवाकर अपनी हुकूमत नहीं कायम करते ?"

ईदू—"क्यों नहीं करते ? वे करेंगे ही, क्योंकि उनकी आवादी ज्यादा है।"

अनवर—"लेकिन क्या तुम्हें नहीं मालूम कि सौ काफिरोके मुकावलेके लिए महज एक मुसलमान काफी है?"

ईदू—"क्यों नहीं, हम खुदाके वन्दे है ?"

अनवर—"वेशक तुमपर खुदाकी रहमत है। जो हिन्दुओंको, वुतपरस्तोंको

मारता है उसे शरियतमें गाजीका तखल्लुस देनेकी सिफारिश है। ईदू, तुम क्या गाजी कह-लाना पसन्द नहीं करते? गाजीको विहिश्तकी हूरें मिलती है, और...।"

ईदू—"मौलवी साहव, हूरोंपर मेरी लार नहीं टपकती। मुझे तो घर बसानेवाली मेहनत करनेवाली औरत चाहिये। हूरोंकी तो मुझे उलटी खुशामद करनी पड़ेगी।। हाँ, यह वताइये कि गाँजा वहाँ मुफ्त मिलेगा या नहीं?"

अनवर—"वेवकूफ, गाँजा क्या, वहाँ सव चीजें मिलेंगी। मैं तुमको गाँजासे पाट दूँगा, अगर तुम वह करो जो मैं हुक्म दूँ।"

ईदू—"गाँजा भरपेट पिलाइये, और जो काम चाहे, लीजिये।"

अनवरने चारो तरफ देखते हुए धीमे स्वरमें कहा—"तुम यहाँके मुसलमानोको अपने गोलमें मिला लो, और एक दिन रातके वक्त हिन्दुओंपर हमला कर दो, उनके घर लूट लो, और इस तरह मालामाल हो जाओ। मैं तुमको हथियार दूँगा, करौली, चाकू, छुरे, वन्दूक, तलवार, हजारोंकी तादादमें इस मसजिदमें जमा करा दूँगा, जिनका इस्तेमाल वक्तपर करना। पुलिससे तुमको डरनेकी कोई जरूरत नहीं है, अंग्रेजी फौजों-से मुतलक डरो नहीं। से सव तुम्हारी ही इमदाद करेंगे। ऐसा सुनहला मौका तुम्हें हरगिज नहीं मिलेगा। हिन्दुओंके खेत तुम्हारे हो जायेंगे, उनकी वहू-वेटियोंको मुसलमान वनाकर अपना गुलाम वनाओ और उनसे काम कराओ।"

ईदू—"हाँ मौलवी साहव! वेशक ठीक है। मैं जरूर साथ दूँगा। अरे मैं वह उपाय जानता हूँ कि चाहूँ तो एक एक दिनमें दंगा करवा दूँ।"

अनवर—"वस, मैं यही चाहता हूँ। अगर तुम यहाँ दंगा करा सको तो मैं तुमको ५ तोला गाँजा रोजाना दिया करूँगा।"

ईदूने प्रसन्नताके साथ नाचते हुए कहा—"तो वस तय रहा। मैं सव ठीक करवा दूँगा! "अरे मैं इस गाँवके खास आदमियोंमें हूँ। चुटकी वजाते सव कर सकता हूँ।"

अनवर—"तो फिर गाँजा तुमको वरावर मिलेगा।"

ईदूने उठते हुए कहा—"अव जरा खेतोंकी तरफ जाता हूँ। रवी वोना है। घर वाली न मालूम कव पहुँच गयी होगी। देर हो जानेसे वह लड़ती है।"

ईदू शीघ्रतासे मसजिदके वाहर हो गया।

उसके जानेके वाद अनवरने साँईसे पूछा—"क्यों साँई साहव, यह एतवार करनेके काविल है? यों तो आदमी कारगुजार मालूम होता है। गाँजेकी लती है। ऐसे ही लोगोंसे काम चलता है। मैं भी अव शहर जा रहा हूँ। दस पाँच दिनोंमें आऊँगा। आपको पचास रुपये माहवार तनख्वाह मिलेगी। आप मुसलमानोंको इकट्ठा कर उन्हें इसलामका सच्चा शागिर्द वनाइए, और हिन्दुओंके खिलाफ उकसा कर उनसे लड़नेके लिए तैयार कीजिये। हथियार वगैरहसे मैं मदद पहुँचाऊँगा।"

अनवर चले गये। साँई अव्दुलगनीके मुँहपर एक क्षीण स्मित-रेखा थी। उसका अस्पष्ट भाग्य-नक्षत्र उज्ज्वल होने लगा था।

५

सर भगवानसिंह माधवी और शारदाके साथ कल्याणपुर आ गये। उनकी प्रजा सोकर अभी पूर्ण रूपसे जागने भी न पायी थी कि उनकी दो मोटरोंने कल्याणपुरमें प्रवेश किया। कारिन्दे और अहलकारोंको कोई सूचना नहीं थी। वे भड़भड़ाकर उठाये गये, और अस्तव्यस्त उनके स्वागतके लिए दौड़। मरदाना महल और जनाना महल दोनों बन्द थे। चौकीदार यात्रियोंके साथ अपने घर गया हुआ था। दीवान गोपीनाथ भयसे बेहाल था। उसे क्या सजा मिलेगी, यह उसे मालूम न था, किन्तु सारा क्रोध उसीके सिर उतारा जायगा, यह वह भलीभाँति जानता था। उसने दौड़कर लोगोंको जगाया, और तोषाखानेसे कुर्सियाँ निकाल कर भागता हुआ आया।

सर भगवानसिंह इस दुर्व्यवस्थाका अनुमान स्वप्नमें भी न कर पाये थे। उनके गाँव पहुँचनेका समाचार पहले आ जाता था; इसलिए चारो ओर सफाई और व्यवस्था दृष्टिगोचर होती थी, परन्तु आज कोई भी उनके स्वागतके लिए तैयार नहीं था। मरदाना महलके अगले भागमें कचहरी थी, जिसमें प्रजासे लूटा हुआ माल-असवाब, अनाज-बर्तन बिखरा हुआ पड़ा था। सर भगवानसिंहने जैसा स्वागत यहाँके शिकायती लोगोंका किया था, उससे कर्मचारियोंका साहस बढ़ गया था, और वे मनमानी लूट-खसोटमें लग गये थे। उन्होंने वह सब देखा।

कमरोंके ताले तोड़े गय, सफाई शुरू हुई। माधवी और शारदाको मोटरमें बड़ी देरतक बैठना पड़ा। जनाने महलका एक कमरा साफ होनेके बाद उनके जानेकी व्यवस्था हुई। इस परिश्रमसे माधवीका ज्वर कुछ बढ़ गया था। डाक्टरने उसको सोनेकी दवा देकर सो जानेके लिए मजबूर किया।

दो पहरतक अनवरत परिश्रमके पश्चात् राजमहलके दोनों भाग किसी प्रकार बैठनेके योग्य हुए। सर भगवानसिंहके मनको उस दुर्व्यवस्थासे बड़ी ग्लानि हुई। उन्होंने गोपीनाथको बुलाकर कहा—"मुझे यह न मालूम था कि मेरी अनुपस्थितिमें तुम लोग स्वयं राजा हो जाते हो, और मेरी प्रजाको तुम लोग दोनों हाथसे लूटते हो। उसका चीखना चिल्लाना सही है। तुम सब लोगोंको जेल भिजवाकर बान बटवाऊँगा।"

गोपीनाथ काँपता हुआ उनके पैरोंपर गिर पड़ा। वे उसे ठुकराकर शीघ्रतासे जनाने महलकी ओर चले गये।

माधवी सोयी हुई थी। शारदा और नर्स पास ही बैठी थीं। सर भगवानसिंहने पूछा—"मधु, अभीतक उठी नहीं? अब ज्वर कैसा है?"

शारदाने म्लान मुखसे कहा—"अभीतक दवाका प्रभाव उतरा नहीं है। शायद अब उठे। आपने भोजन किया है या नहीं? डाक्टरोंके भोजनका प्रबन्ध हुआ?"

सर भगवानसिंहने लज्जित स्वरमें कहा—"यह कहावत सर्वथा सत्य है, 'दीपकतले अँधेरा।' मैं देशका इन्तिजाम करता हूँ, किन्तु मेरे घरका यह हाल है। कोड़ोंसे गोपीनाथ और दूसरे कर्मचारियोंकी खाल निकलवा लूँगा। हम लोग तो खा-पी चुके हैं। तुम लोगोंने अभी न खाया होगा।"

शारदाने शान्त स्वरमें कहा—"मेरा तो आज व्रत है, संध्या समय भोजन करूँगी। इन नर्सोंके लिए कुछ प्रबन्ध कर दीजिये। मधुके लिए फल वगैरह है ही। इस गड़बडी-के लिए गोपीनाथ नहीं, हम उत्तरदायी है। हम लोगोंमेंसे किसी न किसी को यहाँ अवश्य रहना चाहिये। रणजीतका गाँव तो पास ही है, वहाँ सूचना भेज दीजिये। दिवाकर यशोधराको लेकर चला आवे।"

सर भगवानसिहने सव्यंग्य कहा—"कुँवर साहवने बड़े तपाकसे लिखा था कि मैं गाँवोंका निरीक्षण करूँगा, परन्तु यहाँ तो एक वार भी नही आये। उनको बुलाकर सव उनको सौंप दूँगा। देखूँ, वह क्या इन्तिजाम करते है।"

उसी समय उन्होंने दिवाकरको पत्र लिखा, और तुरन्त भेज दिया गया। शामतक दिवाकर रणजीत और यशोधराके साथ कल्याणपुर आ गया।

माधवीने जव उनके आनेका समाचार सुना, वह पुलक उठी। जव यशोधराने उसका हाथ प्रेमसे दवाते हुए कहा—"मधु, अव तुम बहुत शीघ्र स्वस्थ हो जाओगी" तो उसके शुष्क पपड़ाये हुए होठोंपर आशा-प्रदीप्त हास्यरेखा दिखायी दी। दिवाकरको देख-कर माधवीको जितना सन्तोष हुआ, वह अवर्णनीय है। किन्तु उसका म्लान वदन और सूखा हुआ शरीर उसके मानसिक दुखको प्रगट कर रहा था।

संध्या समय डाक्टरोंकी रिपोर्ट सुनकर सर भगवानसिंहको सन्तोष हुआ। स्थान-परिवर्तनके साथ ही माधवीकी बीमारीमें अन्तर आ गया। दूसरे दिन प्रातः ज्वर विल्कुल नही आया, केवल संध्याको कुछ हल्का-सा चढ़ा, किन्तु उसको वह बेचैनी नही थी जो लखनऊमें रहते हुए थी। सर भगवानसिंह कुछ निश्चिन्तसे हुए। उन्होने दूसरे ही दिन लखनऊ जानेका निश्चय कर लिया। संध्याको उन्होंने दिवाकरको बुलाकर कहा—"लीजिये, अब आप अपना कर्तव्य पालन कीजिये। आपको मेरे प्रबन्धसे सन्तोष नही है, कर्तव्यका उपदेश आप मुझे देते हैं, अव देखूँ कि आप क्या करते है।"

दिवाकरने कोई प्रत्युत्तर नही दिया।

सर भगवानसिंह कहने लगे—"प्रजा उसी समयतक ठीक रहती है, जबतक शासन दृढ होता है। शासन ढीला हुआ नही कि प्रजाने हाथ-पैर फैलाना शुरू कर दिया। यह गुरु-मंत्र की तरह सदैव याद रखना। मै प्रबन्धका सब भार तुमको सौंपता हूँ। मधु और तुम्हारी माँ यहाँ रहेंगी। डाक्टर चन्द्रा तो मेरे साथ जायँगे, और डाक्टर भाल यहाँ रह कर मधुका इलाज करेंगे।"

दिवाकरने कहा—"राज्य-प्रबन्धमें मै अभी हस्तक्षेप नही करना चाहता।"

सर भगवानसिंहने विस्फारित नेत्रोंसे उसकी ओर देखकर कहा—"क्यो, तुम्हींने तो कहा था कि 'उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधत'। अव कहाँ वे विचार लुप्त हो गये?"

दिवाकरने फिर कोई उत्तर नहीं दिया।

सर भगवानसिंहने कहा—"राज्य-कार्य तो गोपीनाथ करेगा ही, तुम केवल उसपर अपनी निगरानी रखना।"

दूसरे दिन सर भगवानसिंह चले गये। जाते समय देखा कि माधवीकी दशा बड़ी

सन्तोषजनक थी। जानेके पूर्व उन्होंने गोपीनाथको एकान्तमें बुलाकर कहा—"तुम्हारा अपराध मैं क्षमा करता हूँ इस वार, आगे कोई दुर्व्यवस्था देखनेमें आयी तो याद रखना तुम्हारी खाल खिंचवाकर भूसा भरवा दूँगा। कुँवर साहब, महारानी और राजकुमारी-को यहाँ छोड़े जाता हूँ। यदि कुँवर साहब शासन-व्यवस्थामें हस्तक्षेप करें तो तुम उनकी हाँमें हाँ मिला देना, किन्तु करना वैसे ही जैसे अभीतक करते आये हो। किसी प्रकारकी रियायत मत करना। लड़ाईके लिए चन्दा शीघ्रसे शीघ्र वसूल करो, मैं अपने नामसे हवाई जहाज लेकर सरकारको भेंट करना चाहता हूँ। कांग्रेसिये यहाँ घुसने न पावें। अगर वे कुछ गड़बड़ी करें तो हिन्दू-मुसलिम दंगा कराकर उन्हें भूँज देना। उस समय कुँवर तथा किसीकी एक न सुनना। अवकाश मिलनेपर मैं भी बराबर आता रहूँगा।"

गोपीनाथकी आपत्ति टल गयी। उसने अपने इष्टदेवको वार-वार प्रणाम किया।

रात्रि दोपहरसे अधिक बीत गयी थी। राजमहलमें बाहर और भीतर घोर निस्तब्धता छायी हुई थी। आकाश मेघाच्छन्न था। पवन बड़े वेगसे चल रहा था, चपला बड़े वेगसे चमकती और प्रकाशका पुंज छोड़कर उसे लिए पुनः काले बादलोंके मध्यमें छिप जाती। कभी कभी बादल भीमनादसे चिल्ला उठते, और पानी उँडेलनेके लिए आकुल होकर छटपटाने लगते।

न मालूम कबसे एक मानव-आकारका कंकाल अपनेको काली चादरसे लपेटे हुए जनाने महलके बागके एक कुंजमें छिपा बैठा था। पानीकी बूँदोंके गिरनेके साथ वह अपने गुप्त स्थानसे निकला, और पेड़ोंकी आड़में महलकी ओर अग्रसर हुआ। चौकीदार सो गये थे, क्योंकि दो दिनके अनवरत जाग्रतिके पश्चात् उन्हें सोनेका अब अवकाश मिला था।

वह मूर्त्ति कमरोंमें बिना रुकावटके प्रविष्ट हो गयी, और आहट लेती हुई महल-के उस खण्डमें पहुँची जहाँ माधवीका कमरा था। जहाँ बादल गरजता वह संकुचित होकर किसी कोनेमें छिपनेका प्रयत्न करती, और किसीके जागनेकी आहट न पाकर फिर वह कमरा पार करती। धीरे धीरे वह माधवीके कमरेके द्वारपर पहुँच गयी। कमरेकी एक ओर माधवी निद्रामें निमग्न पड़ी हुई थी, और उसके पास एक दूसरे पलंगपर शारदा सोयी हुई थी। कमरेके दूसरे भागमें नर्स सोयी हुई थी। इनके अतिरिक्त कमरेमें और कोई व्यक्ति नहीं था। मेजके एक कोनेमें बिजलीकी वह बत्ती जल रही थी, जो सोनेके समय जलायी जाती है, जिसमें प्रकाशका उत्ताप दुखदायक नहीं रहता। सर भगवानसिंहने बिजलीका प्रबन्ध 'डाइनेमो' द्वारा बहुत वर्ष पूर्व ही कर रक्खा था।

मूर्तिने कमरेके अन्दर झाँककर देखा, और आहट लेनेके लिए कान खड़े किये। कमरेके तीनों व्यक्ति घोर निद्रामें सोये हुए थे। मूर्तिने साहस बटोरकर कमरेके अन्दर प्रवेश किया। वह अत्यन्त सतर्कतासे बढ़ रही थी। एक हाथ कपड़ेके अन्दर था, और एक चादरको पकड़े हुए। मूर्ति माधवीके पर्यंकके पास आकर खड़ी हो गयी। बिजलीके क्षीण हरे प्रकाशमें उसने चारों ओर देखा। सर्वत्र नीरवता छायी हुई थी। उसका हाथ काँपने लगा, या वह स्वयं काँपने लगी। उसने साहस पुनः एकत्रित किया, और कपड़ेके अन्दर छिपा हुआ हाथ बाहर निकाला। क्षीण आलोकमें भी उसके हाथकी कटार चमक कर

कहने लगी कि मेरा जन्मस्थान सिरोही है। मूर्तिने अपना हाथ ऊँचा उठाया। सतर्क प्रहरीकी भाँति बादल बड़े वेगसे चिल्ला उठा। माधवी—निद्रामें मग्न माधवी शिहिर-सी उठी, और करवट पड़ी हुई वह सीधी चित हो गई, मानो उसने कटारके वारके लिए अपना वक्षस्थल सामने कर दिया हो। मूर्तिका हाथ पुनः काँपने लगा। उसने पुनः साहस एकत्रित किया और बड़े वेगसे माधवीके अनावृत वक्षस्थलपर कटारका वार किया। इसी समय चपला बड़े वेगसे कड़क उठी, और वह माधवीकी रक्षाके लिए क्षिप्रतासे पृथ्वीकी ओर अग्रसर हुई। माधवी चीख उठी, मूर्तिका हाथ पहले ही काँप गया था। वार चूक गया, और कटार तकियाका हृदय फाड़ती हुई निवाड़के पलंगमें समाविष्ट हो गयी। शारदा और नर्म दोनों जाग पड़ीं। शारदा सिंहनीकी भाँति अकस्मात् उछली, और काली मूर्तिको धर दबाया। माधवी आँख मलती हुई उठ बैठी, और नर्मने चिल्लाना शुरू किया। दूसरे कमरेमें सोती हुई यशोधरा उठ बैठी, और अस्तव्यस्त माधवीके कमरेकी ओर दौड़ी। प्रहरी भी सतर्क होकर खतरेका घण्टा बजाने लगा। मरदाने महलमें भी चहल-पहल हो उठी, दिवाकर और रणजीत दोनों उठकर जनाने महलकी ओर भागे।

शारदाका वेग वह मूर्ति सहन न कर सकी। पृथ्वीपर गिरते ही मूर्छित हो गयी। उसको स्थिर देखकर वह उठकर खड़ी हो गयी, और त्रस्त नेत्रोंसे माधवीकी ओर देखने लगी। माधवी सुरक्षित थी, और तकियेमें घुसी हुई कटारकी मूठ चमक रही थी। बिजलीके सारे लैम्प खोल दिये गये। प्रकाशकी धारा उमड़ कर उस कटारकी मूँठपर पड़ने लगी। माधवी निर्वाक थी। वह बेंतकी तरह काँप रही थी। शारदा भी उत्तेजनासे काँपी जा रही थी।

यशोधराने त्रस्त कण्ठसे पूछा—"क्या हुआ रानी अम्मा, यह कौन है, अरे मधु तो सकुशल है ?"

प्रहरी और परिचारिकाओंसे कमरा भर गया।

शारदाने काँपते हुए स्वरसे पूछा—"मधु, कोई चोट तो तेरे नहीं आयी ?"

माधवीने उत्तर दिया—"नहीं अम्मा, मेरे कटार छू तक नहीं गयी। यह कौन है अम्मा ? मुझे क्यों मारना चाहती थी ? मैंने तो आजतक किसीका अपराध नहीं किया है।"

इसी समय दिवाकरने आकर आकुल स्वरसे पूछा—"क्या हुआ अम्मा ? मधु तो सकुशल है ? यशो, तू बता कि क्या हुआ। यह कौन है ? यह कटार किसकी है ?"

यशोधरा कटार निकालकर देख रही थी। हाथीदाँतपर सोनेका काम चमककर कटारको प्राणघातिनीके रूपमें नहीं, वरन् एक दर्शनीय वस्तुमें परिणत कर रहा था। दिवाकरने यशोधराके हाथसे वह कटार ले ली।

शारदाने दिवाकरसे कहा—"जरा देख तो यह नरघाती कौन है। कहीं वह मर तो नहीं गया।

दिवाकरने उस काली मूर्तिका काला आवरण निकालकर दूर फेंक दिया। पिशाचिनी-जैसी एक स्त्रीकी रूपरेखा दिखायी दी।

सबके विस्मित नेत्र उस मूर्च्छिता रमणीकी ओर उठ गये। शुद्ध गौर वर्ण था, और मुखाकृति मनोहर थी, जो यह घोषित कर रही थी कि यौवनकालमें वह एक

अभिन्द्य सुन्दरी थी, किन्तु अवस्था और दरिद्रताने उसके सारे लावण्य-माधुर्यको नष्टप्राय कर दिया था। रक्तका शरीरमें नाम न था, और मांसविहीन शरीर केवल हड्डियोंकी ठठरी थी। आँखें गहरे गड्ढोंमें घुसी हुई थीं, कपोलोंकी हड्डी आँखोंके भीतर देखनेका प्रयत्न कर रही थीं। पेट सूखकर पीठके साथ आलाप कर रहा था, और हाथ-पैरकी हड्डियाँ आपसमें होड़ कर रही थीं। शिरके बाल बिखरे हुए और रुक्ष थे, जिनमें श्यामता अभीतक अन्तिम साँस ले रही थी। उस रमणी मूर्तिको देखकर सब शिहिर उठे, प्रेतनी है या मनुष्य यह प्रश्न सबके मुखपर था।

रणजीतने कहा—"जब पकड़ी गयी तो कैसी बनकर पड़ी है ?"

दिवाकरने उसकी नाड़ी-परीक्षा करते हुए कहा—"नहीं, यह मूच्छित है, नाड़ी बहुत धीमी चल रही है।"

रणजीतने एक नर्ससे कहा—"मिस डेविड, जरा आप इसको होशमें लाइये। हम लोग इससे कुछ प्रश्न पूछना चाहते हैं।" नर्स उसको होशमें लानेका उपाय करने लगी। शारदा कटारकी परीक्षा कर रही थी। कटारकी मूठके पास कुछ महीन अक्षरोंमें लिखा हुआ था। वह प्रकाशके समीप जाकर उसके पढ़नेका प्रयत्न करने लगी। अब उसे स्पष्ट दिखायी पड़ा—"सूर्यवंशो जयति' ठाकुर अरिदमन सिंह, राजगढ़।"

शारदा विस्फारित नेत्रोंसे पुनः उसे पढ़ने लगी। उसे अपनी दृष्टिका विश्वास न हुआ।

दिवाकरको बुलाकर कहा—"जरा इसे पढ़ तो, मुझे धोखा तो नहीं हुआ। नहीं, यह कटार मैं पहचानती हूँ, वही है, निश्चय वही है।"

दिवाकर और रणजीत, माधवी और यशोधरा सबने दिवाकरको घेर लिया। एकके पश्चात् एक, सबने वही पढ़ा, जो शारदाने पढ़ा था—"सूर्यवंशो जयति, ठाकुर अरिदमन सिंह, राजगढ़।"

दिवाकरने कहा—"यह तो मेरी ननिहालका नाम है, और परनानाका नाम लिखा है।"

सबके नेत्र उस कटारपर टँग गये।

शारदाने धीमे स्वरमें कहा—"जरूर यह वही कटार है, मैं इसे पहचानती हूँ। तुम्हारे परनानाने यह मुझको भेंट दी थी, और मैंने इसको अपनी एक सखी रूपकुँवरिको दिया था, क्योंकि मेरे विवाहमें विदा होते समय उसने मेरा एक प्रेम-चिह्न माँगा था। उस समय मेरी कमरमें यही कटार खुसी हुई थी, मैंने निकालकर उसे दे दिया।" फिर कटारको उलट-पलटकर कहा—"निश्चय ही यह वही मेरी चिरपरिचित कटार है, मैं इसे कभी नहीं भूल सकती। हजार कटारोंमें भी इसे पहचान लूँगी। यह वर्षों मेरे पास रात-दिन रही है। सोते-खाते समय भी इसको अलग नहीं किया, क्योंकि यह मेरे दादाकी पहचान थी। रूपकुँवरिसे मेरा पूरा बहनापा था। मेरे साथ रात-दिन रहती थी। उसको भी यह कटार बहुत प्यारी थी। अन्तमें मैं उसको यह दे आयी थी। रूपकुँवरिका मैंने कोई समाचार तबसे नहीं सुना। विवाहके बाद कई वर्षतक मेरा जाना राजगढ़ नहीं हुआ।

चार साल पहले गयी थी। मैंने रूपकुँवरिके सम्बन्धमें पूछा था, तो मालूम हुआ कि उसके पिता उसको लेकर कही चले गये है, क्योंकि उदयपुर दरवारने किसी अपराधके कारण उसकी जागीर जब्त कर ली थी।"

माधवीने प्रश्न किया—"कही यही तो रूपकुँवरि नही है?"

रणजीतने कहा—"यह असम्भव है, गरीवीके कारण उसने इस कटारको किसीके हाथ बेच दिया होगा, और घटनाचक्रमे वह इस-हत्यारिणीके पास पहुँच गयी।"

इसी समय नर्सने कहा—"इसकी मूर्च्छा भंग हो रही है। और उस नरघाती कंकालने अपने नेत्र खोल दिये।"

६

रमणीने भीत तथा चकित दृष्टिसे चारो ओर देखा। उसका ज्ञान लुप्त नही हुआ था। उठकर वैठते हुए कहा—"भगवान भी गरीवोंका दुश्मन है। मैं जानती हूँ कि मैं अपने कार्यमें असफल रही और राजकुमारी वच गयी। आप लोग मुझे पुलिसके हवाले कीजिये।"

दिवाकरने कठोरताके साथ पूछा—"तू कौन है, वुढिया?"

वृद्धाने आँसू भरकर उसकी ओर देखा, फिर क्षणभर चुप रहकर कहा—"आप ही शायद महाराजकुमार है?"

रणजीतने उत्तर दिया—"हाँ, तो फिर!"

वृद्धाने एक दीर्घ निश्वास लेकर कहा—"हूँ। न्याय तथा सत्यपर चलनेवाली पर गरीवकी सन्तान जेलकी यातना भोगती है, और कुकर्मी किन्तु अमीरकी सन्तान आनन्द करती है। यह है ईश्वरीय न्याय!"

शारदाने उसके समीप आकर कहा—"जरा मेरी ओर देखो, रूपा।"

वृद्धा चौंक पड़ी, और उसकी ओर विस्फारित नयनोसे देखने लगी। फिर उसकी ओर अग्रसर होते हुए कहा—"कौन, कौन, अरे क्या तुम वाई लालजी यहाँ हो? कैसे! नही, यह भी उस छलिया भगवानकी छलना है।"

कहते कहते वृद्धा गिर पड़ी।

दोनों नर्सोंने उसको सँभालते हुए कहा—"यह तो पुनः वेहोश हो गयी।"

सब लोग शारदाकी ओर देखने लगे। यशोवराने पूछा—"रानी अम्मा, क्या यह वही आपकी सहेली रूपकुँवरि है, जिसको आपने यह कटार भेंटमें दी थी?"

माधवी भी समीप आकर उसकी ओर उत्सुकतासे देखने लगी।

शारदाने एक कुर्सीपर वैठते हुए कहा—"मालूम तो ऐसा ही होता है, यशो। नही, वास्तवमें वही है। मेरे मायकेके कर्मचारी इत्यादि मुझे इस नामसे पुकार सकते हैं। निस्सन्देह वही है। मालूम होता है कि इसको वहुत गरीवी देखनी पड़ी है। इस कारण यह विक्षिप्त हो गयी, और इसी अवस्थामें उसने मधुपर वार किया। मधुका पलंग पहले था

इसलिए पहले उसपर वार किया, अगर कोई दूसरा व्यक्ति उसपर सोया होता, तो उसपर भी हमला करती।"

यशोधराने पूछा—"अगर विक्षिप्त है, तो आपको कैसे पहचान गयी? उसकी बातोंसे तो वह विक्षिप्त नहीं मालूम होती।"

शारदाने कहा—"काम तो उसका वैसा ही है, फिर कुछ भी हो। होश आनेपर सब मालूम होगा।"

प्रहरीने आकर पूछा—"दीवान साहब पूछ रहे हैं कि क्या पुलिस बुलायी जाय?"

रणजीतने कहा—"इसमें भी पूछनेकी कोई बात है! कभी कभी ये दीवान अपनी खैरख्वाही और खुशामद इतनी दिखाते हैं कि जिसकी कोई हद नहीं। एक तो प्रबन्ध आप ऐसा करते हैं कि हर कोई घुसा चला आये, और फिर अब अपना बुद्धि-चमत्कार बतानेके लिए आये हैं।"

शारदाने प्रहरीसे कहा—"दीवानजीको कह दो कि यह समाचार गढ़के बाहर न जाय, और बिना मेरी आज्ञाके पुलिस न बुलायी जाय।"

प्रहरी चला गया। नर्सके उपचारसे स्त्रीको होश आ गया था। शारदाने उसके समीप अपनी कुर्सी ले जाकर कहा—"रूपा, मैं तुझे पहचान गयी। तू यहाँ कैसे आयी?"

रूपकुँवरिने चकित नेत्रोंसे उसकी ओर देखते हुए कहा—"बाई लालजी, हाँ, तुम्हीं हो! क्या तुम ही यहाँकी राजरानी हो? हाँ, तुम्हारा विवाह पूर्वमें हुआ था, किन्तु उस देशका नाम कल्याणगढ़ था। क्या कल्याणगढ़ ही कल्याणपुर है?"

शारदाने उसको उठाकर बैठाते हुए कहा—"हाँ, कल्याणगढ़ और कल्याणपुर एक ही हैं। यह बताओ तुम कैसे यहाँ आयी, और तुम्हारी इस अवस्थाका कारण क्या है?"

इस प्रश्नके सुनते ही रूपकुँवरिके नेत्रोंसे ज्वाला निकलने लगी। उसकी मुखाकृति भयंकर हो गयी। उसने कहा—"बाई लालजी, तुम इसका कारण पूछती हो, मेरी गरीबीका कारण पूछती हो, मेरी उजड़ी हुई जिन्दगीका कारण पूछती हो? तुमको मैंने सदैव अपने प्राणोंसे प्रिय माना है, मैं कैसे कहूँ कि इसका कारण तुम ही हो!" वहाँपर उपस्थित सभी व्यक्तियोंके नेत्र अनायास ही रूपकुँवरिके ऊपर स्थिर हो गये। शारदा भी चौंकी, और विह्वल कंठसे पूछा—"रूपा, इसका कारण मैं हूँ?"

रूपकुँवरिने दृढ़ताके साथ कहा—"बेशक, प्रत्यक्ष नहीं, परोक्षमें तो तुम ही मेरी इस अवस्थाके लिए उत्तरदायी हो। वहाँ भी तुम्हारी प्रजा थी, और यहाँपर भी हूँ, किन्तु वहाँ राजगढ़में न्याय बरता जाता था, राजपूत राजपूतका आदर करता था। मैं तुम्हारे इसी गाँवमें, शीतला देवीके पास रहती हूँ। मेरे पुत्रका नाम जंगबहादुर है, जिसको तुम्हारे पतिने निरपराध अपनी गोलीका शिकार बनाया। मेरे भाग्यसे वह मरा नहीं, और अब उसको तथा उसके पिताको जेल भिजवा दिया है। तुम्हारे कारिन्देने मेरा घर लूट लिया, एक दाना नहीं रक्खा। घरमें आग लगा दी, मेरी सारी गृहस्थी जलकर राख हो गयी। मेरा पति गया, पुत्र गया, घर गया, मैं अकेले जीवित रह कर क्या करूँ! सोचा कि ऐसे अत्याचारी राजासे शायद भगवान भी डरता है तभी उसको कोई दण्ड नहीं मिलता,

किन्तु मैं राजपूतनी हूँ, खून देखकर डरती नहीं। मरना जानती हूँ। अत्याचारीको दण्ड देना भी तो न्याय है। पहले विचार किया था कि स्वयं राजाको मारूँ, किन्तु वह आज चला गया। फिर सोचा कि राजकुमारकी हत्या करूँ,परन्तु शरीरमें इतना बल नही था। इसलिए मैंने राजकुमारीके प्राण लेकर अपना प्रतिशोध चुकाना चाहा। इसी आशासे मैं आज भंगिनके वेषमें राजमहलमें आयी, शामसे चमेलीकी सघन छाया-कुंजमें अपनेको छिपाये रही, जब सब ओर सन्नाटा पाया तो अपना कार्य-साधन करनेके लिए रवाना हुई। वाई लालजी,मुझे क्या मालूम था कि यह तुम्हारी पुत्री है,और अत्याचारी राजा तुम्हारा पति है। अपनी चेष्टामें मैं असफल रही। यही अच्छा, मित्रघातिनी तो नही हुई! वाई लालजी मैं आपसे दयाकी भीख नहीं माँगती। यह वही कटार है जो आपने अपनी विदाके समय मुझको दी थी। आपकी भेंट मैं पवित्र स्मृतिकी भाँति अपने हृदयसे बराबर लगाये रही। वही कटार दीजिये अब हृदयके भीतर रखकर मर जाऊँ। मेरा तो संसार उजड़ गया है! लाओ वाई लालजी,वह कटार दो,और अगर नहीं देना चाहती तो पुलिसमें मुझे दे दीजिये। पति-पुत्र जब जेलमें हैं तब मैं बाहर रहकर क्या करूँगी ?"

रूपकुँवरि पुनः विह्वल होकर रोने लगी।

माधवी और दिवाकर दोनों एक दूसरेका मुख देखने लगे। यशोधरा माधवीके समीप आ गयी। शारदाने एक दीर्घ निश्वास लेकर कहा—"रूपा, ले यह कटार ले। हम तीन व्यक्ति हैं,—मैं, दिवाकर और माधवी। एकके बाद एकको मार कर तू अपना प्रतिशोध ले ले। दिवाकर, तू पहले अपनी छाती खोल कर रूपाके सामने खड़ा हो जा। रूपा, तेरे पुत्रको मेरे पतिने मारा है ले तू, अब उनके पुत्रके प्राण ले-ले। मैं भी राजपूतनी हूँ। न्यायकी वेदीपर अपने पुत्रको मैं स्वयं चढ़ा सकती हूँ। माधवी, तू सामने खड़ी हो जा। जा। रूपा, उठ! अपना प्रतिशोध निकाल!"

माधवी और दिवाकर रूपकुँवरिके सामने खड़े हो गये। एक भयंकर निस्तब्धता उस कमरेमें छा गयी। रूपकुँवरि पृथ्वीकी ओर देख रही थी, उसकी आँखोंसे आँसू गिर रहे थे। रणजीत और यशोधरा दोनों अवाक् चित्र लिखे-से थे। शारदाकी आँखोंसे दिव्य तेज निकल रहा था, भ्रू का एक वाल भी कुंचित नहीं था। स्वर्गीय तेजकी आभासे क्षणभरके लिए वह कमरा आलोकित हो गया। माधवी और दिवाकर दोनों शान्तिपूर्वक खड़े थे। भयकी एक रेखा भी दृष्टिगोचर नहीं होती थी।

शारदाने पुनः शान्तिपूर्ण कण्ठसे कहा—"रूपा, उठती क्यों नहीं ? मेरे दोनों लड़के तेरे सामने खड़े हुए तेरे आघातकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

रूपाने वह कटार फेंक दी और कहा—"वाई लालजी, यह भी तो मेरे लड़के हैं। कोई माँ अपनी सन्तानको कटार नहीं भोंक सकती। मैं क्या जानती थी कि राजकुमार और राजकुमारी तुम्हारी सन्तान हैं। प्रतिशोध, प्रतिशोध मैं क्या तुम्हारी सन्तानसे लूँगी?"

शारदाने कहा—"किन्तु ये भी तो उसीकी सन्तान हैं, जिसने तेरा घर उजाड़ा है, तेरे पति-पुत्रको जेल भिजवाया है ?"

रूपकुँवरि रो रही थी। उसने रोते रोते कहा—"हाँ यह सत्य है, परन्तु वह मेरा कर्मविपाक है। ईश्वर उनकी भी रक्षा करेगा। बाई लालजी, मुझे क्षमा करो।"

यह कहती हुई वह उसके पैरोंपर गिर पड़ी। शारदाने उसको अपने हृदयसे पूर्वकालकी भाँति लगा लिया। दोनों सखियाँ रोने लगीं। सारे आँसुओंने उनके मनके मैलको धोना आरम्भ कर दिया।

७

रमईपुरमे घर-घरमें नसीमा और इमामबख्शके विवाहकी चर्चा थी। सभी लोग प्रसन्न थे, जैसे कि यह विवाह उन्हींकी सन्तानका हो। संसारके सभी देशोंमें और सभी जातियोंमे विवाहकार्य एक मुख्य कार्य होता है, परन्तु देहाती जीवनमें इसका एक विशेष महत्व होता है। देहाती जीवन प्रायः एक-सा, विचित्रता-रहित, सादा, निष्कपट और सत्य जीवन होता है। उनके जीवनमें महत्वपूर्ण घटनाएँ प्रायः नही रहा करती, किन्तु विवाहका समय बड़े आमोद-प्रमोदका होता है। निर्धन व्यक्ति अपनी शक्तिके बाहर व्यय करता है, यद्यपि वह जानता है कि यह व्यय उसे महाजनके फौलादी पंजेमें अधिक कसकर जकड़ देगा। सहयोगकी भावना बहुत प्राचीन कालसे दिहाती जीवनका प्रधान अंग बनी चली आती है। यद्यपि शहरी जीवनमें इसका सम्पूर्ण रूपसे नाश हो चुका है, परन्तु इसके अवशेष चिह्न अभीतक गाँवोंमें दृष्टिगोचर होते है। रहीम इस गाँवके प्रत्येक निवासीके प्रिय थे। छोटे-बड़ोंके प्रत्येक कार्यके अवसरपर वे सहायताके लिए पहले खड़े दिखायी देते थे। चमार, भंगी, ब्राह्मण, क्षत्रिय सबके दरवाजे जानेमें उन्हें कोई ग्लानि उत्पन्न न होती थी, उनका सहायक हस्त सदैव सबके लिए एक ही शक्तिसे अग्रसर होता था। अतएव जब आज उनके घरमें लड़कीका विवाह था, तब सब लोग उनका काम बटानेके लिए उत्सुक हो उठे। सगाईके दिनसे उनके घरपर शहनाई बजने लगी, घरके बाहर भीतर सफाई होने लगी। स्वयंसेवकोंके दल बँध गये, और मनोहर सबका नेतृत्व करने लगा।

पंजाबसे इमामबख्शके सम्बन्धी, और माँ इत्यादि सभी व्यक्ति आ गये थे। एक बड़ा मकान उनके लिए खाली करा दिया गया था, और वहीसे बरात सजकर रहीमके घर आनेवाली थी।

नसीबन और मनोहरकी माँ गंगाको प्रबन्ध-कार्यसे किंचित् अवकाश नही मिलता था। नसीमा और गुलाब किसी काममें हाथ न लगाती थीं। विवाह-रात्रिकी संध्याको गुलाब नसीमाका शृंगार करने बैठी। दोनोंके हृदय प्रसन्न थे, परन्तु दोनोंकी आँखें भरी हुई थीं। हास्य और विलापका अद्भुत मिलाप था।

गुलाबने नसीमाकी वेणी गूहते हुए कहा—"नसीमा, आजकी रातसे तू परायी हो जायगी, फिर तेरे ऊपर मेरा कोई अधिकार नही रहेगा।"

नसीमाने हँस कर कहा—"और एक दिन तू भी हमको रुला कर ससुराल चली जायगी। मै तो इसी [illegible]ँगी। [illegible] और...मान भी ली है।"

गुलाव—"किसने मान लिया है?"

नसीमा—"अरे उन्ही लोगोंने।"

गुलाव—"वे लोग कौन है, उनका नाम तो लो।"

नसीमाने उसका लक्ष्य न समझ कर कहा—"मेरे वहनोईजी, और कौन!"

गुलावने उसके कपोलोंपर गुल्चा मारते हुए कहा—"मेरे जरियेसे क्यों कहती है—'मेरे दुल्हा' ऐसा क्यो नही कहती?"

नसीमा और गुलाव दोनो हँसने लगीं।

गुलावने फिर कहा—"नसीमा, तू हमको फिर भूल जायगी।"

नसीमाने कहा—"विवाहके वाद क्या कोई अपने प्रियजनोंको भूल जाता है? गुलावी, एक दिन तेरा भी विवाह होगा। उस दिन अम्मा कहती थी कि गुलावीके लिए वर ढूँढ़नेको महिपाल काकाको कहा है। वे रवाना भी हो गये है।"

गुलावने गंभीर होकर कहा—"नसीमा, मै विवाह नही करूँगी।"

नसीमा—"क्यों पगली? क्या इसलिए कि तेरे पहले मेरी शादी हो रही है?"

गुलाव और नसीमा दोनों हँसने लगी।

उधर गंगा और नसीवन छतपर खड़ी हुई चारो तरफकी सजावट देख रही थीं। नसीवनका हृदय वाँसों उछल रहा था; उसके एक ही सन्तान थी, और उसका विवाह था।

उसने गंगासे कहा—"वहन, आजसे नसीमा दूसरेकी हो जायगी। देखो तो कैसा संसार है। लड़कियोको हम पालती है, और घर दूसरेका वसाती है!"

गंगाने उत्तर दिया—"हाँ, काकी यही परम्परा है। हम लोग भी तो कहीं पैदा हुई थी, और अपने माता-पिताको रुला कर यहाँ आयी। अव यहाँ इतनी रम गयीं कि मायकेवालोंकी याद भी यदा-कदा आती है। ऐसी ही नसीमा और गुलावी भी हमें रुलाकर चली जायँगी। संसारका यही नियम है।

नसीवनने आश्चर्य-भाव अपने मुखपर लाकर कहा—"अरे वहन, मै तो एक खुशखवरी वताना ही भूल गयी। नसीमाके अव्वा अभी कई दिन हुए महिपालसे वात कर रहे थे।"

महिपाल मनोहरका काका था। गंगाने उत्सुकतासे पूछा—"काकाजी क्या कह रहे थे उनसे? अरे, उन्ही लोगोंने तो हमें वरवाद कर दिया है। अगर काका जो खड़े न होते तो मनोहर और गुलावी क्या जीवित रहते?"

नसीवनने उत्तर दिया—"करनेवाला सव भगवान है, हम लोग तो निमित्त-मात्र है। अगर एक इन्सान दूसरे इन्सानकी मदद न करे तो उसे फिर इन्सान क्यों कहा जाय, पशु न कहा जाय!"

नसीवनकी दृष्टि उड़ते हुए एक गुव्वारेकी ओर चली गयी।

गंगाने कहा—"यह मनोहरका उत्साह है। आज दिनभर उसने गुव्वारे वनाये हैं, और अव उड़ा रहा है। रात्रि आ रही है, इससे ये भी आकाशमें चलते-फिरते तारोंकी भाँति दिखायी देंगे। हाँ, काकाजी क्या कह रहे थे?"

नसीबनने कहा—"हाँ, वे कह रहे थे कि तुम गुलाबीके लिए सुयोग्य वर ढूँढ़ो। वर पढ़ा-लिखा, ऊँचे घरानेका हो, इसी वंशके अनरूप।"

गंगाने म्लान हँसीके साथ कहा—"वंश वंशकी वात छोड़ो काकीजी। क्या होता है उन पुरानी वातोंसे ? जव राज हमारे घरमें था,तवकी वरावरी करनेसे काम नही चलेगा। हम राजवंशके है अवश्य, किन्तु इस समय तो हम साधारण कृषक है। पुराने गीत गानेसे कोई लाभ नही, वरन हानि होगी।"

नसीवनने हँसकर कहा—"वाह, वंशमर्यादा कहीं मिटाये मिटती है ? सोना हर समय सोना रहेगा, भाव तो उसका चढ़ता उतरता ही रहता है। नही, हम अपनी गुलावीकी शादी वंश और कुलके अनुरूप करेंगे। यही वात तो नसीमाके अव्वा कह रहे थे। वर सव प्रकारसे सुन्दर होना चाहिये, रुपये इत्यादिकी तुम परवाह न करो ; क्योंकि मनोहरके पिता उनके पास पाँच हजार रुपये अमानत रख गये हैं। उन्होंने इस वातकी अभीतक चरचा इसलिए नहीं की क्योंकि ये रुपये गुलावीकी शादीके लिए अलग गाँठ वाँधकर रक्खे हुए थे। समय आनेपर यह वात प्रकाशित करता हूँ।"

गंगा विस्फारित नेत्रोंसे उसकी ओर देखने लगी। फिर धीरे धीरे कहा—"नहीं काकीजी, यह वात विल्कुल झूठ है। क्या मैं अपने घरका हाल नहीं जानती ?"

नसीवननें कहा—"यह विल्कुल झूठ नही है। जो रुपये-पैसे हम वचाती है, हम लोग भी उनको अपने पति तथा पुत्रसे छिपाये रहती है, उसी प्रकार वे लोग भी ऐसी गुप्त रकमें छिपाये रहते हैं। पहले तुम्हारी ही तरह मुझे भी विश्वास न हुआ था। लेकिन नसीमाके अव्वाने कहा कि वात विल्कुल सच है। दोनों मिलकर कुछ व्यापार कर रहे थे, जव वे मरने लगे तो उनसे कह गये कि इस व्यापारके मुनाफेसे गुलावीका व्याह कर देना। इतने सालसे यह रकम वढ़ती रही, इस समय सव मिलाकर पाँच हजारसे ऊपर है। तुम्हारे यहाँ दहेज ज्यादा लगता है, इससे उसका प्रवन्ध वे पहलेसे कर गये थे।"

गंगा विचारमें पड़ गयी। नसीवनको इस समय नीचे आये हुए मेहमान वुलाने लगे। वह शीघ्रताके साथ चली गयी।

८

लखनापुरके ताल्लुकेदार सुरेन्द्रविक्रम सिंह राष्ट्रीय विचारोंके थे, यद्यपि वे उदार दलके सदस्य थे, किन्तु वास्तवमें मनसे वे गान्धीवादके अनुयायी थे। स्वयं एक सदाचारी व्यक्ति थे, और सत्य तथा अहिंसाके उग्र समर्थक। उनके राष्ट्रीय विचारोंकी छाप यशोधराके हृदयमें लगी हुई दिखायी पड़ती थी, इसी कारणसे वह चरखा और तकलीकी भक्त थी। उन्होंने यशोधरा और रणजीत सिंहको पूर्ण रूपसे शिक्षित किया। सेवाकी भावना उनके हृदयमें बड़ी सजग थी, इसलिए उन्होंने रणजीतको डाक्टरी पढ़ाया। यशोधराकी शिक्षाका भार उन्होंने स्वयं अपने ऊपर लिया, और वे चतुर कुम्हारकी भाँति उसके विचारोंको गढ़ने लगे। खद्दरका व्यवहार वे स्वयं करते थे, और यशोधरा तो चरखा कातनेमें निपुणताकी सीमातक पहुँच गयी थी। छोटी ताल्लुकेदारीसे आय बहुत कम थी, परन्तु मितव्ययी होनेके कारण उनका व्यय निकल जाता था। प्रजाके साथ उनका व्यवहार

सद्भावनासे पूर्ण था, इसलिए वह उनपर प्राण न्योछावर करनेके लिए तैयार थी। यशोधरा आज कई दिनोंसे कल्याणपुरमें थी। माधवीकी तबियत अब बिल्कुल अच्छी थी, किन्तु यशोधराको पाकर वह उसे छोड़ना नहीं चाहती थी। उसके साथ रहनेसे उसे अद्भुत शान्ति मिलती थी। सरकारी काममें व्यस्त रहनेके कारण सर भगवान सिंह कल्याणपुर नहीं आये, और जब माधवीके स्वस्थ होनेका समाचार उन्हें मिल गया, वे निश्चिन्त होकर अपने कर्तव्यपालनमें लग गये।

शारदाने रूपकुँवरिको अपने पास रखनेके लिए बहुत प्रयत्न किया, किन्तु उसने किसी भाँति स्वीकार नहीं किया। उसने जाते समय कहा—"बाई लालजी, मैं अबतक गलत मार्गपर थी। मानसिक विकारोंका मैं शिकार हो गयी, जिससे विवेक खो दिया था। जंगी और उसका बाप न्याय-पथपर चलते हुए जेल गये हैं, इसलिए मुझे दुखी होना आवश्यक नहीं है। उन्होंने जो काम शुरू किया है, वह अभी अधूरा है। मेरा कर्तव्य है कि उसको पूरा करूँ। मैं जाकर वह काम आरम्भ करती हूँ। महाराजा साहबसे व्यक्तिगत मेरा कोई वैर नहीं है, वे एक प्रथा और एक संस्थाके प्रतीक हैं। ताल्लुकेदारी और जिमींदारी-प्रथामें जो स्वाभाविक दुर्गुण हैं, उनका नाश तबतक नहीं होगा जबतक यह प्रथा अवशेष रहेगी। सहृदय व्यक्तियोंके साथ अवश्य इस प्रथाके दुर्गुणोंकी तीव्रता कम हो जाती है, परन्तु जो वस्तु आदिसे अन्ततक गरीबोंका खून चूसनेवाली है, उसमें व्यक्तियोंकी सहृदयता कितनी सहायता पहुँचा सकती है? इस प्रथाको जड़से उन्मूलन करनेमें प्रजाका कल्याण है। मेरा कर्तव्य मेरे सामने स्पष्ट है।"

शारदाने उसे रोकनेकी बहुत चेष्टा की, परन्तु उसने स्वीकार नहीं किया। शारदा उसे आर्थिक सहायता देने लगी, किन्तु उसने नहीं लिया, और कहा—"अपने घर जलानेका दण्ड तुमसे नहीं लूँगी बाई लालजी! घर जो उजड़ गया वह अब तभी बसेगा, जब ईश्वरकी इच्छा होगी। अकेले पेटको पालनेमें अधिक व्यय नहीं पड़ता। मेहनत मजदूरी करके पेट पाल लूँगी। आपने पुलिसके सिपुर्द मुझे नहीं किया, यही कौन कम है। इस उपकारका बदला मैं क्या दे सकती हूँ? ईश्वरने मेरे हाथसे वह अपकर्म नहीं कराया जिसके करनेके बाद मनुष्य अपनी मनुष्यता खो देता है। इसके लिए ईश्वरको धन्यवाद है, और तुम भी मुझे क्षमा करना।"

रूपकुँवरि सवेग चली गयी।

शारदा सोचने लगी—"ईश्वरकी विचित्र माया है, यह कहाँ थी, और फिर कहाँ मिली—मधुकी हत्याका प्रयत्न करती हुई! राजगढ़से उसका पिता निकाला गया, उसकी जागीर ज़ब्त हुई, और वर्षो इधर-उधर घूमता रहा। अन्तमें क्षत्रिय-विवाह-सहायक सभाकी मध्यस्थतामें वह शार्दूल सिंहसे ब्याही गयी, और घटनाचक्रसे मेरे ही इलाकेके पाट गाँवमें रहने लगी। न मुझे ज्ञात था कि वह यहाँ है, और न वह जानती थी कि मैं यहाँ हूँ। यहाँ पर भी उसका घर लूटा गया, और उसके पति-पुत्रको उन्होंने जेल भिजवा दिया, दोनोंको सजा भी उन्होंने करवा दिया। दो-दो वर्षका कारावासदण्ड मिला है। बेचारे निरपराध, घरसे निकाले गये, लूटे गये, मारे गये, और अन्तमें कारावास भी भेजे गये।"

"क्या यही न्याय है ? वास्तवमें रूपा सत्य कहती है कि जिमीदारी-प्रथा ही सब अनर्थोंकी मूल है। जमीन किसान जोतता है, अतएव वह उसकी है। जो फल प्राप्त होता है वह उसके परिश्रमसे प्राप्त होता है। दूसरेके परिश्रममें हिस्सा बटाना क्या न्याय है ? पृथ्वीका स्वामीत्व राजाको कैसे प्राप्त है ? यह प्रथा कब चली, और कैसे चली कुछ ज्ञात नही। जब राजाका पृथ्वीपर आधिपत्य मानेंगे तभी भूमि-कर युक्तिसंगत होगा, परन्तु यह अधिकार भी तो लूटा-खसोटी है। सबल, निर्बलपर सदैव अत्याचार करता आया है और राजा चूँकि शक्तिशाली है, वह भूमिका स्वामी बन बैठा।"

"ईश्वरने सबको एक-सा पैदा किया है, परन्तु मनुष्य अन्याय करके, दूसरेके प्राप्यको हरण करके सबल बन जाता है, और सबल होनेपर इतर निर्बलोंपर अत्याचार करने लगता है। किसी भी प्रथाके आदिमें कोई बुराई नही होती, उपादेय और कल्याणकारी समझकर ही उसको समाजमें प्रविष्ट किया जाता है। जबतक मनुष्यकी नीति धर्म और न्याययुक्त रहती है, वह प्रथा अपनी उत्तमता नहीं छोड़ती, किन्तु जहाँ कार्यकर्ताओंमें अधर्माचरण और अन्यायका आधिपत्य हो जाता है, वहीसे वह प्रथा बिगड़ने लगती है, तथा उसकी बुराइयाँ उतराने लगती हैं।"

"सृष्टिके आदिकालमें जब मनुष्य छोटे-छोटे संगठनोंमें विभक्त थे, तब भूमिपर कोई कर नहीं था। जो जितनी जमीन जोतता था, वह उसका स्वामी था। जमीनकी कमी नही थी, इस कारण कोई झगड़ा नहीं पड़ता था। सभ्यताके विकासके साथ एक-एक समूहके व्यक्तियोंने अपना एक नेता चुन लिया, और रक्षा इत्यादिका भार उसको सौंप दिया, तथा उसके भरणपोषणके लिए प्रत्येक गृहका स्वामी अपनी आयका एक भाग देने लगा। समयके प्रवाहके साथ नेताके अधिकार बढ़ने गये, जो अन्तमें सामन्तों तथा छोटे-छोटे राज्योंके रूपमें दृष्टिगोचर होने लगे। धीरे-धीरे उनमें युद्ध होना, और एक दूसरेके आधिपत्यको स्वीकार करना, तथा कर देनेकी प्रथाने जन्म लिया, इसी प्रकार बढ़ते-बढ़ते देश स्वामी, और सम्राट् भी हो गय। इन राजाओं तथा सम्राटोंके पास शक्ति बहुत थी. अतएव इन लोगोंने अपनी सत्ताको अक्षुण्ण बनाये रखनेके लिए ऐसे नियम, उपनियम, कानून बनाय जिनमे उनका प्रभुत्व सदैव स्थिर रहे। सामाजिक व्यवस्थामें वे कर्णधार थे ही, अतएव उन्होंने अपने वर्गकी सदैव रक्षा की, और शासित वर्गको धर्म, प्रलोभन और कानूनद्वारा सदैव कुचलनेकी कोशिश की है।"

"आज मैं एक राज्यकी अधिकारिणी हूँ, आनन्दसे मनमाना खर्च करती हूँ, और मेरे सारे आमोद-प्रमोद, शादी-विवाह, रहने, खाने-पीने, ऐश-आराम सबका भार प्रजाको वहन करना पड़ता है। मैं महलोंमें रहती हूँ, और हमारी प्रजा आकाशके नीचे रहती है, जिनकी दीवालें केवल दिशाएँ हैं। मेरे बच्चे उत्तमसे उत्तम भोजन करते है, कितना ही बिगाड़कर फेंक देते हैं, नष्ट कर देते हैं, और मेरी प्रजाके बच्चोंको एक समय—एक भोजन भी भरपेट नहीं मिलता। मेहनत वे करते हैं, और मौज मैं करती हूँ। कितना अन्याय है ! अब तो यह सहन नहीं होता। मेरा मन यह गुरुभार वहन करनेके लिए तैयार नहीं है।"

"...रा जीवन कितना कृत्रिम जीवन है। कृत्रिमताके फेरमें हम इतना पड़े हुए

हैं कि हमारा अस्तित्व ही मिट गया है। हमारे जीवनका उद्देश्य क्या है, यह हमें ज्ञात नहीं है। हम केवल अपने अधिकार सुरक्षित रखना चाहते हैं, और उसके लिए घोरसे घोर अपराध, और पाप करनेको तैयार हैं। जिमींदार और राजा सबने न्याय-पथपर चलना छोड़ दिया है, इसलिए चारों ओर हा-हाकार है, और हमें निगल जानेके लिए जनशक्ति उठती हुई चली आ रही है।"

"सहनशक्तिकी एक सीमा होती है, प्रजा किसी हदतक राजाके अन्यायको सहन करेगी और जब वह अत्याचार सीमाके बाहर हो जाता है तब जनशक्ति उससे लोहा लेनेके लिए मैदानमें उतर आती है। राजशक्ति और प्रजाशक्तिका संघर्षण होता है। कुछ कालतक तो राजशक्ति प्रबल पड़ती है, परन्तु अन्तमें प्रजाशक्तिकी ही विजय होती है और समाज-का पुनर्निर्माण होता है। संसारके क्रान्तिकारी इतिहासमें यही स्पष्ट देखनेको मिलता है।"

"धनी और निर्धनका संघर्षण अहर्निशि होता रहता है। पूँजीपति वैध तथा अवैध उपायोंसे निर्धनोंको शोषण करता रहता है,राजा चूँकि स्वयं सबसे बड़ा पूँजीपति है,उनकी सहायता करता है, निर्धनोंको दबाकर उनके सारे अधिकारोंको जिन्हें प्रकृति और ईश्वर मुक्तहस्तसे देता है, नष्ट कर उनके द्वारा अपनी पूँजीकी शक्तिको बढ़ाता है, केवल फिर उन निर्धनोंको कुचलनेके लिए। किन्तु निर्बल क्या हमेशा कुचले हुए पड़े रहेंगे ?"

"दिवाकर और माधवी दोनों अपने पिताके अत्याचारको देखनेमें असमर्थ है। दिवाकर तो केवल मेरे कारण खुलकर विद्रोह नहीं करता, किन्तु कबतक वह अपनी आग छिपाकर रखेगा। एक दिन तो वह भड़केगी ही। माधवी इसी आघातको सहनेमे असमर्थ होनेके कारण बीमार है। यशोधरा इत्यादिके आ जानेसे वह कुछ प्रसन्न दिखायी पड़ती है। उनके जानेके पश्चात् वह फिर अपनी चिन्तामें लीन हो जायगी।"

"लड़ाईका चन्दा—यह एक नयी बला सामने आयी। उनको बस यही धुन सवार है कि मेरे राजका चन्दा सबसे अधिक हो। जब मैं कहती हूँ कि अपने कोषसे दे दो, करोड़ों रुपये तुम्हारे कोषमें भरे हैं, उसका एक भाग दे दो, तो उसके लिए तैयार नहीं होते। केवल प्रजाको चूस-चूसकर चन्दा देना चाहते हैं! यही तो अन्याय है, मैं भी यह सहन नहीं कर पाती।"

"कहनेको मैं राजरानी हूँ, दिवाकर राजकुमार है, परन्तु अधिकार केवल गोपी-नाथको है। मैं किसीका भला नहीं कर सकती, एक वस्त्र, अन्नका एक दाना अपनी प्रजाको नहीं दे सकती। उनसे मिलकर, उनका दुखदर्द नहीं पूँछ सकती,उनको विपत्तिमें सहायता नहीं कर सकती, क्योंकि यह सब राजकीय प्रथाके विरुद्ध है, परम्पराके विपरीत है। तब यह भार ही क्यों वहन करूँ, निरर्थक बोझ क्यों उठाऊँ!"

इसी समय परिचारिकाने आकर कहा—"महारानीजी, दीवानजी ड्योढ़ीपर-आये हैं और यह कहते हैं कि मैं चन्दा वसूल करनेके लिए दूसरे गाँवोंकी ओर जा रहा हूँ, क्योंकि लखनऊसे महाराजा साहबकी आज्ञा आयी है,और सेवाकार्य के लिए नायब दीवान अम्बिकाचरणको यहीं छोड़े जाता हूँ।"

शारदाने खिन्नताके साथ उत्तर दिया—"तो मैं क्या करूँ? जहाँ जानेके लिए

उन्हें हुक्म हुआ हो वहाँ जावें। मुझसे पूछने कहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है।" परिचारिका चली गयी।

शारदा फिर सोचने लगी—"युद्ध कहाँ होता है, कौन लड़ता है, किसके लिए युद्ध लड़ा जाता है, परन्तु उसके व्ययका भार वहन करना पड़ता है हमारी भूखी प्रजाको! कैसा अन्याय है! घरमें खानेको नहीं है, पहननेको कपड़ा नहीं है, रहनेको मकान नहीं है, आरामका कोई साधन नहीं है, परन्तु दूसरे देशके लिए, दूसरे मनुष्योंके लिए युद्धकर देना पड़ेगा। एक पैसा भी उनके पास नहीं है, तब सैकड़ों रुपया लड़ाईके चन्देमें कहाँसे दें। उनको मजबूरन इनकार करना पड़ता है, नतीजा यह होता है कि उनके घर जलाये जाते हैं, उनको कोड़ोंसे मारा जाता है, उनकी बहू-बेटियोंकी बेइज्जती होती है। बचाखुचा अन्न छीन लिया जाता है, एक आध सौभाग्य-चिह्नके जो आभूषण बचे हैं, उन्हें उतरवा लिया जाता है, और इस प्रकार चन्दा वसूल होता है। इन गरीबोंकी हाय कहाँ जायगी, उनका शाप किसपर पड़ेगा? लड़ती है विदेशी सरकार, लड़ाई होती है विदेशमें, और शाप भोगना पड़ेगा हमको, मेरे बच्चोंको। इससे तो अच्छा है कि मेरे बच्चे इसके प्रतिरोधमें अपना जीवन दे दें। कमसे कम वे मरेंगे तो न्यायपर। गरीबोंके शापसे तो बचे रहेंगे। किन्तु इस मार्गको अवलम्बन करनेसे पिता-पुत्रमें वैर होगा, पति-पत्नीमें युद्ध होगा।"

इसी समय दिवाकरने आकर कहा—"अम्मा, दीवानजी पुनः चन्दा वसूल करने जा रहे हैं। मैंने उन्हें मना किया, तो कहा कि मैं क्या करूँ, महाराजकी आज्ञा है।"

शारदाने उत्तेजित स्वरमें कहा—"हाँ, महाराजकी आज्ञा है! महाराजकी आज्ञा-का पालन होगा ही। दिवाकर, मैं चन्दा वसूल होने नहीं दूँगी। जाकर कह दे कि महारानी-की आज्ञा है कि कुछ दिन ठहर जाओ, वे महाराजसे दूसरा हुक्म मँगवा देंगी।"

दिवाकरने कहा—"मैं यह पहले ही कह चुका हूँ, परन्तु उसने ठहरनेमें असमर्थता प्रगट की है। वह कहता है कि महाराज कभी अपना आदेश नहीं बदलेंगे, उल्टे उसकी दुर्गति की जायगी। वह अपना दल लेकर चला गया है।"

शारदाने सक्रोध कहा—"दिवाकर, मोटर तैयार कराओ। मैं अभी लखनऊ जाती हूँ, तू रणजीतके यहाँ चला जा। माधवीको मैं अपने साथ ले जाऊँगी। बहुत दिनोंतक यह अग्नि दबाकर नहीं रक्खी जा सकती। मैं भी अपना कर्त्तव्य करूँगी।"

दिवाकरका मुख प्रदीप्त हो उठा। वह प्रहृष्ट मनसे माताका आदेश पालन करनेके लिए चला गया।

शारदाने माधवीको बुलाकर लखनऊ चलनेका आदेश दिया। लखनऊका नाम सुनते ही उसका चेहरा उतर गया। उसने चिन्तित स्वरमें पूछा—"क्या पापाने बुलवाया है?"

शारदाने कुछ उत्तर नहीं दिया। उसने केवल कहा—"तुम शीघ्र तैयार हो जाओ। अगर यशोधरा चले तो उसको भी अपने साथ ले लो। रणजीत अपने साथ दिवाकरको लेकर सुल्तानपुर जायगा।"

माधवी यशोधराको ढूँढने चली गयी।

९

सर भगवान सिंह वहीं उत्तेजित अवस्थामें कमरेमें घूम रहे थे। उनके सामने एक

सोफापर शारदा बड़ी गम्भीर मुद्रामें बैठी थी। रात्रिके लगभग ग्यारह बज चुके थे। साधारण नौकरोंको छुट्टी दे दी गयी थी, और वे लोग कमरेमें एकान्त थे। माधवी और यशोधरा दोनों अपने कमरेमें सो गयी थीं।

सर भगवान सिंह कहने लगे—"यद्यपि मेरा व तुम्हारा सम्बन्ध पति-पत्नीका है, और शास्त्रानुकूल तुम मेरे अनुकूल चलनेके लिए बाध्य हो, किन्तु, रानी, मैं तुम्हारे ऊपर कोई दबाव डालना नहीं चाहता। तुम अपना कर्तव्य—जो कुछ समझो—पालन कर सकती हो।"

शारदाने कहा—"मैं केवल आपसे यह प्रार्थना करती हूँ कि चन्देके लिए प्रजाका नाश न कीजिये। विदेशी सरकारके युद्धके लिए मेरी प्रजाका घर मत लुटवाइये। यह हा-हाकार मुझसे अब नहीं सुना जाता। अजस्र अभिशाप हमें और हमारी सन्तानको दिये जा रहे हैं, उनसे त्राण पानेके लिए मैं आपकी शरणमें आयी हूँ।"

सर भगवान सिंहने वक्र दृष्टिसे देखते हुए कहा—"शार्दूल सिंहकी स्त्रीने तुम्हारे मस्तिष्ककी विचार-शक्तिको नष्ट कर दिया है। उसको अछूता छोड़कर तुमने बड़ा अपकर्म किया है, एक नागिनको तुमने छोड दिया है, वह तुम्हारे ऊपर फिर वार करेगी! शासनमें दया, करुणाका कोई स्थान नहीं है।"

शारदाने किंचित् उत्तेजित स्वरमें कहा—"किन्तु यह तो विचारिये, कि उसको इस दशातक पहुँचानेका अपराध किसका है? क्या उसके पति और पुत्र निरपराध नहीं थे? क्या आपके कर्मचारियोंने उसका घर लूटकर जला नहीं दिया? क्या उस दिन जो गोली-काण्ड इसी बँगलेकी चहारदीवारीके अन्दर हुआ, वह न्याय और धर्मसंगत था? इन प्रश्नोंके पूछनेका अधिकार आप किसीको देंगे नहीं, किन्तु मैं आपकी सहधर्मिणी हूँ, आपके शुभाशुभ कर्मोंका फल मुझे किसी न किसी रूपमें भोगना पड़ेगा, उस अधिकारसे मैं इन प्रश्नोंको पूछती हूँ।"

सर भगवान सिंहने सक्रोध कहा—"अपने प्रबन्ध और शासनकी आलोचना मैं तुमसे नहीं करवाना चाहता, न तुम्हें इसका अधिकार है। मैं उन मनुष्योंमें नहीं हूँ, जो स्त्रीसे पूँछ पूँछकर काम करते हैं। 'स्त्री-बुद्धि प्रलयंकरी', नीतिके इस वचनको मैं मानता हूँ, और इसीके अनुसार काम भी करता हूँ। तुमने मेरी सन्तानको नष्ट कर दिया है। दिवाकरको भीरु और अकर्मण्य बनानेका उत्तरदायित्व तुमपर है। राजकार्यमें मैं किसीका भी—चाहे वह कितना ही मेरे निकट क्यों न हो—हस्तक्षेप सहन नहीं कर सकता।"

वे अपने क्रोधको दबानेकी चेष्टामें कमरेमें घूमने लगे।

शारदा कुछ देरतक चुप बैठी रही, फिर उसने कहा—"ठीक है, तब मेरा कोई अधिकार नहीं है?"

सर भगवान सिंहने शान्त होते हुए कहा—"हाँ, अधिकार तुम्हारा है मेरे घरके अन्दर। वहाँ तुम स्वामिनी हो। तुमने शार्दूल सिंहकी स्त्रीको छोड़ दिया, यद्यपि उसने मेरी सन्तानको वध करनेकी चेष्टा की थी, किन्तु उसे छोड़ देनेका तुम्हें अधिकार था, इसलिए मैं उस विषयमें कुछ नहीं कहता। गार्हस्थ्य कार्योंमें स्त्रीका आसन सर्वोच्च है, वहाँ मैं हस्तक्षेप नहीं करना चाहता। पुरुषका शृंगारभाग स्त्री है, अतएव स्त्रीको अपनी इसी

और खर्चका बिल पास नही हुआ है. मिलनेपर जरूर तुम्हारी खातिर करूँगा। मौलवी साहब अभी दो सौ तुमको दे गये हैं। उनको तो लम्बी रकम मिलती है, मगर हम पण्डित तो थोड़ेहीमें सन्तोष करते हैं।"

जद्दूरने रुपये जेबमें रखते हुए स्वगत कहा--"जो मिले वही कौन कम है। कुछ अपना घी तो बेचा नहीं जो मुफ्तमें लड़भिड़कर इस आती हुई दौलतको झगड़ेमें डाल दूँ।"

पण्डित जागेश्वरदयाल प्रसन्न मनसे चले गये।

तृतीय खण्ड

१

अर्धरात्रिकी भयानकता पौष मासकी शीतकी अधिकताके कारण काँप रही थी। आकाशसे हिम बूँदोंके रूपमें गिरकर संसारको प्लावित कर रहा था। पवन भी हिमकणोंसे सिक्त होकर क्रान्तिकारी दलके नेता नरेन्द्रको कम्पित करनेके आयोजनमें व्यस्त था, परन्तु उसकी धमनियोंमें जो उष्ण रक्त प्रवाहित हो रहा था उससे वह उसी प्रकार युद्ध कर रहा था जैसे वह स्वयं शक्तिशालिनी अंग्रेजी सरकारके विरुद्ध लड़ रहा था। आज क्रान्तिकारी दलकी त्रैमासिक सभाकी बैठक थी। सभाका समय रात्रिके बारह बजे निर्धारित हुआ था, और सभी सदस्य वहाँ उपस्थित थे। कार्यवाही प्रारम्भ होनेपर नरेन्द्र कहने लगा—"अवकाश और विकट परिस्थितिके कारण हम लोग कई महीनेके पश्चात् मिले हैं। इस मध्यमें बड़े महत्वपूर्ण परिवर्तन हो गये हैं, जिन्हें आपने पत्रोंमें पढ़ा होगा। जापानने भी युद्ध-घोषणा कर दी है, और अमेरिका भी खुलकर रणक्षेत्रमें अवतीर्ण हो गया है। जर्मन सेनाएँ उत्तरी अफ्रीकापर अधिकार जमाती हुई पूर्वकी ओर अग्रसर हो रही हैं। इधर जापान प्रशान्त महासागरके टापू-पर टापू ले रहा है; और इन्डोचायना, श्याम, और मलायापर अपना प्रभुत्व जमा लिया है। अंग्रेजोंकी शक्ति उनके दो विराट जहाजों—'प्रिन्स आफ वेलस' तथा 'रिपल्स' के डूब जानेसे बिलकुल क्षीण हो गयी है। 'पर्ल हारबर' और गुवामकी समाप्तिके साथ अमेरिकाकी नौ-शक्ति तथा हवाई शक्ति भी छिन्न-भिन्न हो गयी, सिंगापुरपर शीघ्र ही जापानका अधिकार होनेवाला है, तथा बरमासे भी अंग्रेजी सेनाएँ बराबर पीछे भाग रही हैं। अब हमारे लिए स्वर्ण-अवसर आ रहा है। अब हम लोगोंको संगठित होकर काम करना है। जिस समय जापान बरमा-विजय करके भारतके पूर्वी द्वारपर उपस्थित हो, वही समय हमारे लिए उपयुक्त अवसर होगा। देशमें एक साथ इस विदेशी सरकारके विरुद्ध विद्रोह करना है। यह हमको ध्यानमें रखना होगा कि सन् बयालीसका प्रयास सन् सत्तावनकी भाँति निष्फल न होने पावे। इसलिए हमें अधिक सतर्कतासे संचालन करना पड़ेगा, हमको अपना पैर फूँक-फूँककर उठाना है। जापान भी हमारी हर प्रकारसे सहायता करेगा।"

दिवाकरने खड़े होकर कहा--"जापानकी सहायतापर हमें विश्वास करना चाहिये, क्योंकि वह साम्राज्यवादी है, चीनसे वह कई वर्षोंसे केवल साम्राज्य-विस्तारके लिए युद्ध कर रहा है. कहीं ऐसा न हो कि जो स्वतन्त्रता हमें जापानकी सहायतासे मिले वह स्वयं उसे हड़प कर जावे. और हमारा प्रयास केवल स्वामी विनिमयमें परिवर्त्तित हो।"

नरेन्द्रदेवने उत्तर दिया--"हमारे माननीय सदस्यका भय बिल्कुल ठीक है, ऐसा होना असंभव नहीं है। किन्तु हम अन्धे होकर उनका अनुसरण नहीं करेंगे। भारतको अब जापान, और जर्मन क्या, कोई शक्ति संसारकी परतन्त्र नही रख सकती है। यदि जापानने ऐसा कोई प्रयास किया तो हमको उससे लोहा लेते क्या देर लगती है। पहले हमें उस अग्निसे छुटकारा पाना है जो हमें अहर्निशि जला रही है। इसके अतिरिक्त यह भी नीतिका वचन है--"कण्टकेनेव कण्टकम्"। जापान और अंग्रेज लड़ेंगे ही, इससे दोनोंकी शक्तियाँ क्षीण हो जायँगी, और हमारा उसमें भी लाभ ही रहेगा।"

दिवाकर--"किन्तु यह तभी संभव है जब जापान और अंग्रेजोंका युद्ध भारतमें समाप्त हो।"

नरेन्द्र--"नहीं, भारतमें युद्ध होनेसे भारतीय प्रजाकी बड़ी हानि होगी, और अंग्रेज बरमाको तो शीघ्र ही खाली कर देंगे, वे आसाम तथा पूर्वीय बंगालकी सीमापर जापानियोंसे मोर्चा लेंगे। हमारे लिए उपयुक्त अवसर वही होगा कि पीछेसे हम अंग्रेजी सेनाओंपर आक्रमण करें, रसद वगैरह भेजनेके मार्ग काट दें, तथा इधर दिल्ली चलकर अपना अधिकार जमावें, और अंग्रेजी शासनका अन्त कर दें।"

दिवाकर कुछ उत्तर देने जा रहा था कि चक्रधरने उसको बैठाते हुए कहा--"हम लोगोंके पास वाद-विवादका समय नहीं है। हमें उसीका पालन करना चाहिये, जो हमारा नेता आज्ञा दे।"

नरेन्द्रने कहा--"नहीं, प्रत्येक सदस्यको अधिकार है कि वह अपना विचार स्वतन्त्रताके साथ रक्खे। हम फासिस्ट नहीं हैं, यद्यपि फासिस्ट शक्तियोंसे हमारी मैत्री होगी। हम जनवादके अनुयायी हैं। हाँ, हम यह कह रहे थे कि भारतके पूर्वसे पश्चिम तक, और उत्तरसे दक्षिणतक एक साथ क्रान्तिकी हुंकार उठना चाहिये। हमें शीघ्रतासे हर एक शहर और गाँवमें क्रान्तिका सन्देश पहुँचाना है। इस समय हमारी संख्या भी एक सहस्रके ऊपर पहुँच गयी है। हमने नये सदस्य बहुत बनाये हैं, किन्तु हमें एक बहुत बड़ा काम करना है, जिसके लिए अवकाश बहुत कम है, वह है सैन्य-शिक्षा। बिना समुचित सैन्य-शिक्षाके, बिना फौजी अनुशासनके हमारी सारी शक्ति बेकार है। जबतक हममें सैनिक शिक्षा न होगी, हमारे कार्य-संचालनमें एकता व सम्मिलीकरण नहीं होगा तबतक हमारी शक्ति बिखरी हुई रहेगी, और हम लोग एक भिन्न भिन्न विचारोंके जन-समूह मात्र रहेंगे, जिससे हम शत्रुसे लोहा लेनेमें सर्वथा असमर्थ रहेंगे। सैनिक शिक्षाका ज्ञान हम भारतीयोंको नहीं है, अनुशासनसे हम कार्य करना नहीं जानते। प्रत्येक पुरुष अपनेको दूसरेसे उत्तम समझता है, इससे हमारे कार्यमें एकत्रीकरण नहीं होने पाता। अब हमको यही काम करना है। यह तो आप लोगोंको ज्ञात है कि हम लोगोंको एकत्र होनेमें कितनी बाधायें रहती हैं, पग-पग-

पर शत्रुके गुप्तचर हमारा अनुसरण कर रहे ह । वे हमको मिटा देना चाहते हैं, और हम उनको।"

चक्रधर—"क्यों न श्रीगणेश पहले इन्हीं लोगोंसे किया जाय ?"

नरेन्द्र—"परिस्थिति देखते हुए यही उपाय सर्वोत्तम है, किन्तु अभी समय परिपक्व नहीं हुआ है, हमें अपना ध्यान उस विशाल लक्ष्यकी ओर रखना उचित है, जिससे भारतका उद्धार होगा। इन तुच्छ विभीषणोंको मारनेसे हमारी शक्ति कदापि नहीं बढ़ सकती, बल्कि सरकार सतर्क हो जायगी, और हमारा विनाश करनेमें वह विलम्ब नहीं करेगी।

उपस्थित सदस्योंने एक स्वरसे कहा—"किन्तु मरनेके लिए ही हम लोग इस कार्यमें अवतीर्ण हुए हैं।"

नरेन्द्र कहने लगा—"जीवनका रहस्य तो मरणमें समाविष्ट है। जो मरना जानता है,वही जीवित रहता है। हथेलीपर जान लिये फिरना ही जीवन—अमर जीवनकी खोज है। मरेंगे तो स्वर्ग जायँगे, और जीवित रहेंगे तो भारत स्वतन्त्र करेंगे। अतएव इस विषयमें हमें कुछ नहीं कहना है।"

दिवाकर—"हमारा यह प्रयास क्या अन्य राष्ट्रीय संस्थाओंसे सम्पर्क नहीं रक्खेगा ?"

नरेन्द्र—"मैं इसी विषयकी ओर आपका ध्यान आकर्षित करनेवाला था। भारतीय राजनीतिके क्षेत्रमें कई संस्थाएँ काम कर रही हैं, जैसे, कांग्रेस, फारवर्ड ब्लाक, इत्यादि इत्यादि। इन सबका ध्येय भारतको स्वतन्त्र करना है। हमें भी इनके प्रयासमें सम्मिलित होना है। कांग्रेसके हाथमें इस समय सबसे अधिक शक्ति है। हमारा उनसे मतभेद केवल मार्गका है, ध्येयका नहीं। अतएव हम उनके साथ चलेंगे। जहाँ तक अहिंसासे काम चलेगा, हम उसी अस्त्रका प्रयोग करते रहेंगे, किन्तु जहाँ हिंसात्मक होनेसे हमारे ध्येयकी पूर्त्ति होती है, वहाँ हम हिंसाका अवलम्बन करेंगे। जनतामें जाग्रति करनेमें कांग्रेसको जितनी सफलता मिली, वह अतुलनीय और अवर्णनीय है। कांग्रेस हमारे राजनैतिक शरीरका धड़ है, और हम लोग उसके सहायक अंग हैं।"

दिवाकर—"अब मैं आपसे बिल्कुल सहमत हूँ। हमको कांग्रेसके साथ मिलकर काम करना चाहिये, हम लोग भले ही उसके सदस्य न हों।"

नरेन्द्र—"अवश्य ! हमारा उनसे और कोई मतभेद नहीं है। इस समय कांग्रेसकी शक्ति इतनी अधिक है कि अंग्रेजी मंत्रिमण्डलसे कोई व्यक्ति भेजा जायगा, जिससे युद्ध-प्रयासमें सहायता मिले। अंग्रेज राजनीतिज्ञ इसको अच्छी तरह समझते हैं कि भारतके नवयुवक उनकी बिगड़ी हुई दशासे अवश्य लाभ उठानेका प्रयत्न करेंगे, इससे भारतको पुनः विभाजित करनेके लिए वे किसी चतुर नेताको भेजेंगे। भारतकी दो शक्तियाँ, हिन्दू और मुसलमान हैं। इन्हींको आपसमें लड़ाकर वे हमारी शक्ति क्षीण करना चाहते हैं। चूँकि मुसलमान अल्पसंख्यक हैं, अंग्रेज सरकार उनका पक्ष लेकर कांग्रेसको हिन्दू संस्था घोषित कर मुसलमानोंसे अलग कर देगी। किन्तु हमारा यही प्रयत्न होना चाहिये कि हिन्दू और मुसलमान विभक्त न होने पावें। आपमेंसे प्रत्येकका यह कर्त्तव्य होना चाहिये कि जहाँ उनका यह प्रयत्न हो, वहाँ आप उसको विफल करें।"

इसी समय कमरेमें रक्खी हुई खतरेकी घण्टी बजने लगी। नरेन्द्र और कान्ति-

कारी मण्डलके सभी सदस्य चौंक पड़े। नरेन्द्रने कहा—"भाइयो, गुप्तचरोंने हमारा पता लगा लिया है, मुख्य द्वारके प्रहरीका यह संकेत है। हम इस समय इनसे मोर्चा नहीं लेंगे, पलायन करेंगे। शान्ति और व्यवस्थाके साथ, लाइन बनाकर गुप्त मार्गसे जाइये जिसे चक्रधर खोल देगा। मैं द्वारकी रक्षा करता हूँ, यदि मैं मारा जाऊँ तो आप किसी अन्यको अपना नेता चुन लीजियेगा। शीघ्रता कीजिये।"

गुप्त मार्ग चक्रधरने खोल दिया। नरेन्द्र दो साथियोंके साथ मुख्य द्वारकी रक्षा करने लगा। सदस्य लाइन लगाकर उस संकीर्ण मार्गसे जाने लगे, जो दो दीवालोंके मध्यमें बनाया गया था, और कई मकानोंके नीचे नीचे सुरंग बनाकर एक मकानमें निकला था, जहाँ चक्रधर रहा करता था, और जो विलायती वस्तुओंकी दूकान थी। सब सदस्य निर्विघ्न चले गये। नरेन्द्रने गुप्त द्वार बन्द कर दिया और अपने अस्त्र-शस्त्र उन्होंने वहीं छिपा दिये। उसके दो साथी तीन चारपाई बिछा रहे थे, जिनपर मोटे मोटे गद्दे डाल दिये गये और क्षणमात्रमें वह कमरा व्यवस्थित रूपसे सोनेके कमरेमें परिवर्त्तित हो गया। नरेन्द्र अपने तीनों साथियोंके साथ पलंगपर लेट गया, और निद्राका बहाना करने लगा। सहसा द्वारको किसीने खटखटाया। नरेन्द्रने खोलते हुए, किंचित् क्रोधसे असमय जगाये जानेका कारण पूछा। पुलिसका सब-इन्सपेक्टर भीतर आकर चारों ओर देखने लगा, किन्तु क्रान्तिकी गन्ध उसको कहीं न आयी। उसका मुँह उतर गया। उसने धीमे स्वरसे कहा—"मुझे यहाँपर क्रान्तिकारियोंकी सभाकी सूचना मिली। आपका ही नाम नरेन्द्रनाथ है, आपकी गिरफ्तारीका यह वारंट है।"

नरेन्द्रनाथने पूछा—"क्या अपराध है?"

पुलिस इन्सपेक्टरने कहा—"अंग्रेजी सरकारके विरुद्ध बगावत फैलानेका।"

नरेन्द्रने बिना किसी आपत्तिके अपनेको समर्पण कर दिया।

२

रुसड़ेपुरमें आतंककी लहरें उठ रही थीं। सर भगवान सिंहके [illegible] अपना डेरा वहाँ डाला था। दूसरे गाँवोंमें उनकी कार्यप्रणालीके समाचार आ चुके थे, और जैसी दुर्दशा करनेमें वे सिद्धहस्त थे उससे यहाँके निवासी बहुत कुछ अवगत थे। [illegible] चन्दा देनेमें कोई आनाकानी न करता था, परन्तु कर्मचारियोंकी भूख अधिकसे अधिक ले लेनेपर भी [illegible] न थी। [illegible] उन्हें कुछ प्रेम था, और अकारण अत्याचार करनेमें वे अपने पदका गौरव अनुभव करते थे। रुसड़ेपुरकी प्रजाको कायर और विद्रोही प्रसिद्ध करनेमें राजकर्मचारियोंने कोई उपाय अवशेष नहीं रखा था। परन्तु वास्तवमें वहाँकी जनता वैसी ही भोली-भाली और शान्तिप्रिय थी जैसी अन्य गाँवोंकी हुआ करती है। [illegible] थी, यदि इसलिए उन्हें [illegible] जायगा तो निस्सन्देह वे [illegible] नहीं गये थे। उनमेंसे [illegible] और [illegible] [illegible], [illegible] [illegible]। [illegible]

अतिरिक्त वहाँपर शारीरिक उन्नतिकी ओर विशेष ध्यान दिया जाता था। करीमके कारण, पहलवानी वहाँ अब भी जीवित दशामें थी. यद्यपि अन्य स्थानोंसे उसका नाम-निशान मिट चुका था। इससे राजकर्मचारी प्रायः उस गाँवमें जाने से डरते थे, क्योंकि जहाँ गालियोंसे उन्होंने बात की वहाँ झगड़ा प्रारम्भ हो गया, और उस समय उनको सिरपर पैर रखकर भागना ही पड़ता था। इसलिए जब कभी प्रसंग उठता या न उठता वे सर भगवान सिंहसे उस गाँवके सम्बन्धमें सदैव बुराई करते थे। रमईपुरकी प्रजा भी यह बात जानती थी, अतएव वे लोग सरकारी लगान देनेमें कभी देर न करते थे, और कभी कभी तो समयके पूर्व ही उसको मनीआर्डर द्वारा भेज दिया करते थे, जिससे रसीद इत्यादिका झगड़ा न पड़ता था। वहाँके निवासी किसी अन्य विषयमें चाहे एक दूसरेकी सहायता न करें, किन्तु लगानके विषयमें वे हरएकका ध्यान रखते थे। जिस किसीकी फसल खराब हो जाती तो दूसरे उसको रुपया उधार दे देते। प्रत्येक वर्ष वे अपनी पैदावार-का एक हिस्सा अलग रखते थे, जो एक जगह एकत्र होती और उसको बेंचकर रकमको व्याजपर उठा देते थे,जो बढ़ते बढ़ते एक अच्छी पूँजी हो गयी थी। जब कभीकोईअकाल पड़ता, और गाँवमें कुछ भी पैदा न होता तब उसी पूँजीसे सबका लगान एक साथ अदा कर दिया जाता था। सर भगवान सिंहके कर्मचारियोंको कोई विहित कारण अत्याचार करनेके लिए नहीं मिलता था। अविहित कारणपर वे लोग मरने मारनेको तैयार रहते थे, इससे कोई अकारण उन्हें छेड़ता नहीं था।

इसके अतिरिक्त हिन्दू-मुसलमान दोनों एक सूत्रमें बँधे हुए थे। वहाँपर गवाह किसीके विरुद्ध नहीं मिलते थे। दूसरे गाँववाले भी भयसे इनके विरुद्ध गवाही देनेको तैयार न होते थे। अतएव कोई मुकदमा भी उनके खिलाफ खड़ा नहीं हो सकता था। राजकर्म-चारी क्रोधसे अपना ही हाथ काटते थे, किन्तु परोक्ष या अपरोक्ष रूपसे कुछ कर न पाते थे। सर भगवान सिंहके दीवान गोपीनाथने अपने दौरेमें रमईपुरको सबसे अन्तमें रक्खा था, जिससे दूसरे गाँवोंमें चन्देकी उगाहीमें इसका कोई कुप्रभाव न पड़ने पावे। वे जानते थे कि यहाँपर घुड़की, धमकी, और गालीसे काम नहीं चलेगा, और यदि वे यहाँ असफल रहे तो दूसरे गाँवोंमें भी कुछ वसूल न हो सकेगा। वे यहाँपर शान्तिसे काम निका-लना चाहते थे। इसलिए उन्होंने वह उपद्रव नहीं आरम्भ करवाया। वे सरकारी कोर्टमें आकर चुपचाप बैठ गये और विचारते विचारते उन्होंने यह स्थिर किया कि संध्या समय गाँवके मुख्य मुख्य गण्यमान पुरुषोंको एकत्र कर युद्धके चन्देके विषयमें आलाप किया जावे।

उनके आनेका समाचार क्षणमात्रमें गाँवमें फैल गया था। लोगोंके चेहरेपर गम्भीरता छायी हुई थी, और वे एक-एक दो-दो करके करीमकी बैठकमें एकत्र होने लगे। करीमका मुख भी गम्भीर था। उनकी कोई सहानुभूति इस चन्देकी ओर न थी।

दोपहरका समय था। करीमकी बैठकका कमरा गाँवोंके निवासियोंसे भरा हुआ था। तिलभर भी जगह अवशेष न थी। कांग्रेसी विचारके कई व्यक्ति थे, जो युद्धके लिए चन्दा एक पैसा न देना चाहते थे। कितनोंकी इच्छा थी कि थोड़ा-बहुत देकर कारिन्दाको वापस भेज दिया जावे, और झगड़ा न बढ़ने पावे। रामकृष्ण नामक ठाकुरने गम्भीर स्वर-

मे कहा—"करीम काका, आप इस गाँवके उन व्यक्तियोंमे है जो सदैव न्यायका पक्ष लेते हैं। इस गाँवके प्रत्येक व्यक्तिको आपपर विश्वास है,और आपके आदेशसे हम जलती हुई अग्निमे विना विचारे गिर पडनेको उद्यत रहते है। राजा साहवके कर्मचारी चन्दा उगाहते हुए यहाँ भी आये है,और दीवान गोपीनाथ आज-कलमें हमसे वही माँग पेश करेगा। काग्रेसका आदेश है कि किसी भारतीयको चन्दा न देना चाहिये। मेरी भी व्यक्तिगत यही राय है, अव आप परामर्श दीजिये कि क्या करना उचित होगा।"

महिपाल सिंह मुखिया जो मनोहरका सम्वन्धी होता था उठकर कहने लगा—"मेरी समझमे यह आता है कि कुछ न कुछ चन्दा अवश्य देना पडेगा, क्योंकि हमारे राजा साहवकी आज्ञा है,दूसरे सभी गाँवोमे वसूल हुआ है, यहाँ न देनेसे हमारे विरुद्ध सख्ती की जायगी, और अन्नपके खेत नष्ट हो जावेंगे,तीसरे नीतिका वचन है कि यदि कोई आपदाका निवारण धन देनेमे हो जावे, तो अवश्य धन-दानद्वारा उसको टाल देना चाहिये। इससे दीवान गोपीनाथसे मिलकर थोड़ी-बहुत रकम देकर अपना पिण्ड छुड़ाना चाहिये।"

इमामवग्श जो करीमका घरजमाई होकर रहने लगा था बोला—"एकवार देनेमे कोई हर्ज नही है.मगर शेरकी डाढमे खून अगर एकवार लग जाता है तव वह शिकारका आदी हो जाता है। जहाँतक मुझे मालूम हुआ है, इस गाँवपर कभी कोई उगाही नही डाली गयी है और न गाँववालोने दिया है।"

मनोहर जो उसके समीप बैठा हुआ था वोला—"वेशक, हम लोग एक पैसा नही देंगे। अगर हम अपनी इच्छासे नही देंगे तो राजा साहवके कारिन्दोकी दम नही है जो इस गाँवसे एक धेला ले ले। उनके वीस-पच्चीस सिपाहियोंसे मैं अकेले ही निपट लूँगा। उन्होंने गरीबों. और असहायोंके बहुत घर जलाये है, निर्वलोको मारा-पीटा है, हमारी माताओं और बहनोंपर अत्याचार किये हैं. जरा यहाँ कुछ बोले तो मजा चखाऊँ। 'रहब मिले न तुरत रन गाढे—"

हूँ। जहाँ राजाके कर्मचारी चन्दा उगाहते हैं, वहाँ जाकर देखती हूँ कि वीरत्व कहीं अवशेष रहा है, या सभी कापुरुष और स्त्रैण हो गये हैं। आज इस युवकके मुखसे मैंने क्षत्रियोचित रणहुंकार सुनी है। मेरी छाती फूलकर दूनी हो गयी है। यह सत्य हैकि पृथ्वी अपना बीज नहीं खोती। क्षत्रियोंमें सभी कापुरुष नहीं हो गये। यत्रतत्र वीर देखनेको मिलते हैं।"

करीमने कहा---"आओ बहन, मैं तुम्हारा स्वागत करता हूँ। भाईके घरमें बहनके लिए सदैव जगह खाली है। इस गाँवके छोटे बड़े सभी मुझको काका कहते हैं, परन्तु भाई कहकर पुकारनेवाला मेरे कोई नहीं है। खुदाको हजार हजार शुक्र है कि उसने मेरी मुराद पूरी की, और मेरे जीवनकी सबसे बड़ी कमीको पूरा किया। बहन, तुम अब घरके अन्दर जाओ। मनोहर अपनी फूफीको अपने घर भेज आओ।"

वह प्रौढ़ा जो वास्तवमें रूपकुँवरि थी मनोहरके पीछे पीछे चली गयी।

उसके जानेके बाद करीम कहने लगे---"भाइयो, आपने सब सुना। नीतिके लिहाजसे ठाकुर महिपाल सिंहका कथन बहुत दुरुस्त है, और इन्साफके लिहाजसे हमको एक पैसा भी चन्देमें देना ठीक नहीं है। हमको इन दो रास्तोंमेंसे एक रास्ता अख्त्यार करना पड़ेगा। जिस प्रकारसे राजा साहबके कारिन्दे, सिपाही जोर-जुल्म कर रहे हैं वह आप लोग बहुत कुछ जानते हैं, और मेरी बहनके द्वारा सुन भी चुके हैं। अगर आप लोग जुल्मसे मुकाबला करना चाहते हैं तो आपको एकतामें बँधना पड़ेगा, लड़ाई लड़ना पड़ेगा। लड़ाई दो तरहकी हो सकती है, एक तो हथियारोंसे, और दूसरे बिना हथियारोंसे, यानी गान्धी महात्माके बताये हुए तरीकेसे। हथियारोंकी लड़ाईमें भी आपको नुकसान पहुँचेगा, और अहिंसाकी लड़ाईसे भी। पहले तरीकेमें ज्यादा नुकसान होनेका भय है, और दूसरे उपायमें कम। मगर दोनोंमें वीरता, सूरमाईकी जरूरत है। पहले उपायमें जबतक लाठी डंडेकी लड़ाई है, तबतक आप उनका सामना कर सकेंगे, लेकिन बन्दूकों और तोपके आगे आप लाचार हो जायँगे। दूसरे उपाय यानी अहिंसाकी लड़ाईके लिए आपको हथियारोंकी कोई जरूरत नहीं है, लेकिन दिल शेरका चाहिये, और दृढ़ता रुस्तमकी। जो पैर जहाँ रोप दिया है, वहाँसे वह पीछे नहीं हटेगा, आगे ही बढ़ेगा 'चाहे तन धजी धजी हो जाय।' पहले तरहकी लड़ाईमें सिर्फ जवान ही भाग ले सकते हैं, और दूसरे तरहकी लड़ाईमें औरतें, बच्चे, जवान, बूढ़े सभी बराबर हाथ बटा सकते हैं। पहली क्रोध और प्रतिहिंसाकी लड़ाई है, दूसरी शान्ति और लगनकी लड़ाई है। आप विचार लीजिये कि क्या करना चाहते हैं।"

रमईपुरके निवासियोंने एक स्वरमें कहा---"हम चन्देके नामपर एक पैसा नहीं देंगे।"

करीमने फिर पूछा---"और हिंसाकी लड़ाई लड़ेंगे, या अहिंसाकी?"

थोड़ी देरतक निस्तब्धता छायी रही, एक दूसरेका मुँह देखने लगे।

रामकृष्णने उठकर कहा---"अहिंसाकी।"

करीमने पुनः पूछा---"बोलिये, उत्तर दीजिये।"

सबने एक स्वरसे कहा---"अहिंसाकी।"

करीमने उठकर कहा---"तो बस निश्चय रहा, हम लड़ाईके चन्देमें एक पैसा न देंगे, और महात्मा गान्धीके बताये हुए रास्तेपर चलकर चन्दा माँगनेवालोंसे युद्ध करेंगे।"

३

दीवान गोपीनाथने भी सब सुना। ईदू चुप होकर उसका मुख देखने लगा। गोपीनाथने पूछा—"तो सब ठाकुर लड़नेको तैयार है?"

ईदू—"हाँ, उन्होंने यह तय किया है कि आज रातको जब दीवान साहब सो जावें तब घरमें आग लगा दो, क्यों गफूर ठीक है न?"

गफूरने ईदूका समर्थन करते हुए कहा—"हाँ, यही बात मनोहर कहता था। सरकार, मनोहर ठाकुरका मिजाज आजकल सातवें आसमानपर है। किसीको अपने बराबर कुछ समझता ही नही।"

गोपीनाथ—"यह मनोहर कौन है?"

बकरीदी—"ठाकुर जगपालका बेटा है। ठाकुर जगपाल सिंह जो अपनेको राजा साहबका रिश्तेदार बताया करता था।"

गफूर—"अरे यों तो लोग कहा ही करते है। अमीर आदमीके साले बननेको सब तैयार रहते है!"

बकरीदी—"तुझे क्या मालूम? वह साला नही बनता था, बल्कि खूनके लिहाजसे राजा साहबसे भी बड़ा बनता था। कहता था कि उसके वंशवाले किसी देशके राजा है, या महाराजा है। करीम काकाको सब हाल मालूम है।"

ईदू—"करीम काकाकी बदौलत तो वह जमीनपर पैर रखकर नही चलता।"

गोपीनाथ—"जगपाल सिंहको मैं जानता हूँ। नही, सचमुच वह ऊँचे वंशका है। और उसके घरमें कौन कौन है?"

ईदू—"यही मनोहर, जो नाकपर मक्खी नही बैठने देता, उसकी माँ, और उसकी बहन गुलाबकुँवर।"

गफूर—"सरकार, गुलाबकुँवर, वाह! गुलाबसे भी ज्यादा खूबसूरत है। अल्हड़ जवान है।"

ईदू—"चुप, अगर मनोहर कहीं सुन लेगा तो याद रखना एक पसली न बचेगी।"

गफूर—"मनोहरसे कौन डरने जाता। सरकारके नमकहलाल नौकरोंमें हम लोग हैं। जान देनेको तैयार हैं।"

ईदू—"आज एक औरत मनोहरके घरमें आयी है, जो अपनेको कल्याणपुरकी रहनेवाली बताती है।"

गोपीनाथ—"कल्याणपुरसे कौन औरत आयी है?"

ईदू—"नाम तो उसका जानता नहीं। लोग बात करते थे कि राजा साहबने उसके लड़की और बेटेको जेल भिजवा दिया है।"

गोपीनाथ—"[illegible] माँ तो नहीं है?"

ईदू—"हाँ, शायद वही है।"

गोपीनाथ—"वह यहाँ क्यों आयी?"

ईदू—"कुछ [illegible] तो मैं जानता नहीं, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]"

किया है कि चन्दाका एक पैसा न देंगे। वह औरत भी यही कह रही थी कि चन्दा हरगिज न देना चाहिये।"

गोपीनाथ कुछ सोचने लगा। फिर कुछ देर बाद कहा—"तुम लोग तो चन्दा देनेको तैयार हो।"

ईदूने बकरीदीकी ओर देखा, और उसने फिर गफूरकी तरफ; उत्तर किसीने नहीं दिया।

गोपीनाथने पुनः पूछा—"अगर तुम लोग चन्दा दे दो, तो तुम्हारे ऊपर राजकी खातिर रहेगी।"

ईदू—"चन्दा देनेसे हम इनकार नहीं करते, लेकिन इस वक्त हमारे पास कुछ नहीं है। खेतीमें कुछ पैदा ही नहीं होता, इसलिए मजदूरी करके पेट पालता हूँ।"

गोपीनाथ—"मगर गाँजा तो रोज पीते हो!"

ईदू—"अपने पाससे दाम लगाकर नहीं पीता। साँई साहबकी मेहरबानीसे कभी कभी दम लगानेको मिल जाता है। क्यों गफूर?"

गफूर—"और क्या, साँई साहब वाकई पहुँचे हुए फकीर हैं। उन्होंने इमामबख्श-को कुश्तीमें हरवा दिया था।"

गोपीनाथ—"यह इमामबख्श कौन है?"

ईदू—"आप नहीं जानते, करीम काकाका घरजमाई है। इस सालकी 'रबियाही' पर वह पंजाबसे आया था, और मनोहरसे उसकी कुश्ती हुई, जिसमें गाँवकी नाक न जाने पावे इसलिए साँई साहबने अपने जिन्नात लगा दिये, और उनकी बदौलत मनोहर जीत गया। अब करीम काकाने अपनी बेटी नसीमासे उसकी शादी कर दी, और उसको घरमें रख लिया है।"

गोपीनाथ—"यह साँई कौन है? पहले तो यहाँपर कोई साँई नहीं था।"

ईदू—"हाँ, अभी दो-सालसे आये हैं। तमाम दुनिया घूमे हुए हैं। पहली लड़ाईमें फौजमें थे, और उसमें एक टाँग टूट गयी। तबसे मक्का शरीफमें हजरतने इनको सपना दिया, और इसलामका चिराग रोशन करनेको कहा।"

गोपीनाथ मुस्कराने लगा। ईदूका जोश देखकर उसके मस्तिष्कमें एक लहर दौड़ गयी। उसने कहा—"अच्छा, तब तो साँई साहब जरूर पहुँचे हुए फकीर हैं। हाँजी, तुम्हारे गाँवके मुसलमान हिन्दुओंसे बहुत दबकर रहते हैं।"

ईदू—"दबकर न रहें तो क्या करें। हिन्दुओंकी तादाद ज्यादा है। कानपुरसे अनवर साहब, एक मोलवी आये थे, वे भी यही कहते थे। वे तो कहते थे कि मुसलमान अपने खेत-पात हिन्दुओंसे शामिल न बोयें, काटें। मैंने कोशिश भी बहुत की मगर मेरी कोई सुनता ही नहीं। मेरी औरत भी मेरे खिलाफ हो गयी, और रोटीके लाले पड़ गये।"

गोपीनाथ—"हमारे राजा साहब हिन्दू और मुसलमानोंको एक समान देखते हैं। अगर हिन्दू, मुसलमानोंपर ज्यादती करते हैं तो वे इसको कभी बरदाश्त नहीं कर सकते। तुम लोग जरूर शिकायत करो, तुम्हारी मदद राजकी तरफसे की जायगी।"

गफूर—"अगर राज हमारी मदद करे तो हम ठाकुरोंको सीधा कर दें, उनकी

समाप्त करनेके लिए बिना शर्तके तैयार हो गया है। इससे अधिकारीवर्ग भी प्रसन्न हुए, और नरेन्द्रके प्रति उनके हृदयमें किसी अंशतक सद्भावना जाग्रत हो गयी। उसी समय जंगबहादुरको फलोंका रस दिया गया, और उसकी भूखहड़ताल समाप्त हुई।

६

माधवी और यशोधरामें इतना सौहार्द हो गया था कि एक दूसरेको छोड़नेके लिए तैयार न थीं। माधवीके एकाकी जीवनमें यशोधरा एक बड़ा भारी अवलम्ब थी। उसकी विचारधारा जो लगभग वैराग्यकी ओर अग्रसर हो रही थी, अपने पिताके विरुद्ध होकर उदासीनताका मार्ग ग्रहण कर रही थी, अब यशोधराके संसर्गसे वह कुछ अवरुद्ध हो गयी थी, और नवयौवनका सहज स्वनाभ प्रकाश उसके मनोहर आननको प्रदीप्त करने लगा था। इस समय माधवीके सामने एक सुगठित कार्यविवरण था, और निश्चित दिनचर्या थी। चरखाके महत्त्वमय पदार्पणने उसके कुम्हलाये हुए जीवनको नवविचारोंसे ओतप्रोत कर दिया था। नव आशाके साथ साथ अदम्य उत्साहका भी आगमन हुआ, और नवीन कार्यक्षेत्रके प्रांगणमें प्रवेश करनेके लिए वह उत्सुक हो उठी। भन भन शब्द रणभेरीकी भाँति उसमें उत्तेजना भर रहा था, सूत कातनेकी क्रिया उसको कर्मशील बनानेके लिए अहर्निशि उपदेश तथा ज्ञान दे रही थी, और स्वयं चरखा उसमें आत्मनिर्भरताकी शक्ति प्रदान कर रहा था।

यशोधराने भी माधवीमें अपने विचारोंका प्रतिबिम्ब झलकता हुआ पाया। महारानी लक्ष्मीबाईकी भाँति वह भी स्वदेशको विदेशियोंके शासनसे मुक्त करनेका सुखस्वप्न देखा करती थी। अश्वसंचालन, तथा घोड़ेकी सवारीका अभ्यास प्रायः नित्य करती थी और साथ ही साथ चरखा और तकली चलानेका भी उसे मनसे प्रेम था। देश तथा [illegible]

थी। इतना होते हुए भी वे माधवीकी माँगको औचित्य तथा अनौचित्यका विचार विना किये हुए, पूर्ण करनेके लिए आतुर रहते थे।

जब माधवीने लखनऊमें रहनेसे अपनी अनिच्छा प्रकट की, तो उन्हें मर्मान्तक पीड़ा हुई। दिवाकरकी ओरसे वे बहुत पहले निराश हो चुके थे, और वह निराशा उत्तरोत्तर उदासीनतामें परिवर्त्तित हो गयी थी। माधवीको वे अपने साथ रखते थे, और पुत्रके अभावको उसके द्वारा पूर्ण करना चाहते थे। जब माधवी भी अपने भाईके पद-चिह्नोंपर चलने लगी, तो उन्हें बड़ी निराशा हुई, किन्तु उसका मौन सहयोग किसी अंशतक उन्हें यह आशा दिला रहा था कि कभी न कभी शीघ्र तथा विलम्बमें वे उसकी मनोवृत्तियोंको परिवर्तित करनेमें समर्थ होंगे। उनकी इच्छा न थी कि माधवी उनकी आँखोंसे ओझल हो, परन्तु उसका निरन्तर गिरता हुआ स्वास्थ्य भी एक विचारणीय गंभीर प्रश्न बन रहा था। कल्याणपुरसे लौटनेके पश्चात् उसका स्वास्थ्य गिर रहा था। यौवनकी चपलताका चिह्न भी खोजनेसे नहीं मिलता था। रूपकुँवरिकी पैशाचिक मूर्त्ति उसके सामने सदैव घूमा करती थी। पति और पुत्रके वैर-शोधनमें उसके प्राणहरणकी चेष्टा उसे स्थितिको गंभीरतासे सोचनेके लिए बाध्य कर रही थी। अपने पिताके कार्योंकी मीमांसा करना यद्यपि वह उचित नहीं समझती थी, किन्तु घटनाएँ उसे विवश कर रही थीं। ऐसे कठिन अवसरपर यशोधराका आगमन उसे स्वर्गीय दूतसे भी अधिक प्रिय मालूम हुआ। उसके डूबते हुए जीवनको सहारा मिला। उसने उसको इस दृढ़तासे पकड़ लिया, जैसे डूबता हुआ मनुष्य अपने बचाने वालेको पकड़ता है। यशोधराने भी उसके मनकी भ्रमित अवस्थाको निरीक्षण कर उसके सामने चरखा कातनेका नया कार्यक्रम रखा और उसकी आकुलताको किसी सीमातक शान्त कर दिया।

यद्यपि सर भगवानसिंहको यशोधराके साथ उसका रहना रुचिकर नहीं था, किन्तु वे निरुपाय थे। दिवाकरकी भाँति माधवीको भी खो देनेके लिए प्रस्तुत न थे। उन्होंने उसका मनोयोग चरखामें देखकर मनसे आपत्ति करते हुए भी प्रकाश भावसे कोई बाधा उपस्थित नहीं की। नवयौवनकी अस्थायी उमंगोंमेंसे उसे भी एक उमंग समझा, और उसकी अवधि उन्होंने कुछ ही दिन, अथवा मास निर्धारित किया।

वे उस दिन कुछ उद्विग्न हो उठे, जिस दिन माधवीने यशोधराके साथ जानेका प्रस्ताव किया। शारदाको कुछ आपत्ति नहीं थी। वह माधवीकी अवस्थाको अपने पतिसे अधिक समझती थी। उसे उसके मानसिक क्रान्तिका कारण ज्ञात था, किन्तु अपने पतिके विरुद्ध वह भी कुछ न कर सकती थी। यद्यपि सर भगवान सिंहने उसको इच्छानुसार मार्ग ग्रहण करनेकी अनुमति दे दी थी, किन्तु उसमें कितना सार था, और कितनी शक्ति थी, यह उसे ज्ञात था। वह हिन्दू रमणी थी। पतिके विरुद्ध आचरण करना उसके लिए असंभव था। उसके सामने कौशल्याका उदाहरण था। यद्यपि श्री रामचन्द्रजी उसको प्राणोंसे प्रिय थे, और पुत्रके साथ वह भी वनवासिनी हो सकती थी, किन्तु कौशल्याने मरणतुल्य दुख सहन कर भी अयोध्यामें रहना स्वीकार किया, तथा पतिके विपरीत होकर चलना उचित नहीं समझा। सर भगवानसिंह भी उसके स्वभावसे परिचित थे। उन्हें ज्ञात था कि वह उनके

कारोंका मौखिक विरोध चाहे जितना करे, किन्तु आचरणमें उनकी आज्ञावर्तिनी ही रहेगी। इसी कारणसे उन्होंने उसको स्वेच्छानुसार कर्त्तव्यपालनकी अनुमति दी थी।

शारदा भी यह अनुभव करती थी, कि माधवीके जानेसे उनका पथ सुगम हो जायगा। दिवाकरको वह स्वयं रणजीत सिंहके यहाँ रहनेका आदेश दे आयी थी, इस भयसे कि जिससे पिता-पुत्रका द्वेष आगे न बढ़ने पावे। कहीं उसके नवीन ज्ञानका उत्साह, उसका सिद्धान्त-प्रेम अपनी सीमाका उल्लंघन न कर जावे, और वह प्रत्यक्ष रूपसे पिताके विरुद्ध होकर उनसे वादविवाद करने लगे। पिता-पुत्रके वाद-विवादका परिणाम कभी शुभ नहीं होगा, उनके बीचकी खाँई और गहरी हो जायगी। इसी कारणसे वह दिवाकरको उनसे दूर-दूर रखना चाहती थी। अतएव माधवी उसके लिए भी आवश्यक हो गयी थी।

यह उसने बराबर लक्ष्य किया था कि माधवी, यशोधराके संसर्गसे कुछ सुखी है। उसकी मलिनता और मानसिक निर्बलता एक बड़ी सीमातक दूर हो गयी है। उसने उसके स्वास्थ्य-में परिवर्तन भी निरखा था। यशोधराको वह माधवीके साथ कुछ दिनोंतक सतत रखना चाहती थी। माधवीके विवाहकी बातचीत राजपूतानाके एक राजकुमारसे चल रही थी। यद्यपि वह उसका विवाह कर देनेके लिए अत्यन्त आतुर थी, परन्तु राजकुमारके योरोप चले जानेसे उसमें कुछ विलम्ब पड़ रहा था। वह नहीं चाहती थी कि विवाहके पहले उसके स्वास्थ्यको किसी भाँति हानि पहुँचे। यशोधराको वह अपने पास रखना चाहती थी, किन्तु यशोधराकी माँ उसे लखनापुर बुला रही थी। शारदाने उनसे अनुरोध किया कि वे यशो-धराको कुछ दिनोंतक लखनऊ रहने दें, और माधवीके लिए उसकी कितनी आवश्यकता है, यह भी सूचित किया, किन्तु यशोधरा और माधवीके सम्मिलित षड्यन्त्रसे उनको विदित हुआ कि दोनो लखनापुर आनेके लिए उत्कंठित हैं, इसलिए उन्होंने दोनोंको लखनापुर भेजनेका प्रत्यानुरोध किया। माधवीने भी यशोधराके साथ जानेकी इच्छा प्रकट की। शारदाके उद्योगसे और माधवीके एकान्त रुदनसे सर भगवान सिंहने उसको कुछ दिनोंके लिए यशोधराके साथ लखनापुर भेजना स्वीकार कर लिया। माधवी प्रसन्न मनसे यशो-धराके साथ चली गयी।

माधवी और यशोधरा लखनापुर आकर बड़ी प्रसन्न हुई। उन्हें किसी सीमातक स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, और उनका कार्यक्षेत्र और विशद हो गया। यशोधरा माधवीको अस्त्र-संचालन और अश्वारोहणकी शिक्षा देने लगी। माधवीका शारीरिक उत्थान आरम्भ हो गया, और उसकी मानसिक क्रान्ति भी अपने सामने एक कार्यक्रम देखकर शान्त हो गयी।

एक दिन प्रातःकाल घोड़ेपर सवार होकर जाते हुए माधवीने कहा—"यशो, मेरा तो लखनऊ जानेका मन नहीं करता। वहाँ पर न-मालूम मुझे कैसा मालूम होता है, जैसे कोई कैदी हो। जहाँ जाओ वहीं कृत्रिमता मिलती है, जिससे मिलो वही बनावटी बातें करता है। हृदय खोलकर न कोई मिलता है, और न बोलता है।"

यशोधराने घोड़ेकी चाल धीमी करते हुए कहा—"मधु, तू तो वैसी ही मीठी है जैसा मधु होता है। मधु प्राकृतिक मिठाई है, उसमें कृत्रिमताका लेश नहीं होता, फिर तू कृत्रिमतासे कैसे प्रेम कर सकती है।"

माधवी मुस्कराने लगी। उसके कपोलोंपर अरुणिमा नृत्य करने लगी। उसने अपने आयत लोचनोंकी कोरोंसे यशोधराकी ओर देखते हुए कहा—"तू भी तो उतनी ही सबको प्रिय है, जितना कि मनुष्य अपने यशसे प्रेम करता है। देवताओंके-से कर्म करने-वालेको ही यश मिलना है, और तेरा स्वामी भी किसी देवपुरुषसे कम न होगा।"

यशोधरा सशब्द हँस पड़ी और कहने लगी—"न मुझे कोई देवपुरुष मिलेगा और न मेरा विवाह होगा।"

फिर गंभीर होकर कहा—"मधु मैं विवाह नही करना चाहती। स्वदेश-सेविका विवाह नहीं किया करतीं। विवाहके पश्चात् मनुष्य स्वतन्त्र नही रहता। विवाह करना जीवनका कोई आवश्यक अंग तो नहीं है। योरोप आदि देशोंमे कितनी स्त्रियाँ अविवाहित रहती हैं।"

माधवीने अपनी अरबी घोड़ी उसके पास लाकर कहा—"अगर तू बुरा न माने, तो मैं एक प्रस्ताव तेरे सम्मुख रखना चाहती हूँ। यशो, तुझको मै सदैवके लिए अपनी बना लेना चाहती हूँ।"

यशोधराने मृदु मुस्कानसहित कहा—"मै हमेशा तेरी हूँ, क्या तू अपने हृदयमें मेरा अस्तित्व अनुभव नहीं करती?"

माधवीने कहा—"यों नही, अभी तू मेरेसे दूर है। मेरा तेरे ऊपर मित्रताके अतिरिक्त और कोई अधिकार नही है। तू चाहे जितना इनकार करे, हिन्दू बालाको एक न एक दिन विवाह करना ही पड़ता है, क्योंकि इसके अतिरिक्त उसकी निष्कृति नही है।"

यशोधराने हँसते हुए कहा—"कदाचित् तू पुरुष होती, मधु, तो मैं तेरे साथ विवाह कर लेती?" यह कहकर वह जोरसे हँसने लगी।

माधवीने गम्भीर होकर कहा—"मैं पुरुष नही हूँ, न सही, किन्तु दिवाकर भैया तो पुरुष है। क्या तू मेरी भौजाई बनना स्वीकार करेगी?"

यशोधराका हास्यभरा आनन गंभीर हो गया। उसने कहा—"मधु, तुझे क्या हो गया है? तू औचित्य और अनौचित्यका विचार करना भूल गयी।"

माधवीने उसका कन्धा पकड़ते हुए कहा—"क्या दिवाकर भैया तेरे योग्य नही है?"

यशोधराने शुष्क हँसी हँसते हुए कहा—"मधु, तू उनकी सगी बहन है, मगर अभीतक उनको नही जानती। उनका सच्चा रूप नही पहचानती। वे कोई अगले जन्मके पथ-भ्रष्ट देवता हैं, जो कर्मविपाकसे इस धरातलपर अवतीर्ण हुए हैं। मैंने बहुतसे त्यागी पुरुषोंका चरित्र पढ़ा है, किन्तु उनके जैसा एक भी नही पाया। वे ऊपरसे शान्त है, किन्तु उनके हृदयके भीतर स्वदेश-प्रेमकी अग्नि बड़ी भीषणतासे जल रही है। मधु, जिस समय उनकी ओर मैं देखती हूँ, मै अपनेको एक अत्यन्त क्षुद्र और हीन पाती हूँ। शत-शत जीवनकी एकान्त तपस्याके पश्चात् मैं ऐसे पुरुषको अपने पतिरूपमे प्राप्त करनेका स्वप्न देख सकती हूँ।"

यशोधरा गंभीर थी, और माधवी हँस रही थी।

उसने मुस्कुराते हुए कहा—"इस गंभीरताके परदेके पीछे मैं कुछ और देख रही हूँ, यशो ! एक स्त्री दूसरी स्त्रीको इस विषयमें धोखा नहीं दे सकती। अब मैं निश्चिन्त हूँ। यशो, अब तू मेरी है और मैं तुझे अपना बनाकर छोड़ूँगी। अम्मा और पापाको अनुरोध मानना पड़ेगा।"

यशोधराने क्रुद्ध होते हुए कहा—"सावधान मधु ! ऐसे विचारोंको प्रश्रय देना पाप है, महापाप है। विवेकभ्रष्ट न हो।"

माधवीने अपनी घोड़ी दौड़ाते हुए कहा—"अगर तू नाराज होती है,'तो ले मैं जाती हूँ। चाचीजीसे तेरी शिकायत करूँगी।"यह कहकर वह लखनापुरकी ओर घोड़ी भगाती हुई लौट पड़ी।

७

रमईपुरमें ताजियेदारीकी प्रथा सैकड़ों वर्षसे प्रचलित थी। हिन्दू और मुसलमान दोनों कन्धेसे कन्धा मिलाकर ताजिये निकालते थे, और गाँवके सम्मिलित कोषसे, तथा आपसके सहयोगसे सारा व्यय होता था। कोई हिन्दू इसे मुसलमानी त्योहार न समझता था, वरन उसको उतना ही पवित्र समझते थे जितना कि वे विजयादशमीको मानते थे। उसी प्रकार मुसलमान भी विजयादशमी आदि हिन्दुओंके त्योहारोंको अपना समझते थे। हिन्दुओंके त्योहार मनाते समय सब मुसलमान हिन्दू थे, और मुसलमानोंके त्योहारोंके समय हिन्दू मुसलमान थे। राम और रावणकी सेनामें भाग लेनेवाले मुसलमान उन्हींके चरित्रोंमें अपना निजत्व भुला देते थे, और अलममें भाग लेनेवाले हिन्दू अपनेको हसन और हुसेनके अनुयायी समझते थे। सर्वत्र एक ही पवित्र धारा थी, एक ही प्रेम-प्रवाह था। सूर्य और चन्द्रमाकी भाँति दोनों रमईपुरको प्रकाशित कर रहे थे।

किन्तु जबसे पण्डित जागेश्वरदयालने रमईपुरमें पदार्पण किया, तबसे संदिग्धताका प्रवेश कतिपय हिन्दुओंमें हो गया। महिपाल सिंह तो उनके अनन्य भक्त हो गये, उनको साक्षात् देवोंका गण समझते थे। पण्डित जागेश्वरदयालने भी विषवमन करनेमें कोई बात उठा न रक्खी। उन्होंने हिन्दुओंको भड़काना आरम्भ कर दिया, उनको पवित्रताका उपदेश देने लगे। उन्हें मानवेतरसे उच्च बताने लगे। देवी और देवताओंको पवित्र बताकर मुसलमानोंके स्पर्शसे अपवित्र न बनानेका उपदेश देने लगे। मनोहर इत्यादिने जब उनके भाषणको सुना तो उनको पाखंडी कहा, जिससे वे बहुत चिढ़ गये, और गाँव त्यागकर चले जानेकी धमकी दी, परन्तु महिपाल सिंह और उसके दो-एक साथियोंने बहुत अनुनय-विनयके बाद उनको ठहराया।

इधर साँई अब्दुलगनी मुसलमानोंको मसजिदमें इकट्ठा करने लगा। उसको ईदू, बकरीदी और गफूरका सहयोग प्राप्त था। वे उसकी प्रत्येक बातका अनुमोदन करते थे। कभी कभी अनवर मौलवी भी वहाँ आ जाते, और अपने व्याख्यानमें मुसलमानोंको बताते कि हिन्दू उनसे घृणा करते हैं, उनके साथ उनका व्यवहार सच्चा नहीं है, केवल

अपना मतलब साधनेके लिए उन्हें अपने साथ रक्खे हुए है। वास्तवमें हिन्दू काफिर हैं, बुतपरस्त हैं। मुसलमानोंको केवल ईश्वरीय प्रकाश प्राप्त है, और हरएक मुसलमान पहले बुतशिकन है। गजनवी और गोरीका उदाहरण देते और हिन्दू देवी-देवताओंके प्रति घृणाका भाव भर रहे थे। अब्दुलगनी भी इन्हीं बातोंको दोहराया करता था।

इसी कशमकश और संदिग्ध वातावरणमें मोहर्रमका त्योहार आ गया। करीमको दोनों ओरकी सुलगती हुई अग्निका ज्ञान था, किन्तु वह उन्हें विशेष महत्त्व नहीं दे रहा था। उसे विश्वास था कि धर्मान्धताका अज्ञान कभी चिरस्थायी नहीं हो सकता। उनका दैनिक जीवन इतना गुथा हुआ था, जिसमें यह कट्टरता भी लुप्त हो जायगी। रोटीका प्रश्न मिथ्या धार्मिक भावनासे कहीं ऊँचा है। पेट भरनेके पश्चात् धर्म आता है, और धर्म, सत्य-धर्म तो मानव-धर्म है, जहाँ ऊँच-नीचका भेद नहीं है, छोटे-बड़ेका प्रश्न नहीं, पवित्र-अपवित्रकी भिन्नता नहीं। मानव, सबसे प्रथम मानव है, और दूसरे मानव भी उसके पूर्णतया बराबर हैं। स्वार्थी मानवोंने अपने स्वार्थ-साधनके लिए, अपना उल्लू सीधा करनेके लिए ये भेदकी दृढ़ दीवालें खड़ी कर दी हैं। इनको नष्ट करनेका सबसे उत्तम और सहज साधन है अपने निजत्वको दूसरेके निजत्वमें निमज्जित कर देना, अपने स्वार्थको दूसरेके स्वार्थमें डुबा देना।

करीमका ताजिया गाँवभरमें सबसे अच्छा और भव्य बनता था। मोहर्रम मासके प्रथम दिन वह तैयार हो जाता था। उसको तैयार करनेमें उसके सारे शिष्य अत्यन्त मनोयोगसे काम करते थे। रंग विरंगा कागज, चमकीली सुनहली और रुपहली पन्नी आती थी और सभी प्रकारसे उसे सुन्दर तथा नेत्राकर्षक बनाया जाता था। रात-दिन उसपर काम होता था, कभी गैसके प्रकाशमें और कभी सूर्यके उज्ज्वल प्रकाशमें। एक अद्भुत चुहल-पहल मोहर्रमके पन्द्रह दिन पूर्व आरम्भ हो जाती थी। इस वर्ष इमामबख्श भी मनोहरका हाथ बँटा रहा था, और मनोहर दूने उत्साहसे काम कर रहा था। नसीमा और गुलाब भी अपने अपने योग्य काम कर रही थीं। इमामबख्शके दोनों शिष्य अजीम और अर्जुन अपने देशको वापस लौट गये थे, इसलिए वह कुछ सूनापन अनुभव करता था, परन्तु मनोहरके सहयोगने उसके निरन्तर उत्साहित हृदय, चिर-प्रसन्न आनन, निष्कपट मनपर अपना प्रभाव विशेष रूपसे जमा लिया था, और इधर नसीमाका एकान्त मनोयोग, उसकी अनवरत सेवा, उसके सम्पूर्ण समर्पणने भी उसको स्वदेश भूल जानेके लिए बाध्य किया था।

गत वर्षोंकी भाँति सब तैयारियाँ हो रही थीं, करीमके अनुगत उसी भाँति रास्तोंकी सफाई कर रहे थे, स्त्रियाँ उसी भाँति संध्याको गीत गाया करती थीं, जो गाँवोंकी भाषा और ध्वनिमें रचे गये थे, छोटे लड़के और लड़कियाँ हरे रंगके कुरते आदि वस्त्र पहने हुए थे। अलम देखनेका उत्साह सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहा था। अखाड़ेके नवयुवक भी नाना प्रकारके नवीन व्यायाम, फरी बनैठी, लाठी, तलवार-संचालनके नये तरीके सीख रहे थे। चारो ओर एक अद्भुत चहल-पहल थी, नवीन उत्साह था। यदि कोई अन्तर इस वर्ष आया था, तो वह यह कि महिपाल सिंहका ताजिया न बना था, और अब्दुलगनीका ताजिया बना था। अब्दुलगनीने अपने आनेके बाद पहले पहल ताजिया बनाया था। अनवर मौलवीके प्रस्तावका यह परिणाम था। सारा व्यय उसीने देना स्वीकार किया था। ईदू,

बकरीदी और गफ़ूर जो पहले करीमके यहाँ काम करते थे, अब तनमनसे माँईका ताजिआ सँवार रहे थे।

जागेश्वर पण्डितके उपदेशका यह भी परिणाम हुआ कि महिपाल सिंहके साथ दूसरे दो-एक हिन्दू घर बिल्कुल असहयोग किये रहे। करीमके पूँछनेपर कि इस साल ताजिया क्यो नही बनाया गया तो महिपाल सिंहने पहले बात बदलकर टालना चाहा, और जब बार-बार पूछा तो उसने अपनी स्त्रीकी बीमारीका बहाना बताया। सत्य कहनेका साहस उसे न हुआ। करीमने अधिक पूँछ-ताँछ न की, और उसके परिवर्तित विचारोका परिणाम सोचता हुआ चला गया।

इधर अनवर मौलवीने अब्दुलगनीको यह परामर्श दिया कि किसी न किसी बहानेसे हिन्दुओके साथ जरूर झगडा किया जावे। ईदू, बकरीदी और गफूर गाँवमे प्रचार करने लगे कि मोहर्रममे हिन्दू-मुसलमान लडेगे, और यहाँके ठाकुरोका मुकाबला करनेके लिए शहरसे कई हजार आदमी आवेगे। अब वे दिन गये जब कि हिन्दू यहाँके मुसलमानो-को दबाये रखते थे, और गुलामी कराते थे। अब मुसलमानोमे भी जाग्रति हो गयी है, वे अपने हुकूकके लिए लडेगे, और हरगिज हिन्दुओके शरीक नही रहेगे; हिन्दुओके ताजिये भी न निकलने देगे। हाँ, इसलाम कबूल करनेके बाद वे ताजिये निकाल सकते है। बुतपरस्त और बुतशिकन कभी दोस्त बन नही सकते।

उधर जागेश्वर पण्डित भी अपना हिन्दूधर्मप्रचार कर रहे थे। मुसलमानोके साथ हिन्दुओको कोई सम्बन्ध नही रखना चाहिये। उनको गाँवसे बाहर निकाल देना चाहिये। वे इस गाँवमे क्या माँगते है, गाँव हिन्दुओका है। हिन्दुओके यहाँ ताजियेदारी महापाप है। मुसलमानोको हमारे धार्मिक कामोमे शामिल नही करना चाहिये। उनसे दूर रहना चाहिये। ठाकुरोको धर्मपर बलिदान हो जाना चाहिये। इसी प्रकारकी बातोसे वे हिन्दुओको पृथक् कर रहे थे।

इन बातोका प्रभाव इसी गाँवतक सीमित नही रहा। चतुर्दिक् यह चरचा फैल गयी कि इस साल ताजियोके समय रमईपुरमे हिन्दू-मुसलमानोका झगडा होगा। आशका-से चारो ओरके नर-नारी सिहिर उठे। शान्तिप्रिय गाँववासी आतकसे एक दूसरेका मुँह ताकने लगे। स्त्रियाँ अपने पति तथा पुत्रोको रमईपुर न जानेका अनुरोध करने लगी। कितने ही उद्दण्ड पुरुष, जिनका कोई विशेष जीविकाका मार्ग न था, चोरी और डकैती-मे, अथवा दूसरोकी वस्तुएँ अपहरण करनेमे सिद्धहस्त और चतुर थे, वहाँ जाकर लूट-पाट करनेके लिए आतुर हो उठे। उनका न कोई धर्म था, और न किसी प्रकारकी धार्मिक भावना ही उनके हृदयमे थी। उनका पेशा ही लूट-मार करना था, और अशान्ति पैदा करना उनका जन्मसिद्ध अधिकार था। उनको हिन्दू-मुसलमानोसे कोई सम्बन्ध नही था, वे किसीको भी लूट सकते थे, और किसीकी भी हत्या कर सकते थे।

आतककी लहर कल्याणपुर और लखनापुरतक पहुँची। दिवाकर, रणजीत सिंह, माधवी, यशोधरा आदिने भी सुना। दिवाकर अपने गाँवमे यह विष फैलता देखकर चिन्तित हो उठा। माधवी और यशोधरा भी शकित हो उठी। दिवाकर और रणजीत सिंह वहाँकी परिस्थिति समझनेके लिए आकुल हो उठे। पहले दीवान गोपीनाथको बुलाकर उनसे

स्थितिको समझनेका विचार किया, किन्तु रणजीत सिंहने उसका विरोध किया। उन्हें कल्याणपुरके कर्मचारियोंपर तनिक विश्वास नहीं था। अन्तमें यही निश्चय हुआ कि रमई-पुरमें स्वयं जाकर यथार्थ परिस्थितिका ज्ञान प्राप्त करना चाहिये, और कोई दुर्घटना होनेके पूर्व ही उसका निरोध होना आवश्यक है।

रमईपुरमें शान्ति और अशान्तिका अपूर्व सम्मिलन देखनेको मिलता था। करीमके अनुयायी यह निश्चित कर चुके थे कि हर प्रकारसे वे शान्ति स्थापित करेंगे। नसीमा और गुलाब भी सक्रिय रूपसे शान्ति-स्थापनामें भाग ले रही थीं, किन्तु नक्कारखानेमें तूतीकी आवाज कौन सुनता है। गाँवकी कितनी ही स्त्रियाँ उनके इस कार्यकी आलोचना और उनके चरित्रके विषयमें जनसाधारणमें संदिग्धताका विषवमन कर रही थी। महिपाल सिंह गुलाबके विवाहके प्रयत्नके लिए इनकार कर गये। उन्होंने अपनी भौजाई, मनोहरकी माँसे स्पष्ट कह दिया कि गुलाब-जैसी स्वतन्त्र लड़कीके विवाहकी चेष्टा वे नहीं कर सकते; जिससे उनको बादमें लज्जित होना पड़े। उन्हें आशा थी कि इस धमकीसे मनोहरकी माँ करीमका पक्ष छोड़कर उनके दलमें आ जायगी, और उसके साथ मनोहरको अपनी बहनके विवाहके स्वार्थसे आना पड़ेगा। परन्तु उनका यह प्रयत्न निष्फल गया। इससे वे और भी चिढ़ गये, और अपने मनका द्वेष निकालनेका कोई उपाय जब दृष्टि-गोचर नहीं हुआ, तो वे दृढ़ताके साथ उस पवित्र बाला गुलाबकुँवरको व्यर्थ ही कलंक लगाने लगे।

किन्तु गुलाबने यह सब जानते-सुनते हुए कर्त्तव्यपथसे मुख नहीं मोड़ा। घर-घर जाकर हिन्दू-मुसलमानकी एकताका उपदेश देती, और शब्दों द्वारा वह चित्र खींचनेका प्रयत्न करती जब कि एक दूसरेकी जानके ग्राहक हो जायँगे। नसीमा भी उसका साथ उसी दृढ़तासे दे रही थी, परन्तु उनका सारा प्रयत्न हास्यजनक हो रहा था। किसी किसी घरमें तो गुलाबके साथ वैसा ही व्यवहार होता था जैसा कि अस्पृश्य जातियोंके साथ प्रायः हुआ करता है। जबसे पण्डित जागेश्वरदयालने उसको घरमें प्रवेश बन्द कर देनेकी आज्ञा दे दी, तबसे कई घरोंमें लोग उसको बाहरसे दुतकारने लगे।

लगभग वैसी ही कठोरता मनोहरके साथ भी बरती जा रही थी। कुछ थोड़ी शंका उसके शारीरिक बलके कारण थी, इसलिए प्रकाश्यरूपसे उसे कोई कुछ न कहते थे, परन्तु पीठ फिरते ही नाना प्रकारके कुत्सित विशेषणोंसे उसे विभूषित करने लगते। धीरे धीरे लोगोंने उसका भी बहिष्कार प्रारम्भ कर दिया। जहाँ लोग उसे देखते, उससे इस प्रकार बचकर निकलनेकी चेष्टा करते जैसे छूतकी बीमारीसे ग्रस्त-से मनुष्य अपनी रक्षा करते हैं। यदि वह उनसे बात करनेकी चेष्टा करता, तो लोग बहाना बताकर निकल भागते। जो मनोहर कुछ ही दिन पहले उनकी आँखोंका तारा था, उनके स्नेहका पात्र था, उनकी भावनाओंका केन्द्र था, वही आज उनकी घृणा और द्वेषका मुकुटमणि हो उठा। उसे अपने एकाकीपनका भास होने लगा, और उसकी अन्तरात्मा उससे कहने लगी कि वह नितान्त अकेला है, और गाँवके हिन्दुओंसे बहिष्कृत है।

करीम और इमामबख्शके साथ मुसलमानोंका भी वैसा ही व्यवहार हो रहा था।

अपने स्नेहसूत्रसे आबद्ध कर सदाके लिए अपने अधिकारमे कर सकते हैं। अम्मा, क्या अब भी तुम नही समझो कि वह कौन-सा उपाय है ? नही, तुम अवश्य समझ गयी होगी, किन्तु फिर भी मैं स्पष्ट किये देती हूँ, अम्मा, मैं उसको अपनी भौजाई, तुम्हारी पुत्रवधू, और दिवाकर भैयाकी पत्नी बनाना चाहती हूँ। क्या यह प्रस्ताव तुम्हे स्वीकार नही है, क्या पापाको इसमे कोई आपत्ति हो सकती है ? उसका पितृ-वंश हमारे वंशसे किसी प्रकार हीन नही है, यदि हम सूर्यवंशी हैं, तो वे चन्द्रवंशी हैं. वे भी हमारी भाँति जागीरदार हैं। हाँ, उनकी आमदनी थोडी है, इलाका न्यून है, किन्तु इससे कोई विशेष हानि तो नही है। हमारे यहाँ धनकी कौन कमी है, टीकाकी रकम अगर कुछ कम हुई तो क्या हुआ ? वंश-मर्यादामें तो वे कम नही हैं । फिर सम्प्रति कालमे टीकाकी रकमका कुछ विशेष महत्व नही रह गया है।

अम्मा, यह भी तनिक विचारो कि हमे कही टीका अच्छा मिल भी गया, किन्तु यशो जैसी लड़की तो नही मिलेगी। मैं यह दृढताके साथ कह सकती हूँ कि यशोके समान कोई राजकुमारी ससारमे हो ही नही सकती। इस सम्बन्धके लिए पापाकी आज्ञा प्राप्त करो, उनका आशीर्वाद प्राप्त करो। उनसे कहना कि उनकी प्यारी मधुका यह प्रथम अनुरोध है, प्रथम प्रार्थना है, प्रथम भिक्षा है। क्या इसको भी वे ठुकरा देंगे, क्या इसकी भी वे अवहेलना करेगे ? मेरा हृदय कातर नही होता, निराश नही होता और मन विश्वास दिलाता है कि वे यह सम्बन्ध अवश्य स्वीकार करेगे।

यशोकी माँ और पिता दोनो इस प्रस्तावसे बडे प्रसन्न हुए हैं। वे स्वयं आजकल-मे इसी उद्देश्यसे लखनऊ आनेवाले है, और पापाके सामने इस सम्बन्धका प्रस्ताव निवेदन करेगे। अम्मा देखना, वे विफलमनोरथ होकर न लौटें, सफल-काम होकर ही आवें। दिवाकर भैया बडे आनन्दमे है। अभीतक उनको इस विषयमे कुछ नही ज्ञात है। वे रात-दिन अपनी पुस्तकोमें लीन रहते है, उन्हे संसारकी ओरसे कोई प्रेम नही है। उनको अब तो संसारी बनाना है। अधिक देर करनेसे मुझे भय है कि कही वे विरागी होकर संसार-त्याग न कर देवे, क्योंकि वैराग्यकी सीमा त्यागमे समाप्त होती है।

पापाको मेरा प्रणाम निवेदन करना, और यह एकान्त-प्रार्थना भी कि मेरी प्यारी यशोको अपनी पुत्र-वधू बनाना स्वीकार करनेकी कृपा करे।

सस्नेह, तुम्हारी

मधु।

इस पत्रने शारदाके विचारोंमे एक महान् परिवर्तन उपस्थित कर दिया था। वस्तुतः उसने कभी इसपर विचार ही नही किया था। यशोधरा उसके इतने समीप होते हुए भी उसके विचारोसे इतनी दूर थी। कभी कभी उसको मूर्खतापर खेद होता था। उसने पहले कभी क्यों न सोचा कि यशोधराको अपनी पुत्र-वधू बनावे। उसका मन प्रसन्न हो गया, माधवीकी बुद्धिकी वह प्रशंसा बारम्बार करने लगी।

सर भगवान सिह प्रायः अपने सरकारी काममे अधिक व्यस्त रहते थे। यह समय ही ऐसा था, जब उनको अवकाश नही मिलता था। इसके अतिरिक्त कर्मव्यसनी भी वे थे। रात-दिनके चौबीस घंटोंमेसे अट्ठारह उन्नीस घंटे काम करते थे। आमोद-प्रमोदसे

प्रेम उन्हें पहलेसे ही न था, और अब तो कार्यकी अधिकता उन्हें किंचिन्मात्र अवसर प्रदान नहीं करती थी। प्रशान्त महासागरका युद्ध उन्हें सदैव चिन्तित बनाये रहता था। अंग्रेजी सेनाओंका पतन उन्हें उतना ही अखर रहा था, जितना कि उनकी खुदकी सेनाओंकी हारसे दुख होता। माधवीके इस पत्रको पाकर शारदाने उनसे मिलनेका प्रयत्न किया, किन्तु वह सफलकाम नहीं हुई। दासीपर दासी वह भेजती, किन्तु आनेका आश्वासन मिलनेपर भी वे नहीं आ पाते थे। उनका भोजन, शयन सब बाहर ही हुआ करता था, और उस समय भी वे किसी न किसी चिन्तामें, किसी न किसीसे बात करनेमें संलग्न रहते थे। शारदाकी ओरसे भी वे रुष्ट थे, और इसी कारणविशेषसे वे अन्दर नहीं आते थे। उन्हें विश्वास था कि उसीके प्रभावसे दिवाकर उनकी आज्ञा पालन नहीं करता, किन्तु वास्तवमें उनका यह विचार नितान्त असत्य था।

यद्यपि मोहर्रमकी छुट्टियाँ होनेके कारण सेक्रेटेरियट बन्द था, किन्तु उससे कोई रुकावट नहीं पड़ती थी। काम बराबर जारी था। जिस दिन मोहर्रमकी ग्यारहवीं तारीख थी, और तमाम ताजिये दफनाये जानेवाले थे, उस दिन उन्हें कुछ अवकाश मिला। प्रातः-कालके नौ बजेके लगभग लखनापुरके ताल्लुकेदार सुरेन्द्रविक्रम सिंहने उनके बंगलेमें प्रवेश किया। सर भगवान सिंहके वे बाल्यसहचर थे,और दोनोंका एक दूसरेके यहाँ बराबर आना जाना था, किन्तु इधर कई वर्षोंसे उनमें साक्षात् नहीं हुआ था। इसके अतिरिक्त वे आज यशोधराके विवाहका प्रस्ताव लेकर आये थे, इससे उनका मन उसी तरह शंकित हो रहा था, जैसा कि किसी अपरिचित याचकका किसी श्रीमन्तके द्वारपर जानेसे हुआ करता है।

सर भगवान सिंह भी उनके आनेका समाचार पाकर कुछ अप्रतिभ और शंकित हो गय। उन्हें याद आया कि माधवी और दिवाकर उन्हींके यहाँ तो आजकल हैं, कहीं उनका स्वास्थ्य तो फिर बिगड़ नहीं गया, माधवी कहीं फिर बीमार तो नहीं पड़ गयी! वे सोचने लगे कि हठात् उनके आगमनका क्या कारण हो सकता है। क्षणभरके लिए पैतृक भावनाएँ उनके विचारोंके ऊपरी सतहमें उतराने लगीं। उनके हृदयका वह कोमल भाग,जहाँ सन्तान-प्रेमका निवास है, शिहिर उठा, और वे उनके स्वागत, या अधिकसे अधिक शीघ्र उनके आने-का कारण जाननेके लिए आकुल होकर कमरेके बाहर चले गये। उनके नेत्रोंसे चिन्ता-की भावनाएँ निकल रही थीं। उन्होंने एक शुष्क हँसीसे उनका स्वागत करते हुए कहा—"आइये भाई साहब, बहुत दिनोंमें दर्शन दिये हैं। माधवी, और दिवाकर तो आपके यहाँ ही रहते हैं, इससे मैं उनकी ओरसे बिल्कुल निश्चिन्त था और कहिये सब कुशल तो है।"

राजा सुरेन्द्रविक्रम सिंहने करमर्दन करते हुए कहा—"हाँ, सब कुशल है। माधवी, और लाल साहब दोनों सकुशल हैं।" फिर हँसकर कहा—"मैंने कल प्रातःकाल घर छोड़ा था, तब दोनों सकुशल थे। बहुत दिनोंसे आपके दर्शन नहीं हुए, इसलिए आया, और एक प्रस्ताव लेकर भी सेवामें उपस्थित हुआ हूँ।"

सर भगवान सिंहने सप्रेम उनको कुर्सीपर बैठाते हुए कहा—"भाई साहब, हम लोग तो बचपनके साथी हैं, आदर तथा सम्मानसूचक शब्दोंकी गुजर हमारे बीचमें नहीं हो सकती। मैं जरा सरकारी काममें इन दिनों अधिक व्यस्त हूँ,क्योंकि हमारी सरकारकी हार

बकरीदी और गफूर जो पहले करीमके यहाँ काम करते थे, अब तनमनसे साँईका ताजिया सँवार रहे थे।

जागेश्वर पण्डितके उपदेशका यह भी परिणाम हुआ कि महिपाल सिंहके साथ दूसरे दो-एक हिन्दू घर बिल्कुल असहयोग किये रहे। करीमके पूँछनेपर कि इस साल ताजिया क्यों नहीं बनाया गया तो महिपाल सिंहने पहले बात बदलकर टालना चाहा; और जब बार-बार पूछा तो उसने अपनी स्त्रीकी बीमारीका बहाना बताया। सत्य कहनेका साहस उसे न हुआ। करीमने अधिक पूँछ-ताँछ न की, और उसके परिवर्त्तित विचारोंका परिणाम सोचता हुआ चला गया।

इधर अनवर मौलवीने अब्दुलगनीको यह परामर्श दिया कि किसी न किसी बहानेसे हिन्दुओंके साथ जरूर झगड़ा किया जावे। ईदू, बकरीदी और गफूर गाँवमें प्रचार करने लगे कि मोहर्रममें हिन्दू-मुसलमान लड़ेंगे, और यहाँके ठाकुरोंका मुकाबला करनेके लिए शहरसे कई हजार आदमी आवेंगे। अब वे दिन गये जब कि हिन्दू यहाँके मुसलमानों-को दबाये रखते थे, और गुलामी कराते थे। अब मुसलमानोंमें भी जाग्रति हो गयी है, वे अपने हुकूकके लिए लड़ेंगे, और हरगिज हिन्दुओंके शरीक नहीं रहेंगे; हिन्दुओंके ताजिये भी न निकलने देंगे। हाँ, इसलाम कबूल करनेके बाद वे ताजिये निकाल सकते हैं। बुतपरस्त और बुतशिकन कभी दोस्त बन नही सकते।

उधर जागेश्वर पण्डित भी अपना हिन्दूधर्मप्रचार कर रहे थे। मुसलमानोंके साथ हिन्दुओंको कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहिये। उनको गाँवसे बाहर निकाल देना चाहिये। वे इस गाँवमें क्या माँगते हैं, गाँव हिन्दुओंका है। हिन्दुओंके यहाँ ताजियेदारी महापाप है। मुसलमानोंको हमारे धार्मिक कामोंमें शामिल नहीं करना चाहिये। उनसे दूर रहना चाहिये। ठाकुरोंको धर्मपर बलिदान हो जाना चाहिये। इसी प्रकारकी बातोंसे वे हिन्दुओंको पृथक् कर रहे थे।

इन बातोंका प्रभाव इसी गाँवतक सीमित नहीं रहा। चतुर्दिक् यह चरचा फैल गयी कि इस साल ताजियोंके समय रमईपुरमें हिन्दू-मुसलमानोंका झगड़ा होगा। आशंका-से चारो ओरके नर-नारी शिहिर उठे। शान्तिप्रिय गाँववासी आतंकसे एक दूसरेका मुँह ताकने लगे। स्त्रियाँ अपने पति तथा पुत्रोंको रमईपुर न जानेका अनुरोध करने लगी। कितने ही उद्दण्ड पुरुष, जिनका कोई विशेष जीविकाका मार्ग न था, चोरी और डकैती-में, अथवा दूसरोंकी वस्तुएँ अपहरण करनेमें सिद्धहस्त और चतुर थे, वहाँ जाकर लूट-पाट करनेके लिए आतुर हो उठे। उनका न कोई धर्म था, और न किसी प्रकारकी धार्मिक भावना ही उनके हृदयमें थी। उनका पेशा ही लूट-मार करना था, और अशान्ति पैदा करना उनका जन्मसिद्ध अधिकार था। उनको हिन्दू-मुसलमानोंसे कोई सम्बन्ध नही था, वे किसीको भी लूट सकते थे, और किसीकी भी हत्या कर सकते थे।

आतंककी लहर कल्याणपुर और लखनापुरतक पहुँची। दिवाकर, रणजीत सिंह, माधवी, यशोधरा आदिने भी सुना। दिवाकर अपने गाँवमें यह विष फैलता देखकर चिन्तित हो उठा। माधवी और यशोधरा भी शंकित हो उठीं। दिवाकर और रणजीत सिंह वहाँकी परिस्थिति समझनेके लिए आकुल हो उठे। पहले दीवान गोपीनाथको बुलाकर उनसे

स्थितिको समझनेका विचार किया, किन्तु रणजीत सिंहने उसका विरोध किया। उन्हें कल्याणपुरके कर्मचारियोंपर तनिक विश्वास नहीं था। अन्तमे यही निश्चय हुआ कि रमईपुरमें स्वयं जाकर यथार्थ परिस्थितिका ज्ञान प्राप्त करना चाहिये, और कोई दुर्घटना होनेके पूर्व ही उसका निरोध होना आवश्यक है।

रमईपुरमें शान्ति और अशान्तिका अपूर्व सम्मिलन देखनेको मिलता था। करीमके अनुयायी यह निश्चित कर चुके थे कि हर प्रकारसे वे शान्ति स्थापित करेंगे। नसीमा और गुलाब भी सक्रिय रूपसे शान्ति-स्थापनामें भाग ले रही थीं, किन्तु नक्कारखानेमें तूतीकी आवाज कौन सुनता है। गाँवकी कितनी ही स्त्रियाँ उनके इस कार्यकी आलोचना और उनके चरित्रके विषयमें जनसाधारणमें संदिग्धताका विषवमन कर रही थीं। महिपाल सिंह गुलाबके विवाहके प्रयत्नके लिए इनकार कर गये। उन्होंने अपनी भौजाई, मनोहरकी माँसे स्पष्ट कह दिया कि गुलाब-जैसी स्वतन्त्र लड़कीके विवाहकी चेष्टा वे नहीं कर सकते; जिससे उनको बादमें लज्जित होना पड़े। उन्हें आशा थी कि इस धमकीसे मनोहरकी माँ करीमका पक्ष छोड़कर उनके दलमें आ जायगी, और उसके साथ मनोहरको अपनी बहनके विवाहके स्वार्थसे आना पड़ेगा। परन्तु उनका यह प्रयत्न निष्फल गया। इससे वे और भी चिढ़ गये, और अपने मनका द्वेष निकालनेका कोई उपाय जब दृष्टि-गोचर नहीं आ, तो वे दृढ़ताके साथ उस पवित्र बाला गुलाबकुँवरको व्यर्थ ही कलंक लगाने लगे।

किन्तु गुलाबने यह सब जानते-सुनते हुए कर्त्तव्यपथसे मुख नहीं मोड़ा। घर-घर जाकर हिन्दू-मुसलमानकी एकताका उपदेश देती, और शब्दों द्वारा वह चित्र खींचनेका प्रयत्न करती जब कि एक दूसरेकी जानके ग्राहक हो जायँगे। नसीमा भी उसका साथ उसी दृढ़तासे दे रही थी, परन्तु उनका सारा प्रयत्न हास्यजनक हो रहा था। किसी किसी घरमें तो गुलाबके साथ वैसा ही व्यवहार होता था जैसा कि अस्पृश्य जातियोंके साथ प्रायः आ करता है। जबसे पण्डित जागेश्वरदयालने उसको घरमें प्रवेश बन्द कर देनेकी आज्ञा दे दी, तबसे कई घरोंमें लोग उसको बाहरसे दुतकारने लगे।

लगभग वैसी ही कठोरता मनोहरके साथ भी बरती जा रही थी। कुछ थोड़ी शंका उसके शारीरिक बलके कारण थी, इसलिए प्रकाश्यरूपसे उसे कोई कुछ न कहते थे, परन्तु पीठ फिरते ही नाना प्रकारके कुत्सित विशेषणोंसे उसे विभूषित करने लगते। धीरे धीरे लोगोंने उसका भी बहिष्कार प्रारम्भ कर दिया। जहाँ लोग उसे देखते, उससे इस प्रकार बचकर निकलनेकी चेष्टा करते जैसे छूतकी बीमारीसे ग्रस्त-से मनुष्य अपनी रक्षा करते हैं। यदि वह उनसे बात करनेकी चेष्टा करता, तो लोग बहाना बताकर निकल भागते। जो मनोहर कुछ ही दिन पहले उनकी आँखोंका तारा था, उनके स्नेहका पात्र था, उनकी भावनाओंका केन्द्र था, वही आज उनकी घृणा और द्वेषका मुकुटमणि हो उठा। उसे अपने एकाकीपनका भास होने लगा, और उसकी अन्तरात्मा उससे कहने लगी कि वह नितान्त अकेला है, और गाँवके हिन्दुओंसे बहिष्कृत है।

करीम और इमामबख्शके साथ मुसलमानोंका भी वैसा ही व्यवहार हो रहा था।

उसके मसलमान अनुगत उसका साथ छोडने लगे थे,और धीरे धीरे माँईके दलमें सम्मिलित होन लगा। उन्हें भी मनोहरकी भाँति उन्होने बहिष्कृत कर दिया था। ईद्दू, बकरीदी और गफूर ो आजकल मुसलमानोंका नेतृत्व कर रहे थे. और प्रकाश्यरूपसे करीमकी सत्ताके वि द्ध उनको उकसा रहे थे।

सन् बयालीसके मोहर्रमके समय रमईपुरकी सामाजिक अवस्था स प्रकार विषमयी हो गयी कि वह सूखी हुई बारूदका र था, जिसमे एक छोटी-सी चिनगारी पड़कर भ कर विस्फोट पदा कर सकती थी। शताब्दियोंका प्रयत्न एक क्षणमात्रमे विनष्ट होन जा रहा था। इतने थोड़े समय करीम अपनी तपस्याको नष्ट होते देखकर चिन्तित हो उठा। वह आशंकासे भ ी दृष्टिसे भविष्यके गर्भमें निहित रमईपुरकी भाग्यलिपि पढ़नेका प्रयत्न करने लगा।

८

मोहर्रम मासकी दसवी तारीखको अब्दुलगनीका ताजिया उठने वाला था। मसजिदमें बड़ी धूम-धाम थी। न-मालूम शहरोसे कितने गुंडे वहाँपर बुलाकर ठहराये गये थे, जिनका उद्देश्य केवल रमईपुरको लूटनेका था। यद्यपि दिखावेमें वे मुसलमान थे, किन्तु वास्तवमें न हिन्दू थे, और न मुसलमान। धार्मिक भावनासे प्रेरित होकर, या धर्मके लिए अथवा उसके उत्थानके लिए वे वहाँ नही आये थे, वे आये थे अपनी आर्थिक तृष्णा-को सबसे सरल उपाय लूट-खसोटद्वारा शान्त करनेके लिए, अथवा, कुलकामिनियोमेसे किसीको अपने साथ भगा ले जानेके लिए। उनकी दृष्टिमें हिन्दू-मुसलमान दोनों बराबर थे। जो व्यवहार हिन्दुओंके साथ करनेके लिए वे आये थे, वैसा और वही व्यवहार वे मुसलमानों-के साथ भी करनेमें कदापि सोच-विचार न करते. यदि उन्हे समय और अवकाश मिलता।

मोहर्रमके नौ दिन तो ज्यो-त्यों निकल गये थे,कोई उपद्रव नही हुआ था। करीमके अनुगतोंकी संख्या यद्यपि बहुत कम रह गयी थी, किन्तु जितने भी थे वे सभी दृढ संकल्प, और तनमनसे सत्यव्रती थे। उन्होने करीमको इन बाहरी गुंडोके आनेकी सूचना दी थी, जिसे सुनकर वह कुछ चिन्तित हो उठा था। दसवॉ दिन कुशलतासे व्यतीत होता न दिखायी पड़ता था। आगामी तूफानके लक्षण जो अभीतक रमईपुरके क्षितिजके समीप दृष्टिगोचर हो रहे थे, वे क्रमशः आगे बढते-बढ़ते मध्य आकाशमे आ गये थे, जिसकी तप्त बयारके झोंकोका अनुभव होना प्रारम्भ हो गया था। करीमने भी अपने अनुगतोंको सचेत करना आरम्भ कर दिया।

उसके सामने एक बड़ी विकट समस्या थी। वह अभीतक हिन्दू-मुसलमानोका सम्मिलित प्रतिनिधित्व करता था, उसके मनमे द्वैत भाव नही था। हिन्दू और मुसलमान दोनों एक ही प्रकारसे उसकी आज्ञा मानते थे, अनुशासन मानते थे और उसीके परामर्श-के अनुसार काम करते थे, परन्तु इधर कई दिनोसे कोई उसकी बात माननेकी कौन कहे, सुनता भी न था। किन्तु वह अभीतक हताश नही हुआ था। उसे अब भी विश्वास था कि अ त्यक्ष रूपसे चाहे सब उसकी बुराई करे.और उससे असन्तुष्ट रहे.किन्तु प्रत्यक्ष रूपसे,

कोई उसका विरोध नहीं कर सकेगा। उसके अन्तरात्माको यह भासित होता था कि अब भी वह हिन्दू-मुसलमानोंको लड़नेसे रोक सकेगा, और सम्भवतः वह अवस्था कदापि न आने पावेगी जब एक दूसरेके रक्तके प्यासे हो जायँगे।

उसके सामने यह एक प्रश्न था कि किस उपायसे वह उनकी गृह-युद्धसे रक्षा करे। स्थानीय पुलिसपर उसका विश्वास न था। घटनास्रोत तो यही प्रकाशित कर रहे थे कि वे उसकी सहायता न करेंगे,क्योंकि यह तनातनी वहाँके अधिकारियों द्वारा उपस्थित की गयी थी। जिस एकताके कारण वे राजद्वारा निर्णीत युद्धका चंदा देनेसे इनकार कर गये थे, और राजकर्मचारियोंको खुलकर अपना पैशाचिक खेल खेलनेको नहीं मिलता था, वे उसको हर प्रकारसे भंग करना चाहते थे। धार्मिकताकी ओटसे कौन उनका शिकार कर रहा था इसको रमईपुरके अधिकांश निवासी नहीं जानते थे, किन्तु करीमकी तीक्ष्ण दृष्टिसे यह छिपा हुआ नहीं था। करीमकी भावनाएँ उसे कटिबद्ध कर रही थी कि वह अपना जीवन देकर उनकी पुरानी एकताको अक्षुण्ण बनाये रक्खे। हिंसात्मक उपायोंसे वह हिंसात्मक भावनाओंके दबानेका विचार न करता था,क्योंकि उनका परिणाम केवल अस्थायी होता है, और उससे द्वेष उत्पन्न होता है,उसे अहिंसापर विश्वास था। उसे ज्ञात था कि बुराईका प्रत्युत्तर भलाईद्वारा देनेसे बुराईकी तीक्ष्णता मिट जाती है, और परिणाम भी सदा शुभ होता है। जो व्यक्ति आततायी हो, अत्याचार करता हो, उसके प्रति सद्भावना रखना, उसके साथ क्षमा और उपकार करना कठिन होते हुए भी महान् है, मानवोचित है, वही मस्तिष्क और ज्ञान रखनेका अधिकारी मानव है। करीमका हृदय भी इसी सद्भावना-से ओतप्रोत हो रहा था। वहअपने शरीर और रक्तकी नींवपर हिन्दु-मुस्लिम ऐक्यकी भीत उठानेका विचार करने लगा। मुट्ठीभर अनुयायियोंको भी वह इसी भावनासे भर रहा था। वे भी अपने जीवन-दानद्वारा इस उठते हुए बवण्डरको शान्त कर पुरानी एकताको पुनर्स्थापन करनेका स्वप्न देखने लगे। दिनके लगभग तीन बजे साँईका ताजिया रवाना हुआ। वैसा ऊँचा ताजिया उस दिनके पहले कभी नहीं बनाया गया था। मसजिदसे थोड़ी दूरपर एक पीपलका पेड़ बहुत प्राचीनकालसे खड़ा हुआ सैकड़ों ताजियोंको अपनी छायाके नीचे विश्राम दे चुका था। उसकी ऊँची डालें बिना किसी भेद-भावसे दोनों जातियोंको समान रूपसे अपनी छाया प्रदान करती हुई चली आ रही थीं। साँईका ताजिया इतना ऊँचा बनाया गया था जो उन डालोंसे अवरुद्ध होता था। जब जुलूस पीपलके नीचे पहुँचा, तो ताजिया उन डालोंमें फँसता था। साँईके अनुगतोंने अल्लाह-ओ-अकबरके गगन-भेदी निनादके साथ पीपल काटना प्रारम्भ कर दिया। क्षणमात्रमें चपलाकी भाँति गाँवमें यह खबर फैल गयी कि मुसलमान पीपल काट रहे हैं। जागेश्वर पंडितके नेतृत्वमें महिपाल सिंहकी चौपालमें हिन्दू पहलेसे ही तैयार बैठे थे। वे बड़े वेगसे बजरंगबलीकी जयकारके साथ उस पीपलकी रक्षा करनेके लिए दौड़ पड़े।

जागेश्वर पंडितके सिखाये हुए शब्दोंमें महिपाल सिंहने गरजकर कहा—"खबर-दार पीपल छोड़ दो।"

ईदू जो कुल्हाड़ी चला रहा था, क्षणभरके लिए रुक गया। इसी समय करीम, मनोहर,इमामबख्शके साथ वहाँ पहुँच गया। वह भीड़ चीरता हुआ पीपलके समीप आया,

और पूछा—"ईदू, पीपल काटनेकी क्या आवश्यकता है, यह तो हम सबको छाया देता है।"

ईदूने यद्यपि गाँजा पीकर अपनेको इस अवसरके लिए तैयार कर लिया था, किन्तु करीमको देखकर उसकी सुध-बुध जाती रही। वह चुप होकर साँईका मुँह देखने लगा।

साँई तो आगे बढ़कर नहीं आया। अनवर मौलवीने भीड़से निकलकर तीव्र स्वरमें कहा—"करीम पहलवान, मुसलमान होनेकी वजहसे मै तुमको छोड़ता हूँ। तुम रास्तेसे हटो, ईदूको अपना काम करने दो।"

करीमने शान्तिके साथ पूछा—"मैं तो सिर्फ यही पूछता हूँ कि पीपल क्यों काट रहे हो ? बिना पीपल काटे हुए भी तो काम चल सकता है, आपका ताजिया निकल सकता है।"

अनवरने चिल्लाकर कहा—"मजहबके मामलेमें दस्तन्दाजी करनेवाले तुम कौन होते हो? दोजखी पिल्ले ! तूने ही आजतक यहाँके मुसलमानोंसे हिन्दुओंकी गुलामी करवायी है। एक हिन्दू बेवाके साथ, जो मनोहर की माँ है—नाजायज ताल्लुक करनेकी वजहसे तू हिन्दुओंको सिरजोर करता है, और मुसलमानोंको नीचा दिखाता है। अबतक तूने बहुत जुल्म किया है, और मुसलमानोंका कोई सरपरस्त न होनेके कारण, उनको हमेशा जलील करता आया है, लेकिन यह अच्छी तरह समझ ले कि अब यह हरगिज नहीं हो सकता। मुसलमान तेरेसे खौफ नहीं खा सकते। तू अब मुसलमान नहीं रहा, काफिर है, रास्ता छोड़ दे।"

करीमसे अधिक क्रोध मनोहर और इमामबख्शको आया। उनका नवीन रक्त खौलने लगा। उनके चेहरे तमतमा उठे, किन्तु करीमने उनकी पीठपर हाथ रखकर उन्हें शान्त रहनेका मौन उपदेश दिया, और कहा—"अनवर मौवली, मैं मानता हूँ कि तुमको जहर फैलानेमें काफी कामयाबी मिली है, और उसी कामयाबीके बलसे तुम आज इतने आदमियोंके सामने जिनको मैं अपनी औलादकी तरह प्यार करता हूँ, मुझको बेइज्जत और पामाल कर रहे हो। लेकिन यह मौका उन इन्तिहाई जलील बातोंका जवाब देनेका नहीं है। उससे ज्यादा अहम मसला सामने पेश है, इस गाँवकी रहनेवाली दो जातियोंकी बहबूदी, उनकी जिन्दगी और उनकी रोटियाँ। अनवर मौलवी, मेरे जिन्दा रहते हरगिज हिन्दूमुसलमान नहीं लड़ सकते। जिनको बच्चोंकी तरह मैंने अपनी गोदमें पाला है, उनको आपसमें खूँरेजी करते मैं हरगिज नहीं देख सकता।"

अनवरने चिल्ला कर कहा—"करीम पहलवान, तुम्हारी मौत तुम्हारे सिरपर मँडरा रही है। अगर जान प्यारी है, तो रास्ता छोड़ दो। मैं इस मौके और मुहिमके लिए पहलेसे तैयार हूँ। तुम्हारे-जैसे पहलवानोंको चुटकीसे मसल देनेवाले मेरे कितने ही शागिर्द अभी भी मसजिदमें बैठे हैं। वे तुम्हारे जिस्मकी धज्जियाँ उड़ा देंगे। मैं दुबारा हुक्म देता हूँ कि रास्ता छोड़ दो।"

महिपाल सिंहने जोरसे चिल्लाकर कहा—"करीम काका, जरा हट जाओ। हम भी देखें जरा कि इस मौलवीमें कितना जोर है, और इसके बदमाश कैसे रुस्तम हैं, जिन्हें ये शहरसे भेड़-बकरियोंकी तरह हाँक कर लाया है। हम ठाकुर हैं, ठाकुर। जिसकी माँ ने दूध पिलाया हो, वह जरा पीपलपर हाथ लगावे तो, देखो फिर क्या मजा आता है। भुट्टा ऐसा सिर जमीनपर धूल चाटता नजर आवेगा।"

करीमने उन्हें शान्त करते हुए कहा—"ठाकुर, जरा शान्त हो। मेरी जान रहते पीपल हरगिज न कटने पावेगा। मेरी कौमका मामला है, पहले मुझे निपटने दो, पहले मेरी लाश गिरने दो, फिर उसपर चढ़कर तुम दोनों अपने अपने हौसले निकाल लेना। जबतक मैं मरता नहीं तबतक तुम लोग शान्त रहो। हजार गया बीता हूँ, मगर फिर भी तुम लोगोंका काका हूँ।"

जागेश्वर पंडित महिपाल सिंहको शान्त होते देखकर बोले—"सारी विपत्तिकी जड़, इस गाँवकी, और हिन्दू जातिकी, तुम हो। तुमने कितने ही हिन्दुओंको मुसलमान वना डाला है, हिन्दू-कुलकामिनियोंका सतीत्व नष्ट किया है, और अपनी पहलवानीके घमण्डमें ऐंठ कर चलते हो, तथा निर्बल हिन्दुओंको सदा भयभीत करते आये हो। देखते क्या हो ठाकुरो, अपनी बेइज्जतीका बदला चुका लो। आज यह अकेला है, पहले इसीसे निपट लो।"

मनोहरने आगे बढ़कर महिपाल सिंहको रोकते हुए कहा—"काका, रुक जाओ। इस पाखंडीके वहकानेमें मत आओ। सोचो और पहचानो कि यह तुम्हारी निष्पाप भौजाई-पर कलंक लगा रहा है। मेरी माँको तो तुम अच्छी तरह पहचानते हो, उसीने तुमको पाल-पोसकर वड़ा किया है। वह तुम्हारी भौजाई होते हुए भी माँके तुल्य है। उसका अपमान हो रहा है, या हमारे सारे वंशका अपमान हो रहा है। फिर भी इस आस्तीनके साँपको अपने दूधसे पाल रहे हो। सदाचारिणी विधवाको यह हमारे सामने बे-आवरू कर रहा है। इसका तो काम ही है हिन्दू-मुसलमानोंको लड़ाना, और अपनी तनख्वाह पकाना। यह सरकारी दूत है, जो तुम्हारेमे मिलकर तुम्हारा ही नाश करानेपर तुला हुआ है। क्या मेरी नसोंमें राजवंशी रक्त प्रवाहित नही हो रहा है, क्या मुझे क्रोध नही आ रहा है अपनी माँकी वेइज्जती होते देखकर? मगर मैं फिर भी सब सहन कर रहा हूँ, खूनके घूँट पी रहा हूँ। मेरा एक ही घूँसा इसको मौतकी नींदमें सुला देगा, परन्तु मैं पाशविक वलप्रयोग नहीं करना चाहता, क्योंकि यह समय नही है। हिन्दू-मुसलमान लड़नेपर कटिवद्ध है, भाई-भाई-का गला काटनेपर उतारू हुआ है। अपमानका घूँट हँसते हँसते पी रहा हूँ। काका, जरा अपनी विचारशक्तिसे काम लो। इस गाँवमे मुसलमान जा नही सकते, उनकी वपौती है। विपत्तिमे विपत्ति पड़नेपर आदमी अपनी वपौती नहीं छोड़ता। फिर व्यर्थमें क्यों द्वेष, शंका और आतंकका जीवन व्यतीत करें। पीढ़ियोंसे हमलोग साथ ही हँसते-खेलते, लड़ते-झगड़ते आये हैं, उसी तरहसे क्यों न आगे भी चले जायँ, वाहरी आदमियोके वहकानेमे अपने जीवनका आनन्द नष्ट कर दें। करीम काका निपटारा कर रहे हैं, धैर्य धरिये पीपल हरगिज नहीं कटने पायेगा।"

जागेश्वरने गरजकर कहा—"पहले इसी अधर्मीको मारो, मुसलमानोंका टुकड़ा खानेवाला, भंगीसे भी गया-बीता है। जो अपनी माँसे अपने पेटके लिए व्यभिचार करवाता है, अपनी वहनके द्वारा अपना पेट पालता है, उसकी वात माननेसे हिन्दूधर्म डूब जायगा, और भगवती रुष्ट होंगी। उनके शापसे यहाँके ठाकुरोंका नाश हो जायगा।"

मनोहरने हँसते हुए कहा—"पण्डितजी, इन वातोंका उत्तर मैं कभी फिर दूँगा। भगवतीको स्वयं ज्ञात है कि कौन दुष्ट है, और कौन पतित है। हाँ, पहले मुझे मार डालो,

फिर आगे बढ़ सकते हो। काका मैं निरस्त्र खड़ा हूँ, क्षत्रिय होकर पहले निःशस्त्र भतीजे-पर वार करो, मैं कदापि कायरोंकी भाँति पलायन नहीं करूँगा।"

जागेश्वरने उत्साहित करते हुए कहा—"मारो, मारो, पहले विभीषणका हनन करो। महाभारतमें सप्तरथियोंने निःशस्त्र अभिमन्युको मारनेमें कोई संकोच नहीं किया था घरके भेदियेका पहले नाश करो।"

महिपाल सिंह आगे न बढ सका। उसकी तलवारका हाथ अपने आप नीचा हो गया।

मनोहर अपूर्व शान्तिसे सिर झुकाये हुए महिपाल सिंहके सामने खड़ा रहा।

उधर अनवर मौलवीने ललकार कर कहा—"ईदू, क्या देखते हो, ताजिया रुका पड़ा है, काटो जल्दी पीपल काटो, शाम हो रही है!"

ईदू और पीपलके बीचमें करीम और इमामबख्श खड़े थे। करीमने कहा—"पीपलका तना काट डालनेके पहले मेरा तन काटो। ईदू, अगर तुम्हारे हाथोंमें ताकत है तो लो पहले अपने करीम काकाको मौतकी नींदमें सुला दो।"

ईदूका हाथ जो उठा हुआ था नीचे झूल गया। उसके हाथसे कुल्हाड़ी गिर पड़ी, और वह पृथ्वीकी ओर देखने लगा।

झुँझलाकर अनवरने सीटी बजायी। अल्लाह-ओ-अकबरके स्वरसे गगन काँप उठा, और पचीसके लगभग भयंकर आकृतिवाले गुंडे मसजिदके प्रांगणसे बाहर निकलने लगे। इधर बजरंगवलीका भी जयनाद हुआ, और ठाकुरोंका दल भी गाँवसे आता हुआ दृष्टिगोचर हुआ। इस तुमुल नादमें तेजीसे दौड़कर आते हुए दो घोड़ोंकी टापोंका शब्द किसीने नहीं सुना, और अपनी अपनी लगनमें लगे होनेसे उन अश्वारोहियोंको भी किसीने न देखा, और न पहचाना। नवागन्तुक व्यक्ति दिवाकर और रणजीत थे, जो रमईपुरमें होनेवाले युद्धका समाचार पाकर उनको शान्त करनेके लिए लखनापुरसे घोड़ोंको दौड़ाते हुए आये थे। उन्होंने दोनों दलोंको लड़नेके लिए सन्नद्ध देखा, और वास्तविक वस्तु-स्थितिको तुरन्त ही समझ लिया। वे दोनों दलोंके मध्यमें आकर करीमके पास खड़े हो गये। रमईपुर-निवासियोंने दो खद्दरधारी नवयुवकोंको देखा। वे सब कुछ विस्मित, कुछ अप्रतिभ, और कुछ चकित हुए, और विस्फारित नेत्रोंसे उनकी ओर देखने लगे। वे जहाँके तहाँ स्थिर चित्रलिखेसे अवाक् खड़े रह गये।

दिवाकरने दोनों दलोंको सम्बोधन करते हुए कहा—"भाइयो, आज इस अवस्थामें तुम लोगोंको देखकर शर्मसे मेरा सिर नीचा हो रहा है। रमईपुर आज सैकड़ों वर्षसे अपनी अद्वितीय, लासानी हिन्दू-मुसलिम एकताके लिए प्रसिद्ध रहा है। मेरे इलाकेमें जितने गाँव हैं, उनका यह सिरमौर रहा है। इस गाँवमें मेरे कितने ही सम्बन्धी ठाकुर रहते हैं, और कितने ही सम्बन्धियोंसे भी निकट मुसलमान भाई रहते हैं। वे दोनों आजतक एक ही घाट पानी पीते थे, एक ही प्रेमसूत्रमें आवद्ध थे, हरएकके विवाह, मृत्युमें शामिल होते थे, और कन्धेसे कन्धा भिड़ाकर विना किसी द्वेषके, एक दूसरेके त्योहार मनाते चले आये हैं। आज उनको ऐसी हालतमें देखकर मुझे हरगिज विश्वास नहीं होता कि आप लोग वही हैं जो सदियोंसे भाई-चारेके नातेमें आवद्ध रहे हैं। आज मैं एकको दूसरेके खूनका प्यासा देख रहा

हूँ। यह समय हमारे सबके लिए बड़ा कठिन है. आज हम आजाद नहीं है. गुलाम है। यह वक्त हमारी आपसी लड़ाईका हरगिज नहीं है। आपसमें लड़कर हम अपनी शक्ति, अपनी ताकत जाया कर रहे हैं, अपना बल नष्ट कर रहे हैं। क्या आपने कभी जरा देरके लिए यह सोचा कि हम क्यों लड़ रहे हैं ? इस खूँ-रेजी, रक्तपानमें कौन अहम तथा महत्त्व-पूर्ण उद्देश्य छिपा है। आप गौर करें कि चन्द महीने पहले आप कितने हिलमिलकर रहते थे, और आज किसके कारणसे, अपने गरोहके किस आदमीकी वजहसे एक दूसरेके खूनके प्यासे हो उठे हैं। जिन व्यक्तियोंने आपको इस हालतमें पहुँचा दिया है, वे हरगिज आपके गाँवके रहनेवाले नहीं हैं, वे बाहरसे आये हुए खुदगरज आदमीके वेषमें शैतान हैं, जो आपको बरबाद कर अपना घर बना रहे हैं। भाईको भाईसे लड़ाकर अपनी तनख्वाहें सीधी कर रहे हैं, आप लोगोंको व्यथामें डालकर अपनी मौजका सरंजाम कर रहे हैं। आइये, हम और आप कन्धेसे कन्धा मिलाकर ताजिया निकालें, और उनको यह दिखा दें कि तुम्हारा जादू यहाँ नहीं चलनेका'। अगर किसी पेड़ काटनेसे कोई फायदा पहुँचता हो, रूहानी तरक्की होती हो, क्योंकि मजहबकी जान रूहकी तरक्की है, तो बेशक उस पेड़को काट डालना चाहिये, मगर झगड़ा करनेकी गरजसे किसी पेड़को काटना उचित नहीं है, क्योंकि एक पेड़को उगने और बड़ा होनेमें कितने ही वर्ष लगते हैं। हमारे बुजुर्ग पेड़ लगाकर अपना नाम कायम करते थे, अपनी आनेवाली औलादके लिए छायाका इन्तिजाम करते थे, क्योंकि देहातोंमें सूर्यकी तेजीसे बचनेके लिए, धूपमें आते हुए गरीब राहगीरके लिए छतरीका काम देते हैं, और बरसातकी बूँदोंसे वही भींगनेसे बचाते हैं, जाड़ेमें ओसको खुद ओढ़ लेते हैं, लेकिन उसके नीचे लेटे हुए घर-बार-विहीन पथिकतक नहीं पहुँचने देते। ऐसे पेड़ोंकी रक्षा करना, क्या मुसलमान, और क्या हिन्दू, सबका धर्म है। मजहबमें उन्हीं चीजोंको महत्त्व दिया गया है, जिनसे आदमियोंको फायदा पहुँचता है, क्योंकि मजहबको बनानेवाले, या चलानेवाले ईश्वरीय ज्योतिसे आलोकित आदमी ही थे। मजहबमें उन्हीं बातोंको मुजिर और अप्रचलित करार दिया है, जिनसे आदमियोंको नुकसान पहुँचता है। इसलिए विचारिये और समझिये कि हम मजहबी फर्ज बिना दूसरोंको कष्ट दिये हुए भी कर सकते हैं। और अगर पीपल काटना ही आप चाहते हैं तो पहले मुझे मार डालिये, फिर शौकसे खूनकी दरिया बहाइये। कमसे कम मैं हिन्दू-मुसलमानोंका खून बहते न देखूँगा।"

दिवाकर चुप होकर उनकी ओर देखने लगा और फिर उसने अपनी गर्दन बलिदान होनेके लिए झुका दी। दोनों दलोंमें एक अस्फुट ध्वनि होने लगी कि यह तो हमारे राज-कुमार हैं। अनवर मौलवी और जागेश्वर पण्डितने भी पहचाना कि यह हमारे स्वामी सर भगवान सिंहके एकमात्र पुत्र हैं, क्योंकि उनके यहाँ आते-जाते इन्होंने इनको देखा और बहुधा वे दरसे उसे अभिवादन भी करते थे।

और वहाँ क्यों आया, इस सम्बन्धमें वे कुछ न जानते थे। हिन्दू-मुसलमान दोनोंको भागते देखकर क्षणभरके लिए वे स्तम्भित रह गये। वे न समझ पाये कि ऐसा क्यों हो रहा है, और क्यों मुसलमान ताजिया छोड़कर भाग रहे हैं। उन्हें केवल यही ज्ञान था कि इस खद्दरधारी युवकके आ जानेसे सारा गुड़ गोबर हो गया। लूट-खसोट करनेका जो लोभ उन्हें दिया गया था, वह अब पूरा होते नहीं दिखायी पड़ता था। ज्ञान-शून्य पहलेसे थे ही, मनस्कामना पूर्ण न होनेके कारण जो क्षोभ तथा क्रोध उत्पन्न हुआ, उससे वे अधीर हो गये, क्योंकि निराशा सदैव अधीरताको जन्म देती है। अनवर मौलवीकी दशा इस समय बड़ी चिन्तनीय थी। उन्हें शान्त करनेके लिए उसको शब्द ढूँढ़े न मिलते थे। उसे कभी स्वप्नमें भी अनुमान नहीं हुआ था कि राजकुमार दिवाकर सिंह वहाँपर इस भाँति अकस्मात् आ जायँगे, और उसकी महीनोंकी मेहनतको क्षणमात्रमें नष्ट कर देंगे।

अनवरने उन कुपित गुंडोंसे कहा—"चलो, यहाँसे भाग चलो, अब हमारी दाल नहीं गलेगी।"

गुण्डोंमेंसे एकने सक्रोध कहा—"तो इसके मानी यह हैं कि हमको लूट-पाट करनेकी इजाजत तुम नहीं देते। लेकिन हमको तुमसे इजाजत लेनेकी जरूरत ही क्या है?"

दूसरेने गरजकर कहा—"पहले इसी राजकुमारको खत्म करो, और फिर गाँवमें लूटमार मचा दो, किसकी हिम्मत है जो हमारा मुकाबला करे? जिस मकसदसे हम आये हैं, उसे हम पूरा करेंगे ही।

अनवर मौलवी "हाँ, हाँ, रुको, ठहरो, वहशी न बनो" कहता ही रहा, और एक गुण्डेने भालाका निशाना साधकर दिवाकरकी ओर फेंक दिया। वायुको चीरता हुआ भाला नतमस्तक दिवाकरके कन्धेसे टकराया और उसका तीव्र फल उसके क्षीण स्कन्धमें प्रविष्ट होकर उसका रक्तपान करने लगा। दिवाकर निःशब्द पृथ्वीपर गिर पड़ा, और क्षतस्थानसे रक्तस्रोत बड़े वेगसे निकलकर हिन्दू-मुसलिम एकताके संकल्पमें जलकी भाँति अर्घ्यप्रदान करने लगा। क्षणमात्रमें यह काण्ड घटित हो गया। करीम, मनोहर, इमामबख्श और रणजीत सभी किंकर्त्तव्यविमूढ़से रह गये। अनवर और जागेश्वरने भी यह दुर्घटना देखी, और वे वहाँसे भाग खड़े हुए। भागते हुए अनवरने गुंडोंसे चिल्लाकर कहा—"भागो, भागो, अपनी जान बचाओ, सबके सब फाँसीपर लटका दिये जाओगे।" अनवरके भागते ही गुंडे भी भाग खड़े हुए, किन्तु इमामबख्शने लपककर उस आततायी गुंडेको पकड़ लिया, जिसने दिवाकरपर भाला फेंका था। इधर हिन्दू-मुसलमान राजकुमारको धराशायी देखकर उन भागते हुए गुंडोंका पीछा करने लगे। मनोहर भी उनको पकड़नेके लिए जी-जानसे भागा।

करीम और रणजीत आशंकित हृदयसे दिवाकरकी चोटकी परीक्षा करने लगे। अनेक विपरीत परिस्थितियोंसे लड़ता हुआ दिवाकर पहलेसे ही क्षीण तथा निर्बल-शरीर था। इस आघातसे वह मूर्च्छित, मुमूर्षु अवस्थामें पड़ा हुआ था, और उसके क्षतस्थानसे रक्तस्रोत उमड़ उमड़कर साँईके ताजियेके नीचे बहकर हिन्दू-मुसलिम विद्वेषकी अग्निको शान्त करनेकी चेष्टामें तल्लीन हो रहा था।

९

शारदा उस दिन कुछ प्रसन्न थी। निराशाके काले बादलोंके मध्य आशा चपलाका अकस्मात् प्रादुर्भाव हुआ। मनुष्यका मन कितनी शीघ्रतासे आशाओंका महल खड़ा करने लगता है, यह शारदाको देखकर भली भाँति अनुमान किया जा सकता था। उसका मन जबसे माधवी और दिवाकर गये तबसे न मालूम कितनी उलझनोंमें उलझा हुआ रहा करता था। हास्यकी क्षीण रेखा कभी उसके आननमण्डलपर थिरकती हुई न देखी गयी थी। वह सतत चिन्ताओंका, जिनका कहीं ओर-छोर न था, केन्द्र हो रही थी। पिता-पुत्रके वैमनस्य,और उनके सिद्धान्तोंकी प्रतिकूलताका क्या परिणाम होगा,वह यह न जान पाती थी, किन्तु वह यह अवश्य जानती थी कि परिणाम कभी शुभ न होगा। वह इसी आशंकासे सदैव हरिणोंकी भाँति भयविकम्पित रहा करती थी,और सदैव किसी न किसी अशुभ समाचारको सुननेके लिए भयविह्वल-सी रहती थी। किन्तु इस अपार निविड़ कालिमामें उसे आज कुछ प्रकाशरेखा की झलक दिखायी दे गयी। उसे आशा होने लगी कि शायद पिता-पुत्रका वैमनस्य मिट जाय।

वह अपने सामने माधवीका पत्र लिये हुए बैठी थी, जो कल लखनापुरसे आया था। वह उस पत्रको पढ़ते थकती न थी, और बार-बार पढ़ती। माधवीने लिखा था:—

राजमन्दिर,
लखनापुर ता० २६–९–४२

स्नेहमयी माँके श्रीचरणोंमें प्रणाम स्वीकृत हो।

अम्मा, अब मेरा स्वास्थ्य आपके आशीर्वाद तथा ईश्वरकी कृपासे ठीक है। नित्य ही घोड़ीपर चढ़कर पाँच-छ मीलका चक्कर लगा आती हूँ, और यशो भी मेरे साथ साथ घूमने जाती है। यशोको तो हम लोग बचपनसे जानते हैं, परन्तु इधर उसके साथ रहनेका मुझे अधिक अवसर प्राप्त हुआ है, इस कारणसे उसका अन्तरंग भी बहुत कुछ जाननेमें समर्थ हुई हूँ। अम्मा, संसारमें हिमालय अपनी उच्चताके लिए विख्यात है, उसी तरह हमारी यशो भी उच्च तथा महान् हृदय है, जैसे उनका किरीट सर्दैव धवल रहता है, वैसे ही उसका मन भी सदा स्वच्छ और निर्मल है, जैसे वह सिन्धु, गंगा, यमुना और ब्रह्मपुत्रका जन्मदाता है, जिनका जल कभी नहीं सूखता, और उसके क्रोड़में खेलते हुए धरातलमें अवतीर्ण होते हैं,वैसे ही प्रेम, भक्ति, करुणा और देवत्वकी अजस्र धाराएँ उसके हृदयसे प्रस्फुटित होकर चतुर्दिक प्लावित करती हैं, और जैसे वे पतितको पावन करनेमें समर्थ है, वैसे ही वह भी चिन्तित, दुखितको सुखी बनानेमें शक्तिमान् है। अम्मा, यशो तो अब मेरे जीवनका एक अंग—एक महत्वपूर्ण भाग—बन गयी है। उसको छोड़ना मेरी शक्तिसे बाहरकी बात है। मैं ही क्या, जो कोई भी उसके साथ रहेगा, वही उसको छोड़नेमें समर्थ न होगा। जो कोई उसका अन्तरंग देख पायगा, वही उसका अनुगत हो जायगा।

अम्मा, मेरी प्यारी अम्मा, यशोको तो हम सहज ही सदाके लिए अपनी बना सकते हैं। एक अत्यन्त सरल उपायसे उसको हम अपने घरमें लाकर प्रतिष्ठित कर सकते हैं। स चिर हास्यमयी, प्रेममयी, त्यागमयी,दयामयी, क्षमामयी, करुणामयी जीवित प्रतिमाको

अपने स्नेहसूत्रसे आबद्ध कर सदाके लिए अपने अधिकारमें कर सकते हैं। अम्मा, क्या अब भी तुम नहीं समझी कि वह कौन-सा उपाय है ? नहीं, तुम अवश्य समझ गयी होगी, किन्तु फिर भी मैं स्पष्ट किये देती हूँ; अम्मा, मैं उसको अपनी भौजाई, तुम्हारी पुत्रवधू, और दिवाकर भैयाकी पत्नी बनाना चाहती हूँ। क्या यह प्रस्ताव तुम्हें स्वीकार नहीं है, क्या पापाको ईसमें कोई आपत्ति हो सकती है ? उसका पितृ-वंश हमारे वंशसे किसी प्रकार हीन नहीं है,यदि हम सूर्यवंशी हैं, तो वे चन्द्रवंशी हैं. वे भी हमारी भाँति जागीरदार हैं। हाँ,उनकी आमदनी थोड़ी है,इलाका न्यून है,किन्तु इससे कोई विशेष हानि तो नहीं है। हमारे यहाँ धनकी कौन कमी है,टीकाकी रकम अगर कुछ कम हुई तो क्या हुआ ? वंश-मर्यादामें तो वे कम नहीं हैं। फिर सम्प्रति कालमें टीकाकी रकमका कुछ विशेष महत्व नही रह गया है।

अम्मा, यह भी तनिक विचारो कि हमें कहीं टीका अच्छा मिल भी गया, किन्तु यशो जैसी लड़की तो नहीं मिलेगी। मैं यह दृढताके साथ कह सकती हूँ कि यशोके समान कोई राजकुमारी संसारमें हो ही नही सकती। इस सम्बन्धके लिए पापाकी आज्ञा प्राप्त करो, उनका आशीर्वाद प्राप्त करो। उनसे कहना कि उनकी प्यारी मधुका यह प्रथम अनुरोध है, प्रथम प्रार्थना है, प्रथम भिक्षा है। क्या इसको भी वे ठुकरा देंगे, क्या इसकी भी वे अवहेलना करेंगे ? मेरा हृदय कातर नहीं होता, निराश नहीं होता और मन विश्वास दिलाता है कि वे यह सम्बन्ध अवश्य स्वीकार करेंगे।

यशोकी माँ और पिता दोनों इस प्रस्तावसे बड़े प्रसन्न हुए हैं। वे स्वयं आजकल-में इसी उद्देश्यसे लखनऊ आनेवाले हैं, और पापाके सामने इस सम्बन्धका प्रस्ताव निवेदन करेंगे। अम्मा देखना, वे विफलमनोरथ होकर न लौटें, सफल-काम होकर ही आवें। दिवाकर भैया बड़े आनन्दमें हैं। अभीतक उनको इस विषयमें कुछ नहीं ज्ञात है। वे रात-दिन अपनी पुस्तकोंमें लीन रहते हैं, उन्हें संसारकी ओरसे कोई प्रेम नहीं है। उनको अब तो संसारी बनाना है। अधिक देर करनेसे मुझे भय है कि कहीं वे विरागी होकर संसार-त्याग न कर देवे, क्योंकि वैराग्यकी सीमा त्यागमें समाप्त होती है।

पापाको मेरा प्रणाम निवेदन करना, और यह एकान्त-प्रार्थना भी कि मेरी प्यारी यशोको अपनी पुत्र-वधू बनाना स्वीकार करनेकी कृपा करें।

सस्नेह, तुम्हारी

मधु।

इस पत्रने शारदाके विचारोंमें एक महान् परिवर्तन उपस्थित कर दिया था। वस्तुतः उसने कभी इसपर विचार ही नही किया था। यशोधरा उसके इतने समीप होते हुए भी उसके विचारोंसे इतनी दूर थी। कभी कभी उसको मूर्खतापर खेद होता था। उसने पहले कभी क्यों न सोचा कि यशोधराको अपनी पुत्र-वधू बनावे। उसका मन प्रसन्न हो गया, माधवीकी बुद्धिकी वह प्रशंसा बारम्बार करने लगी।

सर भगवान सिंह प्रायः अपने सरकारी काममें अधिक व्यस्त रहते थे। यह समय ही ऐसा था, जब उनको अवकाश नहीं मिलता था। इसके अतिरिक्त कर्मव्यसनी भी वे थे। रात-दिनके चौबीस घंटोंमेंसे अट्ठारह उन्नीस घंटे काम करते थे। आमोद-प्रमोदसे

प्रेम उन्हें पहलेसे ही न था, और अब तो कार्यकी अधिकता उन्हें किंचिन्मात्र अवसर प्रदान नहीं करती थी। प्रशान्त महासागरका युद्ध उन्हें सदैव चिन्तित बनाये रहता था। अंग्रेजी सेनाओंका पतन उन्हें उतना ही अखर रहा था, जितना कि उनकी खुदकी सेनाओंकी हारसे दुख होता। माधवीके इस पत्रको पाकर शारदाने उनसे मिलनेका प्रयत्न किया, किन्तु वह सफलकाम नहीं हुई। दासीपर दासी वह भेजती, किन्तु आनेका आश्वासन मिलनेपर भी वे नहीं आ पाते थे। उनका भोजन, शयन सब बाहर ही हुआ करता था, और उस समय भी वे किसी न किसी चिन्तामें, किसी न किसीसे बात करनेमें संलग्न रहते थे। शारदाकी ओरसे भी वे रुष्ट थे, और इसी कारणविशेषसे वे अन्दर नही आते थे। उन्हें विश्वास था कि उसीके प्रभावसे दिवाकर उनकी आज्ञा पालन नहीं करता, किन्तु वास्तवमें उनका यह विचार नितान्त असत्य था।

यद्यपि मोहर्रमकी छुट्टियाँ होनेके कारण सेक्रेटेरियट बन्द था, किन्तु उससे कोई रुकावट नहीं पड़ती थी। काम बराबर जारी था। जिस दिन मोहर्रमकी ग्यारहवीं तारीख थी, और तमाम ताजिये दफनाये जानेवाले थे, उस दिन उन्हें कुछ अवकाश मिला। प्रातः-कालके नौ बजेके लगभग लखनापुरके ताल्लुकेदार सुरेन्द्रविक्रम सिहने उनके बंगलेमें प्रवेश किया। सर भगवान सिहके वे बाल्यसहचर थे, और दोनोंका एक दूसरेके यहाँ बराबर आना जाना था, किन्तु इधर कई वर्षोंसे उनमें साक्षात् नहीं हुआ था। इसके अतिरिक्त वे आज यशोधराके विवाहका प्रस्ताव लेकर आये थे, इससे उनका मन उसी तरह शंकित हो रहा था, जैसा कि किसी अपरिचित-याचकका किसी श्रीमन्तके द्वारपर जानेसे हुआ करता है।

सर भगवान सिह भी उनके आनेका समाचार पाकर कुछ अप्रतिभ और शंकित हो गये। उन्हें याद आया कि माधवी और दिवाकर उन्हींके यहाँ तो आजकल है, कहीं उनका स्वास्थ्य तो फिर बिगड़ नहीं गया, माधवी कहीं फिर बीमार तो नहीं पड़ गयी! वे सोचने लगे कि हठात् उनके आगमनका क्या कारण हो सकता है। क्षणभरके लिए पैतृक भावनाएँ उनके विचारोंके ऊपरी सतहमें उतराने लगी। उनके हृदयका वह कोमल भाग, जहाँ सन्तान-प्रेमका निवास है, शिहिर उठा, और वे उनके स्वागत, या अधिकसे अधिक शीघ्र उनके आने-का कारण जाननेके लिए आकुल होकर कमरेके बाहर चले गये। उनके नेत्रोंसे चिन्ता-की भावनाएँ निकल रही थीं। उन्होंने एक शुष्क हँसीसे उनका स्वागत करते हुए कहा—"आइये भाई साहब, बहुत दिनोंमें दर्शन दिये हैं। माधवी, और दिवाकर तो आपके यहाँ ही रहते हैं, इससे मैं उनकी ओरसे बिल्कुल निश्चिन्त था और कहिये सब कुशल तो है।"

राजा सुरेन्द्रविक्रम सिहने करमर्दन करते हुए कहा—"हाँ, सब कुशल है। माधवी, और लाल साहब दोनों सकुशल है।" फिर हँसकर कहा—"मैंने कल प्रातःकाल घर छोड़ा था, तब दोनों सकुशल थे। बहुत दिनोसे आपके दर्शन नही हुए, इसलिए आया, और एक प्रस्ताव लेकर भी सेवामें उपस्थित हुआ हूँ।"

सर भगवान सिहने सप्रेम उनको कुर्सीपर बैठाते हुए कहा—"भाई साहब, हम लोग तो बचपनेके साथी हैं; आदर तथा सम्मानसूचक शब्दोंकी गुजर हमारे बीचमें नहीं हो सकती। मैं जरा सरकारी काममें इन दिनों अधिक व्यस्त हूँ, क्योंकि हमारी सरकारकी हार

हम बहुत चिन्तित किये है। जापानका वेग सहन करना हमारे लिए कठिन हो गया है। प्रतिदिन हमारी सेनाएँ पीछे हट रही हैं, और इन कांग्रेसियोंके मारे नाकोदम आ गया है। ये अपनी डफली अलग बजा रहे हैं। इनके आन्दोलनसे देशका बड़ा भाग युद्धकी ओरसे उदासीन हो गया है, और उतनी सहायता नहीं कर रहा है, जितनी कि हमें जरूरत है। और कुछ न सही, तो एक ही एक करके सत्याग्रह कर रहे हैं, इससे भी तो हमारी प्रगतिमें बाधा पड़ती है।

सुरेन्द्रविक्रम सिंहने पृथ्वीकी ओर देखते हुए कहा—"हाँ, इसका भी परिणाम वही हो रहा है जो सामूहिक सत्याग्रहसे होता। आपको तो वाकई रात-दिन चैन नहीं मिलती होगी।"

सर भगवान सिंह—"ओर तो और, अपने बच्चोंतककी देखभालका समय नहीं मिल रहा है। रानी साहबा, उधर अलग मु ह फुलाये हैं, कलसे बुलावेपर बुलावे आ रहे हैं, मगर अन्दर जानेका अवकाश नहीं मिल रहा है। आपके आनेके एक क्षण पहले सोचा था कि देख आऊँ क्या बात है, कि आपके आनेकी सूचना मिली।"

सुरेन्द्रविक्रम सिंह—"अरे, यह तो और भी गजब हुआ। अब रानी साहबा मुझ कभी क्षमा नहीं करेंगी। आप पहले अन्दर हो आइये, तब मैं आपसे बात करूँगा। मैं बैठा हूँ।"

सर भगवान सिंह—"ऐसी क्या जल्दी पड़ी है। माधवी और दिवाकर आपके यहाँ हैं, और वे भी स्वस्थ हैं, कोई चिन्ताका कारण नहीं है। हाँ, यह तो कहिये कि आप कौन-सा प्रस्ताव लेकर आये है ?"

सुरेन्द्रविक्रम सिंह—"अच्छा होता कि आप पहले रानी साहबासे मिल आते, जिससे आपको और मुझको, सुविधा रहती।"

सर भगवान सिंह उनका गूढ़ आशय न समझ सके, समझ सकनेका कोई कारण भी नहीं था। उन्होंने उसे साधारण शिष्टाचार जानकर कहा—"पहले आप अपना प्रस्ताव तो कहिये, फिर अन्दर जाऊँगा।"

सुरेन्द्रविक्रम सिंहने किंचित् हिचकिचाहटके साथ कहा—"आज मैं याचक होकर आपके द्वारपर आया हूँ। मेरी यशोको तो आप जानते ही हैं, अभी कुछ दिन पहले वह यहाँ रह चुकी है। हमारी सबकी इच्छा है कि यशोको आपकी सेवाके लिए समर्पण कर देवें। लाल साहबके साथ उसके विवाहका प्रस्ताव लेकर आया हूँ।"

सर भगवान सिंह विस्मित होकर उनकी ओर देखने लगे। इसपर तो उन्होंने कभी विचार ही नहीं किया था।

सुरेन्द्रविक्रम सिंहने काँपते हुए हृदयसे पूछा—"क्या आपको इसमें कोई आपत्ति है ? भाई साहब, इस सम्बन्धमें आपको स्पष्ट और निस्संकोच बात करना चाहिये। यदि आपको कोई आपत्ति हो, तो निश्चय मानिये कि मुझे कोई ग्लानि नहीं होगी।"

सर भगवान सिंहने धीमे स्वरमें कहा—"जब दिवाकरकी इच्छा है, तब मुझे क्या आपत्ति हो सकती है।"

सुरेन्द्र विक्रम सिंहने उनके व्यंग्यपर दृष्टिपात न करते हुए कहा—"भाई साहब,

में इतना नीच नहीं हूँ, और न लाल साहब ही इतने गये गुजरे हैं। यह मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि उन्हें इस विषयमें कुछ नहीं मालूम। यह प्रस्ताव माधवीकी ओरसे आरम्भ हुआ है। मैंने भी कभी इस सम्बन्धमें नहीं सोचा था। यह उन्हींकी जिदका परिणाम है कि मुझे इस प्रस्तावको लेकर उपस्थित होना पड़ा। क्या माधवीने इसके बारेमें आपको कुछ नहीं लिखा? शायदा रानी साहबको लिखा हो।"

सर भगवान सिहने हँसनेकी चेष्टा करते हुए कहा—"आप मेरी बातका दूसरा अर्थ न लगाइये। आजकलका समय ही ऐसा है, पिताको पुत्रकी इच्छानुसार कार्य करना पड़ता है, इसलिए यदि दिवाकर इसे स्वीकार नहीं करेगा, तो मैं सर्वथा असमर्थ हूँ, यह मैं अभीसे स्पष्ट किये देता हूँ। मधुकी ओरसे जब यह प्रसंग उपस्थित हुआ है, तब शायद उसने उसकी अनुमति प्राप्त कर ली हो।"

सुरेन्द्रविक्रम सिहने गम्भीरताके साथ कहा—"नहीं, ऐसी अनुमति उसे नहीं प्राप्त हुई है।"

इधर लाल साहब बिलकुल उदासीन-से रहते हैं, रणजीतको छोड़कर किसी अन्यसे बात भी नहीं करते। माधवीसे भी वे प्रायः मिलते नहीं। सदैव पुस्तकोंके पठनमें अपनेको लगाये रहते हैं। हम सभी लोग उनकी इस उदासीनतासे शंकित हैं, और माधवी तो विशेष रूपसे है। यशोके साथ उसकी पटती भी खूब है, उसीने जिदकरके इस सम्बन्धको स्थिर किया है। मुझे तो इसमें कोई आपत्ति थी ही नहीं। मेरे लिए इससे अधिक सौभाग्य-शाली सम्बन्ध नहीं मिल सकता था। घर बैठे जब गंगा आवे तब उसके पुण्यका ओर-छोर क्या किसीको मिल सकता है?"

सर भगवान सिहने हँसकर कहा—"अच्छा, इसीलिए आपने आते ही शिष्टाचार-की धूम बाँध दी थी। अब कारण समझमें आया। यह तो आपको मालूम ही है कि पुत्रपर माताका पितासे अधिक अधिकार होता है, और वचनबद्ध होनेके पहले मैं उनका भी मत जान लेना चाहता हूँ। यशोको भला कौन पुत्र-वधू बनानेके लिए आतुर नहीं होगा, और जब इस सम्बन्धसे हमलोग और निकट आ जाते हैं, तब तो आपत्ति करनेका कोई कारण ही नहीं दिखायी पड़ता।"

सुरेन्द्रविक्रमने प्रसन्न होकर कहा—"तभी तो मैं कह रहा था कि आप पहले रानी साहबासे मिल आवें, किन्तु आपने सदाकी भाँति मेरी इस बातको भी स्वीकार नहीं किया।"

सर भगवान सिहने उठते हुए कहा—"अकेले बैठनेमें आपको कुछ असुविधा तो होगी।"

सुरेन्द्रविक्रमने हँसते हुए कहा—"इस असुविधासे अधिक महत्त्वशाली आपका रानी साहबाकी खिदमतमें जाना है।"

सर भगवान सिह हँसते हुए अन्दर चले गये।

१०

माधवीका पत्र पढ़कर सर भगवान सिहके लिए कोई दूसरा उपाय न रह गया।

यद्यपि मनसे वे इस सम्बन्धको अपने योग्य नहीं समझते थे, क्योंकि वे दिवाकरका विवाह किसी शासक राज्यकी राजकन्यासे करना चाहते थे, किन्तु माधवीका अनुरोध भी तो नहीं टाल सकते थे। वे अपनी महत्त्वाकांक्षाको वात्सल्यके आवरणमें छिपानेका प्रयत्न करने लगे। शारदा तो अपनी स्वीकृति देनेके लिए पहलेसे ही प्रस्तुत थी। सर भगवान सिंहको इनकार करनेका कोई कारण नहीं रह गया। उन्होंने लौटकर राजा सुरेन्द्रविक्रमसे कहा—"भाई साहब, मधुने तो यशोकी बड़ी तारीफ की है, और वास्तवमें इस नाटककी सूत्रधार वही है। दिवाकरकी अनुमति मिलनेके पश्चात् मैं सम्पूर्ण स्वीकृति उस समय दूँगा। इतनी गुंजाइश इसलिए रखता हूँ कि दिवाकरके मनकी थाह मुझे अभीतक नहीं मिल पायी है। उसके विचार क्रान्तिकारी हैं। वह कब क्या कर बैठे,यह किसीको नहीं मालूम।"

राजा सुरेन्द्रविक्रम सिंहने उठते हुए कहा—"बेशक, वर बिना बारात कैसी! माधवीके द्वारा मैं भी उनका मन जाननेका प्रयत्न करूँगा।"

सर भगवान सिंहने उनको ठहरानेका बहुत प्रयत्न किया, किन्तु वे ठहरे नहीं, और चले गये।

उनके जानेके पश्चात् सर भगवान सिंह सोचने लगे—"इस संसारमें मुझे सर्वत्र विपर्याय दिखायी पड़ता है। साम्यका क्या कहीं भी नाम नहीं है? मेरी आकांक्षाएँ कुछ और हैं,और दिवाकरकी कुछ और। मेरा दृष्टिकोण उससे सर्वथा विभिन्न है। वह मेरे सिद्धान्तों-के अनुकूल नहीं चलता। मेरा वंश सदैवसे सम्राट्भक्त रहा है, जो सम्राट्को, उसके तद्रूपमें नहीं मानेगा, उसकी प्रजा कब उसको राजा करके मानेगी। अनुशासनका तो यही मूल-सिद्धान्त है, अपनेसे बड़ेकी आज्ञा आँख मूँदकर पालन करना।"

"जीवनके प्रारम्भसे ही मैंने आज्ञा पालन करना, और करवाना सीखा है। यदि बड़े महाराज—मेरे पिताने मुझे धूपमें खड़े रहनेकी आज्ञा दी है, तो मैंने उसे न मानने-की धृष्टता नहीं की। उनका वाक्य मेरे लिए ईश्वरीय आज्ञासे भी अधिक महत्त्वपूर्ण था। उनके समक्ष मेरी निजकी इच्छाका कोई मूल्य नहीं था, स्वयं मेरी ही दृष्टिमें। किन्तु आज क्या देख रहा हूँ, पुत्र कदापि पिताकी आज्ञानुसार काम नहीं करेगा, वरन प्रतिकूल करेगा। शायद पश्चिमीय सभ्यताके साथ साथ यह दुर्गुण भी हमारे समाजमें प्रविष्ट हो गया है,क्योंकि गुलाम जाति सदैव दुर्गुणोंको सीखनेके लिए आतुर रहती है। उसकी मस्तिष्क-शक्ति हीनतर होती जाती है,इसलिए उच्च और विशिष्ट गुणोंको वहाँ स्थान प्राप्त करने-की गुंजाइश नहीं मिलती।"

"जो पुत्र अवैध मार्गपर जा रहा है, उसको सन्मार्गपर लानेका प्रयत्न करना प्रत्येक पिताका धर्म है। ऐसे पुत्रसे तो पुत्रहीन रहना कहीं श्रेयस्कर है जो वंश और पिता-की मर्यादा भंग करना चाहता है। जब समाजके सम्मुख पुत्रके कार्योंके लिए पिताको अपदस्थ होना पड़े, लज्जित होकर बगलें झाँकना पड़े, और सदैव नतनेत्र होकर चलना पड़े, तब ऐसे पुत्रको त्याग देनेमें क्या पिताका कल्याण नहीं है? मेरी दृष्टिमें यह सर्वथा उचित और वैध है।"

"न्याय और सिद्धान्तके समक्ष क्या पुत्रका स्थान कुछ अधिक विशिष्ट है? नहीं, उसके साथ पक्षपात करना अन्याय है। राजाके समक्ष पुत्र और प्रजा दोनों तुल्य है।

जब प्रजा कोई गर्हित अपराध करती है तब राजा उसे दण्ड देता है, किन्तु यदि उसका पुत्र भी वही अपराध करता है, तो क्या राजाको उचित है कि उसको छोड़ दे ? नहीं, दण्ड एक होता है। यदि पुत्र पिताके सिद्धान्तोंके प्रतिकूल जाता है, तब पिताके लिए आवश्यक है कि वह पुत्रको दण्ड दे, वरन उचित तो यह है कि उसका मापदण्ड इतर जनोंके दण्डसे अधिक हो, क्योंकि वह उसीका अंश है, और उसके अनुसार चलनेके लिए बाध्य है।"

"दिवाकर क्रान्तिकारी विचारोंका है, वह राजद्रोही है। राजद्रोह हमारे वंशकी परम्परा नहीं, और इसी कारणसे सैकड़ों वर्ष हो गये, और हमारा राज्य स्थिर है। राजलक्ष्मीने हमारा साथ नहीं छोड़ा। कितने ही राज्य-परिवर्तनके तूफान आये, और चले गये, किन्तु हमारा बाल बाँका नहीं हुआ। समृद्धि और ऐश्वर्य, सत्ता और अधिकार, उत्तरोत्तर बढ़ते रहे, किन्तु इस कुलांगार दिवाकरके साथ हमारा अस्तित्व संदिग्ध हो गया है। इतनी पीढ़ियोंके कठिन त्याग और परिश्रमसे उत्पन्न किया हुआ हमारा गौरव, हमारी वंश-मर्यादा, हमारा जीवन सभी तो संकटमें पड़े दिखायी देते हैं। मेरे कारण सरकार उसे छोड़ रही है, आखिर कहाँतक तरह देगी। अभीतक उसकी क्रियाएँ उग्र नहीं हुई हैं, इसलिए वह मौन है, केवल मुझे चेतावनी देकर छोड़ देती है, किन्तु यह व्यापार कबतक चलेगा ? एक न एक दिन उसको गिरफ्तार करना पड़ेगा, और राजद्रोहके अपराधमें उसे फाँसी या कालापानीका दण्ड मिलेगा। उस समय स्वर्गसे हमारे पितृगण अपने परिश्रमसे स्थापित राज्यकी दुर्दशा देखकर क्या प्रसन्न होंगे ? उसके कार्योंकी अग्निसे तो हम सभी भस्म हो जायँगे। मर्यादा तो जायगी ही, हमारा राज्य और जीवन भी जा सकता है।"

"तब ऐसे पुत्रको त्याग करनेमें ही हमारा कल्याण है। ऐसे सोनेके आभूषणसे क्या लाभ जिससे कान फट जाय। जिससे सर्वत्र हानि पहुँचनेकी सम्भावना हो, उसको नष्ट कर देना ही बुद्धिमत्ता है। सुरेन्द्र उसके विवाहके लिए आया है, अपनी लड़की व्याहना चाहता है, बस एक यही अन्तिम उपाय कर लेना चाहिये। सम्भव है कि विवाहके पश्चात् वह मार्गपर आ जावे, क्योंकि जो वृत्तियाँ अभीतक निरंकुश हैं, उनको परिचालित करनेवाला मिल जायगा। नवयौवनका उद्दाम प्रवाह जो अभी असंयत तथा अविहित कामोंकी ओर जा रहा है, सम्भव है कि विवाहके पश्चात् निरुद्ध हो जावे, और धर्मविहित मार्गपर प्रवाहित होने लगे। विवाहके पश्चात् उद्दण्ड पुरुष भी सीधे होते देखे गये हैं। इसीलिए मुझको यह विवाह-प्रस्ताव स्वीकार करना पड़ा। यदि आज दिवाकर मेरे कहनेमें होता, तो मैं उसका विवाह ऐसे राजघरानेमें करता जिससे हमारी प्रतिष्ठा और सम्मान चौगुने होते। माधवीका विवाह-सम्बन्ध तो मैंने ऐसा ही गौरवपूर्ण स्थिर किया है।"

अर्दलीने इसी समय आकर सूचना दी कि अनवर मौलवी मिलना चाहते हैं। उन्होंने तुरन्त ही उसको लानेकी आज्ञा दी।

अनवर मौलवीका मुख उतरा हुआ था, आँखें भयविह्वल थीं, और ओष्ठ सूखे हुये पपड़ाये थे। उसका निस्तेज मुख देखकर सर भगवान सिंह शंकित हो गये। मौलवी साहबने अन्य दिनोंकी अपेक्षा अधिक झुककर अभिवादन किया। वे हाँफ रहे थे, और साँस लेना कठिन हो रहा था।

सर भगवान सिंहने पूछा—"क्या बात है अनवर,ऐसी कौन सी मुसीबत आ पड़ी? तुम इतना क्या घबराये हुए हो? कुछ कहो भी तो।"

अनवर दोनों हाथोंसे अपना मुख ढाँककर रोने लगा। सर भगवान सिंहने विरक्त होते हुए पूछा—"क्या बात है, कुछ कह भी तो। बिना रोये क्या काम नहीं चलता, या उसकी भीषणता बिना रोये पूरी नहीं होती?"

अनवरने आँखें पोंछते हुए कहा—"हुजूर क्या करूँ, बिना रोये जी नहीं मानता। मुझसे ऐसा कसूर हो गया है, जिसकी इन्तिहाँ नहीं।"

उन्होंने सक्रोध कहा—"तमहीद सुननेके लिए मेरे पास वक्त नहीं है। अगर साफ साफ और जल्दी बात कहना हो तो कहो, नहीं तो कमरेके बाहर जाओ। जब तुम्हारा दिल और दिमाग सही हो, तब आना।"

अनवरने देखा कि अब ज्यादा तूल देनेसे बात बिगड़ जायगी, वह धीरे धीरे कहने लगा—"हुजूरके हुक्मके मुआफिक कमतरीन रमईपुरके मुसलमानोंको हिन्दुओंके खिलाफ करनेमें पूरी तरहसे कामयाब हो चुका था। जागेश्वर पण्डितके भी जालमें वहाँके सब हिन्दू सिवाय मनोहरके, जो करीम पहलवानका शागिर्द है,फँस गये थे। कल वहाँपर हिन्दू और मुसलमानोंकी जंग छिड़नेवाली थी। मुसलमानोंकी इमदादके लिए मैं पचीस गुंडे भी शहरसे ले गया था,जो रमईपुरको उजाड़नेमें कोई कसर न रखते। वहाँकी शाही मसजिदके करीब एक पीपलका बहुत बड़ा पुराना पेड़ है, हमने ताजिया ऐसा बनवाया जो उस पीपलकी डालोंमें अटक जावे। पीपल काटनेकी शोहरत पहलेसे ही हो गयी थी। जागेश्वर वहाँके ठाकुरोंको लेकर उसको काटनेसे रोकनेके लिए आ गये। इधर साँईका ताजिया निकला, और पीपलको काटने लगे। करीम पहलवान मय अपने दामाद इमामबख्श और मनोहरके मौकेपर आ गया, और पीपल काटनेको मना किया। मैंने और जागेश्वर दोनोंने उसको बेहूदीसे बेहूदी गालियाँ देकर गुस्सा दिलाना चाहा, मगर उसको जरा भी गुस्सा न आया। वह इसी बातपर अड़ा हुआ था कि पहले उसे मार डालो, तब पीपल काटो, तकरार बढ़ती देखकर मैंने मुसलमानोंकी मददके लिए मसजिदमें छिपे बैठे हुए नशेसे सराबोर गुंडोंको भी बुला लिया, इसी समय हुजूर एक नागहानी वाकै हो गयी।" कहते कहते वह रुक गया, और मुख ढाँककर रोने लगा।

सर भगवान सिंहने सरोष कहा—"फिर रोने लगा? क्या करीम, मनोहर, इमामबख्श उस लड़ाईमें मारे गये तेरे हाथसे, जो फाँसीके डरसे रोता है?"

अनवरने बड़े बड़े आँसुओंको रूमालसे पोंछते हुए कहा—"वे मारे जाते हुजूर, तो मुझे कोई डर नहीं था। हुजूर जब मेरी हिफाजत कर रहे हैं, तब मुझे किसका डर है। हुजूर ऐसी बात वाकै हुई जिसका ख्वाबमें भी गुमान नहीं हो सकता था।"

सर भगवान सिंहने अधीरताके साथ पूछा—"मैं कह चुका हूँ कि तमहीद मत बाँधो, मगर क्या तुमने बेशर्मीका लबादा ओढ़ रक्खा है?"

अनवरने हाथ जोड़कर कहा—"हुजूर कहता हूँ, कहनेके लिए तो आया ही हूँ। हुजूर जब दोनों तरफके आदमी लड़नेपर आमादा थे, और हमेशाके काँटा करीमको

मारनेवाले ही थे कि हमारे महाराज कुमार वहाँ पर अकस्मात् आ गये, और दोनों दलोंके दर्म्यान खड़े होकर लेक्चर देने लगे।"

सर भगवान सिंहने आतुर कण्ठ से पूछा—"कौन महाराज कुमार? क्या तुम्हारा मतलब दिवाकरसे है?"

अनवरने हाथ जोड़कर कहा—"हाँ हुजूर। उनके साथ उनके एक दोस्त भी थे जो यहाँ मेडिकल कालेजमें डाक्टर हैं। उनके लेक्चरसे हुजूर सारा बना बनाया खेल बिगड़ गया। बिलकुल बालूकी दीवालकी तरह ढह गया। हिन्दू-मुसलमानोंकी लड़ाई-का जोश काफूर हो गया, पहलेकी तरह हिलमिलकर भाग गये। सिवाय इन शहरी गुंडों और करीम पहलवानके साथियोंके, कोई वहाँ खड़ा न दिखायी दिया। ताजियावाले साँईका भी पता न था। एक टांगका होते हुए भी न मालूम कब किधरसे निकल गया, हममेंसे किसीने नहीं देखा।"

सर भगवान सिंहने क्रुद्ध स्वरमें दाँत पीसते हुए कहा—"अच्छा, इस हरामजादेने वहाँ भी पहुँचकर मेरा खेल बिगाड़ दिया!"

यह कहकर पिंजराबद्ध सिंहकी भाँति वे कमरेमें टहलने लगे। उनकी आँखोंसे क्रोधकी ज्वाला निकलने लगी। यदि इस समय दिवाकर सामने होता तो उसका क्या परिणाम होता यह कल्पनातीत था।

अनवरका भय किसी अंशतक कम हुआ। उसे भय था कि दिवाकरके आहत होनेके समाचारसे उसे भयानक दण्ड दिया जायगा, परन्तु उनकी यह दशा देखकर उसने अनुमान किया कि अब यदि दण्ड मिलेगा भी तो वह भयंकर नहीं होगा।

उन्होंने ठहरकर पूछा—"तो हिन्दू-मुसलमान लड़े नहीं, बिखर गये?"

अनवरने हाथ जोड़कर कहा—"हाँ हुजूर, उनका लेक्चर ऐसा ही पुरअसर था, इसके अलावा वे गाँवके मालिक थे, हुजूर ही गौर करें, कि हुजूरके मुकाबलेमें मुझ हकीरकी कौन सुनेगा?"

सर भगवान सिंह फिर टहलने लगे। फिर कहा—"अच्छा, तो तुम लोग अपना-सा मुँह लेकर रोते चले आये?"

अनवर—"हाँ हुजूर, और क्या करते। शहरी गुंडे बदमाश होते ही हैं, फिर लूट-पाट करानेकी गरजसे उनको बेहद नशा पिला दिया गया था, जिससे वे आपेसे बाहर थे। दोस्त, दुश्मन पहचाननेकी ताकत उन्हें नहीं थी। इसके अलावा वे लोग महाराज कुमार साहबको जानते भी न थे, न कभी देखा था, उनमेंसे एक गुंडेने एक बल्लम मेरे मना करते-करते फेंक ही तो दिया, जो जाकर महाराज कुमारके लग गया, और वे गिर पड़े।"

सर भगवान सिंह ठहर गये, और पूछा—"क्या कहा, गुंडेका बल्लम दिवाकरके लग गया?"

अनवरने काँपते हुए कहा—"हाँ हुजूर, उस शैतानके पुतलेका बल्लम महाराज कुमारकी गर्दनके पास कन्धेको आरपार करके निकल गया। हुजूर इसमें मेरा कतई कुसूर नहीं था!"

सर भगवान सिंहने गगनभेदी हास्यसे कहा—"वाह अनवर, यह तुमने बड़ा

उसका मन अपने आप रोने लगता। उसके मनमें आता कि वह एक बार चिल्लाकर खूब जोरसे रोवे, और हृदयका उठता हुआ शोकावेग निकाल दे, किन्तु वह मौन होकर उस पीड़ाको मन ही मन अनुभव कर रही थी। उसके लिए दिवाकर सर्वथा एक अपरिचित व्यक्ति था, आजके प्रथम उसने उसे कभी देखा नहीं था, और न उसके सम्बन्धमें वह कुछ जानती ही थी। उसे स्वयं ज्ञात न होता था कि वह उसके लिए क्यों इतनी आकुल है।

दिवाकरके शरीरसे कितना रक्त निकल गया था, इसका कोई अनुमान न होता था। वह मूर्छित अवस्थामें पड़ा हुआ था, और उसके मुखकी कान्ति उत्तरोत्तर मलीन होती जा रही थी। जीवनके कोई बाह्य लक्षण दृष्टिगोचर नहीं हो रहे थे। मृतकी भाँति वह अवश निस्पंद पड़ा हुआ था! क्षत-स्थानसे रक्त अब भी बह रहा था, जिससे श्वेत चादर लाल हो गयी थी, और बिछौना तर हो गया था।

रणजीतके पास न कोई दवा थी, और न उपचारके शस्त्र थे, जिससे वह आपरेशन करता। इसके अतिरिक्त वह इतना घबड़ा गया था, जिससे उसका सारा चिकित्सा-ज्ञान लुप्तप्राय हो गया था। वह केवल ठंडे जलकी पट्टियाँ क्षत-स्थानपर रखकर निकलते हुए रक्तको बन्द करनेकी चेष्टा कर रहा था। रूपकुँवरि भी दिवाकरके सिरहाने बैठकर उद्विग्न चित्तसे पट्टियाँ बदलनेमें सहायता कर रही थी।

करीम अपने हाथमें पत्तियोंका पुञ्ज लिये हुए वहाँ आया। उसने नसीमको दे पीसकर लानेका आदेश दिया, और रणजीतको आश्वासन दिया कि शायद इन पत्तियोंके लेपसे रक्तस्राव बन्द हो जावे। रणजीतको कोई आपत्ति नहीं थी; दिवाकरका बहता हुआ रक्त रोकना उसका प्रथम अभिप्राय था। यदि उसकी दवाएँ उसके पास होतीं तो वह अवश्य उसे बन्द कर सकता था। किन्तु विलायती दवाओंकी अनुपस्थितिमें वह सर्वथा निरुपाय था। लखनापुरसे अपनी औषधियोंको लाने तथा वहाँपर यहाँकी स्थितिका ज्ञान करा देनेके लिए सवार पहले ही भेज दिये गये थे, और वह बड़ी उत्सुकतासे उनकी प्रतीक्षा कर रहा था।

करीम और रणजीतने उन पत्तियोंका लेप क्षत-स्थानके चारो ओर कर दिया। उनमें इतनी शक्ति थी कि रक्त-स्राव उत्तरोत्तर कम पड़ता हुआ बन्द हो गया। रणजीतने साश्चर्य करीमकी ओर देखा, इसके पहले उसको वैद्यक औषधियोंपर विश्वास नहीं था, जिसे वह केवल मूर्खोंकी चिकित्सा समझता था। किन्तु जब प्रत्यक्ष उसने उनका प्रभाव देखा तब शंका और भ्रमका नाश होना अनिवार्य था। उसे यह नहीं ज्ञात था कि भारतीय चिकित्साशास्त्रको भी भारतीय आचार्योंने मथनकर इतना सरल कर दिया है जो थोड़े ही परिश्रमसे अद्भुत गुण प्रकाशित करनेमें समर्थ है, यदि उसका विधिपूर्वक पालन किया जावे। पश्चिमी ज्ञान अभीतक पूर्णताको नहीं पहुँचा है, यद्यपि उन्हें अपनी उन्नतिका अभिमान अवश्य है।

रात्रिके लगभग बारह बजे मोटरसे माधवी, और रणजीतकी माता गायत्री भी वहाँ आ गयीं। माधवीका ज्ञान लुप्त-सा था, और वह इतनी व्याकुल थी कि जिसे देखकर रणजीतको भय प्रतीत होने लगा। उन्होंने उसको विश्वास दिलानेकी चेष्टा की, कि दिवाकरकी चोट सांघातिक नहीं है, किन्तु वह स्वयं देखना चाहती थी। रणजीतको भय था

कि यदि उसको इस दशामें दिवाकरको देखनेकी अनुमति दी जाती है, तो कहीं कोई दूसरी दुर्घटना उपस्थित न हो जावे, और एक दूसरा रोगी तैयार हो जावे। माधवी दिवाकरसे मिलनेके लिए आकुल थी, उसको जीवित देखनेके लिए लालायित थी। अन्तमें उसे दूरसे दिखा देनेके लिए उन्हें उसकी प्रार्थना अंगीकार करनी पड़ी। गायत्री और माधवीने दिवाकरको देखा। उसके निष्प्रभ मुखको देखकर माधवी उत्तेजनासे मूर्छित हो गयी। हुआ वही परिणाम जिससे रणजीतको भय था। किन्तु रणजीतके पास उसकी औषधियाँ थीं, अब वह हरएक प्रकारके रोगोंसे लड़नेके लिए तैयार था। माधवीके लिए एक अलग कमरा खोला गया, और उसको होशमें लानेका प्रयत्न किया जाने लगा।

माधवीकी देख-रेखके लिए गुलाब और नसीमकी नियुक्ति की गयी। माधवीके मस्तिष्कमें भय और निराशाकी भावनाओंका हलकम्प उठा था, जिसमें उसकी चेतनाशक्ति लोप हो गयी। उसकी अचेतन अवस्थामें भी वह हलकम्प भूचालकी भाँति उद्वेलित हो रहा था। उसका आन्तरिक ज्ञानकोष जो सर्वदा जाग्रत रहता है, भयमिश्रित भावनाओंसे अब भी युद्ध कर रहा था, इसी कारणसे रणजीतके सभी उपचार निष्फल जा रहे थे और माधवीकी चेतना अपने मार्गपर आती हुई दृष्टिगोचर नहीं होती थी। रणजीत निरुपाय होकर आकाशमें बिखरे हुए तारोंको देखने लगे। रणजीतको ज्ञान था कि दिवाकरकी हँसली टूट गयी है, और उसका आपरेशन करना होगा। किन्तु रात्रिका समय और सामानकी कमी उसे कुछ करनेकी आज्ञा नहीं दे रहे थे। जब उसे मालूम हुआ कि यशोधरा डाक्टर विश्वनाथन्‌को जो उसके शस्त्र-चिकित्साके आचार्य थे, बुलाने गयी है, उसने तब उनकी प्रतीक्षा करनेमें ही कल्याण समझा। डाक्टर विश्वनाथन् शस्त्र-चिकित्साके विशेषज्ञ थे, और वे अपने इस ज्ञानके लिए अन्तर्राष्ट्रोंमें प्रसिद्ध थे। रणजीतको यह विश्वास था कि उनके आ जानेसे सारी कठिनाइयाँ दूर हो जायँगी और दिवाकर पुनः जीवन प्राप्त करेगा।

प्रभातकालके आगमनके साथ ही यशोधरा उनको लिये हुए रमईपुर पहुँच गयी। यशोधराका हृदय यद्यपि काँप रहा था, किन्तु ऊपरसे वह शान्त थी। साहसी होनेके कारण तथा समयकी परिस्थितिने उसको शान्त और धैर्यचित्त रहनेके लिए बाध्य कर दिया था। वह आशा और निराशासे बराबर युद्ध करती चली आ रही थी। उसे विश्वास था कि वह अवश्य सफलता प्राप्त करेगी। दिवाकरका जीवनदीप निर्वापित कभी नहीं हो सकता। सबसे अधिक विश्वास उसे सत्य और अहिंसापर था, क्योंकि वे भगवानके साक्षात् सत् रूप हैं। सतोगुणका नाश कभी नहीं होता, वह सदा स्थिर रहनेवाला है, अमर है और शाश्वत है। शेष दो गुण तम और रज, शक्तिशाली होते हुए भी सत्‌की क्रिया तथा प्रतिक्रियाके आघातसे क्रमशः परिवर्तित होते हुए अन्तमें उसीमें लीन होते हैं। ब्रह्म-अभिभूत ब्रह्माण्डका ज्ञान सत्य है, और उसकी अनुभूति अहिंसा है। जब मानव अपने सद्ज्ञानके विश्लेषणद्वारा मिथ्या भावनाओंको पराजित करता हुआ जीवनयात्रा करता है, तब वह सत्यकी ओर गमन करता है अथवा सत्यव्रती होता है, और जब ब्रह्मकी

सर भगवान सिंहने पूछा—"क्या बात है अनवर,ऐसी कौन सी मुसीबत आ पड़ी? तुम इतना क्या घबराये हुए हो? कुछ कहो भी तो।"

अनवर दोनों हाथोंसे अपना मुख ढाँककर रोने लगा। सर भगवान सिंहने विरक्त होते हुए पूछा—"क्या बात है, कुछ कह भी तो। विना रोये क्या काम नहीं चलता, या उसकी भीषणता विना रोये पूरी नहीं होती?"

अनवरने आँखें पोंछते हुए कहा—"हुजूर क्या करूँ, बिना रोये जी नहीं मानता। मुझसे ऐसा कसूर हो गया है, जिसकी इन्तिहा नहीं।"

उन्होंने सक्रोध कहा—"तमहीद सुननेके लिए मेरे पास वक्त नहीं है। अगर साफ साफ और जल्दी बात कहना हो तो कहो, नहीं तो कमरेके बाहर जाओ। जब तुम्हारा दिल और दिमाग सही हो, तब आना।"

अनवरने देखा कि अब ज्यादा तूल देनेसे बात बिगड़ जायगी, वह धीरे धीरे कहने लगा—"हुज़ूरके हुक्मके मुआफिक कमतरीन रमईपुरके मुसलमानोंको हिन्दुओंके खिलाफ करनेमें पूरी तरहसे कामयाब हो चुका था। जागेश्वर पण्डितके भी जालमें वहाँके सब हिन्दू सिवाय मनोहरके, जो करीम पहलवानका शागिर्द है,फँस गये थे। कल वहाँपर हिन्दू और मुसलमानोंकी जंग छिड़नेवाली थी। मुसलमानोंकी इमदादके लिए मैं पचीस गुंडे भी शहरसे ले गया था,जो रमईपुरको उजाड़नेमें कोई कसर न रखते। वहाँकी शाही मसजिदके करीब एक पीपलका बहुत बड़ा पुराना पेड़ है, हमने ताजिया ऐसा बनवाया जो उस पीपलकी डालोंमें अटक जावे। पीपल काटनेकी शोहरत पहलेसे ही हो गयी थी। जागेश्वर वहाँके ठाकुरोंको लेकर उसको काटनेसे रोकनेके लिए आ गये। इधर साँईका ताजिया निकला, और पीपलको काटने लगे। करीम पहलवान मय अपने दामाद इमामबख्श और मनोहरके मौकेपर आ गया, और पीपल काटनेको मना किया। मैंने और जागेश्वर दोनोंने उसको बेहूदीसे बेहूदी गालियाँ देकर गुस्सा दिलाना चाहा, मगर उसको जरा भी गुस्सा न आया। वह इसी बातपर अड़ा हुआ था कि पहले उसे मार डालो, तब पीपल काटो, तकरार बढ़ती देखकर मैंने मुसलमानोंकी मददके लिए मसजिदमें छिपे बैठे हुए नशेसे सराबोर गुंडोंको भी बुला लिया, इसी समय हुजूर एक नागहानी वाक़ै हो गयी।" कहते कहते वह रुक गया, और मुख ढाँककर रोने लगा।

सर भगवान सिंहने सरोष कहा—"फिर रोने लगा? क्या करीम, मनोहर, इमामबख्श उस लड़ाईमें मारे गये तेरे हाथसे, जो फाँसीके डरसे रोता है?"

अनवरने बड़े बड़े आँसुओंको रूमालसे पोंछते हुए कहा—"वे मारे जाते हुजूर, तो मुझे कोई डर नहीं था। हुजूर जब मेरी हिफाजत कर रहे हैं, तब मुझे किसका डर है। हुजूर ऐसी बात वाक़ै हुई जिसका ख्वाबमें भी गुमान नहीं हो सकता था।"

सर भगवान सिंहने अधीरताके साथ पूछा—"मैं कह चुका हूँ कि तमहीद मत बाँधो, मगर क्या तुमने बेशर्मीका लबादा ओढ़ रक्खा है?"

अनवरने हाथ जोड़कर कहा—"हुजूर कहता हूँ, कहनेके लिए तो आया ही हूँ। हुजूर जब दोनों तरफके आदमी लड़नेपर आमादा थे, और हमेशाके काँटा करीमको

मारनेवाले ही थे कि हमारे महाराज कुमार वहाँ पर अकस्मात् आ गये, और दोनों दलोंके दर्म्यान खड़े होकर लेक्चर देने लगे।"

सर भगवान सिंहने आतुर कण्ठ से पूछा—"कौन महाराज कुमार? क्या तुम्हारा मतलब दिवाकरसे है?"

अनवरने हाथ जोड़कर कहा—"हाँ हुजूर। उनके साथ उनके एक दोस्त भी थे जो यहाँ मेडिकल कालेजमें डाक्टर हैं। उनके लेक्चरसे हुजूर सारा बना बनाया खेल बिगड़ गया। बिलकुल बालूकी दीवालकी तरह ढह गया। हिन्दू-मुसलमानोंकी लड़ाई-का जोश काफूर हो गया, पहलेकी तरह हिलमिलकर भाग गये। सिवाय इन शहरी गुंडों और करीम पहलवानके साथियोंके,कोई वहाँ खड़ा न दिखायी दिया। ताजियावाले साँईका भी पता न था। एक टांगका होते हुए भी न मालूम कब किधरसे निकल गया, हममेंसे किसी ने नहीं देखा।"

सर भगवान सिंहने क्रुद्ध स्वरमें दाँत पीसते हुए कहा—"अच्छा, इस हरामजादेने वहाँ भी पहुँचकर मेरा खेल बिगाड़ दिया!"

यह कहकर पिंजराबद्ध सिंहकी भाँति वे कमरेमें टहलने लगे। उनकी आँखोंसे क्रोधकी ज्वाला निकलने लगी। यदि इस समय दिवाकर सामने होता तो उसका क्या परिणाम होता यह कल्पनातीत था।

अनवरका भय किसी अंशतक कम हुआ। उसे भय था कि दिवाकरके आहत होनेके समाचारसे उसे भयानक दण्ड दिया जायगा, परन्तु उनकी यह दशा देखकर उसने अनुमान किया कि अब यदि दण्ड मिलेगा भी तो वह भयंकर नहीं होगा।

उन्होंने ठहरकर पूछा—"तो हिन्दू-मुसलमान लड़े नहीं, बिखर गये?"

अनवरने हाथ जोड़कर कहा—"हाँ हुजूर, उनका लेक्चर ऐसा ही पुरअसर था, इसके अलावा वे गाँवके मालिक थे,हुजूर ही गौर करें,कि हुजूरके मुकाबलेमें मुझ हकीरकी कौन सुनेगा?"

सर भगवान सिंह फिर टहलने लगे। फिर कहा—"अच्छा, तो तुम लोग अपना-सा मुँह लेकर रोते चले आये?"

अनवर—"हाँ हुजूर, और क्या करते। शहरी गुंडे बदमाश होते ही हैं,फिर लूट-पाट करानेकी गरजसे उनको बेहद नशा पिला दिया गया था, जिससे वे आपेसे बाहर थे। दोस्त, दुश्मन पहचाननेकी ताकत उन्हें नहीं थी। इसके अलावा वे लोग महाराज कुमार साहबको जानते भी न थे, न कभी देखा था,उनमेंसे एक गुंडेने एक बल्लम मेरे मना करते-करते फेंक ही तो दिया, जो जाकर महाराज कुमारके लग गया, और वे गिर पड़े।"

सर भगवान सिंह ठहर गये, और पूछा—"क्या कहा, गुंडेका बल्लम दिवाकरके लग गया?"

अनवरने काँपते हुए कहा—"हाँ हुजूर, उस शैतानके पुतलेका बल्लम महाराज कुमारकी गर्दनके पास कन्धेको आरपार करके निकल गया। हुजूर इसमें मेरा कतई कुसूर नहीं था!"

सर भगवान सिंहने गगनभेदी हास्यसे कहा—"वाह अनवर, यह तुमने बड़ा

शुभ समाचार सुनाया। जीमें आता है कि उस गुंडेको सोनेसे तौल दूँ। नहीं, वह गुंडा हरगिज नहीं, तुम उसे शैतानका पुतला कहते हो, लेकिन वह शैतान नहीं फरिश्ता है, उसको मेरे पास लाना, मैं उसे इनाम दूँगा, उसको निहाल कर दूँगा। उसने मेरी, मेरे खान्दानकी, और मेरे राज्यके गौरवकी रक्षा की है। इस कुलांगार, दोजखी पिल्लेकी वजहसे हमारे वंशकी मर्यादाकी नाव डूबनेवाली थी, ईश्वरको शत सहस्र धन्यवाद है कि उसने उसे बचा लिया। इस फरिश्तेने मुझे पुत्रघाती होनेसे बचा लिया। अनवर, तुम्हारी वजहसे वह काम आज पूरा हो गया, जिसकी कामना मैं मन ही मन करता था। मगर दुनियाके लिहाजसे, दिखावेकी गरजसे मुझे ढोंग रचना पड़ता था। अनवर तुम क्या इनाम माँगते हो, माँगो, मैं सब कुछ दूँगा।"

अनवर उनकी प्रसन्नता देखकर मन ही मन हैरान हो रहा था। सहसा उसके मनमें यह विचार उठा, कि वे पागल हो गये है। पुत्रशोकने उनका मस्तिष्क विकृत कर दिया है। उसने वहाँसे हट जानेमें ही अपना कल्याण समझा। उसने हाथ जोड़कर कहा—"हुजूर, अभी उस गुंडेको छुडाना बाकी है, फिर हाजिर होऊँगा।"

सर भगवान सिहने प्रसन्नताके साथ कहा—"जरूर जाओ, उस गुंडेको लाओ। मेरा नाम लेनेपर कोई उसे गिरफ्तार नहीं करेगा। मैं अभी फोनसे सब इन्तिजाम किये देता हूँ।"

अनवर अपनी जान बचाकर भागा। निकलते निकलते उसने उनकी प्रसन्नताभरी हास्यध्वनि सुनी। बँगलेके बाहर पहुँचकर उसने कहा—"या तो यह पागल हो गये हैं, और या शैतानसे भी बढ़कर शैतान हैं।" अनवर इसी हैस-बैसमें निकल भागे।

११

रात्रिकी सहज शीतलता पोषके हिम-प्रपातसे दूषित होकर पूँजीपतियोंके कमरोंमें आश्रय पानेके लिए प्रविष्ट हुई, किन्तु उनके विद्युत रेडियेटरोंने उसे वहाँ स्थान नहीं दिया, फिर मध्यम श्रेणियोंके यहाँ जाकर अपने लिए स्थान ढूँढ़ने लगी, परन्तु वहाँ भी गद्दे और रजाइयोंने ठहरने न दिया, तब हारकर श्रमजीवियोंकी शरणमें आयी, उसे वहाँ निराश न होना पड़ा, पयार और चिथड़ोंके बीच वह भी सिकुड़कर उनके साथ शयन करने लगी। एकादशीका चन्द्रमा भी, यद्यपि वह शीतलताका आगार कहा जाता है, उस दिनकी शीतसे कुछ व्याकुल-सा होकर नील नभमण्डलमें पश्चिमकी ओर जहाँ उष्णताके स्वामी सूर्यदेव कुछ घण्टे पहले छिप गये थे, उनको खोजनेके लिए प्रस्थान कर रहा था, किन्तु वायु पगपगपर उसे उलझाकर उसकी व्याकुलताको द्विगुणित कर रहा था। यशोधराने भी अपने कमरेका वातायन उठकर बन्द कर दिया, और शय्यापर लेट गयी। किन्तु उसका मन वहाँ भी स्थिर नहीं हुआ। वह आज संध्यासे ही आकुल थी, उसके हृदयको कहीं भी विश्राम न मिलता था। जितना वह सोनेका यत्न करती उतनी ही नींद उससे दूर भागती थी। उसके मनमें विचारोंका ताँता बँधा हुआ था, वह सोचने लगी—"अब उनको 'दिवाकर भैया' कहकर नहीं पुकार सकती, वह अधिकार तो माधवीने नष्ट कर दिया, और केवल अपने लिए सुरक्षित रखा है। किन्तु वह तो उससे भी निकट तथा प्रिय अधिकार-

पर मुझको प्रतिष्ठित करना चाहती है। क्या मैं उसके योग्य हूँ ? ऐसे देवोपम पुरुषकी सहधर्मिणी होनेकी मुझमें योग्यता, प्रतिभा, और भाग्य है ? वे कितने महान हैं, और मैं कितनी क्षुद्र हूँ। बाल्यकालसे ही उनको जानती हूँ, और तभीसे उनसे प्रेम और भक्ति करती हूँ। उनको सदैव अपना आदर्श माना है, और उन्हींके पदचिह्नोंपर चलनेका मैंने सतत परिश्रम किया है। वे सदासे मेरे आराध्य देव रहे हैं, और अपना मन स्वयं न जानती हुई उन्हींकी पूजामें रत रही।"

"माधवीकी तीव्र दृष्टिसे मेरी अनधिकार चेष्टा छिपी नहीं रही। वह जान गयी कि मैं उसके भाईपर तनमन-प्राणसे विमुग्ध हूँ। जब कभी वह उनकी चरचा मेरे सामने करती तब वह तीक्ष्ण दृष्टिसे मेरी ओर देखती रहती। मैं भी उसका प्रयास समझती थी। अपनी सम्पूर्ण शक्तिसे अपने मनके भावोंको दमन करती, किन्तु नारी, अन्तमें नारी है। प्रेमके सामने वह अत्यन्त निर्बल है। इसके अतिरिक्त नारी दूसरी नारीसे अपना प्रेम-सम्बन्ध कभी गुप्त नहीं रख सकती। माधवीने मेरे हृदयके अथाह प्रेमकी झलक पाकर ही यह सम्बन्ध स्थिर किया है। मेरे माता-पितासे जिद किया है, और अपने माता-पिताको भी अत्यन्त विनयपूर्ण पत्र लिखकर आग्रह किया है। आज पिताजी उसको स्थिर करनेके लिए लखनऊ चले भी गये हैं।"

"वे भी आज दोपहरको अकस्मात् रमईपुरकी ओर प्रस्थान कर गये। भैया भी उनके साथ गये हैं। पहले मैं जान भी न पायी, और वे सहसा चल दिये। क्यों? ठीकसे नहीं जानती। माधवीको भी विशेष रूपसे कुछ ज्ञात नहीं है, वह केवल इतना जानती है कि रमईपुरमें हिन्दू-मुसलिम दंगा होनेकी सम्भावना है, उसीके निराकरणके लिए गये हैं। दंगेके नामसे न मालूम क्यों मेरा मन बार-बार शंकित हो उठता है। इसके पहले मैं इतनी भीरु तो कभी नहीं थी। आज क्या कारण है, कुछ समझमें नहीं आता। रह रहकर मेरा मन अपने आप दुःखित हो जाता है, कुछ अच्छा नहीं लगता। हृदयमें एक हूक-सी उठती है, और मन रोना चाहता है। आज तो मुझे प्रसन्न होना उचित है, चिरसंचित आशा पूर्ण होने जा रही है, किन्तु प्रसन्नता तो मुझसे आज दूर-दूर भागी फिरती है।"

"संध्या समय माधवीने बहुत छेड़खानी की, हँसना और हँसाना चाहा, किन्तु मुझे हँसी न आती थी। वह समझती थी कि मैं हँसी दबानेका प्रयत्न कर रही हूँ, किन्तु वास्तवमें मेरा मन हँसनेकी आज्ञा नहीं दे रहा था। रह रहकर चौंक पड़ती थी, मेरा चौंकना देखकर माधवी हँसती और कहती कि प्रसन्नतासे झूम रही है। उसे क्या मालूम कि मैं किसी विपदकी आशंकासे चौंक रही हूँ। विपद और क्या हो सकती है ? शायद माधवीके प्रस्ताव-को उसके पिता स्वीकार न करें। रानी अम्मा तो अवश्य ही स्वीकार करेंगी। यदि आशंका है तो उन्हींसे है। वे उनसे भी सदा रुष्ट रहते हैं, शायद उसी रुष्टताके कारण पिताके प्रस्तावको ठुकरा दें।"

"अच्छा, यदि उन्होंने यह सम्बन्ध स्वीकार नहीं किया, तब मेरा क्या होगा ? मैं मन-प्राणसे तो उनका वरण कर चुकी हूँ, अपना स्वामी स्वीकार कर चुकी हूँ। फिर मैं क्या करूँगी। क्या आजन्म ब्रह्मचारिणी नहीं रह सकती ? इसके अतिरिक्त दूसरा मार्ग नहीं है, यदि, है, तो केवल आत्महत्याका। यदि माधवीने यह प्रस्ताव न रक्खा होता, तब

भी तो मेरे लिए ब्रह्मचारिणी रहनेके अतिरिक्त और कोई उपाय न था। यदि माधवी पीछे पड़कर मेरा यह गुह्यतम भेद न जान लेती, तो मैं भी अपने जीवनकी अन्तिम घड़ीतक छिपाये रहती। इसका उद्घाटन मैं कदापि न करती। इष्टदेवकी पूजा तो दूर रहकर ही की जाती है, इस पार्थिव शरीरसे उसका साक्षात् ही कब होता है। जितनी मिलनकी आशामें हृदयको आनन्दकी अनुभूति होती है, उतनी मिलनमें नहीं, क्योंकि मिलन तो आशा, तथा तपस्याकी पूर्ति है। पार्थिव मिलन नाशवान है, क्योंकि शरीर नाशवान है, किन्तु आत्मिक मिलन अमर है, क्योंकि आत्मा अमर है। शरीरको नष्ट करनेसे आत्मा शक्तिशाली होता है, और उसके बलवान होनेपर इष्टदेवके रूपमें ब्रह्म प्राप्त होता है, जो अजर है, अमर है, शाश्वत है, जिससे कभी विच्छेद नहीं होता और वहाँ कभी विरह नहीं है।"

इसी समय राजमहलमें एक अस्फुट कोलाहल फैल गया। खटाखट द्वार खुलनेका शब्द होने लगा।

यशोवराकी माताने चिल्लाकर माधवीको बुलाया। उनके कंठस्वरसे विफलता बिखरी पड़ती थी।

यशोवराने माधवीके कमरेका द्वार खुलनेका शब्द सुना, फिर सर्वत्र थोड़ी देरके लिए विकट तथा भयावनी निस्तब्धता छा गयी। यशोवराकी विचारधारा टूट कर विकीर्ण हो गई। उसका हृदय बड़े वेगसे स्पन्दित होने लगा। पौष मासमें भी उसके मस्तकपर पसीनेकी बूँदें झलझला आयीं। वह उठकर बैठ गयी और इस गड़बड़ीका कारण जाननेके लिए अधीर हो उठी। वह पर्यंकसे नीचे उतरी, किन्तु उसके पैर उठते ही न थे, मानों बड़े वजनी निगड़ पड़े हों, अथवा पृथ्वीने पैर पकड़ लिये हों। वह एक कुर्सी पकड़कर खड़ी रही, और घरमें होनेवाली अस्फुट ध्वनि सुनने और समझनेका प्रयत्न करने लगी। सहसा उसके कमरेके सामने बरामदेमें किसीके आनेकी पदध्वनि सुनायी दी। उसके कान खड़े हो गये। आशंकासे उसका हृदय बड़े वेगसे काँपने लगा। उसने बिना किसीके बुलाये हुए आगे बढ़कर द्वारकी साँकल खोल दी, उसके साथ ही किवाड़े सशब्द खुल गये, और भय-विह्वल माधवीने प्रवेश किया। सामने यशोवराको खड़ी देखा, क्षणमात्रके लिए वह रुकी और दूसरे क्षण उससे चिपटकर जोर जोरसे रोने लगी। यशोवराने भी उसको अपने हृदयसे कसकर लगा लिया। उसके नेत्रोंसे अश्रु-धारा स्वतः निकलने लगी। अभीतक जिसको उसने कठिनतासे रोक रक्खा, वह प्रवाह बाँध तोड़कर बहने लगा। माधवीके रोनेका असली कारण न जानते हुए भी उसके हृदयको भासित हो गया कि इस विपत्तिसे दिवाकरका सम्बन्ध है।

माधवीने रोते रोते कहा—"यशो, भैया रमर्दपुरमें बुरी तरहसे आहत हुए हैं। उनके जीवनकी आशा नहीं है। अभी अभी एक घुड़सवार वहाँसे रणजीत भैयाका डाक्टरी सामान लेने आया है, और दीवानजीको मोटरसे लखनऊ जाकर अच्छेसे अच्छा डाक्टर लानेका आदेश भेजा है। यशो, अब क्या होगा। मैं तो लुट गयी।"

यशोवराके सामने वही आया जिसकी आशंकासे वह संध्या समयसे ही परेशान थी। वह स्तम्भित रह गयी। आघातका प्रथम वेग बड़ा दुस्सह होता है। उसकी तीक्ष्णता थोड़े समयमें कम हो जाती है। उसने अपने आँसू पोंछ डाले, और कहा—"मधु, रोओ मत,

यह समय रोनेका नहीं है, कार्यका है। मैं स्वयं लखनऊ जाती हूँ, और डाक्टर विश्वनाथन्-को लेकर कल प्रातःकालके पहले पहले रमईपुर पहुँच जाऊँगी। दीवानजीसे शीघ्र मैं काम करूँगी। तुम घबड़ाओ नहीं, तुम भाई-विहीन नहीं हो सकती, और मैं विधवा नहीं हो सकती। सत्य और अहिंसामें साक्षात् भगवानका वास है। मधु, छोड़ो, मुझे जाने दो। इस समय एक एक पल महा मूल्यवान है, मेरे सोहागकी बाजी दाँवपर लगी हुई है।"

माधवीने कहा—"यशो, मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगी?"

यशोधराने ओवरकोट पहनते हुए कहा—"नहीं, मेरे साथ चलनेमें कोई लाभ नहीं। तुम रमईपुर अम्माके साथ पहुँचो। वहाँ तुम्हारी आवश्यकता है, उन्हें यदि होश आजावेगा, तो तुम्हारी उन्हें आवश्यकता पड़ेगी। मैं जाती हूँ मधु, विश्वास रक्खो, उनका अब बालतक बाँका नहीं हो सकता।"

यशोधरा वायुवेगसे कमरेके बाहर हो गयी। दरवाजेपर मोटर खड़ी हुई थी, दीवान-जी जानेवाले थे कि यशोधराने कहा—"दीवानजी, तुम मधु और अम्माको दूसरी मोटर-से रमईपुर पहुँचाओ। मैं हनुमान सिंहके साथ खुद लखनऊ जा रही हूँ, और प्रातःकालके पहले सीधे रमईपुर पहुँच जाऊँगी।"

दीवानजीको साहस न हुआ कि उसके आदेशकी अवहेलना करें। उसने मोटरका स्टीयरिंग सँभाला और वह वायुवेगसे पीछे धूलका स्तूप छोड़ती हुई लखनऊकी ओर चल दी।

चतुर्थ खण्ड

१

जेलका घंटा बड़ी जोरसे बजने लगा। प्रातःकाल अपनी श्वेत मुस्कानसे कैदियोंके हृदयमें स्फूर्ति भरने लगा और उसने उन्हें दिनभरके कठिन परिश्रमके लिए प्रस्तुत करना आरम्भ किया। आलस्य और निद्रा भी उन जेलकी दीवालोंके अन्तर्गत कैदियोंकी भाँति नियमित जीवन व्यतीत करने पाते हैं। कुछ निश्चित समयके लिए घंटा-ध्वनिके साथ वे जेलमें पदार्पण करते हैं, और फिर उनको बलात् घंटा-ध्वनिके साथ विसर्जित किया जाता है।

जगबहादुर सिंह रात्रिभर मच्छरोंके कारण सो न सका था। मशक-समूहने अपने मधुर निनादसे उसको रात्रिभर अपना नृत्य देखनेके लिए विवश कर दिया था, यदि वह कभी तनिक देरके लिए सो जाता तो निरंकुश वार्डरोंकी भाँति वे उसको अपने डंकोंकी चेतावनीसे तुरन्त जगा देते। घंटा-ध्वनिने उसको उठनेके लिए मजबूर कर दिया, यद्यपि उसकी आँखें उसके साथ विद्रोह और अपनी किरकिराहटसे उसके मस्तिष्कको विकृत कर रही थीं। जेलके अनुशासनके समक्ष उसकी निजकी इच्छाका कोई मूल्य नहीं था। आँखें मलता हुआ वह उठ खड़ा हुआ।

वहाँ शौचादि नैत्यिक क्रियाओंपर भी प्रतिबंध था। एक निश्चित कालके अन्तर्गत उन्हें निवृत्त हो जाना पड़ता था; और दूसरी घंटा-ध्वनिके साथ हाजिरीके लिए लाइनमें खड़ा होना पड़ता था। देर हो जानेपर जेल-अनुशासनके रक्षक अपने मोटे डण्डोंके प्रहारसे उनको सचेत करनेके लिए सदा तैयार रहते थे। पम्पके ऊपर साक्षात् आकुलता देखनेको मिलती थी। एक कमण्डलभर पानी लेनेके लिए लोग एक दूसरेपर गिरे पड़ते थे, और उस पानीकी धार जेलके अनुशासनसे विरक्त होकर क्षीणतर होती जाती थी। जगबहादुर सिंह भी पम्पके पास खड़ा हुआ इस प्रतीक्षामें था कि उसे अवसर मिले, और वह भी अपना कमण्डल भर ले। नरेन्द्र भी पास ही खड़ा हुआ मुँह धो रहा था। चारों ओर विह्वलता, आतुरता परिलक्षित हो रही थी। अनुशासनका घोर पक्षपाती वार्डर अपनी लाठी कंधेसे गुर्राता हुआ डंडा उठाये हुए वहाँ आ गया। कोलाहल स्तम्भित हो गया, कैदी भी स्तम्भित रह गये, जैसे कि वे सारी दुनियाका संचालन उसी मुखारविन्दसे कर रहे थे, वार्डरको [illegible] एक

दूसरेको विद्ध कर रहे थे, धक्का द्वारा एक दूसरेकी गतिविधि [illegible] उसी तरह सहसा अवरुद्ध हो गया जैसे विद्युत बटन उलटा घुमा देनेसे प्रकाश अवरुद्ध हो जाता है। वार्डरको अपनी शक्तिका आभास मिला। गर्वसे उसका सिर उन्नत हो गया। सिर ऊँचा होनेके साथ, उसके हाथका डंडा, जो किसी जादूके डंडेसे कम नहीं था स्वयमेव ऊँचा हो गया और सस्नेह जंगबहादुरकी पीठमें आलाप करने लगा। वह जागा और उसका उष्ण रक्त उबल उठा। वह उत्तेजित अवस्थामें उसकी ओर लपका किन्तु पासमें ही खड़े हुए नरेन्द्रने उसको पकड़ लिया, और धीरेसे कहा—"सावधान, तुम फिर भूल कर रहे हो; अपना लक्ष्य सदा स्मरण रखो।"

वार्डरने उसकी भाव-भंगी निरख ली थी। सरकारके प्रतिनिधिके ऊपर आक्रमण क्या सरकारपर आक्रमण नहीं है? और इतनी शक्तिशालिनी सरकारका प्रतीक हो कर एक तुच्छ, कीटसे भी तुच्छ कैदीका यह साहस जेलके अनुशासनमें शिथिलता प्रगट कर रहा था, जिसको प्रगट करनेके लिए वह कभी तैयार नहीं था। नरेन्द्रकी फुसफुसाहटसे उसने अनुमान किया कि वह जंगबाहादुर सिंहको उत्तेजित कर रहा है, उसके हाथका डंडा दुबारा उठा, और उसने दोनोंको अपनी कठोरता, तथा शक्ति दिखाना आरम्भ कर दिया। भयसे पम्पकी क्षीण धारा भी सहसा बन्द हो गयी,क्यों कि जल भी नियमित काल और नियमित परिमाणमें दिया जाता था। चमत्कारी डंडेके प्रभावसे कैदी भयभीत होकर जहाँ-तहाँ भागने लगे। जेलके अन्दर यदि कोई नियन्त्रण नहीं था, तो वह था वायुपर। पवनदेव सदैव अपने लघु तथा दीर्घ आकारमें सर्वत्र विचरते थे। अनवरत डंडावर्षाका शब्द वायुके वाहनपर सवार होकर इतर कैदियोंको सचेत करनेके लिए भागा। नरेन्द्र और जंगबहादुर सिंह दोनों लकड़ीके लट्ठोंकी भाँति गिर पड़े। वार्डर ऐंठता हुआ अपने कर्तव्यपालनकी रिपोर्ट अपने अफसरोंको देनेके लिए शीघ्रतासे जेलके दफ्तरकी ओर जाने लगा।

वार्डरने जाकर रिपोर्ट लिखायी कि उसके ऊपर दो कांग्रेस-कैदियोंने जिनके नम्बर ७५६ और ९४१ हैं अकस्मात् हमला कर दिया जब कि उसने उनको आपसमें बात करनेसे रोका, क्योंकि दोनों भयानक षड्यन्त्रकारी हैं, और जेल-अनुशासनके विरुद्ध विद्रोह करानेके लिए दूसरे कैदियोंको बहका रहे थे। अपनी आत्मरक्षामें उसको उनपर डंडोंसे प्रहार करना पड़ा। रिपोर्ट पाते ही जेलका दारोगा घटनास्थलपर अन्य चार वार्डरोंके साथ पहुँच कर उनकी परीक्षा करने लगा। चारों ओर कोई कैदी दिखायी न पड़ता था, और सभी आनेवाली विपत्तिसे शंकित होकर अपने अपने कामपर लग गये थे। जंगबहादुर और नरेन्द्र दोनों अचेत पड़े थे। उनके मुँह और नाकसे रक्त प्रवाहित हो रहा था। शरीरके अन्य भाग भी डंडेकी चोटोंसे काले पड़ गये थे। जंगबहादुर अभीतक अनशनकी निर्बलतासे ग्रसित था, और नरेन्द्र भी कोई हृष्ट-पुष्ट नवयुवक नहीं था, जो उन चोटोंको सहन कर सकता। कई डंडेके प्रहार मार्मिक स्थानोंपर पड़े थे, जिससे वे मूर्च्छित हो गये थे।

उनकी शोचनीय अवस्था देखकर दारोगा शंकित हो गया। उसने उस वार्डरकी ओर जिसने प्रहार किये थे देखकर कहा—"रमजान, मैं तुम्हारी रिपोर्टपर विश्वास नहीं करता। इन दोनोंको मैं अच्छी तरह पहचानता हूँ। एक तो वह है जिसने कुछ दिन पहले भूख हड़ताल की थी, और दूसरा वह है जिसके समझानेसे वह हड़ताल समाप्त हुई थी।

९४१ नम्बरका कैदी बहुत शिष्ट और समझदार है। जेलके तमाम नियमोंका अच्छी तरह पालन करता है, अपने कामका 'कोटा' सदैव पूरा करता है, बड़ा हँसमुख है, सबसे मीठा बोलता है। आजतक किसीको उसके विरुद्ध कुछ कहनेका अवसर नहीं मिला है। हाँ, नं० ७५६ का कैदी पहले उद्दण्ड और शरारती था, परन्तु ९४१ नम्बरके साथ रहनेसे वह भी शान्त और सीधा हो गया है। तुम अभी नये भरती हुए हो। इन लोगोंको तुमने व्यर्थ ही, अपना रोआब जमानेके लिए मारा है। मैं इस मामलेको साहबके सामने पेश करूँगा।"

रमजान कुछ शंकित हो गया। वह कहने लगा—"नहीं हुजूर, मैंने अपने कानोंसे उनकी बातें सुनी हैं। वे सरकारके खिलाफ साजिश कर रहे थे।"

दारोगा—"क्या साजिश कर रहे थे?"

रमजान—"नं० ७५६ को जब मैंने मना किया तो वह मेरे ऊपर हमलावर हुआ। उस वक्त नं० ९४१ ने उससे कुछ चुपके-चुपके बातें कीं।"

दारोगा—"अभी तुम कहते हो कि मैंने उनको साजिश करते खुद सुना, अब कहते हो, कि कुछ चुपके-चुपके बातें कीं।"

रमजान—"हजूर, जब दो कैदी बातें करेंगे तो जरूर कुछ साजिशकी बातें होंगी।

दारोगा मुमताज अलीने अन्य वार्डरोंको आदेश दिया कि इन लोगोंको स्ट्रेचरपर उठाकर अस्पताल पहुँचाओ, और रमजानसे कहा—"मैं तुम्हारा बयान लूँगा। यों ही कांग्रेसी अखबार बिना मार-पीट किये नाकमें दम किये रहते हैं, और तुम बे-वजह मारकर हम सबको बदनाम करते हो। बड़े साहबका हुक्म है कि आजकल जेलमें जहाँतक हो अमन रक्खो। विलायतसे कोई बड़ा आदमी यहाँपर सुल्ह करानेके लिए आ रहा है। इस घटनाका हाल यदि कांग्रेसवालोंको मालूम हो गया तो जमीन-आसमान एक कर देंगे।"

अन्य वार्डर स्ट्रेचर ले आये और उनपर जगबहादुर व नरेन्द्रको लिटाकर जेलके अस्पतालकी ओर ले गये। मुमताज अली, जेल दारोगा, अपने साथ रमजानको लिये हुए दफ्तरकी ओर चले गये। रमजानने रास्तेमें उनसे बहुत प्रार्थना की, कि जैसे-तैसे इस मामलेको निपटा दिया जावे, बड़े साहबतक न जाने पावे। वह दारोगा मुमताज अलीकी कमजोरीसे वाकिफ था, क्योंकि उसीके बलसे वह नौकर हुआ था। उसने अपनी जेबसे दस रुपयेका एक नोट निकाल कर उनके कोटकी जेबमें डाल दिया, और हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। दारोगाने दूसरी ओर देखते हुए कहा—"अच्छा, जाओ, चूँकि यह तुम्हारा पहला कुसूर है, इसलिए छोड़ता हूँ, आयन्दा न करना।" रमजान अली सलाम करके चुपचाप चला गया।

२

डाक्टर विश्वनाथजीने दिवाकरके शरीरकी परीक्षा करके कहा—"स्थिति बड़ी गम्भीर है, मुझे बड़ी अद्भुत बात मालूम होती है कि रोगीके शरीरसे इतना रक्त निकल जानेके बाद भी यह जीवित है। इसकी इच्छाशक्ति बहुत बलवान है, जो शरीरकी प्रतिकूल परिस्थितियोंसे संग्राम करती हुई जीवन-शक्तिको बन्द किये हुए है। मुझे विश्वास है कि मैं इसको शीघ्र स्वस्थ करनेमें सफलता प्राप्त करूँगा।"

जगजीत और नरेन्द्रकी समझमें अनायास पानी पड़ा, और उनके नेत्र [illegible]

साथ उनकी ओर उठ गये। करीम, मनोहर, गुलाब, नसीमा, इमामबख्श, रूपकुँवरि आदि जितने भी वहाँ उपस्थित थे, सबको हार्दिक प्रसन्नता हुई। मनोहरकी चौपालमें गाँवके अन्य व्यक्ति बैठे हुए चिन्तित थे। लगभग वहाँ सारा गाँव था। उन लोगोंके रहते हुए उनके राजकुमारका उनके हित-साधनमें आहत होना वे अपने गाँव, और अपने व्यक्तित्व-के लिए बड़ी लज्जाजनक घटना समझ रहे थे। पश्चिमीय सभ्यतासे दूर रहनेवाली गाँवोंकी जनतामें अभीतक सरलता और निष्कपटता दृष्टिगोचर होती है। उनके जीवनमें कृत्रिमता-का प्रवेश अभीतक नहीं हुआ है। उनका अन्तरंग और बहिरंग सदा एक ही-सा रहता है। दिवाकरके लिए वे अपने मन-प्राणसे चिन्तित थे।

दिवाकरकी चोट साधारण नहीं थी। भालेका फल बाँई हँसलीको तोड़ता हुआ गलेके पास स्कन्धपर निकल गया था। यदि प्रहार दाहिनी ओर बाल-बराबर भी आगे बढ़ गया होता तो उसका जीवन-दीप सदाके लिए निर्वाण हो गया होता। मल्लयुद्धका विशे-षज्ञ होनेके कारण करीमको शरीर-विज्ञान तथा नसोंकी जानकारी भी थी। रणजीतसिंह सुशिक्षित डाक्टर था। दोनोंने एक दूसरेको देखा, और दोनोंके नेत्रोंसे गम्भीर चिन्ताके चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे। भालेका फल चार अंगुल चौड़ा था, और आघात लगभग छः अंगुलसे अधिक चौड़ा था। भालेकी लाठी पीठकी तरफ थी, और फल पृथ्वीमें घुस गया था। करीमने रणजीतसिंहसे कहा कि भालेको बाहर निकालना चाहिये, और उसकी भी यही राय थी। करीमने बालककी भाँति दिवाकरको पृथ्वीसे थोड़ा उठा लिया, और रणजीतसे भाला बाहर खींचनेको कहा। रणजीत विशेषज्ञ होते हुए भी शंकितचित्त था। दिवाकरके जीवनका प्रश्न था। उसको इतस्ततः करते हुए देखकर इमामबख्शको आदेश दिया कि वह दिवाकरको थोड़ा-सा ऊपर उठावे, और उसने फलको घावके साथ सीधा मिलाते हुए भाला बाहर निकाल लिया। रक्तस्रोत दूने उत्साहसे उमड़ने लगा। रणजीतको कोई उपाय रक्त बन्द करनेका दृष्टिगोचर न होता था। करीमने उनसे और इमामबख्श आदिको कहा कि दिवाकरको वे मनोहरकी चौपालमें ले जावें, और वह रक्त बन्द करनेवाली किसी जड़ी-बूटीकी खोजमें जंगलकी ओर जा रहा है। यद्यपि सरकारी डेरा जहाँ राजकर्म-चारी आकर ठहरा करते थे, खाली था, किन्तु सुविधाके विचारसे उन लोगोंने मनोहरका घर ही उत्तम समझा था।

रूपकुँवरि, जंगबहादुरकी माँ अभीतक मनोहरके यहाँ रहती थी। वह घर-बार-विहीन पहले ही हो चुकी थी, किन्तु करीम और उसकी स्त्री नसीम तथा मनोहरकी माँ गंगाके अनुरोधसे वह रमईपुरको छोड़कर न जाने पायी थी। दिवाकरको आहत देखकर उसकी प्रतिहिंसाकी भावनाएँ कपूरकी भाँति उड़ गयीं, और सहज स्नेह जो एक सखीके पुत्रके लिए होता है उमड़ आया। उसको जंगबहादुरसे अधिक प्रिय जान कर एक मनसे उसकी सेवा-शुश्रूषामें सन्नद्ध हो गयी।

गुलाब और नसीमने दिवाकरको कुछ भयमिश्रित आश्चर्यसे देखा। गुलाबका हृदय उस अविराम रक्त-स्रावको देखकर एक अद्भुत प्रकारका कम्पन अनुभव करने लगा। न-मालूम कौन-सा अज्ञात आकर्षण उसको उसकी ओर खींचने लगा। दिवाकरको देखकर

उसका मन अपने आप रोने लगता। उसके मनमें आता कि वह एक बार चिल्लाकर खूब जोरसे रोवे, और हृदयका उठता हुआ शोकावेग निकाल दे, किन्तु वह मौन होकर उस पीड़ाको मन ही मन अनुभव कर रही थी। उसके लिए दिवाकर सर्वथा एक अपरिचित व्यक्ति था, आजके प्रथम उसने उसे कभी देखा नहीं था, और न उसके सम्बन्धमें वह कुछ जानती ही थी। उसे स्वयं ज्ञात न होता था कि वह उसके लिए क्यों इतनी आकुल है।

दिवाकरके शरीरसे कितना रक्त निकल गया था, इसका कोई अनुमान न होता था। वह मूर्छित अवस्थामें पड़ा हुआ था, और उसके मुखकी कान्ति उत्तरोत्तर मलीन होती जा रही थी। जीवनके कोई बाह्य लक्षण दृष्टिगोचर नहीं हो रहे थे। मृतकी भाँति वह अवश निस्पंद पड़ा हुआ था! क्षत-स्थानसे रक्त अब भी बह रहा था, जिससे श्वेत चादर लाल हो गयी थी, और बिछौना तर हो गया था।

रणजीतके पास न कोई दवा थी, और न उपचारके शस्त्र थे, जिससे वह आपरेशन करता। इसके अतिरिक्त वह इतना घबड़ा गया था, जिससे उसका सारा चिकित्सा-ज्ञान लुप्तप्राय हो गया था। वह केवल ठंडे जलकी पट्टियाँ क्षत-स्थानपर रखकर निकलते हुए रक्तको बन्द करनेकी चेष्टा कर रहा था। रूपकुँवरि भी दिवाकरके सिरहाने बैठकर उद्विग्न चित्तसे पट्टियाँ बदलनेमें सहायता कर रही थी।

करीम अपने हाथमें पत्तियोंका पुञ्ज लिये हुए वहाँ आया। उसने नसीमको दे पीसकर लानेका आदेश दिया, और रणजीतको आश्वासन दिया कि शायद इन पत्तियोंके लेपसे रक्तस्राव बन्द हो जावे। रणजीतको कोई आपत्ति नहीं थी; दिवाकरका बहता हुआ रक्त रोकना उसका प्रथम अभिप्राय था। यदि उसकी दवाएँ उसके पास होतीं तो वह अवश्य उसे बन्द कर सकता था। किन्तु विलायती दवाओंकी अनुपस्थितिमें वह सर्वथा निरुपाय था। रतनापुरसे अपनी औषधियोंको लाने तथा वहाँपर यहाँकी स्थितिका ज्ञान करा देनेके लिए सवार पहले ही भेज दिये गये थे, और वह बड़ी उत्सुकतासे उनकी प्रतीक्षा कर रहा था।

करीम और रणजीतने उन पत्तियोंका लेप क्षत-स्थानके चारो ओर कर दिया। उसमें इतनी शक्ति थी कि रक्त-स्राव उत्तरोत्तर कम पड़ता हुआ बन्द हो गया। रणजीतने [illegible] करीमकी ओर देखा, उसके पहले उसको वैद्यक औषधियोंपर विश्वास नहीं था, जिसे वह केवल मूर्खोंकी चिकित्सा समझता था। किन्तु जब प्रत्यक्ष उसने उनका प्रभाव देखा तब शंका और भ्रमका नाश होना अनिवार्य था। उसे यह नहीं ज्ञात था कि भारतीय चिकित्साशास्त्रको भी भारतीय आचार्योंने मनन कर इतना सरल कर दिया है जो थोड़े ही परिश्रमसे बहुत गुण प्रकाशित करनेमें समर्थ है, यदि उसका विधिपूर्वक पालन किया जावे। पश्चिमी ज्ञान अभी उस पूर्णताको नहीं पहुँचा है, यद्यपि उसे अपनी उन्नतिका अभिमान अवश्य है।

[illegible] बजे मोटरसे गाड़ी, और रणजीतकी नाना गाड़ी भी वहाँ आ गयीं। [illegible] ज्ञान [illegible] था, और वह इतनी व्याकुल थी कि जिसे [illegible] [illegible] प्रवीण नहीं [illegible]। उन्होंने उसको विश्राम दिलानेकी चेष्टा की, कि दिवा-करकी चोटका अधिक [illegible] नहीं है, किन्तु वह स्वयं देखना चाहती थी। [illegible]

कि यदि उसको इस दशामें दिवाकरको देखनेकी अनुमति दी जाती है, तो कहीं कोई दूसरी दुर्घटना उपस्थित न हो जावे, और एक दूसरा रोगी तैयार हो जावे। माधवी दिवाकरसे मिलनेके लिए आकुल थी, उसको जीवित देखनेके लिए लालायित थी। अन्तमें उसे दूरसे दिखा देनेके लिए उन्हें उसकी प्रार्थना अंगीकार करनी पड़ी। गायत्री और माधवीने दिवाकरको देखा। उसके निष्प्रभ मुखको देखकर माधवी उत्तेजनासे मूर्छित हो गयी। हुआ वही परिणाम जिससे रणजीतको भय था। किन्तु रणजीतके पास उसकी औषधियाँ थीं, अव वह हरएक प्रकारके रोगोंसे लड़नेके लिए तैयार था। माधवीके लिए एक अलग कमरा खोला गया, और उसको होशमें लानेका प्रयत्न किया जाने लगा।

माधवीकी देख-रेखके लिए गुलाव और नसीमकी नियुक्ति की गयी। माधवीके मस्तिष्कमें भय और निराशाकी भावनाओंका हलकम्प उठा था, जिसमें उसकी चेतना-शक्ति लोप हो गयी। उसकी अचेतन अवस्थामें भी वह हलकम्प भूचालकी भाँति उद्वेलित हो रहा था। उसका आन्तरिक ज्ञानकोष जो सर्वदा जाग्रत रहता है, भयमिश्रित भावनाओंसे अव भी युद्ध कर रहा था, इसी कारणसे रणजीतके सभी उपचार निष्फल जा रहे थे और माधवीकी चेतना अपने मार्गपर आती हुई दृष्टिगोचर नहीं होती थी। रणजीत निरुपाय होकर आकाशमें विखरे हुए तारोंको देखने लगे। रणजीतको ज्ञान था कि दिवाकरकी हँसली टूट गयी है, और उसका आपरेशन करना होगा। किन्तु रात्रि-का समय और सामानकी कमी उसे कुछ करनेकी आज्ञा नहीं दे रहे थे। जव उसे मालूम हुआ कि यशोधरा डाक्टर विश्वनाथन्को जो उसके शस्त्र-चिकित्साके आचार्य थे, वुलाने गयी है, उसने तव उनकी प्रतीक्षा करनेमें ही कल्याण समझा। डाक्टर विश्वनाथन् शस्त्र-चिकित्साके विशेषज्ञ थे, और वे अपने इस ज्ञानके लिए अन्तर्राष्ट्रोंमें प्रसिद्ध थे। रणजीतको यह विश्वास था कि उनके आ जानेसे सारी कठिनाइयाँ दूर हो जायँगी और दिवाकर पुनः जीवन प्राप्त करेगा।

प्रभातकालके आगमनके साथ ही यशोधरा उनको लिये हुए रमईपुर पहुँच गयी। यशोधराका हृदय यद्यपि काँप रहा था, किन्तु ऊपरसे वह शान्त थी। साहसी होनेके कारण तथा समयकी परिस्थितिने उसको शान्त और धैर्यचित्त रहनेके लिए वाध्य कर दिया था। वह आशा और निराशासे वरावर युद्ध करती चली आ रही थी। उसे विश्वास था कि वह अवश्य सफलता प्राप्त करेगी। दिवाकरका जीवनदीप निर्वापित कभी नहीं हो सकता। सवसे अधिक विश्वास उसे सत्य और अहिंसापर था, क्योंकि वे भगवानके साक्षात् सत् रूप हैं। सतोगुणका नाश कभी नहीं होता, वह सदा स्थिर रहनेवाला है, अमर है और शाश्वत है। शेष दो गुण तम और रज, शक्तिशाली होते हुए भी सत्की क्रिया तथा प्रतिक्रियाके आघातसे क्रमशः परिवर्त्तित होते हुए अन्तमें उसीमें लीन होते हैं। ब्रह्म-अभिभूत ब्रह्माण्डका ज्ञान सत्य है, और उसकी अनुभूति अहिंसा है। जव मानव अपने सद्ज्ञानके विश्लेषणद्वारा मिथ्या भावनाओंको पराजित करता हुआ जीवनयात्रा करता है, तव वह सत्यकी ओर गमन करता है अथवा सत्यव्रती होता है, और जव ब्रह्मकी

गत्ता ब्रह्माण्डके चर-अचर सभी वस्तुओंमें उसी सत्यज्ञानके द्वारा अनुभव करने लगता है, तब वह अहिंसाव्रती होता है। अतएव ब्रह्मका ज्ञान होनेके कारण सत्य और उस ज्ञान-द्वारा उसकी अनुभूति होनेके कारण अहिंसा, दोनों ही ब्रह्मकी भाँति अजर और अमर और इसी कारणसे सत्य और अहिंसामार्गका पथिक मानव भी सदा निर्भय और निरापद रहता है। ईश्वरीय अथवा सत्-शक्तियाँ, परोक्ष और अपरोक्ष रूपसे उसकी सहायता सदैव करती रहती हैं। इसी ज्ञान और विश्वासके बलसे यशोधराको पूर्ण विश्वास था कि दिवाकरका शारीरिक निपात कभी नहीं हो सकता। ग्रहण सूर्यको सदैव अन्धकार-मय बनानेमें कभी कृतकार्य नहीं होता, उसी प्रकार ऐसी आकस्मिक विपत्तियाँ दिवा-करका जीवन समाप्त करनेमें कभी सफल नहीं होंगी। अग्निमें तपकर स्वर्ण अपनी सहज प्रभा लाभ करता है, वैसे ही सद्ज्ञान सत्यकी प्रखरता आपत्तियोंकी अग्निसे परिशो-धित होनेपर प्राप्त होती है। साधारण रूपसे जैसे प्रचण्ड अग्नि स्वर्णको भस्म करनेमें असमर्थ है, उसी प्रकार भीषण विपत्तियाँ सत्य तथा अहिंसा-व्रतीका जीवन नष्ट करनेमें असफल हैं। यदि औषधियोंके योगसे स्वर्ण भस्म हो जाता है, तो वह कुश्ता भस्म बनकर भी अर्धमृतको जीवनदान करनेमें समर्थ होता है, उसी भाँति दैवयोगसे यदि सत्य तथा अहिंसाव्रतीकी इहलीला समाप्त भी होती है, तो वह महान् बनकर, देवत्व पदपर प्रतिष्ठित होकर अमरत्व प्राप्त करता है।

प्रभातकालकी धवल आभामें डाक्टर विश्वनाथन्ने दिवाकरके शरीरकी परीक्षा की। क्षत-स्थानकी गम्भीरता और रक्तस्राव उन्हें विश्वास दिला रहे थे कि यदि रोगी किसी अज्ञात शक्तिसे अभीतक जीवित है तो आगे अधिक देर होनेपर अवश्य ही प्राणत्याग करेगा। उन्होंने रणजीतकी सहायतासे दिवाकरकी चिकित्सा तुरंत ही आरम्भ कर दी।

यद्यपि वे सभी सुविधाएँ जो डाक्टरी अस्पतालयमें प्राप्त हैं, यहां वर्तमान नहीं थीं किन्तु रहीम और मनोहरके प्रबन्धसे सभी आवश्यक वस्तुएँ उपलब्ध हो गयी थीं, और सफलतापूर्वक क्षतस्थानकी सफाई इत्यादि हो गयी। हँसलीकी हड्डीमें विशेष क्षति नहीं पहुँची थी, और उसके जुड़ जानेकी सम्भावना निश्चित रूपसे थी। जब दिवाकरकी चिकित्सा हो रही थी उस समय यशोधराको माधवीके समीप भेज दिया गया था, यद्यपि वह स्वयं सारा आपरेशन देखना चाहती थी।

डाक्टर विश्वनाथन्ने बाहर निकलकर कहा—"अब अधिक घबरानेकी बात नहीं है। रोगीको शीघ्रसे शीघ्र रक्तदान देना आवश्यक है। वह बहुत निर्बल हो गया है और उसकी प्राणशक्ति भी उत्तरोत्तर क्षीण हो रही है। यदि इस समय उसको किसी व्यक्तिद्वारा स्वस्थ रक्त पर्याप्त मात्रामें मिल जाय, तो प्राणशक्तिको बल मिलेगा, और रोगी शीघ्र ही आरोग्य लाभ करेगा।"

रणजीतने उत्तर दिया—"रक्त मिलना इस स्थानमें अवश्य कठिन है, हाँ, मैं अपना रक्त देनेके लिए तैयार हूँ।"

डाक्टर विश्वनाथन्‌ने मुस्कुराते हुए कहा—"नहीं, तुम्हारे रक्तदानसे काम नहीं बनेगा, वरन्‌ हानि होनेकी सम्भावना ही अधिक है। तुमको तो रोगीके पास चौबीसों घंटे रहना है, घोर परिश्रम करना है, मेरी आज्ञाओंका पालन करना है, ऐसी हालतमें तुम्हारे शरीरसे रक्त लेनेका अर्थ यह होगा कि रोगीकी हत्या करवा दूँ। इस गाँवमें क्या कोई स्वस्थ व्यक्ति अपना रक्त देनेके लिए तैयार नहीं होगा ?"

रणजीतने चिन्तित मुद्रासे कहा—"अपने जीवनको संकटमें कौन डालना चाहेगा ? यदि इनमें शिक्षाका प्रचार होता तो सम्भव था कि वे तैयार भी हो जाते, परन्तु अशिक्षित पुरुषको समझाना जरा कठिन होता है। प्रयास करता हूँ।"

रणजीतने रहीमको बुलाकर सब हाल कहा, और पूछा कि क्या कोई व्यक्ति अपना रक्त दिवाकरके लिए दे सकेगा ?

रहीमने कहा—"मैं इसके विषयमें पूछ-ताछ करता हूँ।"

रक्तदानके प्रश्नने उस छोटी मण्डलीमें चिन्ताकी लहर पैदा कर दी। पहले तो वे यही न समझ सके कि रक्तदान कैसे दिया जायगा, और उनके शरीरसे किस प्रकार रक्त लिया जायगा। वे शंकित होकर एक दूसरेका मुख देखने लगे। जब स्त्रियोंमें इसकी चर्चा फैली तो एक विचित्र आशंकापूर्ण वार्ता चारो ओर चल पड़ी। जब यशोधराने सुना तो वह दौड़ी हुई डाक्टरके पास आकर बोली—"डाक्टर साहब, क्या रक्तदानसे उनका जीवन निरापद हो जायगा ?"

डाक्टर विश्वनाथन्‌ने सस्नेह कहा—"हाँ बेटी, उनकी क्षीण प्राणशक्ति पुनः बलवती हो जायगी। जैसे दीपकका तेल निःशेष हो जानेपर वह बुझने लगता है, और तेल मिल जानेपर वह पुनर्जीवित हो जाता है, उसी प्रकार शरीरमें रक्त पहुँचा देनेसे प्राण-शक्ति पुनः बलवान हो जायगी। इस युद्धमें कितने ही मनुष्य जिनके जीवनकी आशा नहीं रह गयी थी, रक्तदानसे पुनः जीवित हो गये। यह एक नवीन प्रणाली है, इसके सम्बन्धमें क्या तुमने पत्रोंमें नहीं पढ़ा ?"

यशोधराने कहा—"हाँ, पढ़ा जरूर है, परन्तु विशेष रूपसे नहीं जानती। डाक्टर साहब, मैं अपना रक्त देनेको तैयार हूँ।"

डाक्टर विश्वनाथन्‌ने स्नेहसे उसका हाथ पकड़ते हुए कहा—"बेटी, तुम्हारे रक्तसे काम नहीं चलेगा। तुम पहलेसे ही दुबली-पतली हो, और यदि तुम्हारे शरीरसे रक्त निकल जायगा, तो तुम बहुत निर्बल हो जाओगी।"

गुलाब यशोधराके पीछे पीछे चली आयी थी, वह खड़ी हुई उनकी सारी बात-चीत सुन रही थी। उसने ससंकोच आगे बढ़ते हुए पूछा—"डाक्टर साहब, क्या मेरा रक्त आप स्वीकार करेंगे ?"

डाक्टर साहबने प्रसन्न होते हुए कहा—"हाँ, अवश्य। तुम मुझे बहुत स्वस्थ मालूम होती हो, और परीक्षा लेनेके पश्चात्‌ तुम्हारे रक्तसे हमारा काम चल जायगा।"

गुलाबने प्रसन्न होते हुए कहा—"तब मैं तैयार हूँ। आप मेरे शरीरसे जितना रक्त चाहें उतना निकाल लें, और राजकुमारको जीवनदान दें, यही मेरी प्रार्थना है।"

यशोधराने आश्चर्यके साथ गाँवमें बसनेवाली उस ग्रामीण बालिकाकी ओर देखा और क्षणभरके लिए वह उसके रूपको देखकर स्तब्ध रह गयी। अपने जीवनमें उसने ऐसा सौन्दर्य कभी नहीं देखा था। यशोधरा यद्यपि महान् हृदयकी थी, किन्तु उसके हृदयमें न-जानें क्यों एक टीस-सी उठी।

उसने धीमे स्वरमें कहा—"नहीं, तुम्हारे कष्ट करनेकी आवश्यकता नहीं है। हम लोग इसका प्रबन्ध कर लेंगे।"

गुलाबका मुख जो डाक्टरकी स्वीकृतिसे प्रफुल्लित हो गया था, यशोधराके निषेधसे कुम्हला गया। उसने म्लान दृष्टिसे निरुपाय होकर डाक्टर विश्वनाथन्‌की ओर देखा।

डाक्टर साहबने उसकी मार्मिक व्यथाका अनुमान करते हुए कहा—"बेटी, तुम हताश न हो। मेरी दृष्टिमें तुम्हारा ही रक्त रोगीके लिए विशेष उपयुक्त होगा, क्योंकि तुमने स्वेच्छासे अपना रक्त देना स्वीकार किया है। मनुष्यके विचारोंकी छाप उसके रक्तपर अवश्य पड़ती है। तुम्हारे आत्मोत्सर्ग तथा सहायताकी भावनाओंका प्रभाव रोगीपर पड़ेगा, और वह शीघ्र ही अच्छा हो जायगा। अतएव तुमको मेरे साथ लखनऊ चलना होगा, क्योंकि यहाँपर रक्त ग्रहण करनेकी कोई व्यवस्था नहीं है। आज सन्ध्यातक हमलोग वापस आ जायँगे, और तब रोगीके शरीरमें रक्तप्रवेश कर सकेंगे।"

मनोहरने जब यह सुना, तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ।

मनोहरके साथ गुलाब पहले-पहल लखनऊ चलनेकी तैयारी करने लगी।

डाक्टर विश्वनाथन्‌ने मोटरपर बैठते हुए रणजीतसे कहा—"भागवतीकी चिकित्साकी ओर अब ध्यान देना। मेरी औषधिसे उसको होश आनेवाला है। यह समाचार उसको बता देना, इससे उसको शीघ्र लाभ होगा। अब मैं दावेके साथ कह सकता हूँ कि रोगी बच जायगा।"

मनोहर और गुलाबको लिये हुए उनकी मोटर शीघ्रतासे लखनऊकी ओर चल दी।

३

जब भगवान सिंहकी प्रसन्नता क्षणभर नष्ट हो गयी तब उन्होंने दीवान गोपी-नाथके [illegible] समाचार सुने। [illegible] पुनर्जीवित हो गयी थी और दोनों [illegible] पंडित [illegible] और मौलवी [illegible] तक [illegible] किसी जातिके पुरुषोंको अपने कोषमें स्थान न देनेकी प्रतिज्ञा की थी। क्योंकि [illegible] लोगोंके हाथमें आ गये और [illegible] पुरानी [illegible]

सहायता करने लगा। दिवाकरके अच्छे होनेका समाचार भी उनकी मानसिक मलिनता तथा उसके उद्वेगको कम नहीं कर सका। यद्यपि अनवरके मुखसे उसका मरण निश्चित समझकर वे प्रसन्न हुए थे, और उनकी महत्वाकांक्षाओंमें जो काँटेकी भाँति रुकावट डाल रहा था, उसके अपने-आप निकल जानेसे वे किसी सीमातक सन्तुष्ट हुए थे, किन्तु फिर भी पितृस्नेह एक बार चौंककर रोने तो लगा ही था। उन्होंने उसे मानसिक दुर्बलता समझकर उसपर विजय पानेका पूरा प्रयत्न किया, और शारदाको एक शब्द भी उसके आहत होनेके सम्बन्धमें नहीं कहा, और न डाक्टरी सहायता पहुँचाने अथवा ले जानेकी कोई चेष्टा ही की। उसकी ओरसे वे इसी प्रकार निस्पृह रहे जैसे पूँजीपति मिलमालिक अपने मजदूरोंकी ओरसे रहता है। जब दीवान गोपीनाथने दिवाकरकी ओर उनका कोई उत्साह नहीं देखा तो वह चुप रह गया। उसकी समझमें नहीं आता था कि ऐसा कौन-सा अपराध राजकुमारसे हुआ है जिसके कारण वे उसके जीवनकी ओरसे इतने उदासीन हैं। वह एक चतुर और दूरदृष्टिवाला व्यक्ति था। उसे यह भलीभाँति विदित था कि राज्यका भावी उत्तराधिकारी दिवाकर है, और उसके अन्तिम जीवनकी नौकरी उसकी इच्छापर निर्भर रहेगी। यद्यपि सर भगवान सिंहको जो उसके वर्तमान स्वामी थे, सन्तुष्ट रखना वह अपना परम कर्त्तव्य समझता था, किन्तु भावी उत्तराधिकारीको भी असन्तुष्ट करना बुद्धिमत्ता नहीं थी। उसने जब उनको दिवाकरकी ओरसे उदासीन देखा, तो महारानीकी शरणमें जाना उचित समझा। रमईपुरके समाचार सुनकर शारदा व्याकुल हो गयी। दिवाकरको मरणासन्न अवस्थामें सुनकर उसका मातृहृदय आकुलतासे रोने लगा। वह पद-मर्यादा, समय, स्थिति सबको भूल गयी, और उसने निर्भय होकर सर भगवान सिंहके कक्षमें प्रवेश किया। वे उस समय आराम-कुर्सीपर बैठे हुए विचारमें मग्न थे।

शारदाको सहसा वहाँ आयी देखकर वे सब व्यापार तुरन्त समझ गये। उनके मुखपर प्रश्नसूचक दृष्टि थी। शारदाने प्रवेश करते ही पूछा—"गोपीनाथ जो कुछ कहता है, क्या वह सच है ?"

सर भगवान सिंहने उठकर सीधे बैठते हुए कहा—"सत्य होगा ही, तभी तो कहता है।"

शारदाने एक कुर्सीपर बैठते हुए कहा—"घटना हमारे गाँवकी है, और अभी-तक आपको कोई समाचार नहीं मिला ?"

सर भगवान सिंहने नत नेत्रोंसे कहा—"यों ही उड़ती हुई खबर सुनी थी, किन्तु उसपर विश्वास नहीं हुआ।"

शारदाने विचारककी भाँति पूछा—"पता लगानेकी भी कोशिश नहीं की आपने ?"

सर भगवान सिंहके नेत्र कुंचित हो गये और उन्होंने कुछ तीव्रतासे कहा—"यह बद-तमीजी क्या है, क्या मैं यह समझूँ कि आप मुझसे जिरह कर रही हैं ?"

शारदाने नम्र होते हुए कहा—"जिरह नहीं कर रही हूँ, सिर्फ यह जानना चाहती हूँ कि आपका एकलौता पुत्र मरणासन्न अवस्थामें पड़ा हो और आपहीके गाँवमें, और आपको कुछ खबर नहीं हो! आप इस देशपर राज्य करते है, यहाँके गुप्तचर और सी० आई० डी० आपके अधीन हैं, सारे देशकी तुच्छसे तुच्छ घटनाएँ आपके समीप रिपोर्ट द्वारा आती है, और इतनी बड़ी घटना हो जानेपर आपको कोई समाचार नहीं मिला! यही थोड़ा आश्चर्य होता है, और कुछ नहीं।"

सर भगवान सिंहने कुछ अपदस्थ होते हुए कहा—"यह तो मै पहले ही कह चुका हूँ कि इसकी खबर मेरे पास आयी थी, किन्तु इसपर मैने कोई विशेष ध्यान नहीं दिया, क्योंकि यह विश्वास करने योग्य नहीं थी। गोपीनाथके आनेसे अब इसकी पुष्टि हुई है।"

शारदाने गम्भीरतासे पूछा—"तो अब क्या विचार किया है?"

सर भगवान सिंहने सव्यंग्य कहा—"वही तो सोच रहा हूँ। वहाँपर सुरेन्द्रका लड़का रणजीत डाक्टर विश्वनाथन्‌के सहयोगसे उसका उपचार कर रहा है; इससे अब ज्यादा घबड़ानेकी जरूरत नहीं है। मधु वहाँपर है, और तुम्हारी भावी पुत्र-वधू भी विराजमान है। केवल आपकी कमी है, सो आप भी वहाँ अपने लाड़लेके पास चली जायँ।"

शारदने पूछा—"और आप?"

सर भगवान सिंहने उठते हुए कहा—"मैं आज शामको दिल्ली जा रहा हूँ। एक अत्यन्त आवश्यकीय कार्यसे मुझे वायसराय महोदयसे मिलना है।"

शारदाने भी उठते हुए कहा—"हाँ, मैं अभी रमईपुर जाऊँगी। मेरा बच्चा वहाँपर घायल पड़ा है, मेरा जाना आवश्यक है।"

सर भगवान सिंहने भ्रू कुंचित करके कहा—"जरूर, आप जाइये। आपने जो उसको शिक्षा दी है, उसका फल जाकर देखिये। उसके मस्तिष्कमें प्रारम्भसे जिन विचारोंको आपने जन्म दिया है उनका परिणाम जाकर देखिये।"

शारदाने तीव्रतासे कहा—" मैं इसका तात्पर्य नहीं समझी।"

सर भगवानसिंहने कमरेमें टहलते हुए कहा—"इसका तात्पर्य नहीं समझीं? उसके हृदयमें अंग्रेज साम्राज्यके प्रति घृणाके भाव किसने भरे, किसने उसको क्रान्ति-कारी बनाया, किसकी शिक्षासे वह इस रास्तेपर चलता जा रहा है, किसके कारण मुझे [illegible] सरकारके सामने नीचा देखना पड़ता है? किसने उसको [illegible] [illegible] है, [illegible]? आपने या मैंने? [illegible] [illegible] कभी नहीं [illegible], [illegible] [illegible] नहीं [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] किसने [illegible] [illegible] है? आपने या मैंने?"

[illegible]

हैं। देशकी रक्षाके लिए ही क्षत्रियका जन्म होता है। क्षत्रिय-बालकका स्वातन्त्र्यप्रेमी होना उसका जातिधर्म है। मैं क्षत्रियकी सन्तान हूँ, और अपनी सन्तानको भी क्षत्रिय—देशकी आनपर मरनेवाला क्षत्रिय—बनाया तो मैंने कौन अविहित कर्म किया? मैंने उसको पिताकी आज्ञाके विरुद्ध चलनेका कभी उपदेश नहीं दिया और यह मैं दावेके साथ कह सकती हूँ कि उसने कभी पिताकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं किया।"

सर भगवान सिंहने सक्रोध कहा—"मैं पूछता हूँ कि उसने कब मेरी आज्ञाका पालन किया है? उसके एम० ए० पास होनेके बाद मैंने उसको सरकारी नौकरीपर प्रतिष्ठित कराना चाहा, किन्तु उसने नौकरी करना स्वीकार नहीं किया, और आपने भी उसका विरोध किया। मैंने उसको राज-विरोधी संस्थाओंमें भाग लेनेसे सदैव मना किया, परन्तु उसने कब मेरी बात मानी? आज वह एक गुप्त क्रान्तिकारी दलका सदस्य है, जिसका नेता नरेन्द्र जेलमें पड़ा हुआ है। न मालूम कैसे उस दिन हजरत निकल भागे, नहीं तो वे भी आज जेलमें दिखायी पड़ते। वह समझता है कि मैं अपने पिताके नेत्रोंमें धूल झोंककर अपना काम करता रहूँगा, किन्तु उसे नहीं मालूम कि मैंने कई गुप्तचर उसके चारो ओर नियुक्त कर रक्खे हैं, जो उसका पद-पदपर अनुसरण करते हैं। जब हजरत नरेन्द्रके मकानमें, क्रान्तिकारी दलकी सभामें भाग लेने गये थे, मेरा गुप्तचर उनके साथ था। उसने मेरे आदेशानुसार वहाँके पुलिस अधिकारीको उसकी सूचना दी, जिसने तुरन्त ही उस दलको गिरफ्तार कर लेनेका प्रयत्न किया, किन्तु आश्चर्य है कि वह कहाँ छिप गया, नरेन्द्र और उसके दो साथी तो गिरफ्तार हो गये। यह भी अच्छा हुआ कि जो आपके वीर क्षत्रिय सन्तान उस समय नहीं पकड़े गये।"

इस समय उन्होंने उसकी ओर देखा और हँसने लगे, जिससे व्यंग्य प्रतिध्वनित हो रहा था।

शारदाने चकितनेत्रोंसे उनकी ओर देखते हुए कहा—"मैं शपथपूर्वक कह सकती हूँ कि इस सम्बन्धमें मुझे कोई बात ज्ञात नहीं है।"

सर भगवान सिंहकी उत्तेजना किसी अंशमें कम हो गयी थी। उन्होंने कहा—"मैं कब कहता हूँ कि इसमें आपका हाथ है, किन्तु क्या आपने कभी यह सोचा था कि नवयुवकका मस्तिष्क सदैव अविहित और विकृत कार्योंकी ओर जाया करता है? आपके प्रोत्साहनने उसको प्रथम लक्ष्य-भ्रष्ट फिर पथ-भ्रष्ट किया। अब समय स्वातन्त्र्य-प्रेमका नहीं है। हम कभी इस योग्य नहीं हो सकते कि अंग्रेजोंको इस देशसे भगा सकें। उनके राज्यकी जड़ इतनी मजबूत हो गयी है, जिसको शताब्दियोंतक उखाड़ना असम्भव है। उस ओर कोई प्रयत्न करना अपनेको नष्ट करना है। इसके अतिरिक्त हमारा वंश राज्य-भक्तिके लिए सदैव प्रसिद्ध रहा है, इसी कारणसे हम आज इतने समृद्धिशाली हैं। पीढ़ी दर-पीढ़ी हम उन्नति करते आये हैं। मेरी सेवाओंके कारण आज भी सरकार हमें एक दूसरी जागीर देनेके प्रयत्नमें है। हमारे सम्बन्ध उत्तरोत्तर अच्छेसे अच्छे घरानोंमें हो

रहे हैं। हमारी नीति कुछ और है, हमारा ध्येय दूसरोंसे सदा विभिन्न रहा है। तुमने मेरे वंशकी परम्पराके विरुद्ध आचरण किया और मेरी सन्तानको राज्यभक्त बनानेकी अपेक्षा राजद्रोही बनाया। तुमने उसको ऐश्वर्य और विलासकी ओरसे हटाकर त्याग और कष्टसहनकी ओर अग्रसर किया। ऐश्वर्य और विलास मनुष्यकी उग्रता और विद्रोही शक्तिको नष्ट कर देते हैं। तुमने उसके सामने राणा प्रताप, शिवाजी आदि राजद्रोहियोंके उदाहरण रखकर उसकी बुद्धि भ्रष्ट कर दी। तुमने रेशम आदि वस्त्रोंकी ओरसे उसकी प्रवृत्ति हटाकर उसे खद्दर पहनाना आरम्भ कराया। खद्दर पहनना राजद्रोहका प्रथम चिह्न है। जिन जिन वस्तुओंको तुमने ग्राह्य और अच्छा समझा उसको मैंने त्याज्य और निरर्थक करार दिया। मेरा और तुम्हारा मिलाप कहाँ रहा? मैंने उसको विलायत भेजना चाहा, मगर तुमने कहाँ जाने दिया? एक बात हो तो बताऊँ।"

राजा भगवान सिंह ठहर गये। शारदाने उनकी ओर भयमिश्रित कौतूहलसे देखा। उसने स्वप्नमें कभी यह विचार नहीं किया था कि उनका ऐसा दृष्टिकोण है। क्या वह अपने पतिको अभीतक समझ नहीं पायी थी?

उन्होंने थोड़ी देर बाद फिर कहना आरम्भ किया—"रानी, यह मैं पहले ही कह चुका हूँ कि तुम्हारा मार्ग दूसरा है, और मेरा दूसरा। हम दोनों कहाँ मिलते हैं, यह मैं नहीं जानता। मैं तो ऐसे पुत्रको त्याग देना चाहता हूँ, किन्तु क्या करूँ कानून आज्ञा नहीं देता। मैं नियमानुसार उसको राज्याधिकारसे वञ्चित नहीं कर सकता। मेरे सारे कामोंमें वह विघ्न डालता फिरता है। रियायाको राजद्रोही बननेका उपदेश देता है। [illegible] उसको बचानेके लिए मैंने उसमें फूटका बीज बोना चाहा, किन्तु आपके दुर्भाग्यसे वहाँ भी पहुँच गये और मेरी सारी चालोंकी मेहनत मिट्टीमें मिला दी। मुझे तो पद-पदपर उनके कारण लज्जित, लाञ्छित और अपदस्थ होना पड़ता है। मैं तो ऐसे पुत्रका मुख देखना भी नहीं चाहता। इसीलिए मैं उसकी ओरसे उदासीन हूँ। उसकी ओरसे मुझे कोई प्रेम नहीं है। तुम्हारे बहुत कहनेपर आज मैंने स्पष्ट कह दिया। तुम भी [illegible] हो, जो चाहो कर सको। किन्तु साथ ही यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यदि इसमें तुम [illegible] कठोर [illegible] पड़ेगा। [illegible]

[illegible]

[illegible]

४

इधर कई दिनोंसे साँई अब्दुल गनीका कहीं पता नहीं था। शाही मसजिद उनके बिना सूनी देख पड़ती थी। उस दिनसे उसको किसीने देखा ही न था। उसका ताजिया तो दूसरे दिन और ताजियोंके साथ दफन कर दिया गया था, किन्तु उसकी गन्धतक किसीको नहीं मिल रही थी। एक टांग होते हुए वह कितनी शीघ्रतासे वहाँसे अन्तर्धान हो गया, इससे सबको आश्चर्य था। गाँववालोंमें अनेक प्रकारके विचार फैले हुए थे, और वह, उनके वादविवादका एक विशेष विषय बन गया था।

ईदू भी रमईपुरके किसानोंमेंसे एक था। उसके खेत थोड़े ही थे, और इधर साँईके सम्पर्कमें आनेसे कुछ आलसी हो गया था, क्योंकि उसको अनवर मौलवीके द्वारा आर्थिक सहायता मिल जाती थी, और नशा करनेका भी पूरा प्रबन्ध हो गया था। नेता बननेकी धुन उसके मस्तिष्कमें सवार हो गयी थी, इसलिए वह खेतीकी ओर विशेष ध्यान नहीं देता। उसकी स्त्री अख्तरीने, जिसका अपभ्रंश "अखिया" था, उसको पहले बहुत समझाया, किन्तु नशेकी झोंकमें वह उसपर जब प्रहार करने लगा, तब वह उससे कुछ कहना सुनना छोड़कर स्वयं खेती करनेके लिए अग्रसर हुई। ईदू यही चाहता था, वह भी निश्चिन्त होकर हिन्दुओंसे लड़नेके लिए अपनेको सन्नद्ध करने लगा। किन्तु जब दिवाकरके बलिदानसे पुनः हिन्दू-मुसलिमऐक्य स्थापित हुआ, तो ईदूके सामने अन्धकार था। घरसे वह अपना सम्बन्धविच्छेद कर चुका था, और उसके सहायक सरपरस्त साँई भी कहीं अन्तर्धान हो चुके थे। साँईके साथ वह भी गायब हो गया था। अकस्मात् आज वह मन-ही-मन अनेक तर्क-कुतर्क करता हुआ, श्यामली सन्ध्याके अन्धकारमें अपने घर पहुँचा,और चौपालके एक कोनेमें सिकुड़कर बैठ गया। दो घड़ी रात गये, अखिया अपनी एकमात्र संतान जमालको गोदमें लिये बैलोंको हाँकती हुई घर पहुँची, और बैलोंको बाँधकर जब वह घरका ताला खोलनेके लिए अग्रसर हुई तो एक कोनेमें मनुष्याकृति देखकर वह पहले कुछ डरी, किन्तु थोड़ी देरमें साहस एकत्रित कर उसने कठोरतासे पूछा—"कौन है, जो चोरोंकी तरह यहाँ बैठा है? अकेली औरत जानकर क्या घर लूटने आया है?"

उसके कर्कश स्वरने ईदूके नशेमें एक कम्पन पैदा किया, और उसको अपनी दशाका किञ्चित् ज्ञान हुआ। उसने घरघराते हुए कण्ठसे कहा—"अरे मैं हूँ, जमालकी अम्मा।"

अखियाने उसके कण्ठस्वरसे उसे पहचानकर कहा—"अच्छा, तुम हो! तुम्हारा यार साँई कहाँ गया? क्या उसने अपनी कबरमें तुमको जगह नहीं दी, जो यहाँ फिर आये हो?"

ईदूने सकपकाते हुए कहा—"अरे, तुम तो झगड़ा करने लगी! तुम्हारे डरसे मुझे अब गाँव बिल्कुल छोड़ना पड़ेगा।"

अजियाका क्रोध उमड़ आया। उसने तीव्रतासे कहा—"बहुत अच्छा है। गाँव तो छोड़कर ही गये थे, अब यहाँ क्या जख मारने आये हो? जो अपने भाइयोंसे बैर करेगा, उसे गाँव क्या मुल्क छोड़ना पड़ेगा। अगर ये हिन्दू पड़ोसी मेरी मददपर खड़े न होते तो अबतक मेरी हड्डी भी ढूँढ़े न मिलती। मुझको तो इनके साथ जीना मरना है। मेरे सुख-दुखके यही साथी हैं। मनोहर भैयाने मेरी और जमालकी बीमारीमें धरती आसमान एक कर दिया। गुलाबीने सारी रातें आँखोंके बाहर निकाली, और मेरा गू-मूत उठाया। हम दोनों पसलीकी बीमारीमें फँसे हुए जिन्दगीसे बाजी लगा रहे थे, और तुम साँईके साथ बैठे गांजा पीकर उन्हींके नाशके बीज बो रहे थे। मैं तुम्हारे लिए मर चुकी हूँ, अब यहाँ आनेका कोई काम नहीं है।"

दूल्हूका नशा उतर गया था। वह बड़ी दीन दृष्टिसे उसकी ओर देख रहा था। पश्चात्तापकी मूर्ति बना हुआ बैठा था। कुछ बोलनेका उसे साहस न होता था।

अजिया फिर बोली—"तुम मुसल्मान बनते हो, लेकिन ईमान तुम्हारा भ्रष्ट हो चुका। मेरे परदादा एक बड़े मौलवी थे, बारह-बारह कोसतकके लोग उनको बुलाने आया करते थे। वे कहते थे कि हिन्दू-मुसल्मानधर्म अल्लाहकी दोनों आँखें हैं—एक दाहिनी और एक बायीं—तभी हिन्दू दाहिनी तरफसे लिखते पढ़ते हैं, और मुसल्मान बायीं ओरसे। हमारी सात पीढ़ियां साथ रहते, खाते-पीते बीत गयीं, और अब नये अनोखे तुम पैदा हुए, जो अपने भाइयोंसे लड़नेवाले। अनवर मौलवी तो तुम्हें रोटियां नहीं खिलाता। जबतक उसका मतलब था, तबतक तुमको उल्लू बनाये हुए रोटी खिलाता था, अब जब उसका मतलब निकल गया, तो साँई और अनवर दोनों तुमको छोड़कर चलते बने। अब भूखे मरने लगे तब घर सूझा है। जाओ मेरे घरमें रोटी नहीं है।"

दूल्हूको बोलनेका साहस न होता था। वह गर्दन नीची किये चुप बैठा था।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

का मर गया, अब तो यह मनोहर भैया और गुलाबी बहनका नयनतारा है। जिन्होंने उसे जिलाया है वह उन्हींका है। तुम्हारे छूनेसे उसे फिर छूत लग जायगी। अब ज्यादा प्रेम न दरसाओ, राखसे ढँकी हुई चिनगारी न उघारो। अगर भूख लगी हो तो सवेरेकी दो रोटियाँ रक्खी हैं, खा लो और चुपचाप सो जाओ, सवेरे जहाँ मन आवे, चले जाना।"

अखियाका तीव्र कण्ठस्वर सुनकर पड़ोसके दो एक पुरुष-स्त्री वहाँ आ गये और उत्सुकतासे उनकी कलहका आनन्द लेने लगे। ईदू उनको देखकर और अधिक लज्जित हो गया, और अखिया उतनी ही प्रचण्ड।

उनको अपना सहायक पाकर वह कहने लगी—"देखो रमजानी दादा, आज इतने दिनोंमें घर आये हैं, इनसे कहो न कि वहाँ जायँ, जहाँ साँई भाग गया है। इतने दिनों-तक उसी लँगड़ेके साथ घूमते फिरते थे, अब वहाँ रोटीका ठिकाना नहीं लगा, तब जमालाको खिलाने आये हैं। मैं हरगिज इनको घरमें नहीं रख सकती।"

रमजानीने उसको शान्त करते हुए कहा—"जो हुआ सो हुआ, अब गड़े मुर्दे उखाड़नेसे होता ही क्या है? अकेले ईदू ही क्यों, साँई और अनवर मौलवीने हम सबको भड़का दिया था। न-मालूम उन लोगोंने क्या जादू कर दिया था, जो हमारी अकल निकल गयी, और उसके गुलाम हो गये। उसके कहेपर नाचने लगे। हमारे बाप-दादा सभी तो हिन्दुओंके साथ खेलते, झगड़ते, हँसते-रोते मर गये, ऐसी नौबत तो कभी नहीं आयी थी। मगर शुक्र है हमारे राजकुमारको, अपना खून देकर हमारा मिलाप कराया है। खुदा उनकी जिन्दगी हजार बरस करे, उनपर खुदाकी रहमत हो, और उनको उठा कर खड़ा करे। अगर खुदाको उनके बदलेमें किसीकी जान लेना मंजूर हो तो हम सब उनपर कुर्बान होनेके लिए तैयार हैं। ऐसा बेलौस आका बड़ी किस्मतसे मिलता है।"

अखियाने तिनककर कहा—"उनकी जानपर आफत लानेवाले यही तो हैं। अब कैसे भेड़की तरह सीधे बैठे हैं। उस दिन जोमपर थे। कुल्हाड़ा लेकर पीपल काटते थे। वहीं ब्रह्मराक्षस गला दबा देता तो सब हेकड़ी निकल जाती। अगर गाँवके मुसलमान और अनवर मौलवी यह झगड़ा न करते तो भला वे क्यों यहाँ आकर उस गुंडेसे मारे जाते। अल्लाहको इस गाँवकी लाज रखना मंजूर था, जो वे बाल-बाल बच गये, नहीं तो इस गाँवका बच्चा-बच्चा सात पुश्ततक दुनियांको मुँह दिखाने काबिल नहीं रहता। तभी तो मैं इनका मुँह देखना नहीं चाहती। रमजानी दादा इन्हें समझा दो कि यहाँ इस घरमें और गाँवमें न रहें। शहरमें जाकर किसी मिलमें भरती होकर अपना पेट पालें। तुम लोगोंका आसरा बहुत है, मेहनत मजदूरी करके अपना और जमालाका पेट किसी न किसी तरह पाल लूँगी। अगर ये यहाँ रहेंगे तो फिर मुझे किसी कुएँ तालाबमें डूबकर मरना पड़ेगा।"

ईदूने बड़ी दीनतासे रमजानीकी ओर देखा, और कहा—"रमजानी दादा, तुम सच सच कहना। क्या अकेला मैं ही कुसूरवार हूँ? और सब लोग तो घरमें रहते हैं, ...?"

अखियाने गर्जकर कहा—"खबरदार, मेरे जमालाकी कसम मत खाना। एक बार तुम उसकी कसम झूठी कर चुके हो, जिससे वह मरते मरते बचा है। अब उसकी झूठी कसम करके उसको बिल्कुल ही मारना चाहते हो? तुम्हारे साथ घर करते मुझको बीस साल बीत गये, क्या मैं तुम्हें पहचानती नहीं? घरमें घुसनेके लिए, और हम लोगोंको बेवकूफ बनानेके लिए झूठी कसम खा रहे हो। नशेबाजोंकी कसमका क्या एतबार।"

रमजानीने बीचमें पड़ते हुए कहा—"ईदू भाई, तुमको अपने बच्चेकी कसम खाना ठीक नहीं। कसम खाओ या न खाओ, मुझे यकीन है कि अब तुम गाँजा नहीं पी सकते। नशेकी कोई चीज हमारे गाँवमें किसी तरह नहीं घुस सकती। हमारे यहाँ पंचायतीराज कायम होने जा रहा है। राजकुमार जहाँ अच्छे हुए, वे हमारे यहाँ पंचायत बना देंगे। सारा इन्तिजाम पंचायतसे हुआ करेगा। तब कोई नशा हमारे गाँवकी हद्दमें नहीं आ सकता, नशेका पीनेवाला हमारे गाँवमें नहीं रह सकता।"

ईदूने साहसपूर्वक कहा—"फिर भी मैं कसम खाता हूँ खुदाको हाजिर नाजिर समझकर, कि मैं आजकी रातसे कभी किसी दिन गाँजा या कोई दूसरा नशा नहीं करूँगा।"

अखियाने सन्तुष्ट होते हुए कहा—"और कल दिनको सारे गाँवके सामने अपनी गलती जो तुमने पीपल काटनेके लिए हाथ उठानेमें की थी, माफी माँगोगे, और मनोहर भया व गुलाबी बहनके बारेमें जो तुमने तरह तरहके अपवाद लगाये हैं, उनके पैरोंपर गिरकर उनसे भी माफी माँगोगे।"

ईदूने सहर्ष कहा—"क्यों नहीं? गुनाहको कुबूल कर और माफी माँगनेपर खुदा भी माफ करता है, तब वे क्यों न करेंगे? क्या जमाला तेरा ही है, मेरा नहीं? जब उन्होंने तेरी और जमालाकी जान बचायी है तब इस सलूकके लिए जितना भी करूँ थोड़ा है।"

ईदूकी प्रतिज्ञा सुनकर रमजानी और दूसरे पड़ोसी चले गये। अखियाने मुस्कुरा कर कहा—"अच्छा, अब जमालाको खिलाओ, मैं रोटियाँ बनाती हूँ।"

ईदू जमालाको लेकर चूमने लगा, और अखिया रोटी बनानेका प्रबन्ध करने लगी।

५

माधवीको यद्यपि उसी दिन होश आ गया था, और अपने पास यशोधराको देखकर उसके शोकका भार कम हो गया था, किन्तु पूर्ण आरोग्यता उसने अभीतक लाभ नहीं की थी। आज कई महीनोंसे वह अपने भाईके लिए दुखितहृदय थी। पिता और पुत्रके मध्य जिस बवण्डरका उठना कई वर्ष पूर्व आरम्भ हो चुका था, वह अपनी उत्कर्षता-पर पहुँचकर उनके स्नेहको नाश कर चुका है इसको वह अपनी तीक्ष्ण दृष्टिसे लक्ष्य कर रही थी। यह तो सिद्धान्तकी लड़ाई थी, और उसे आशा थी कि इसका विष कदापि उनके सहजवात्सल्यको सुखा नहीं सकता, किन्तु उसकी धारणा फलवती होती दिखायी नहीं

पड़ती थी। इसके विरुद्ध उसे ऐसे लक्षण प्रतीत हो रहे थे कि उसके घरमें दो दल स्पष्ट हो गये हैं, एक पिताका और एक भाईका। उसके पिता उसको अपने दलमें रखना चाहते थे, किन्तु वह तो अनजानमें घटनाचक्र और सहज स्नेहके कारण भाईके दलमें सम्मिलित हो गयी,इससे वह भी अपने पिताकी क्रोध-भाजन हुई है। उसकी माँ निष्पक्ष रहना चाहती है, किन्तु निष्पक्ष होते हुए भी उसकी स्थिति ऐसी है जिससे उसके हृदयपर दोनों दलोंके प्रहारोंका सारा प्रभाव समान भावसे पड़ता है। माधवी इस कलहके परिणामको भविष्यके अस्पष्ट रूपरेखामें जाननेके लिए विकल हो उठी।

यशोधराने जब वहाँपर रूपकुँवरिको देखा, तो वह शंकित हृदयसे उसकी ओर देखने लगी। कल्याणपुरके राजमहलकी दुर्घटना उसको स्पष्ट याद आ गयी। रूपकुँवरिने उसके हृदयका भाव समझकर कहा—"राजकुमारी, मनुष्यजीवन विविध घटनाओंका केन्द्र है, किन्तु उनमेंसे कितनी ऐसी होती है, जिनका सूत्रपात भयंकरतासे होता है, और परिणाम सदा शुभ होता है। यद्यपि मेरे पति व पुत्रको राजा साहवने जेल भिजवाया है, हमारी सारी विपत्तिके कारण वही हुए हैं, किन्तु कुँवर और वाईजी तो सर्वथा निर्दोष हैं। मातृहृदय पुत्रशोकसे अभिभूत था, इससे ज्ञानशून्य था। इसके अतिरिक्त यह भी मुझे नहीं ज्ञात था कि ये दोनों मेरी वाई लालजीकी सन्तान हैं। मैं अपने जीवनसे भी निराश हो चुकी थी, उसी निराशावस्थाकी पराकाष्ठामें मैंने राजकुमारीकी हत्या करके अपना प्रतिशोध लेना चाहा। मैं ज्ञानशून्य थी, विक्षिप्त थी, किन्तु ईश्वर तो वहीं था, उसने मेरी सहायता की, और मेरे हाथसे वह अपकर्म नहीं होने दिया। मैं मित्रघातके अपराधसे वाल-वाल वच गयी और जवसे इस गाँवमें आयी हूँ,तवसे मेरा तो दृष्टिकोण ही वदल गया है। प्रतिशोध हत्यामें नहीं, क्षमामें है। कोई अदृश्य शक्ति घटनाओंका परिचालन करती है, और यदि मनुष्य अपनेको कर्त्ता निर्धारित कर उसमें भाग लेता है तो उसका परिणाम उसे भोगना पड़ता है, और यदि संचालक शक्तिका विरोध न करके, घटनाओंको उसीके अनुसार घटने दे तो जिसके द्वारा हानि होती है, वही कालान्तरमें लाभप्रद हो जाती हैं। क्रियाकी प्रतिक्रिया अवश्य होती है। क्रिया होनेपर प्रतिक्रियाकी प्रतीक्षा धैर्यसे करनी चाहिये। प्रतिक्रियाके विलम्व होनेपर, अधैर्यके कारण यदि मनुष्य स्वयं क्रिया आरम्भ कर देता है, तव प्रतिक्रियाके सहज मार्गमें बाधा उत्पन्न होती है, और अपनी क्रियाकी प्रतिक्रिया आरम्भ हो जाती है जिसका परिणाम कभी शुभ और कल्याणप्रद नहीं होता।"

यशोधराने कोई उत्तर नहीं दिया। उसका सन्दिग्ध मन उलटफेर करने लगा। रूपकुँवरिने उसकी धारणाको अनुमान करके कहा—"राजकुमारी, आपको मेरे ऊपर विश्वास नहीं होता! किन्तु अहिंसात्मक वातावरणमें रहनेसे सत्य ही मेरा दृष्टिकोण परिवर्त्तित हो गया है। मेरे हृदयमें अव तो राजासाहवके प्रति भी विद्वेष नहीं है। अहिंसाका अर्थ ही है किसीके प्रति हिंसा, द्वेष न रखना। शत्रुको मित्रकी श्रेणीमें रखना। शौर्य और वीरत्व शत्रुको दण्ड देनेमें नहीं है, वरन् उसको क्षमा करनेमें है, उसको मित्ररूप

माननेमें है। सच्चा सिपाही वही है जो अपने स्वार्थ तथा कुभावनाओंपर विजय प्राप्त करे, न कि पाशविक बलसे शत्रुको परास्त करे और अपने स्वार्थकी सिद्धि करे। पाशविक बल प्रतिद्वन्द्वीमें भी पाशविक प्रवृत्तिको जन्म देता है, और शंका तथा सन्देह मानवकी पाशविक प्रवृत्तियोंकी उत्तरोत्तर सृष्टि करते रहते हैं, जो क्रिया तथा प्रतिक्रियाके रूपमें अनन्त होते जाते हैं, और शान्ति, जो सौख्यका मूल है, कभी प्राप्त नहीं होती। यह मैं स्वीकार करती हूँ कि पाशविक बल थोड़े समयके लिए विजय प्राप्त कर सकता है, किन्तु वह शान्ति स्थापित नहीं कर सकता। हिटलर आज पाशविक बलके कारण संसारको पददलित कर रहा है, किन्तु उसका पतन निश्चय है। उसके प्रतिद्वन्द्वी जहाँ उससे अधिक पाशविक बल संचय करनेमें सफल हुए, वहीं उसका मरण निश्चय है। इस युद्धके पश्चात्, हिटलर-के परास्त होनेके पश्चात्, क्या संसारमें शान्ति स्थापित हो सकेगी? सन्देह ही नहीं, वरन् निश्चय है कि वह शान्ति न होकर विराम-सन्धि होगी, और तीसरे महायुद्धके आरम्भ होनेकी भूमिका होगी। इस विराम-कालमें विजयी राष्ट्र एक दूसरेसे लड़नेके लिए पुनः बलसंचय करेंगे, और थोड़े ही कालमें युद्ध-रत होंगे। यह क्रिया-प्रतिक्रिया उस समयतक चली जायगी जबतक संसारसे पाशविक बल नष्ट न हो जायगा, और मानव अपनी आदिम अवस्थापर न आ जायगा।"

यशोधराने उसकी ओर देखा, और उसके आननपर एक स्वर्गीय ज्योतिका अनु-भव किया। उसके मुखसे हठात् निकल गया—"मौसी, पहले मैंने तुमको पिशाचिनी समझा था, किन्तु अब तो तुम्हें देवी मानना पड़ेगा।"

रूपकुँवरिने उसके सिरको चूमते हुए कहा—"राजकुमारी, मैं तो वही हूँ, किन्तु रहीम भैयाके संसर्गने मुझे तुम्हारी दृष्टिमें 'मौसी' और 'देवी' बना दिया है। किन्तु तुम मुझको पिशाचिनीरूपमें ही देखो, और वही समझो, इसमें मेरा कल्याण है। यह मुझे सदैव सतर्क करके अपने धर्ममार्गपर रखकर दृढ़ता प्रदान करेगा।"

इसी समय गुलाबीने आकर कहा—"कल्याणपुरसे दीवान साहब आये हैं। राजकुमारीसे मिलना चाहते हैं।"

यशोधरा शीघ्रतासे माधवीके कमरेकी ओर चली गयी।

रूपकुँवरिने गुलाबको हृदयसे लगाते हुए कहा—"गुलाब, तेरा जन्म सार्थक हुआ, तूने रक्तदान देकर राजकुमारके प्राणोंकी रक्षा की है, इसके लिए मैं भी तुम्हारी कृतज्ञ रहूँगी। हमारी रानी मेरी बाल्यसहेली है। जन्मसे लेकर विवाह पर्यन्त हम दोनोंने साथ-साथ जीवन व्यतीत किया है। उनकी अनुपस्थितिमें उनके बच्चोंकी रक्षाका भार मेरे ऊपर है। तुम्हारे साहस और त्यागके कारण ही राजकुमार अच्छे हो रहे हैं। यद्यपि उन्हें चेतना अभीतक नहीं आयी है, किन्तु डाक्टरोंका कथन है कि वे निरापद हैं और शीघ्र ही आरोग्य लाभ करेंगे।"

गुलाबने संकोचके साथ कहा—"मैंने किसीपर अहसान नहीं किया है, केवल अपना कर्त्तव्य पालन किया है बुआजी! अतिथिकी सेवा करना प्रत्येक मनुष्यका धर्म

है और जो आपद्ग्रस्त हो उसकी सहायता करना मानवधर्म है। मेरे शरीरसे कुछ रक्त निकल जानेसे मेरी कोई हानि नहीं हुई, वरन् अतिथिको जीवन-लाभ हुआ। बुआजी, मुझे तो रक्त निकलवानेमें जरा भी वेदना नहीं हुई, और न कोई निर्बलताका ही मैंने अनुभव किया। बुआजी, जब वे उठ खड़े हों, तब मुझे वास्तविक प्रसन्नता मिलेगी।"

रूपकुँवरिने दृढ़ स्वरमें कहा—"बेटी, वे अवश्य अच्छे होंगे। अहिंसा और सत्य-पथके अनुगामी सैनिकका पतन कभी नहीं होता। ईश्वरीय शक्तियाँ उसकी पग-पगपर रक्षा करती हैं। ईश्वरके शान्त रूपका दिग्दर्शन इसीके द्वारा होता है अथवा यही उसके शान्त रूप हैं। शान्त रूप ही चिरस्थायी रूप है, और उसीकी कामना समग्र ब्रह्माण्ड करता है। मानवजातिका वह अन्यतम लक्ष्य है। शान्तिकी स्थापनामें ही मनुष्यजाति सदा प्रवृत्त रहती है। सच्ची शान्ति अहिंसा और सत्यके द्वारा ही स्थापित हो सकती है। अहिंसा और सत्यका पुजारी शान्तिका पुजारी होता है। उसके हृदयमें उग्रताका जन्म ही नहीं होने पाता। जहाँ उग्रता नहीं है वहाँ अत्याचार नहीं है, अधर्म नहीं है और धर्मका नाश कभी नहीं होता। शान्तिरक्षाके प्रयत्नमें दिवाकर आहत हुआ है, तब क्या भगवानका शान्त रूप उसकी रक्षा नहीं करेगा? अपने भक्तका नाश हो जाने देगा? तब भगवानका वह वचन—'न मे भक्तः प्रणश्यति' क्या केवल कल्पना ही प्रमाणित होगा?"

गुलाबका कुम्हलाया हुआ मुख नव आशाकी उज्ज्वलतासे दीप्त हो गया। उसे विश्वास होने लगा कि दिवाकरकी जीवन-लीला समाप्त नहीं हो सकती।

उसने सन्तुष्ट होकर कहा—"मन तो मेरा भी यही कहता है, बुआजी! उनको देखकर मेरे मनमें न जाने कैसी वेदना उठती है, जिससे रोनेकी इच्छा होती है।"

रूपकुँवरिने हँसकर कहा—"अभीतक तुम्हारा लड़कपन है। तुमने रक्त निकलते कभी नहीं देखा। मानसिक दुर्बलतासे ऐसा होता है। परन्तु तुम तो क्षत्रिय-बाला हो, रक्तके साथ खेलना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। यह दुर्बलता तुम्हें शोभा नहीं देती। दीवान साहब क्यों आये हैं? सारे अनर्थका मूल यह दीवान है। इसीके कारण हिन्दू-मुसलिमयुद्ध घटित होने जा रहा था। जहाँ इसके चरण जायँगे वहाँ केवल विपत्तिकी सृष्टि करेंगे। चलो, माधवीके कमरेमें चलकर देखें कि अब वह क्या करने आया है।"

रूपकुँवरि और गुलाब दोनों माधवीके कमरेकी ओर चिन्तित चली गयीं।

६

दीवान गोपीनाथ शारदाका पत्र लेकर आये थे। सर भगवान सिंह उसी दिन शामको दिल्ली चले गये थे, और शारदाको उसके इच्छानुसार कार्य करनेके लिए आदेश दे गये थे। उसकी मानसिक अवस्थाका अनुमान करनेमें विकलता स्वयं असमर्थ थी। उसके सामने अब यह स्पष्ट हो गया था कि वह पति और पुत्र दोमेंसे किसी एकको चुन ले। उधर पुत्र मुमूर्षु अवस्थामें पड़ा हुआ मृत्युके साथ खेल रहा था, और इधर पति अपनी महात्वाकांक्षाओंकी वेदीपर कुटुम्बका बलिदान करनेके लिए कटिबद्ध थे। एकको ग्रहण

करनेमें दूसरेका त्याग अनिवार्य था। उसे ईश्वरपर विश्वास था, दैविक शक्तियोंपर विश्वास था। यद्यपि मातृहृदय उसका छटपटा रहा था, किन्तु उसका आन्तरिक मन यह भी स्पष्ट बता रहा था कि दिवाकरकी जीवन-हानि नहीं होगी। उसे कभी कभी यह भासित होता कि यह यन्त्रणा उसको रूपकुँवरिके प्रति किये गये अनर्थकी प्रतिक्रियाके रूपमें मिल रही है। पतिके कर्मके लिए स्त्री भी तो उत्तरदायी है, क्योंकि वह उसकी सहधर्मिणी है, और उसके अच्छे-बुरे कर्मोंकी बराबरकी हिस्सेदार है। उसने धैर्यको कसकर पकड़ लिया और घटनाओंकी प्रतीक्षा करने लगी। उसने दिवाकरको ईश्वरके भरोसे छोड़ना ही उचित समझा और पतिके विरुद्ध आचरण करना धर्मविहित नहीं समझा। दीवान गोपीनाथ वहाँ थे, उसने उनके द्वारा पत्र भेजना निश्चित किया, और उसको आदेश दिया कि वह रमईपुरमें रहकर दिवाकरकी चिकित्सामें सहायता दे, तथा नित्य-प्रति पत्रद्वारा उसकी अवस्थाकी सूचना भेजा करे।

गोपीनाथ वही पत्र माधवीको देने आये थे, और रमईपुरमें उनके आदेशानुसार रहनेके लिए भी तैयार होकर आये थे। उन्होंने गाँवका रंग बदला हुआ पाया। चर्खेकी भनभनाहटसे गाँव गूँज रहा था। चारो ओर खद्दरधारी पुरुष और स्त्रियाँ दिखायी पड़ती थीं। हिन्दू-मुसलमानका भेद उठ गया था; सब एक ही परिवारके व्यक्ति विदित होते थे। पहले जो थोड़ी-बहुत शिथिलता कहीं थी, वह अब इस पुनर्ऐक्यमें दूर हो गयी थी और उनके बन्धन दृढ़ हो गये थे। पंचायतकी स्थापनाकी चर्चा सर्वत्र हो रही थी। बेगार-में केवल अछूत जातिके व्यक्ति ही पकड़कर आते थे, किन्तु इस बार उनके आनेपर भी कोई व्यक्ति नहीं आया था। अछूतोंके प्रति कोई दुर्भावना कहीं नहीं दिखायी पड़ती थी। उनके अधिकारोंकी रक्षाका भार हिन्दू और मुसलमानोंने सम्मिलित होकर उठाया था। मन्दिर, कुआँ, घाट, सब उनके लिए खुले थे, और उनके प्रति जो घृणाका भाव चला आता था, कर्पूरकी भाँति उड़ रहा था। रहीम, मनोहर, इमामबख्श और रणजीत पुरुषोंमें प्रचार कर रहे थे, और गुलाब, नसीमा, रूपकुँवरि, यशोधरा स्त्रियोंको उपदेश देकर उन्हें सन्मार्गपर ला रही थीं। अछूतोंकी दुर्गन्धि मिटानेमें, समग्र गाँव दत्तचित्त था। उनके लिए जीविकाके सारे साधन खोल दिये गये थे। गोपीनाथ यह कायापलट देखकर स्तम्भित रह गये। जो काम वर्षोंके परिश्रमसे नहीं हुआ था, वह दिवाकरके रक्त-पातसे थोड़े दिनोंमें हो गया था।

गोपीनाथ आश्चर्य करता हुआ मनोहरकी चौपालमें आया। रहीमने उसका स्वागत करते हुए, उसको उचित आसन दिया, और दिवाकरके स्वास्थ्यके सम्बन्धमें बातें करने लगा। रणजीतने उसे आश्वासन दिया कि वे शीघ्र ही अच्छे हो जायँगे। यद्यपि वे अभीतक बेहोश हैं, किन्तु विपत्तिकी कोई आशंका नहीं है। भालेकी भरपूर चोट तो बैठी ही है, और अनुमान होता है कि अकस्मात् गिरनेसे मस्तिष्कमें भी कोई सांघातिक चोट पहुँच गयी है जिससे बेहोशी दूर नहीं होती। बाहरी रक्त पर्याप्त मात्रामें पहुँच गया है,

जो अच्छा होनेमें सहायता दे रहा है। एक-आध दिनमें बेहोशी अवश्य दूर हो जायगी। गोपीनाथने सुनकर सन्तोषकी साँस ली, और कहा कि इस दुःखद घटनाकी खबर मिलनेके पहले ही राजा साहब सरकारी कामसे दिल्ली पधार गये थे, इससे रानीसाहवाने उसको यहाँकी सहायता तथा देखरेखके लिए नियुक्त किया है, और वह एक पत्र राजकुमारीके लिए लाया है।

रणजीतने वह पत्र ले लिया, और यशोधराको ले जाकर दिया। यशोधरा उसको माधवीके पास ले गयी। माधवी आशा और निराशासे युद्ध करती हुई मौन लेटी थी।

यशोधराने सप्रेम उसकी रुक्ष लटोंपर हाथ फेरते हुए पूछा—"मधु, अब कैसी तबियत है?"

माधवीने नेत्र बन्द किये हुए कहा—"ठीक ही है, यशो। नहीं जानती कि ईश्वरने भाग्यलिपिमें क्या लिखा है। अभी कौन कौनसे दुख देखना अवशेष हैं।"

यशोधराने उसके सिरको दबाते हुए कहा—"इतना क्यों अधीर होती है, मधु? सत्यपथपर आरूढ़ व्यक्तियोंकी परीक्षाएँ अत्यन्त कठिन होती है, परन्तु उत्तीर्ण होनेपर ही अधिक सौख्य प्राप्त होता है। विपत्तिकालमें अधीर होना, पराजित होनेका लक्षण है।"

माधवीने उसकी ओर देखकर उसके अन्तस्तलको जाननेकी चेष्टा की। फिर कहा —"यशो, मैंने एक बड़ी भूल की जो तेरे विवाहका प्रस्ताव पापाके पास भेजा।"

यशोधरा आकाशसे गिर पड़ी। उसका मुख ईंगुरकी भाँति लाल हो गया। उसकी समझमें नहीं आया कि क्यों माधवीने यह बात कही। वह चुप रही।

माधवी आँखें बन्द किये हुए कहने लगी—"यशो, हमारे घरकी अवस्था बड़ी कलहपूर्ण हो रही है। पिता-पुत्रके वैमनस्यमें तुमको घसीटकर मैंने अच्छा नहीं किया। दिवाकर भैयाके जीवनमें अब भी सन्देह है, और पापा उन्हें देखनेतक नहीं आये। उन्होंने अम्माको भी नहीं आने दिया। क्या अबतक उनके पास सब खबरें न पहुँची होंगी? जरूर पहुँची होंगी, परन्तु उन्हें यहाँ आकर हमलोगोंके संभालनेका अवकाश नहीं है। ऐसे वातावरणमें तुमको लाकर दुखित बनाना, हमलोगोंके अभिशापमें तुमको सम्मिलित करना कहाँतक उचित है?"

यशोधराने विहँसकर कहा—"पगली, अब क्या होता है पछतानेसे? बात और बाण एक बार निष्क्रत हो जानेपर वापस नहीं आते। रानी अम्माका पत्र आज आया है। पढ़नेसे सब हाल मालूम होगा, केवल व्यर्थकी कल्पनामें दुखित न हो। माधवी उठकर बैठ गयी। उसको यशोधराने पत्र दे दिया। अधीर हाथोंसे उसने खोलकर पढ़ना आरम्भ किया।

प्राणाधिक मधु,

दिवाकर और तुम दोनों जीवित रहो। तुम्हारी अभागिनी माताके पास इस आशीर्वादके अतिरिक्त और देनेको कुछ नहीं है। यदि माँके आशीर्वादमें कोई प्रभाव

अवशेष रह गया है, तो तुम दोनोंका बाल भी बाँका न होगा। दिवाकर, मेरे दूधकी लाज रखनेवाला दिवाकर, उठ खड़ा होगा, उसके प्राणोंकी हानि कदापि नहीं हो सकती। मधु, तुमको सब मालूम है। तुम्हारे पिता किसी सरकारी कार्यसे दिल्ली चले गये हैं। मैं भी वहाँ आकर तुम दोनोंको छातीसे लगानेमें असमर्थ हूँ। मधु, बिल्कुल निरुपाय हूँ। तुम इसका शोक न करना। दिवाकर तो कभी शोक नहीं करेगा, केवल तेरा भय है। तेरे पास तुम्हारी होनेवाली भौजाई यशो है। तुम दोनों दिवाकरकी सेवा-शुश्रूषा करना, और उसको मेरी कमीका अनुभव न होने देना। वह क्षत्रिय-संतान है, आपत्तियोंसे घबड़ाकर मुख मोड़ना वह जानता ही नहीं। मुझे विश्वास है ईश्वरकी शक्ति, सत्य और अहिंसाका। तुम धैर्यके साथ उसकी सेवा करो। मंगलमय परिणामके अतिरिक्त और कुछ अमंगल नहीं हो सकता! न मालम वह कौन दिन होगा, जब मैं तुम दोनोंको देख पाऊँगी। शरीर तो मेरा यहीं रहेगा, किन्तु मन सतत तुम्हारे पास ही रहेगा। मधु, तनिक भी मत दुखित होना। दिवाकरका समाचार शीघ्र भेजना। यशोको मेरा आशीष कहना।

तुम्हारी अम्मा

माधवीने यशोधराको पत्र देते हुए कहा—"जो मैं सोचती थी वही हुआ। पापा जान-बूझकर दिल्ली चले गये हैं, और अम्माको यहाँ आनेके लिए मना कर गये हैं। यशो, इसका क्या परिणाम होगा, मेरी तो समझमें कुछ नहीं आता!"

यशोधराने पत्र पढ़कर कहा—"ठीक है, रानी अम्माका आशीर्वाद हमारी रक्षा अवश्य करेगा।"

माधवीने अश्रुपूर्णनेत्रोंसे कहा—"दीनोंके पास और क्या है? भगवानका आधार ही गरीबोंका एकमात्र अवलम्ब है।"

यशोधराने उसके पास बैठकर उसके आँसू पोछते हुए कहा—"मधु, इतना अधीर न हो।" उसका भी कण्ठ अवरुद्ध हो गया।

माधवी यशोधराके हृदयसे चिपक गयी। यशोधराने कसकर उसको अपने वक्ष-स्थलसे लगा लिया, ठीक उसी भाँति जैसे बड़ी बहन अपनी छोटी बहनको लगा लेती है। दोनों मौन होकर एक दूसरेकी व्यथा समझनेका प्रयत्न करने लगी।

७

रात्रिका अवसान समीप था—चतुर्थ प्रहरका आरम्भ था। पवन रात्रिके साथ शीतल हो गया था, और वह सर्वत्र नव-जीवनका प्रसाद मुक्त-हस्तसे वितरित कर रहा था। पुष्प जो सन्ध्या समय कली रूपमें थे, अब नव-जीवनशक्ति पाकर प्रस्फुटित हो रहे थे। चतुर्दिक शान्ति छायी हुई थी। जो रात्रिभर नहीं सोये थे, वे भी इस समय निद्राकी गोदमें झूम रहे थे, किन्तु कर्त्तव्य-परायण गुलाबके नेत्रोंमें नींद नहीं थी। दिवाकरकी शय्या-के समीप वह एक कुर्सीपर बैठी हुई एकटक उसके मुखमण्डलको निरख रही थी। उसकी ओर देखते देखते वह थकती ही न थी, देखनेकी लालसा सदैव बढ़ती जाती थी। किसीके

प्रति उसने ऐसा तीव्र आकर्षण कभी नहीं अनुभव किया था । वह जितनी तत्परतासे उसकी सेवा कर रही थी, इसके पहले उसने कभी किसीकी नहीं की थी । वह ऐसा क्यों कर रही थी, इस प्रश्नका उत्तर वह बार-बार अपने हृदयसे पूछती, किन्तु उत्तर ढूँढे नहीं मिल रहा था जैसे प्रश्नकी भूलभुलैयामें कहीं खो गया हो ।

दिवाकरके नेत्रोंकी पलकें कुछ हिलीं । गुलाबकी तीक्ष्णदृष्टिने उसे तुरन्त लख लिया । कुम्हलायी हुई आशा अँगड़ाई लेने लगी । वह थोड़ासा सरककर उनके समीप हो गयी । पलकें एकबार जोरसे हिलीं और तुरन्त खुल गयीं । गुलाबकी झुकी हुई गर्दन झिझकके साथ सीधी हो गयी । हर्षका श्रोत उमड़कर उसके शरीरको कम्पित करने लगा । दिवाकरके नेत्र एकबार उसको भरपूर देख पुनः मुंद गये । गुलाबका हृदय भयसे स्पन्दित होने लगा । उसका सिर पुनः झुककर उनके आननके इतने समीप आ गया कि उसकी आशा तथा निराशासे झगड़ती हुई तप्त निश्वासें उसके नेत्रोंसे खुलनेके लिए मौन अनुरोध करने लगीं । दिवाकरने सजग होकर अपनी आँखें खोल दीं और विस्मयसे वह चारो ओर देखने लगा । गुलाबका आननमण्डल पसीनेकी बूँदोंमें उतराने लगा ।

दिवाकरने क्षीण स्वरमें पूछा—"मैं कहाँ हूँ ?"

गुलाबका शब्द उसके कण्ठमें अवरुद्ध रह गया । ऐसी लज्जाका उसने पहले कभी नहीं अनुभव किया था । उसका मन उसको वहाँसे भाग जानेका आदेश दे रहा था, किन्तु पृथ्वीने तो उसके पैर ही पकड़ लिये थे । वह नत-नेत्रोंसे पृथ्वीकी ओर देखने लगी ।

दिवाकरने पुनः पूछा—"मरकर क्या मैं स्वर्ग आया हूँ, और क्या तुम कोई स्वर्गकी देवी हो ?"

गुलाबका मुखमण्डल ग्रीवा-पर्यन्त नवोदित सूर्यकी लालिमासे होड़ करने लगा । उसका हृदय सवेग धड़क रहा था । वह वहाँ खड़ी न रह सकी, रणजीतको जगानेके लिए भाग खड़ी हुई । उसने आकर बाहर बरामदेमें लेटे हुए रणजीतको जगाया तो, किन्तु कह कुछ न सकी । रणजीतने आँखें मलते हुए उसकी ओर प्रश्नसूचक दृष्टिसे देखा । उत्तर न मिलनेपर पूछा—"क्या बात है ?"

गुलाबने साहस एकत्रित करके अस्पष्ट शब्दोंमें कहा—"उन्हें होश आ गया है।"

रणजीतका आलस्य दूर हो गया । वह शीघ्रतासे उठकर दिवाकरके समीप चला गया।

दिवाकरने अपने प्रश्नका उत्तर न पाकर अपना भ्रम समझकर अपने नेत्र बंद कर लिये थे ।

रणजीतने उसकी नाड़ी-परीक्षा करते हुए कहा—"दिवाकर ।"

उसने फिर नेत्र खोले, और इस बार रणजीतको देखकर उसे पहचाना । कहा—"कौन, रणजीत, मैं कहाँ हूँ भाई ?"

रणजीतने कुर्सीपर बैठते हुए कहा—"तुम रमईपुरमें मनोहरके मकानमें हो । अब तुम्हारी तबियत कैसी है ?"

दिवाकरने धीमे स्वरमें कहा—"सिरमें बड़ी भयानक पीड़ा हो रही है। मुझे कोई वस्तु स्थिर मालूम नहीं होती। सब कुछ घूम रहा है।"

रणजीतने आश्वासन देते हुए कहा—"एक सप्ताहसे तुम बेहोश हो, निर्बलताके कारण ऐसा हो रहा है। अधिक बोलनेमे कष्ट होगा। तुम्हारे लिए दवा तैयार कर लाता हूँ, और सब हाल तब बताऊँगा।"

यह कहकर उसने पास ही मेजपर सजायी हुई शीशियोंसे चुन चुनकर शक्ति तथा निद्रा संचार करनेवाली औषधि बनाकर उसको पिलायी, और कहने लगा—"तुम्हें याद होगा कि हमलोग रमईपुरमें दंगा होनेकी खबर पाकर एक साथ लखनापुरसे रवाना हुए थे, और जब दोनों दल लड़नेके लिए तैयार खड़े थे, हम पहुँच गये थे। तुमने उनको, लड़नेके लिए मना किया, और निष्क्रिय प्रतिरोधमें तुम अपनी गर्दन झुकाकर खड़े हो गये। अनवरके साथी बदमाश गुंडे भी वहाँ थे। उन्हींमेंसे एकने तुम्हारे ऊपर भाला चलाया और तुम आहत होकर गिर पड़े। तबसे तुम बेहोश हो, आज होश आया है। माधवी यशोधरा यहींपर हैं। सब सकुशल हैं, चिन्तित होनेका कोई कारण नहीं है।"

दिवाकरने धीमे कण्ठस्वर से पूछा—"अम्मा और पिता जी कहाँ हैं?"

रणजीतने उत्तर दिया—"रानी अम्मा अभी लखनऊमें हैं, और राजा चाचा दिल्ली गये हुए हैं। इस दुर्घटनाका समाचार मिलनेके पहले ही वे दिल्ली चले गये थे। रानी अम्माको जिसमें घबरावें नहीं, इसलिए पूरे समाचार नहीं दिये हैं।

दिवाकरने केवल कहा—"हूँ" और वह विचारोंमें मग्न हो गया।

रणजीतने धैर्य प्रदान करते हुए कहा—"रानी अम्माको अब पूरे समाचार दिये जायँगे। दीवान गोपीनाथको इसीलिए रोक लिया है, जिसमें वे शुभ समाचार लेकर जायँ। उनको बुलानेमें कोई हानि नहीं है।"

दिवाकरने कुछ ध्यान नहीं दिया। वह अपने विचारोंमें मग्न था।

रणजीतने उसका ध्यान बटानेकी चेष्टा करते हुए कहा—"उस दिनसे हिन्दू मुसलमानोंमें पुनः एकता स्थापित हो गयी है। यही नहीं महान परिवर्तन संघटित हुए हैं। रहीम, मनोहर आदिके प्रयाससे यह गाँव राष्ट्रीयतामें रँग गया है। घर-घर चर्खेकी सुमधुर तान उठ रही है, जनताने नियमित रूपसे कातना आरम्भ कर दिया है। मादक वस्तुओंका पूर्ण रूपसे बहिष्कार हो गया है। भेंट बेगार सब बंद हो गयी। अछूतोंके प्रति सारा भेद-भाव नष्ट हो गया है। हमलोग पंचायत स्थापित करनेका विचार कर रहे हैं, जो गाँवकी शिक्षा, सफाईका प्रबन्ध करेगी। सम्मिलित खेतीका भी विचार हो रहा है। कितनी ही नयी योजनाएँ बन गयी हैं। हमलोगोंका स्वप्न अब सत्य होने जा रहा है। केवल तुम्हारी ही प्रतीक्षामें वे योजनाएँ कार्यान्वित नहीं हुई हैं।"

दिवाकरने चिन्तित स्वरमें कहा—"यह तो सब ठीक है, किन्तु पिताजीका भी विचार किया है? अनवर और जागेश्वर उन्हींके आदमी हैं जो इस गाँवकी एकता भंग कर

उसे नष्ट करनेके लिए आये थे। किन्तु उनको सफलता न मिलनेसे उन्होंने न-मालूम क्या क्या बात हमलोगोंके विरुद्ध की होगी, जिससे वे अत्यधिक कुपित हुए होंगे। वे चुप होकर बैठनेवाले व्यक्तियोंमें नहीं हैं। उनके क्रोधका पात्र होनेपर सुरक्षित रहना असंभव है। वे इस गाँवको जड़-मूलसे नष्ट कर देंगे।"

रणजीतने हँसकर कहा—"यह तुम्हारा भ्रम है दिवाकर। वे क्रुद्ध तब होंगे, जब इस गाँवकी मालगुजारी उन्हें न मिले। लगानबंदीका आंदोलन तो हम कर नहीं रहे हैं, सामाजिक सुधार करनेका अधिकार तो हम सबको है ही।"

दिवाकरने कोई उत्तर नहीं दिया। वह मौन होकर रणजीतका कथन अपने अनुभवकी कसौटीपर कसने लगा।

रणजीतने निद्रा लानेवाली एक दूसरी औषधि पिलाते हुए कहा—"अब तुम सोनेका प्रयत्न करो। सोकर जागनेपर तुम एक नयी स्फूर्तिका अनुभव करोगे। व्यर्थकी चिन्ता मत करो। जो होना है, वह होगा ही।"

दिवाकरने अपने नेत्र बंद कर लिये, और थोड़ी देर बाद पूछा—"मनु और यशो कहाँ हैं? हाँ, वे सो रही होंगी। उन्हें सोने दो। अच्छा तुम्हारे आनेके पहले मेरे पास कौन स्त्री थी? क्या वह नर्स थी?"

रणजीतने उत्तर दिया—"नर्स बुलानेकी आवश्यकता मैंने नहीं समझी। मेरे पहले मनोहरकी बहन गुलाब कुँवर थी। हमलोगोंने अपनी अपनी पारी बांध ली थी, और उसी नियमसे तुम्हारे पास सदैव रहते थे। इसी लड़कीने तो अपना रक्त दिया है, जो तुम्हारे शरीरमें प्रविष्ट किया गया है। बालिका सचमुच देवी है। इतनी तत्परतासे तुम्हारी सेवा इसने की है, जितनी चतुरसे चतुर नर्स नहीं कर सकती। अच्छा, तुम अब सो जाओ।"

गुलाबके बारेमे सोचता हुआ दिवाकर दवाके वशीभूत होकर निद्रामग्न हो गया।

८

नरेन्द्रके गिरफ्तार होनेके पश्चात् क्रान्तिकारी संस्था "रक्तमण्डल" का कार्य-क्रम कुछ शिथिल-सा हो गया था। यह नहीं कि उसके सदस्योंका उत्साह कम हो गया था, या वे भयभीत हो गये थे, किन्तु वे सतर्क अवश्य हो गये थे। संस्थाका कार्य-[illegible] इतना गुप्त था कि बिना किसी सदस्यके फूटे हुए पुलिसको जान लेना कठिन ही नहीं, असम्भव था। नरेन्द्रकी अनुपस्थितिमें चक्रधरको संचालन-भार ग्रहण करना पड़ा और वह उस विभी-षणको निकालनेमें संलग्न था।

रक्तमण्डल दो भागोंमें विभक्त था। प्रथम—साधारण सदस्य केवल सेनाके सिपाहीकी भांति थे, जिनका केवल दलपतिकी आज्ञा-पालन करना ही कर्त्तव्य था; और दूसरे—विशेष सदस्य, जो मँजे हुए अनुभवी व्यक्ति थे और मण्डल की कार्यप्रणाली निर्धा-

रित करते थे। विशेष सदस्योंकी संख्या केवल ३० थी। इनमेंसे कितने ही ऐसे व्यक्ति थे जो विदेशोंमें भी क्रान्तिका कार्य कर चुके थ। इस कारणसे इस मण्डलका सम्वन्ध विदेशोंसे भी था। दिवाकर विशेष सदस्योंमें था, और वह मीटिंग भी विशेष सदस्योंकी थी, जब नरेन्द्र अपने दो साथियों समेत गिरफ्तार हुआ था। चक्रधरने सब बातोंकी विवेचना कर यही निश्चित किया कि यदि कोई व्यक्ति फूटा है तो वह विशेष सदस्योंमें है। वह प्रत्येक सदस्यका विश्लेषण करने लगा, किन्तु कोई ऐसा विश्वासघाती सदस्य दृष्टिगोचर नहीं होता था।

दिवाकरका नाम जब उसके सामने आया, तब वह ठिठका, और उसका पूर्व इतिहास तथा सम्वन्ध विचारने लगा। वास्तवमें उसके जैसा धीर, लगनका सच्चा और कार्यकुशल दूसरा व्यक्ति नहीं था। विश्वासघात जैसा जघन्य कर्म उसकी शक्तिसे परे था। कठिनसे कठिन यंत्रणाओंको सहन करके भी वह हिमालयकी भांति अचल और दृढ़ रहनेवाला था। पूर्व परीक्षाएँ उसके सम्वन्धमें यही बता रही थीं। यह अवश्य था कि वह एक सरकारी नौकरका जो प्रान्तका सर्वेसर्वा था—पुत्र था। सम्भव है कि उन्होंने अपने पुत्रकी गति-विधि लक्ष्य करनेके लिए गुप्तचर उसके पीछे लगा दिये हों और उन्होंने उसका अनुसरण करते हुए गुप्तगृहका भी पता लगा लिया हो। दिवाकरसे मिलनेके लिए वह आकुल हो उठा। किन्तु दिवाकर अभीतक रमईपुरमें अस्वस्थ अवस्थामें पड़ा हुआ था। उससे मिलने जाना भी खतरेसे खाली न था। इसलिए वह किसी उपयुक्त अवसरकी प्रतीक्षा करने लगा।

चक्रधर विदेशी वस्तुओंके व्यापारमें अपनी क्रान्तिकारी योजनाओंको छिपाये हुए था। उसकी दूकान नगरकी सबसे प्रतिष्ठित थी, और उसमें केवल इंगलैंडकी बनी हुई वस्तुओंका विक्रय होता था। दूकानका भवन उसकी सम्पत्ति थी, जिसका उसने निर्माण कराया था। प्रत्येक प्रकारकी वस्तुओंका विभाग अलग अलग रक्खा गया था। उसमें कितने ही गुप्त कक्ष बनाये गये थे, जिनका अनुमान किसी भांति न हो सकता था। उसकी दूकान इतनी बड़ी थी कि उसमें मनुष्योंका तांता लगा रहता था। इसके अतिरिक्त उसके ग्राहक नगरके सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति थे, और विदेशी नागरिक विशेषकर थे। लेन-देनके विषयमें चक्रधर कुछ ला-परवाह-सा था, इसलिए सभी उसकी सहायता करनेके लिए सदैव उत्सुक रहते थे। सरकारी अफसरोंकी कृपा भी इसपर विशेष रूपसे रहा करती थी, और अनेक दुर्लभ वस्तुओंका लाइसेन्स पहले उसको ही प्राप्त होता था। उसने अपनी दूकानपर मोटे मोटे अक्षरोंमें स्पष्ट लिख रक्खा था,—"यहां केवल इंगलैंडकी बनी हुई वस्तुओंका विक्रय होता है।" इससे भारत-विरोधी अंग्रेजदल इसको प्रोत्साहन देनेके लिए सदैव कटिबद्ध रहता था।

चक्रधरने अपनी दूकानको उस दिन खूब सजाया था, क्योंकि ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलकी ओरसे उसके एक माननीय सदस्य लखनऊ आनेवाले थे। लखनऊकी गणना

उन नगरोंमें है जहाँ इंगलैंड तथा यूरोपसे आनेवाले व्यक्ति अवश्य आते हैं। उसका पुराना ऐश्वर्य, यद्यपि उसके भग्नावशेष भी सुरक्षित नहीं हैं, अभीतक विदेशियोंको अपनी ओर आकर्षित करता रहता है। वाजिदअलीशाह यद्यपि इतिहासमें विलासी और स्त्रैण प्रसिद्ध किये गये हैं और उनके सद्गुणोंपर धूल डाली गयी है, किन्तु उनका नाम अभीतक विदेशियोंके हृदयमें ईर्षाके भाव भरा करता है। लखनऊकी एक एक लखौरी ईंटमें उस समयके हिन्दू-मुसलिमऐक्यका इतिहास ज्वलन्त अक्षरोंमें लिखा हुआ है। मुसलमान विदेशी नहीं रह गये थे, उनका धर्म भी विदेशी नहीं था। वे सर्वथा शुद्ध भारतीय थे और उनके धर्मपर भी भारतीय छाप पड़ चुकी थी। राज्यका परिचालन दोनों जातियाँ कन्धेसे कन्धा भिड़ाकर करती थीं। उनमें इतना भ्रातृत्व था कि यदि मुसलमान शासक था तो उसका प्रधानमन्त्री हिन्दू था, और इसी प्रकार हिन्दू शासकके साथ मुसलमान मन्त्री था। सम्प्रति कालतक इसी प्रथाका पालन होता आया है। आज दिन भी लखनऊ उसी प्राचीन पद्धतिका अनुसरण करता चला आ रहा है और हिन्दू-मुसलिमऐक्यका प्रतीक है।

लखनऊके अंग्रेजी समाजने चक्रधरको आदेश दिया था कि जब ब्रिटिश मन्त्रिमंडलके सदस्य लखनऊ आवें, वह दूकानको भली भाँति सजावे। उस दिन उसकी बिक्री बहुत होगी। उनको सब प्रकारसे प्रसन्न करना उसका उद्देश्य था। उसने अपनी दूकानको यूनियन जैकसे पाट दिया था। कहीं कहीं अमेरिका, और रूसके भी झंडे देखनेको मिलते थे। उस दिन भीड़ भी अधिक थी। एक मेला-सा लगा हुआ था। चक्रधरने इसी दिन अपने मण्डलकी बैठक भी निश्चित की थी, क्योंकि वह दिन भलीभाँति उपयुक्त तथा सुरक्षित था।

अंग्रेजी फैशनसे सुसज्जित मण्डलके सदस्य आ रहे थे, और वस्तुओंको निरीक्षण करते और खरीदते हुए गुप्तमार्गसे नीचेके तहखानेमें जा रहे थे। क्रमशः एक एकके पश्चात् २६ सदस्य नीचे पहुँच गये तब चक्रधर भी अपने सहकारीको दूकानका भार देकर नीचे चला गया।

उसके आते ही सभाकी कार्यवाही आरम्भ हुई।

चक्रधरने उनको सम्बोधित करते हुए कहा—"हमलोग चार महीनेके उपरान्त मिल रहे हे। इसके पूर्व हमलोग अपने नेता नरेन्द्रके वासस्थलपर मिले थे, किन्तु उस दिन न-मालूम कैसे पुलिसको हमारी सभाका हाल मिल गया, फलस्वरूप हमारे तीन साथी गिरफ्तार हो गये, और ब्रिटिश सरकारने उन्हें अपराधी प्रमाणित कर जेल भेज दिया। पुलिसके गुप्तचर हमारा पता पानेके लिए बड़ी तत्परतासे काम कर रहे हैं, और इसी कारणसे हमलोगोंने भी कार्यक्रममें कुछ शिथिलता डाल दी थी। इसके अतिरिक्त हमारे देशकी राजनीतिक अवस्थाएँ भी ऐसी हो गयी थीं, जिनका धैर्यके साथ निरीक्षण करना आवश्यक था। अंग्रेजी सेनाएँ भारतकी पूर्वीय सीमापर आ गयी हैं, जापानका अधि-

कार पूर्वीय एशियाके समस्त प्रान्तोंपर हो गया है। इस समय जापान प्रशान्त और हिन्द महासागरका स्वामी है। भारतीय पूर्वतट भी सुरक्षित नहीं है। इस समय हमारे गौरांग महाप्रभु बड़े संकटमें हैं। शत्रुको उसके संकटकालमें परास्त करना सहज है।"

इसी समय एक सदस्य अहमदअलीने कहा--"तब देर क्यों की जाय। आज इत्तिफाकन १० मई है। आजहीके दिन पचासी साल पहले अंग्रेजी हुकूमतके खिलाफ बगावत शुरू हुई थी। आज उसी बगावतकी यादगार क्यों न मनायी जाय। आज अंग्रेजी वजारतके एक वजीर लखनऊ आ रहे हैं। घर बैठे गंगा आ गयी हैं। क्यों न एक छोटे बमसे उनका इस्तकबाल किया जावे, और इसीसे हमारी जंगका ऐलान हो जावे।"

चक्रधरने शान्तिके साथ कहा--"अहमद भाईसे मैं बिल्कुल सहमत हूँ। अगर हमारे नेता नरेन्द्र यहाँ होते तो मैं भी यही सुझाव रखता, लेकिन आज उनकी गैरमौजूदगीमें हमें सब्रसे काम लेना चाहिये। क्योंकि एक गलत कदम हमारे सारे किये-धरेपर पानी फेर देगा। मेरी समझसे वर्षाकाल आक्रमण करनेके लिए विशेष सुविधाजनक होगा। उधरसे जापान हमला करेगा, और इधरसे हम; तब हम जल्दी ही शत्रुको मार लेंगे। अभी हमारे सामने एक बड़ा भारी काम है। पहले उसको करना चाहिये।"

अहमद--"वह क्या ?"

चक्रधर--"अपने रहबर और नेता नरेन्द्रको जेलसे छुड़ाना। उनकी दो वर्षकी सजा हुई है। इससे अभी हालमें छूटनेकी कोई सम्भावना नहीं है। उनको यद्यपि बड़ी सतर्कतासे यहाँसे ले जाया गया है, और किसीको कानोंकान खबर नहीं होने पायी है, किन्तु मैंने पता लगा लिया है कि वे इस समय फैजबाग जेलमें हैं। मैंने अपने मण्डलका एक विश्वस्त आदमी वहाँ भेज दिया है जो उनको जेलसे निकल भागनेमें सहायता करेगा। वह उस जेलमें नौकर हो गया है, और उसने समस्त अधिकारियोंका विश्वास भी प्राप्त कर लिया है। उनको जेलके अन्दरसे निकल भागनेमें उससे सहायता तो प्राप्त हो जायगी, किन्तु बाहरी सहायताका प्रबन्ध हमें करना है।"

अहमद--"यह आपने बड़ी अच्छी खबर सुनायी। बेशक नरेन्द्रके न होनेसे हमारा काम रुका हुआ है। एक बार उनको छुड़ाकर लाना है, फिर छिपा तो हम लेंगे। छिपानेकी अब जरूरत ही न रहेगी, क्योंकि उनके आते ही हमें जंग छेड़ देना है।"

चक्रधर--"हाँ, लड़ाई तो छेड़ना अनिवार्य है। क्योंकि क्रिप्स कोई समझौता करानेमें सफल नहीं हुए हैं, बल्कि यहाँकी समस्याएँ और उलझ गयी हैं। मुसलिम लीग और कांग्रेस दोनों उनसे असन्तुष्ट हैं। उनके दृष्टिकोणमें बड़ा मतभेद है; परन्तु हमारेमें कोई भेद नहीं है। हमें भारतको छल, बल, कौशल और प्रत्येक उपायसे स्वतंत्र करना है। हमारा विश्वास है कि लोहा लोहेको काटता है। हिंसाका मुकाबला हिंसासे करना चाहिये। इसी उद्देश्यसे हमारा यह मण्डल स्थापित हुआ है।"

एक दूसरे सदस्य नजीरखांने कहा--"पठान तो हमेशा अपने बाजुओं और भरी हुई

बन्दूकपर यकीन करते हैं। अंग्रेजोंसे भिड़ जानेके लिए मेरा खून उबल रहा है। ज्यादा देर करना मैं हरगिज ठीक नहीं समझता। मुल्कमें अंग्रेज एक तीसरा दल तैयार कर रहे हैं, जिससे वे हमारा मुकाबला करेंगे। यह दल रूसकी सल्तनतका हांमी है, और यह नारा बुलन्द कर रहा है कि "यह लड़ाई जनताकी लड़ाई है, और इसमें शामिल होना हमारा फर्ज है।" इसके अलावा, हिन्दुस्तान पेटसे भूखा मुल्क है, और बे-रोजगारीकी तो यहाँ बपौती है। लाखोंकी तादादमें हमारे नौजवान भूखसे परेशान होकर अंग्रेजोंक पल्ला पकड़ रहे हैं, और फौजमें भरती हो रहे हैं। इसलिए हमको भी अपनी भरती शुरू कर देनी चाहिये। हमारे पास पैसेकी कोई कमी नहीं है, और अगर कमी होगी तो अंग्रेजों-ग का खजाना छीन लेते क्या देर लगती है।"

अहमद—"मैं भी नजीर भाईकी ताईद करता हूँ। जल्दसे जल्द जंग छेड़ देनेमें हमारी भलाई है।"

चक्रधर—"मैं कब अपना कदम पीछे हटाता हूँ, मगर भाई पहले अपने नेताको तो छुड़ाओ।"

नजीर—"यह कौन बड़ा काम है! मैं और अहमद इस कामके लिए जानेको तैयार हैं। फैजबागकी जेल तोड़ते क्या देर लगती है। एक ही बममें उस बड़ी दीवारका सफाया हो जायगा, जो कैदियोंको अपने घेरेमें बन्द किये है। उसी भड़ाभड़में हम नरेन्द्र-को छुड़ाकर ले भागेंगे।"

चक्रधर—"आपको भेजनेमें हमें कोई इनकार नहीं है। पहले हमको कौशलसे काम लेना है। कौशलसे जब सफलता न मिले तब बलका प्रयोग करना है। हमको उचित है कि हम अपना बल क्षीण न होने दें।"

नजीर—"अगर छलसे काम लेना है तो किसी औरको भेजिये। पठान तो नंगी तलवार है, वह काटना जानता है, छल करना नहीं।"

चक्रधर—"आपलोगोंमेंसे जो कोई यहांका कार्यभार ग्रहण करना चाहे, ग्रहण करे। इस मुहिमपर मैं जाना चाहता हूँ। यहांका चार्ज देनेके लिए आपलोगोंको बुलाया है।" सर्वसम्मतिसे अहमदअलीको दूकानका चार्ज दे दिया गया। चक्रधर उसी सन्ध्याको नरेन्द्रको छुड़ानेके लिए दो साथियोंके साथ चला गया।

९

नरेन्द्र और जंगबहादुर थोड़े ही दिनोंके इलाजसे अच्छे हो गये। उनकी आजकल बहुत खातिरदारी होती थी, क्योंकि सरकारकी यह इच्छा थी कि जेल-व्यवहारके विरुद्ध कुछ भी समाचारपत्रोंमें न प्रकाशित किया जावे। जबतक क्रिप्स मिशन भारतमें रहा, तबतक कुछ थोड़ी आवभगत रही, और जहाँ उस योजनाको असफल घोषित किया गया, पुरानी परिपाटीके अनुसार कार्य होने लगा। रमजानअलीको बेंत चलानेकी आज्ञा दी गयी, और वह भी जो खोलकर अपने हाथकी खुजली मिटाने लगा।

रमजानअली और दारोगा मुमताजअलीमें खूब पटने लगी थी। यहाँतक कि वह उनकी मूँछका बाल हो गया था। दारोगाका कोई काम रमजानके विना नहीं चलता था, यहाँतक कि उनके घरका सारा काम वही करता था। इनकी एकमात्र सन्तान जुलेखा-को वह दिनभर अपने कन्धेपर चढ़ाये घूमता था, जिससे उनकी स्त्रीकी भी उसपर विशेष कृपा थी। उसके लिए खिलौने, कपड़े, मिठाई, इत्यादि लाना उसका नित्यका व्यवसाय हो गया था। दारोगा और उनकी स्त्री दोनों बाह्य रूपसे उसके इस अपव्ययकी भर्त्सना करते थे, किन्तु मन-ही-मन उसकी मूर्खतापर प्रसन्न भी होते थे, तथा इनकार करते हुए भी उसके उपहारकी वस्तुएँ रख लेते थे।

घूसका साम्राज्य तो सारे संसारमें फैला हुआ है, किन्तु भारतमें उसकी राजधानी स्थापित है। राजवर्गी पुरुष घूस लेना अपना परम अधिकार और स्वत्व विचारते हैं। उनमेंसे जो विरले एक-आध नहीं लेते हैं, वे अपने ही कर्मचारियोंके चक्षु-शूल होते हैं, और प्रायः देखा यह गया है कि वही घूस-खोरीके अपराधमें दोषी सिद्ध किये जाते हैं। घूस लेनेसे घूस-खोरीका दण्ड उन्हें मिलता है। उनके अफसर और मातहत दोनों उनसे असन्तुष्ट रहते हैं, उनके विरुद्ध अनेक प्रकारके अपवाद प्रचारित किये जाते हैं, षड्यन्त्र रचे जाते हैं, और अन्तमें उन्हें स्थानान्तरित करके भागना ही पड़ता है। आजकलके संसारमें ईमानका यह मूल्य और पारितोषिक र गया है। सरकारी कर्मचारी वेतनको केवल भत्ता मानते हैं, और घूसकी आयको सत्य पुरस्कार। भगवानकी भाँति घूसके भी सहस्र नाम हैं, कहीं यह हक, कहीं मेहनताना, कहीं शुकराना, कहीं इनाम, कहीं पान-सुपारी, कहीं सिगरेट-बीड़ी, कहीं पगड़ी-साफा, कहीं कपड़ा-लत्ता, कहीं एवजाना, कहीं डाली लगाना, कहीं बच्चोंका खिलौना, कहीं बच्चोंकी मिठाई आदि नामोंसे प्रचलित है। सहस्रनामके अतिरिक्त यह सहस्रमूर्ति भी है। अनेक प्रकारके भावभंगी, इशारोंसे माँगा और दिया जाता है। इसका प्रवेश कहीं डंकेकी चोटपर, और कहीं गुप्तातिगुप्त मार्गसे होता है। यह एक बड़ी विशेषता है कि यह अपने असली रूपसे कहीं प्रकट नहीं किया जाता, सदैव कोई न कोई विहित आवरण पहनाकर ही वह सम्मुख लाया जाता है। कोई भी सरकारी कार्यालय नहीं है, जहाँ घूसका अधिकार न हो, भगवानकी भाँति वह सर्वव्यापी भी है।

भारतीय जेलोंमें तो इनका पूर्ण आधिपत्य है। जो पदार्थ जेलके बाहर दुर्लभ हैं, कठिनतासे मिलते हैं, वे घूस भगवानकी कृपासे उसके अन्दर सहज-प्राप्त हैं। मादक द्रव्योंका निषेध जेल-मैनुएलमें है, किन्तु 'घूसदेव' के प्रतापसे वे प्रचुरमात्रामें मिलते हैं। कोकीन, अफीम आदिके लिए कोई रुकावट नहीं है। जेलके अधिकारी सार्वभौम सम्राटसे कम नहीं होते। वे जो चाहें कैदियोंके साथ कर सकते हैं, उन्हें जहाँ चाहें भेज सकते हैं, और उनसे जो चाहें करवा सकते हैं, केवल देनेको घूस चाहिये। रमजानअली भी घूसके व्यापारी,

दारोगा मुमताजअलीके पास लाया करता था, जिससे दोनोंकी आय हो जाया करती थी। एक यह भी कारण था, जिससे वह उनका कृपापात्र हो गया था।

जिनके द्वारा घूसका व्यापार चलता है, वे बहुधा घूस लेनेवालोंको दबानेकी चेष्टा करते हैं, और निस्संकोच तथा निर्भय होकर मन-मानी करते हैं। परन्तु रमजान-अलीमें यह दुर्गुण नहीं था। वह सदैव दारोगाका रुख देखकर काम करता था। उनकी आज्ञाके बिना कोई काम नहीं करता था। इसलिए वे उसपर अधिक प्रसन्न रहते थे। इसके अतिरिक्त वह सदा आज्ञा-पालनमें तत्पर रहता था। किसी समय, कैसा ही कठिन आदेश क्यों न हो, उसको समुचित रूपसे पालन करनेमें वह अपनी अनिच्छा प्रकट नहीं करता था। प्रसन्न मनसे, हँसते हुए मुखसे, वह उनका कार्य कर लाता था।

यद्यपि उसको नौकर हुए चार महीनेसे अधिक नही हुआ था, किन्तु इतने ही कम समयमें उसने जेलके सारे अधिकारियोंको किसी न किसी उपायसे प्रसन्न और सन्तुष्ट कर लिया था। उसकी हर जगह और हर समय समान रूपसे गति थी। कहीं कोई रोकटोंक न करता था। यदि कोई उसकी सूरतसे घृणा करते थे, तो थे वे . कैदी। उनके लिए वह सदैव कालकी भाँति भयावना था। बिना कारण हरएकपर डंडाप्रहार करना उसका साधारण व्यापार था। धक्का देना, कान ऐंठ देना इत्यादि सब उसकी कृपाके लक्षण थे। वह जिस ओरसे निकल जाता उधर ही कितने रोने लगते, और कितने केवल पीड़ाकी लम्बी आह खींचकर उसकी ओर करुणदृष्टिसे देखते। जब वे लोग उसकी मारसे व्याकुल होकर त्राहि-त्राहि करते तब वह बड़ी प्रसन्नतासे हँसता, और इसी आवेशमें दो-एक डंडे अधिक मार देता। जो रोते-चिल्लाते न थे उनको कहता कि ये पुरुष हैं, और उस कैदीकी प्रशंसा उससे करता था जो दो-एक डंडेमें रोने लगते थे। यद्यपि डंडा-प्रहारका ध्येय जेल-अधिकारियोंको त्रस्त करता रहता था, किन्तु उसकी सेवाओंके पुरस्कारमें वे चुप्पी साध लेते थे। वह कहा करता था कि जबतक वह कैदीको मार नहीं लेता, उसका भोजन नहीं पचता है।

. जेलके अधिकारियोंको यही ज्ञात था कि वह निरक्षर भट्टाचार्य है, यद्यपि वह अपना नाम हिन्दी अक्षरोंमें लिख लेता था। वेतन रजिस्टरमें वह अपने अँगूठेका निशान नहीं बनाता था, हिन्दीमें हस्ताक्षर करता था। मुमताजअलीके यह पूछनेपर कि उसने हिन्दीमें हस्ताक्षर करना क्यों सीखा जब कि उसको उर्दूमें करना चाहिये, तो उसने उत्तर दिया था कि उसके पड़ोसमें एक पंडितजी रहा करते थे, जहाँ वह खेलने जाया करता था; उस समय उसने अपना नाम लिखना सीखा था।

यदि कोई कैदी उसके नैमित्तिक डंडाप्रहारसे बचते थे तो वे नरेन्द्र और जंगबहादुर। उनकी ओर वह भूलकर भी न देखता था। जब कोई इसका कारण पूछता तो वह तोबा करता हुआ कहता—"ना भाई, ये दोनों शैतान हैं, उनकी वजहसे वह नौकरीसे बरखास्त होते होते बचा है और उनको मारना उसके लिए बहुत महँगा है। वह उनसे घृणा करता है। हाँ, यदि कभी उसका बार [illegible] उनको

लेकिन उनके साथ डंडेका खिलवाड़ नहीं करेगा। वे दोनों भी उससे यथाशक्ति वचनेका प्रयत्न करते थे।

जेलमें रात्रिशयन एक वड़ी दुखद समस्या है। कैदियोंको वहुधा कोठरियोंमें ही सोना पड़ता है। ऐसे भाग्यवान व्यक्ति वहुत कम होते हैं, जिनके सोनेकी व्यवस्था वाहर होती है। नरेन्द्र और जंगवहादुर उन अभागोंमें थे जिनको अंदर सोना पड़ता था, क्योंकि राजनीतिक वन्दियोंके साथ कठोर व्यवहार करना पड़ता था। वे षड़यन्त्रके मूलतत्व समझे जाते थे, और दूसरे. कैदियोंके साथ मिलने नहीं पाते थे। उनकी कोठरियाँ भाग्यवश पास ही पास थीं, केवल एक दीवार उन दोनोंके मध्यमें थी।

एक दिन सन्ध्या समय जव प्रहरी उन्हें वंद करने जा रहा था,तव सहसा रमजान-अली वहाँ आ गया। प्रहरीने हँसकर पूछा—"क्यों खाँसाहव, कहाँ चले ?"

रमजान—"तुमको दारोगा साहव वुला रहे है।"

प्रहरी—"कैदियोंको वन्द करके अभी आता हूँ।"

रमजान—"कोई जरूरी काम है, तुम जाओ, मै ही ताला वंद किये देता हूँ।"

प्रहरीने चाभियाँ देते हुए कहा—"ऐसा कौन-सा काम आ पड़ा है ? देखो चाभी लगाकर ताला हिला लेना, कहीं खुला रह गया और कोई दुर्घटना घटित हो गयी तो हमलोगोंकी जानपर आ वनेगी।" प्रहरी चला गया। रमजानने हँसकर कहा—"मेरे डंडेमें वह करामात है कि भागा हुआ कैदी अपने-आप दौड़कर आ जावे।"

प्रहरी हँसता हुआ चला गया। रमजानने पहले जंगवहादुरका ताला वंद किया, फिर नरेन्द्रकी कोठरीकी ओर अग्रसर हुआ। सीखचोंके पास खड़ा होकर वह इधर-उधर सतर्कतासे देखने लगा। जव कहीं कोई मनुष्य दिखायी नहीं दिया तो ताला वंद करते हुए उसने एक लिपटा हुआ कागज नरेन्द्रके पास फेंक दिया, और कहा—"कल इसको किसी सुरक्षित जगहपर पढ़कर खा जाना। यह तुम्हारे मित्रोंका पत्र है।"

नरेन्द्रने उसे उठाते हुए आश्चर्यके साथ उसकी ओर देखा। रमजानअली उन्हें देखकर मुस्कराया और फिर चलते हुए उसने कहा—"वादलोंमें विजली होती है, और आदमीमें सहृदयता, किन्तु समय समयपर।" यह कहकर वह चला गया। नरेन्द्र उसपर विचार करने लगा।

१०

एकान्त पाकर नरेन्द्रने जंगवहादुरसे कहा—"भाई, एक शुभ समाचार यह है कि हमारे साथी हमको छुड़ानेके लिए आ गये है, और सवसे आश्चर्यकी वात यह है कि जिस रमजानअलीसे हमलोग इतना वचकर चलते हैं, वास्तवमें वह हमारे दलका व्यक्ति है, जिसे चक्रधरने हमारी सहायताके लिए भेजा है। वह छद्मवेषसे यहाँ नौकर हुआ है, और यह मुसलमान नहीं, हिन्दू है। इसका नाम दीनानाथ है। हमारे कैद होनेके पश्चात् चक्रधरने इसको अपनी संस्थामें सदस्य

बनाया है। बहुत दिनोंतक यह जर्मनीमें रह चुका है, और बम बनानेका विशेषज्ञ है।"

जगबहादुर अवाक् होकर उसकी ओर देखने लगा, और मन-ही-मन सोचने लगा कि सम्भवत: नरेन्द्र विक्षिप्त होकर प्रलाप कर रहा है।

नरेन्द्रने हँसकर कहा—"विश्वास नही होता क्या ?"

"विश्वास होता भी है और नहीं भी होता।"

"क्यों ?"

"तुम झूठ नही कहोगे, इसलिए विश्वास होता है, और घटनाएँ सूचित करती हैं कि यह एक अनहोनी बात है।"

"अनहोनी बातोंसे ही रहस्य उद्घाटन होता है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि जो कुछ मैंने कहा है, वह सब सत्य है। मैं केवल कल्पनासे नहीं कहता, वरन् मुझको एक पत्र इसी रमजानके द्वारा मिला है, जिसमें इन बातोंका उल्लेख है।"

"कही वह पत्र जाली न हो, या हमारे शत्रुओंका चतुर प्रयास हमारे फँसानेके लिए न हो।"

"नहीं, यह असम्भव है। चक्रधरके हस्ताक्षर मैं भलीभाँति पहचानता हूँ। इसके अतिरिक्त हमारे मण्डलका गुप्त संकेत भी रमजान अलीने कल पत्र देते समय कहा था।"

"वह क्या है, क्या मैं जान सकता हूँ ?"

"हाँ, अब तो तुम हमारे दलके एक सदस्य हो चुके हो, इसलिए कहनेमें कोई हानि नही है। हमलोग अपना संकेत समय समयपर बदलते रहते हैं। जब मैं गिरफ्तार हुआ था उन दिनका संकेत यह था—"बादलोंमें बिजली होती है, और आदमीमें सहृदयता, किन्तु समय समयपर।" पत्र देनेके पूर्व रमजानने यही शब्द कहे थे।"

"हो सकता है कि उसके मुखसे अकस्मात् यह शब्द निकल गये हों, किसी उद्देश्यविशेषसे न कहा हो।"

"इस संकेतवाक्यका भाव तो हो सकता है, किन्तु अक्षरश: शब्द तबतक नहीं हो सकते, जबतक कि उनको सिखाया न जाय। इतने बड़े वाक्योंका प्रयोग किया जाता है केवल संकेतके लिए, जिसमें कोई अनजान व्यक्ति अक्षरश: न कह सके, जबतक कि उसको पूर्ण ज्ञान न हो। उन दिनका संकेत बताकर चक्रधरने उसको यहाँ भेजा है।"

जगबहादुर अवाक् होकर उसकी ओर देखने लगा।

नरेन्द्र—"हमलोगोंका संगठन इतना दृढ़ है कि कोई अनजान सङ्घमें प्रवेश नहीं कर सकता। तुम किसी बातकी शंका न करो। हमलोग छलसे काम लेते हैं, बलसे नहीं। इसीलिए सब छल करनेमें ही विजय होती है। इसी रमजानको देखो, इसने होनेके प्रथम दिन ही हमारे ऊपर गोलीकी वर्षा की, और सर्वत्र अपना आतंक जमा

रक्खा है; इससे जेलके अधिकारियोंको स्वप्नमें भी अनुमान नहीं हो सकता कि यह हमारे विपक्षी दलका व्यक्ति है। उसके इस रोब-दावसे अधिकारी उससे प्रसन्न भी रहते हैं। उसने अपने बुद्धि-कौशलसे सबको वशीभूत कर लिया है।"

"अब हमलोगोंका कार्यक्रम क्या है ?"

"परसों रातको बारह बजे बम-विस्फोट जेलकी पश्चिमी दीवारके समीप होगा, दस मिनट पश्चात् दक्षिणकी ओर, फिर दस मिनटके उपरान्त उत्तरी दीवार भी उड़ जायगी। इसी बीचमें रमजान हमारी कोठरियोंका दरवाजा खोल देगा, और हमको दूसरे वस्त्र पहननेके लिए देगा। पूर्वकी दीवारपर तीन रस्से लटके हुए हमको मिलेंगे। इसी गड़बड़में हम उन्हीं रस्सोंके सहारे जेलसे बाहर हो जायँगे। जेलका पूर्वीय भाग सुन-सान पड़ता है। वहांपर जेलकी मोटर हमारी प्रतीक्षा करेगी, जो हमको कुछ मील ले जाकर उतार देगी। मोटरमें हम अपना वेष परिवर्त्तन कर लेंगे। वास्तवमें वह हमारी मोटर होगी, जिसको जेलकी मोटरके सदृश बनाया गया है। वहांसे हमलोग अलग अलग हो जायँगे, और हमको ले जानेके लिए दूसरी मोटरें तैयार रहेंगी। इस गड़बड़के पश्चात् हमारी खोज होगी, तबतक हम अपने साथियोंसे जा मिलेंगे।"

जंगबहादुर अवाक् दृष्टिसे उसकी ओर देखने लगा, फिर उसने कहा—"यदि पकड़ गये, और भाग न पाये तो क्या होगा ?"

"इससे अधिक कुछ नहीं कि हमारी सजा बढ़ जाय। मेरा विश्वास है कि इसमें कोई भूल न होगी। चक्रधर कभी आधा काम नहीं करता। उसकी जैसी बुद्धि हमारे दलमें बहुत थोड़ोंकी है। हम दोनों ममेरे भाई हैं, और हम दोनोंके वंशमें कोई नहीं है। हम दोनोंकी यह प्रतिज्ञा है कि या तो देशको आजाद करेंगे, या उसीके प्रयत्नमें अपना जीवन अर्पण कर देंगे।"

"विवाहित नहीं हैं !"

"सेवक कहीं विवाह करते हैं ? सेवाधर्मका पालन 'स्वयं' तथा 'स्वार्थ' को नष्ट करनेसे होता है। पवनपुत्रने क्या कभी विवाह किया था ? लक्ष्मणने इसी व्रतके पालनमें दत्तचित्त होनेके कारण वनवासके समय उर्म्मिलाका त्याग किया था।"

जंगबहादुर और नरेन्द्र मन्द-मन्द हँसने लगे।

जंगबहादुरने पूछा—"सरकारके गुप्तचर सर्वत्र घूमते हैं, वे क्या हमारा पता लगानेमें सफल नहीं होंगे ?"

"सफल हो सकते हैं, किन्तु हम बहुत शीघ्र युद्ध छेड़नेवाले हैं। अंग्रेजी सेनाएँ बरमा त्यागकर पूर्वीय सीमापर आ गयी होंगी, इसी अवसरकी प्रतीक्षा हम कर रहे थे। हम देशव्यापी युद्ध इनके विरुद्ध घोषित करेंगे, और जहाँ-जहाँ अंग्रेजी सेनाएँ होंगी, उनको नष्ट करना आरम्भ कर देंगे। यातायातके सभी मार्ग अवरुद्ध कर देंगे, जिससे सेना-संचालन न हो सके।"

"मान लिया कि हमको सफलता इसमें प्राप्त हो गयी, किन्तु वायुयान तो हमको नष्ट कर सकते हैं। वायुयान भी क्या आपलोगोंके पास है?"

"हाँ, यह हमारी विशेष न्यूनता है, किन्तु हमें आशा है कि जापान हमें वायुयानोंसे सहायता प्रदान करेगा। युद्धमें सम्मिलित होनेके पूर्व जापानसे हमें यह आश्वासन मिला था। इसके अतिरिक्त वायुसेनामें भारतीय भी तो हैं। वे क्या इस युद्धमें हमारी सहायता नहीं करेंगे?"

"इसकी आशा करना जीवनकी सबसे बड़ी भूल होगी। पेटार्थीको पेटके अतिरिक्त और कुछ नहीं दिखायी पड़ता। वह अपने सारे कर्त्तव्योंको भूल जाता है, और पेटके लिए सब बलिदान कर देता है। इसीलिए ब्रिटिश सरकार भारतीयोंको कभी भरपेट भोजन नहीं देती।"

"हो सकता है कि अंग्रेजोंकी भारतीय सेना हमारी सहायता न करे, किन्तु जनता तो हमारा साथ देगी। वायुसेनाको भी अपनी आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए पृथ्वीपर अवतीर्ण होना पड़ेगा। जब जनता हमारे साथ रहेगी, उस समय उनको भी हम सहज ही नष्ट कर सकेंगे। पहले केवल विचारोंद्वारा जो बातें कठिन और असम्भव मालूम होती हैं, वही सब सम्भव और सरल हो जाती हैं जब आपत्ति सम्मुख होती है। बारूदमें चिनगारी पड़नेके पश्चात् विस्फोट होगा ही। युद्ध छिड़ जानेके पश्चात् क्षिप्र-बुद्धि और ज्ञान, सहानुभूति और सहयोग स्वतः आते हैं। पूर्वयोजनाके अनुसार क्रान्ति आरम्भ होती है, किन्तु उसका संचालनभार दूसरे ही मनुष्य ग्रहण करते हैं, और नवीनसे नवीन योजनाएँ बनती हैं, तथा कार्यरूपमें परिणत होती हैं। समय और अवस्थाके अनुसार परिवर्त्तन होना अनिवार्य है। हमारा काम तो युद्ध छेड़ देना है, संचालन दूसरे ही व्यक्ति करेंगे जो हमसे कहीं बुद्धिमान होंगे। समय और परिस्थिति कायरसे कायर मनुष्यको भी वीर बना देते हैं। साहस और कायरता किसीकी बपौती नहीं है।"

जंगबहादुरने दूरसे रमजानअलीको आते हुए देखकर कहा—"देखो, वह रमजान भेड़-बकरियोंकी भाँति लोगोंको पीटता हुआ चला आ रहा है। यह मनुष्य है, या राक्षस!"

नरेन्द्रने जाते हुए कहा—"राक्षस मायावी कहे जाते हैं, इसलिए हमको इसे राक्षस समझना उचित है। एक दो हाथ तुम्हारे जमा देदे तो भी तुम बुरा न मानना।"

जंगबहादुर कुछ विचारता हुआ चला गया।

रमजानअली भी अपना डंडा फटकारता और कैदियोंको रुलाता हुआ एक सिरेसे दूसरे सिरे तक चला गया।

२१

दिव्याका घाव लगभग चार मासके कठिन परिश्रमके पश्चात् भर गया, और हड्डी भी जुड़ गयी, किन्तु उसके मनका घाव भरनेकी अपेक्षा और गहरा होता गया।

सर भगवान सिहने पूर्णरूपसे उसकी उपेक्षा की, और शारदाको भी न आने दिया। यह सत्य है कि वे अधिकतर दिल्लीमें रहे, और क्रिप्स मिशनके आनेके साथ वे बहुत ही व्यस्त रहे। उस समयकी राजनैतिक हलचल उन्हें पलभरका विश्राम नहीं दे रही थी, किन्तु फिर भी यदि वे आना चाहते तो आ सकते थे, या शारदाको ही भेज सकते थे। उनके भी मनका घाव नासूरकी भांति दिनपर दिन भयंकर होता जाता था। जो कुछ थोड़ासा स्नेह माधवीके प्रति था वह भी शुष्क हो गया था। यदि माधवी दिवाकरको उस असहाय अवस्थामें त्यागकर उनके पास आ जाती, तब उनकी प्रसन्नताका पार मिलना कठिन होता; किन्तु माधवीने भी अपने भाईका पक्ष सक्रिय रूपसे ग्रहण किया था। पिताको वह असन्तुष्ट कर सकती थी, परन्तु दिवाकरको उस असहाय अवस्थामें त्याग नहीं सकती थी।

जिस कठिनता और वेदनासे शारदा अपना जीवन व्यतीत कर रही थी, वह केवल उसीको ज्ञात था। दोनों सन्तानोंसे विलग होकर, पतिसे परित्यक्त होकर, काल-कोठरीकी बन्दिनीकी भाँति उसका जीवन व्यतीत हो रहा था। ऐश्वर्य और समृद्धिके शिखरपर आसीन होते हुए भी वह पथकी भिखारिणीसे भी दीन थी। सुस्वादु व्यञ्जन उसको विषके तुल्य कटु प्रतीत होते थे, वस्त्राभूषण उसको काटोंकी भाँति चुभते थे, दासदासियाँ उसको शत्रुओंसे अधिक दुखदायी विदित होते थे। उसके जीवनका सौख्य, शान्ति, सभी नष्ट हो चुका था; यहाँतक कि उसको अपने जीवनसे कोई मोह नहीं रह गया था। मृत्युकी कामना वह निरन्तर करती थी। आत्महत्याका विचार उसके हृदयमें कितनी बार उदय हुआ, किन्तु उसका परिणाम उसकी दोनों सन्तानें जन्मपर्यन्त भोगेंगी यही विचार उसको उस ओर अग्रसर होने नहीं देता था। दिवाकर और माधवी अपनेको ही उसके आत्मघातका कारण समझेंगे, जिससे वे दोनों भी निराश होकर आत्मघात करनेके लिए बाध्य होंगे। इसके अतिरिक्त वीर रमणीकी भाँति उसको आपदाओंसे लड़ना उचित है, यह विचार भी उसको आत्मघाती होनेसे बचा रहा था।

सर भगवान सिह ब्रिटिशशासनके कर्णधार गिने जा रहे थे। उनकी कार्य-कुशलताकी सराहना ब्रिटिशमंत्रिमंडलतक पहुँच गयी थी। युद्ध-प्रयासमें सहयोग देनेवाले व्यक्तियोंमें उनकी गणना प्रथम श्रेणीमें थी। उनकी ओरसे १० बमवर्षक वायुयान शाही वायुसेनामें काम करते थे, और उनके नाम से वायुयानोंकी एक टुकड़ी पृथक् ही घोषित कर दी गयी थी जो 'सर भगवान सिह एयर स्क्वेडरन' के नामसे विख्यात थी। ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलके सामने यह सुझाव रक्खा गया था कि उनकी इन सेवाओंके उपलक्षमें उनकी ताल्लुकदारीको स्वतन्त्र राज घोषित किया जाकर उन्हें 'हिज हाइनेस' बना दिया जावे, तथा ९ तोपोंकी सलामी भी प्रदान की जावे। वायसरायने उनकी अत्यधिक प्रशंसा की थी, और इसी सम्बन्धमें वे कई महीनेतक दिल्लीमें रहे। दिवाकर इधर मृत्युसे लड़ रहा था, और उधर वे दिल्लीमें बैठे हुए अपने लिए स्वतन्त्र राज्यकी स्थापनामें प्रयत्नशील थे।

युक्तप्रान्तमें उनके अधिकारोंमें बहुत वृद्धि हो गयी थी। यद्यपि उनका पद अभीतक एडवाइजरका ही था, किन्तु शासनकी सारी शक्ति उन्हींमे निहित थी। वे जो कहते या करते थे, उसमें कोई हस्ताक्षेप न करता था। उनकी सारी बातें, सारी योजनाएँ अनुमोदित होती थीं। राज्यसञ्चालनके सूत्रधार वही थे। उनकी महात्वाकांक्षा कुछ सन्तुष्ट होकर परम आनन्द अनुभव कर रही थी। 'स्वान्तः सुखाय' में वे इतने लीन थे कि उनको अपने परिवारके व्यक्तियोंकी कोई चिन्ता न थी। शारदा, माधवी और दिवाकरको वे लगभग भूल ही गये थे। उन लोगोंके प्रति उनका कुछ कर्त्तव्य है, यह प्रश्न उनके मनमें कभी उदय होता ही न था।

संध्याकी श्यामली छायासे भी म्लीनमुख शारदा अपने कमरेमें बैठी ऊबकर बँगलेके उद्यानमें घूम रही थी। उसके सन्मुख अनेक प्रश्न थे, और अनेक चिन्ताएँ थीं। दिवाकरकी आरोग्यताके समाचार प्रायः नित्य ही आते थे, जिनसे उसके उद्विग्न चित्तको शान्ति मिलती थी, वह भी कुछ अवसर के लिए, किन्तु जहाँ वह पत्र समाप्त कर देती उसका मन पहलेकी भाँति अशान्त हो जाता था। पत्र लिखनेका भार माधवीने ग्रहण किया था। आज दो दिनसे उसका पत्र न आनेसे वह कुछ विशेष चिन्तित थी। मनको विश्रान्ति देनेके लिए वह बगीचेमें टहलने लगी। घूमते घूमते वह उस ओर चली गयी जहाँ मालीके रहनेकी कोठरी बनी हुई थी। उसने देखा कि मालिन अपने बच्चोंके साथ बैठी हुई भोजन बना रही है, और उसका पति एक छोटे बच्चेको गोदमें लिये हुए खिला रहा है। उसको देखकर दोनों उठकर खड़े हो गये, और हाथ जोड़कर दोनोंने उसे प्रणाम किया। उसके बच्चे उसे देखकर कुछ शंकित होकर अपने माता-पिताका मुख देखने लगे। मालिनने उनको आदेश दिया कि वे उसको प्रणाम करें। मन्त्रचालित पुतलोंकी भाँति उन नंगे किन्तु हृष्ट-पुष्ट बालकोंने हाथ जोड़कर प्रणाम किया। शारदाने हँसते हुए आशीर्वाद दिया, और पूछा—"मालिन, तुम्हारे बड़े लड़केका क्या नाम है ?" माली कुछ वाक्-पटु था, और मालिन कुछ सकुचीली। मालीने अपने बड़े लड़केको उसके सामने लाकर कहा—"हुजूर, इसका नाम 'निर्बल' है।"

शारदाने विस्मित होकर पूछा—"निर्बल! इसका नाम निर्बल है? इतने हृष्ट-पुष्ट बालकको निर्बल कहकर पुकारना कदापि उचित नहीं है।"

मालीने ईषत् हास्यके साथ कहा—"हुजूर, शरीर पुष्ट तभी होगा, जब हम निर्बल होकर रहेंगे, क्योंकि निर्बलके बल भगवान होते है। भगवानका बल प्राप्त होनेसे शरीर और मन दोनों पुष्ट होंगे। पुष्ट शरीर और मन, आत्माको बल प्रदान करते हैं।"

शारदाने हँसकर कहा—"तुम तो तत्वज्ञानी मालूम होते हो।"

मालीने दाँतोंसे अपनी जिह्वा दबाते हुए कहा—"हुजूर, मिट्टीमें लोटने-वालोंको ज्ञान कहाँ मिलेगा ?"

मालिनने अपने मनमें विचार किया कि उसका पति ढिठाईसे उत्तर दे रहा है, रानीसाहबा कहीं रुष्ट न हो जावें, वह धीरे धीरे उसके समीप आकर खड़ी हो गयी, और बोली—"रामायण क्या इन्होंने पढ़ी है कि मानो जग लूट लिया है। हुजूर हम गरीबोंके नाम ऐसे ही होते हैं।" शारदा उसका अभिप्राय समझ गयी। हँसती हुई वह लौट पड़ी। कुछ दूर जानेके पश्चात् उसने सुना, मालिन कह रही थी—"तुम हर एकसे अपना ज्ञान बघारते रहते हो। बड़े छोटेका कुछ भी विचार नहीं रह गया है।"

मालीने क्या उत्तर दिया, उसने नहीं सुना।

शारदा सोचने लगी—" एक यह भी परिवार है। सब कितने प्रसन्न हैं, कितनी निश्चिन्ततासे अपने दिन व्यतीत करते हैं। पति-पत्नीमें कितना ऐक्य है। एक दूसरेकी सहायताके लिए वे कैसे उत्सुक रहते हैं। दोनों अपनी सन्तानको कितना अधिक प्यार करते हैं। दोनों कितने साम्यसे अपनी गृहस्थी चलाते हैं; एक दूसरेको सहयोग देते हैं, और सुख-दुख साथ-साथ भोगते हैं। न उनमें कलह है, न द्वेष है, न राग है, न रोष है। यदि वे कभी लड़ते भी होंगे तो केवल मेलको अधिक पुष्ट करनेके लिए।"

"एक मेरा परिवार है, जहाँ अशान्तिने अपना घर बना रखा है। पति-पत्नीमें मेल नहीं, पिता-पुत्रमें बैर है। ऐश्वर्य रहते हुए भी हम भिखारी हैं, राज्य रहते हुए भी रंक हैं। द्वेष, कलहने हमारे जीवनको विषमय बना रखा है। हमारा सारा परिवार छिन्न-भिन्न है,अस्त-व्यस्त है। मैं यहाँ रो-रोकर दिन काट रही हूँ। दिवाकर,माधवी रमईपुरमें अपनी आपत्तियोंसे युद्ध कर रहे हैं, और पतिदेव अपनी महत्वाकांक्षाओंकी पूर्तिमें संलग्न हैं। उनको न अपने परिवारसे प्रेम है, न अपनी स्त्रीसे प्रेम है, और न सन्तानसे प्रेम है। हम राजा कहलाते हैं, प्रान्तके महामन्त्री हैं, सारा राज्य-संचालन हमारी इच्छासे होता है, किन्तु वास्तवमें हम अन्तस्तलसे महान दरिद्री हैं, महान निर्बल हैं। हमारा जीवन हमारे लिए भार हो रहा है, और मैं तो जीवनसे इतनी ऊब उठी हूँ कि सदैव मृत्युकामना करती रहती हूँ। उधर दिवाकर भी मृत्युकी कामना करता होगा। हाय, यह जीवन हमारे लिए अभिशाप हो रहा है। मेरी समझमें नहीं आता कि मैं क्या करूँ।"

इसी समय सर भगवान सिंहने वहाँ आकर कहा—"क्या हो रहा है रानी ?"

उनके कण्ठस्वरसे प्रसन्नता झाँक रही थी।

शारदाने हँसनेकी चेष्टा करते हुए कहा—"कुछ नहीं, यों ही घूम रही हूँ।"

"आज तुमको एक बड़ा शुभ समाचार सुनानेके लिए आया हूँ।"

"पतिके लिए जो शुभ है, वह स्त्रीके लिए तो अत्यन्त सुखकर होगा।"

सर भगवान सिंह कुछ सन्तुष्ट हुए। उन्होंने कहा—"जिस उद्देश्यसे मैं इतने दिनोंतक दिल्ली रहा, और एड़ी-चोटीका पसीना एक कर दिया, वह कार्य लगभग सफल हो गया है।"

"वह क्या है, क्या मैं जान सकती हूँ ?"

"क्यों नहीं ? वही कहनेके लिए तो मैं आया हूँ। स्त्री पुरुषकी अर्धांगिनी है। यदि पुरुषकी उन्नति होती है तो उसकी स्त्रीकी भी मान-मर्यादामें वृद्धि होती है।"

"इस सद्भावनाके लिए मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।"

"मुझे आशा है कि अब शीघ्र ही तुम केवल 'रानी' न कहला कर 'हर हाइनेस' कहलाओगी, और तुम्हारा राज्य केवल अधिकारविहीन ताल्लुकेदारी न रहेगा, वरन साधिकार स्वतन्त्र राज्यके पदको प्राप्त करेगा, जैसी अन्य देशी रियासतें हैं। हमें नौ तोपोंकी सलामी भी मिलेगी।"

शारदाकी आन्तरिक पीड़ा इतनी वृहत् थी कि इस सन्देशकी प्रसन्नता उसीमें समाविष्ट हो गयी। किन्तु उसको यह भी विदित था कि यदि वह उनकी प्रसन्नतामें योग नहीं देगी तो परिणाम बड़ा भयंकर होगा।

उसने प्रसन्नताको बरबस खींचकर लाते हुए कहा—"यह सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई। कौन स्त्री अपने पतिका उत्थान देखकर प्रसन्न न होगी ?"

सर भगवान सिंहने उसके स्वरकी शुष्कता अनुभव कर ली।

उन्होंने तीक्ष्णदृष्टिसे उसकी ओर देखते हुए कहा—"रानी, तुम्हारी सन्तान तुम्हारे पास न होनेसे तुम सदैव मलीनमन रहती हो। मधुकी अनुपस्थिति मुझे भी दुखदायी है, किन्तु उस कुलांगारकी ओरसे मेरा मन पत्थरका हो गया है। जिस ब्रिटिश सरकारकी कृपासे हमारे वंशकी मर्यादावृद्धि होने जा रही है, भगीरथप्रयत्न सफल होने जा रहा है, वह उसीका विनाश करनेके लिए तत्पर है। उसे नहीं मालूम कि अंग्रेजी राज्य कितना शक्तिशाली है, वह हिमालयकी भाँति अचल है। यदि ये मुट्ठीभर कांग्रेसिये और क्रान्तिकारी हिमालयको खोदकर टुकड़े-टुकड़े कर सकनेमें समर्थ हों, तो अंग्रेजोंको हटा सकनेमें कृतकार्य होंगे। वे नहीं जानते कि उनको नाश करनेके लिए दो तीन वायुयान और थोड़ेसे बम ही पर्याप्त होंगे। जैसे बिल्ली चूहेको खिलाती है, वैसे ही सरकार भी उनको खिला रही है। कुत्ता जबतक भूँकता है तबतक कोई हानि नहीं है, किन्तु जिस दिन वह काटनेके लिए अग्रसर होगा, समझ लेना कि संसारमें वही दिन उसके जीवनका अंतिम दिन होगा।"

शारदाने नत नेत्रोंसे कहा—"किन्तु उसको मार्गपर लाना भी तो उचित है। वही हमारी एकमात्र पुत्र सन्तान है।"

उस समय एक नौकरने आकर कहा—"हुजूर, गवर्नर साहबके प्राइवेट सेक्रेटरी [illegible]"

यह कहकर वे चले गये ।

शारदाने आकाशकी नीलिमाकी ओर देखा, तारोंसे भरे हुए आकाशकी ओर देखा, और फिर अपने अन्धकारपूर्ण हृदयकी ओर देखा । दोनोंकी तुलना करती हुई वह भी बँगलेके भीतर चली गयी ।

१२

प्रभातकी अभ्यर्थनामें उषा ओसकणोंकी मौक्तिक माल तोड़-तोड़कर पृथ्वीपर छितराती हुई पश्चिम दिशामें कुछ लज्जा, कुछ संकोचके साथ पलायन कर रही थी । अरुणशिखा प्रसन्नतासे चिल्लाकर दो घड़ी पहलेसे उसके आगमनकी सूचना दे रही थी, किन्तु उषाको विश्वास न होता था । जब उसने अपनी आँखोंसे देख लिया, और उसके पीछे गुरुजन सूर्यदेवको आते देखा, तो वह अधिक देरतक वहाँ न ठहर सकी । शीतल मन्द समीर प्रभातका प्रेमसन्देश सुनानेके लिए उसके पीछे-पीछे भागने लगा ।

नसीम-सेहरीकी थपकियाँ नसीमाको गहरी नींदमें सुला देनेका प्रयत्न करने लगीं, किन्तु इमामबख्शने उसको सोने न दिया, और .जबरदस्ती उठाकर बैठा दिया ।

नसीमाने अँगड़ाई लेते हुए कहा---"सुबहकी ठंडी हवामें .जरा नींद आती है, वह भी तुम्हारे कारण नहीं आने पाती ।"

इमामबख्शने मन्द हास्यके साथ कहा---"सारा संसार जाग उठा है, और तुमको नींद आ रही है । मेरी बहन गुलाब इस समय तक स्नान-पूजासे छुट्टी पा गयी होगी, और चर्खा कात रही होगी ।"

नसीमाने सजग होकर कहा---"वाह, खूब याद दिलाया, आज ही तो चर्खा-दंगल है, मैं तो बिल्कुल भूल गयी थी ।"

यह कहकर उसने अपने पतिकी ओर सुहागभरे बंकिम कटाक्षसे देखा, और सन्तुष्टप्रेमकी मन्द मुस्कानके साथ शय्या त्याग कर उठ खड़ी हुई ।

धन्यवाद देना भी भूल गई ! आजकलकी दुनियामें नेकीका इस्तकबाल उपेक्षासे किया जाता है ! भला देखूँ, किसके सिरपर जीतका सेहरा बँधता है, मेरी बहन गुलाब-के या तुम्हारे । कुश्तीके दंगलमें, मैं तो मनोहर भाईसे हार गया था, अब आज यह देखना है कि मेरी बहनसे तुम हारती हो या नहीं ।"

"इसकी आशा छोड़ दो, मैं कभी तुम्हारी बहनसे नहीं हारनेवाली हूँ । मेरे मनोहर भैय्यासे तुम हमेशा हारोगे ।"

"मैं यही चाहता हूँ कि मैं हमेशा हारा करूँ, क्योंकि जीतनेसे कहीं अच्छा इनाम हारनेमें मिला करता है । शायद इस गाँवका यही रिवाज है ।"

"वह कैसे ?"

"मेरे हारनेके इनाममें ही तो तुम मुझको मिली हो, अगर जीत जाता तो अपना-सा मुँह लेकर चला जाता ।"

दोनों हँसने लगे। नसीमाने हँसते हुए कहा—"अच्छा, तब तो तुम्हारी बहन गुलाबको भी कोई राजकुमार मिल जायगा, क्योंकि वह मुझसे हारेगी जरूर!"

"क्या मालूम? थोड़ी ही देरमें मालूम हो जायगा।"

गंभीर होकर नसीमने कहा—"इन दिनों मैं गुलाबमें एक बड़ा रद्दोबदल देख रही हूँ। पहले जितनी वह खुशमिजाज और हँसमुख थी, अब नहीं है। संजीदगीकी वह मूर्ति बन गयी है। न कहीं आती है, न कहीं जाती है, और मुझसे भी दिल खोलकर बातें नहीं करती है। सदा मलीनमन रहती है, उसकी आँखें डरी हुई, और उत्कंठित, तथा आकुल दिखायी पड़ती हैं। उसकी गर्दन हमेशा जमीनकी ओर झुकी रहती है, वह किसी ओर आँख उठाकर नहीं देखती। गला हमेशा भरा-भरा रहता है।"

"कबसे तुम उसको इस तरह देखती हो?"

"लगभग उसी समयसे जबसे राजकुमार अपने डेरेपर चले गये हैं। जबतक वे उसके घरपर रहे रात-दिन उनकी सेवामें लगी रहती, वह कभी सोती थी या नहीं, यह भी मैं नहीं कह सकती, लेकिन जबसे कुछ अच्छे होनेपर वे अपनी बहन राजकुमारीके साथ सरकारी कोठीमें चले गये, तबसे उसका यह हाल है। वह अब कहीं आती जाती भी नहीं। कई दिनोंसे मैं कह रही हूँ कि आओ चलें दोनों राजकुमारियोंसे मिल आवें, किन्तु सदैव कोई न कोई बहाना बना देती है!"

"इसका कारण क्या हो सकता है, तुम्हीं बताओ, क्योंकि तुम दोनों बचपनसे साथ रही हो, और इसके अलावा एक स्त्रीसे दूसरी स्त्री अपना भेद कभी छिपा नहीं सकती।"

"मैं भी बहुत दिनोंसे गौर कर रही हूँ, लेकिन मेरी समझमें कुछ नहीं आता।"

"कहीं राजकुमारने उसका अपमान तो नहीं किया?"

'नहीं, नहीं, ऐसी बात होती तब तो वह जरूर कहती। दोनों राजकुमारियाँ साक्षात् देवियाँ हैं। उन्हें घमण्ड तो छूतक नहीं गया है, मेरे लिए दोनों परेशान रहती हैं, अगर किसी दिन न जा सकी, तो बुलावेपर बुलावे आते हैं, और बिना गये जान नहीं बचती। कंचनपुरके राजकुमार भी साक्षात् देवरूप हैं। वे भंगी, चमारोंकी सेवा-शुश्रूषामें कोई परहेज नहीं करते, उनके बाल-बच्चोंको कभी-कभी अपने हाथसे नहलाते-धुलाते हैं, और उनको दुनियामें कोई सरोकार नहीं है। उनको देखकर कोई उन्हें राजकुमार नहीं कह सकता। अब रह गये हमारे राजकुमार, वे सदैव आँखें बन्द किये पड़े रहते हैं। [illegible], लेकिन चलने-फिरनेकी ताकत तो अभीतक पूरे तौरपर नहीं

इमामबख्शने चिन्तित कण्ठसे कहा—"मतलब यह कि मेरी बहनका किसीने अपमान नहीं किया है। अगर ज़रा भी मुझे मालूम हो जाय कि उसका किसीने किसी तरह दिल दुखाया है, तो वह चाहे जितना बड़ा हो, मैं बदला लेनेमें कभी नहीं चूकूँगा। वह मेरी धर्म-बहन है, उसका दर्जा अपनी सगी बहन क्या, दुनियामें सबसे ऊँचा है।"

नसीमाने झिड़कते हुए कहा—"फिजूल आपेसे बाहर हुए जाते हो। उसका अपमान कर ही कौन सकता है? बिना स्त्रीके प्रोत्साहनके, पुरुष किसी स्त्रीका अपमान नहीं कर सकता। गुलाब जैसी शिष्ट लड़की मिलना कठिन है। रूपमें, गुणमें, भावोंमें, विचारमें, वह दोनों राजकुमारियोंसे कम नहीं है, बल्कि उनसे एक्कीस बैठती है। हमारी राजकुमारी तो उसपर जान देती है, क्योंकि उनके भाईके लिए उसने अपना खून दिया था। दूसरी लखनापुरकी राजकुमारी, जरूर कुछ खिंची खिंची रहती हैं, मगर वे भी उसकी इज्जत करती हैं।"

इमामबख्शने पूछा—"तब फिर उसके अनमने रहनेका क्या कारण है?"

नसीमाने उत्तर दिया—"अगर मैं जानती होती तो बताती। मैं लाख पूँछती हूँ, मगर वह जवाब नहीं देती। सूखी हँसी हँसते हुए कहती है कि 'मैं कहाँ अनमनी हूँ।' कभी-कभी तो वह एक आँखसे हँसती है, और एक आँखसे रोती है। कुछ और ही बात है। शायद वह किसीसे मुहब्बत करने लगी है।"

इमामबख्शने चौंककर कहा—"क्या कहा, वह किसीकी मुहब्बतमें फँस गयी है? नहीं, उसकी जैसी लड़कीके लिए यह गैर-मुमकिन है। मैं हरगिज यकीन नहीं कर सकता।"

नसीमाने हँसते हुए कहा—"न हो, अच्छा ही है, मगर मुझको तो आसार ऐसे ही नजर आते हैं। प्रेमकी आँख कभी छिपी नहीं रहती, वह तो जरूर भेद खोल देती है। हमारे राजकुमारका शब्द उसके कानमें जब जाता है, वह चौंक जाती है, उसके रोमांच हो आता है, बरबस उसके नेत्र एक बार—केवल एक बार—उनकी ओर चले जाते हैं, लेकिन दूसरे ही क्षण भयभीत दृष्टिसे पास वाले व्यक्तियोंको देखकर वह अपने नेत्र फिर पृथ्वीमें गड़ा लेती है। उसकी साँस फूलने-सी लगती है, उसका खून तेजीसे उसके गालोंपर दौड़कर वहीं ठहर जाता है। दूसरे क्षण वह वहाँसे भाग जाती है। अच्छा तुम्हीं बताओ, यह सब किसके लक्षण हैं?"

इमामबख्शने चिन्तित कण्ठसे कहा—"तब तो बहुत बुरा है। इस प्रेमका नतीजा कभी अच्छा नहीं हो सकता। कहाँ राजकुमार और कहाँ वह! दोनोंका विवाह कभी नहीं हो सकता। सुननेमें तो यह आता है कि राजकुमारकी शादी लखनापुरकी राजकुमारीसे करीब-करीब तय हो गयी है, ऐसी हालतमें जो नतीजा होगा, वह तुम्हीं विचार सकती हो।"

नसीमाने जाते हुए कहा—"इसी चिन्तामें मैं मरी जाती हूँ। खान्दानमें हमारी गुलाब कुछ उन लोगोंसे कम नहीं है, लेकिन सामाजिक अन्तर बहुत है। अब जाऊँगी, देर हो रही है।"

नसीमा चली गयी, और इमामबख्श भयभीत होकर गुलाबका भविष्य सोचने लगा।

१३

रमईपुरके चर्खा-दंगलकी धूमधाम उसी प्रकार हो रही थी जैसी वहाँ प्रत्येक कुश्तीके दंगलोंमें हुआ करती थी। वही उत्साह था, वही उत्सुकता थी, वैसी ही दर्शकोंकी भीड़ थी, वैसी ही चहल-पहल थी, और वैसी ही उसमें भाग लेनेवालोंकी संख्या थी। वर्षा ऋतुकी नदियोंकी भाँति जनसमुदाय चतुर्दिक ग्रामोंसे उमड़ता हुआ वहाँ चला आ रहा था। पहले दर्शकोंके हाथोंमें लाठियाँ इत्यादि रहा करते थे, किन्तु आज उनके हाथमें तकली थी, और कितने ही छोटा, बकसमें बन्द होनेवाला, चर्खा लिये हुए थे। इस दंगलमें केवल एक विशेषता थी, वह यह कि इसमें दर्शकों तथा प्रतियोगितामें भाग लेनेवालोंमें स्त्रियोंकी भी संख्या पर्याप्त थी।

जहाँ कुश्तीका दंगल हुआ करता था, उसी स्थानपर चर्खादंगलका आयोजन हुआ था। रहीम, मनोहर और इमामबख्श अपने साथियोंके साथ बड़े उत्साहसे दर्शकोंको बैठाने इत्यादिका प्रबंध कर रहे थे। इस दंगलके प्रति उनके मनमें वही उत्सुकता थी जो कुश्तीके दंगलमें होती थी। रणजीतको अपनी सफलता देखकर आनन्द हो रहा था। उन्होंने दिवाकरकी बीमारीके अवसरका पूर्ण लाभ उठाया था। रमईपुरके चतुर्दिक गाँवोंमें उन्होंने कांग्रेसका आदेश प्रचारित कर दिया था, उसका सन्देश घर-घर पहुँचा दिया था, और उसके आवाहनको प्रत्येक नर-नारीके कानोंमें सुना दिया था। सबसे पहले स्वयं अग्रसर होकर उन्होंने अछूतोंको समानता प्रदान की, और इसी प्रकार दूसरोंको भी उनके साथ सहृदय व्यवहारके लिए उत्तेजना दी। उनके प्रति जो निम्न भाव चला आ रहा था, उसके विरुद्ध आन्दोलन खड़ा कर दिया था, जिसके परिणामस्वरूप उनका सामाजिक स्तर उत्तरोत्तर ऊँचा उठ रहा था। वे भी मनुष्य हैं, और उनकी भावनाएँ भी वही हैं जो इतर मानवोंकी हैं, इस भावको स्थापित करनेमें उन्हें अभूतपूर्व सफलता मिली थी। सदियोंसे निम्न स्तरमें रहनेवाले अछूतोंकी निम्नतामें सुधार हुआ था। मैले-कुचैले रहनेकी रीतिमें परिवर्तन हो रहा था। वे और उनकी सन्तान अब साफ-सुथरी दिखायी पड़ती थी।

यशोधरा और माधवीके भी उत्साहका पारावार न मिलता था। उन्होंने अपने सामाजिक, राजकीय परिधानको उतारकर रख दिया था, और वे गाँवोंकी इतर स्त्रियोंके साथ समानताका व्यवहार करती थीं। उनके प्रति श्रद्धा और भक्ति लोगोंके हृदयोंमें उमड़ पड़ती थी। उन्होंने सबको आदेश दिया था कि कोई उन्हें राजकुमारीके नामसे सम्बोधित न करे, वरन् जनसाधारणकी भाँति उनको भी उनके नामसे पुकारा करें, किन्तु वे इस आदेशके पालनमें अपनेको असमर्थ पाती थीं। वर्षोंकी रूढ़ि और परम्परा उनको इतनी स्वतन्त्रता प्रदान करनेमें संकोच करती थी, यहाँतक कि गुलाव और नसीमा जो उनके साथ सतत रहती थीं, इस नियमकी अपवाद प्रमाणित नहीं हुई थीं। उन्होंने भी चर्खा-दंगलमें भाग लेना स्वीकार कर लिया था, यद्यपि उन्हें अपने सफल होनेकी कोई आशा न थी।

गुलाव और नसीमाका अभ्यास वहुत चढ़ा-वढ़ा था। उनके काते हुए सूतकी प्रशंसा चर्खा-संघतकने की थी, जिससे महीनसे महीन मलमल विनी जा सकती थी। गुलावकी मानसिक अवस्था दिनपर दिन विगड़ रही थी। अनजाने, उसकी इच्छाके विना, वह दिवाकरकी ओर आकृष्ट हो रही थी। वह भलीभांति जानती थी कि उसकी यह इच्छा अविहित है, और वह ऐसी ही है जैसे वामनके आकाश छूनेकी। किन्तु वह अवश थी। दिवाकरके प्रति वह किसी नवीनताका अनुभव नहीं करती थी, उन्हें अपरिचित नहीं समझती थी। उसको ऐसा विदित हो रहा था कि जन्मजन्मान्तरसे उनको जानती चली आ रही है, और वे इसके इतने निकट हैं, जितना कि उसका अपना मन है। प्रथम साक्षात्में ही उसके हृदयमें ये भाव आये थे। दिवाकरको आहत देखकर उसके हृदयमें वैसी ही हूक उठी थी, जैसी कि स्वयंके मुमूर्षु अवस्था प्राप्त होनेपर उठा करती है। न-मालूम क्यों उसके मनमें यह भावना प्रवलतम हो गयी थी कि उनकी रक्षा करनेमें वह अपने प्राणोंकी वाजी लगा देगी। उनके आरोग्य-लाभके लिए वह सतत चिन्तित रहती थी, और अहर्निशि भगवानसे प्रार्थना करती थी कि यदि वे जीवन लेना ही चाहते हैं तो उनके विनिमयमें उसके प्राणोंकी वलि स्वीकार करें, लेकिन उनपर आँच न आने दें। रातदिन जाग कर उसने उनकी परिचर्चा, सेवा-शुश्रूषा की थी, और मानसिक शान्ति उसने उसी दिन अनुभव की जब वे पूर्ण रूपसे स्वस्थ हो गये। जवसे दिवाकरकी चेतना लौटी थी, तवसे वह उनके सामने वहुत कम जाती थी, मनके न माननेपर, केवल दूरसे देखकर आँखोंकी पिपासा शान्त कर लिया करती थी। देवताके समान वह उनकी भक्ति करती थी, उनको स्पर्श करनेका साहस उनकी अचेतनावस्थामें भी कभी नहीं हुआ। उसके नेत्र यद्यपि सदैव नत रहते थे, किन्तु उनकी सजगताको कानोंने ग्रहण कर लिया था। उनके एक-एक श्वास-प्रश्वासका शब्द वह उसी प्रकार सुनती थी, जैसे कि वह अपना सुनती थी। यद्यपि स्थूल-रूपसे वह उनसे दूर थी, किन्तु सूक्ष्मरूपमें वह उनके अधिकतम निकट थी। वह अपनी कल्पनामें सजीवताका अनुभव करती थी। वह पहले चर्खा-दंगलमें भाग लेनेके लिए

उत्कंठित नहीं थी, किन्तु जब उसे यह विदित हुआ कि वह उनके आरोग्यलाभके उपलक्ष-में हो रहा है, और वे पुरस्कार स्वयं वितरण करेंगे, वह उसमें योगदानके लिए आकुल हो गयी। वह अनुभव करती थी कि उनके आरोग्यलाभ होनेकी सबसे अधिक प्रसन्नता तो उसीको हुई, तब क्या वह इस समारोहमें, इस पुण्ययज्ञमें, भाग न लेगी? वह इस लोभको संवरण न कर सकी, और प्रतियोगिता करनेवालोंकी सूचीमें उसने अपना नाम भी लिखा दिया। हर्ष-प्रकाशके सारे द्वार उसके लिए अवरुद्ध थे, किन्तु यह मार्ग तो खुला हुआ था। माधवीका हृदय उसके प्रति कृतज्ञतासे ओतप्रोत था। दो बार उसने अपने शरीरका रक्त उसके भाईके लिए निकलवा कर दिया था, और उनके प्राणोंकी रक्षामें उसका प्रयास सर्वश्रेष्ठ था। उसकी निस्पृह तथा तन्मय सेवा-शुश्रूषासे भी वह पूर्ण रूपसे अवगत थी। अपने इतने त्यागके कारण गुलाब, माधवीके अति निकट पहुँच गयी थी, और वह उसपर इतनी अनुरक्त हो गयी थी कि उससे मिले बिना उसे शान्ति न मिलती थी। उसके घरसे, सरकारी कोठीमें जानेके लिए वह बिल्कुल इच्छुक नहीं थी, किन्तु अपनी माँकी आज्ञा भी तो वह नहीं टाल सकती थी। दूसरेके घरमें शारदा अपना पुत्र असहाय अवस्थामें अधिक दिनोंतक रखना उचित नहीं समझती थी, क्योंकि उसे उनकी असुविधाकी ओर चिन्ता थी, यद्यपि वास्तवमें वहाँका कोई व्यक्ति यह अनुभव नहीं कर रहा था। जब शारदाको मालूम हुआ कि रूपकुँवरि भी वहाँ पहुँच गयी है, उसे कुछ शान्ति मिली। वह उसके स्वभावसे परिचित थी। उसे विश्वास था कि रूपकुँवरि उसके दिवाकरकी सेवा उतनी ही तत्परतासे करेगी, जितनी कि वह स्वयं करती। उसने पत्रद्वारा रूपकुँवरिको वह भार भी सौंप दिया था, जिसे उसने अति सन्तुष्ट होकर ग्रहण किया। इसी कारणसे उसको भी माधवी इत्यादिके साथ मनोहरके घरसे सरकारी कोठीमें आना अनिवार्य हो गया। उसने अनुभव किया कि उसकी बाई लालजीकी सन्तान उसके जंगबहादुरसे भी अधिक आदरणीय हैं, और उनके प्रति कर्तव्यपालनके साथ अपने पूर्व अपराधके प्रायश्चित्त-का भी मार्ग उसको देख पड़ा। गुलाबको छोड़ना उसके लिए यद्यपि कठिन था, किन्तु [illegible] उसको यही करनेका आदेश दिया। गुलाबपर वह इतनी अनुरक्त हो गयी थी कि उसके मनमें एक कामना उत्तरोत्तर बलवती होती जा रही थी। वह उसे अपनी पुत्रवधू बनानेके लिए लालायित थी। उसने रहीमका ध्यान इस सम्बन्धकी ओर आकर्षित किया था, और उसने भी इस प्रस्तावका स्वागत किया था।

इन सब घटनाओंमें [illegible] ही सब कुछ-सा रहता था। गुलाबके [illegible] किन्तु [illegible] [illegible]

गुलाव जितनी दिवाकरके सम्पर्कसे दूर रहती थी, उतनी ही प्रसन्नता उसे होती थी, और गुलावने भी उसके इस प्रयत्नको कुछ-कुछ समझ लिया था।

दंगलके प्रारम्भकी सूचना शंखध्वनिसे की गयी। पहले पुरुषोंकी प्रतियोगिता आरम्भ हुई। सैकड़ों आदमी एक साथ चर्खा चलाने लगे, जिनके भन्नाटेसे वह स्थल गूँज उठा। मनोहर और इमामवख्श भी उसमें सम्मिलित हुए। कातनेका समय आधा घंटा निर्धारित हुआ था। समय समाप्त होनेपर घंटा वजनेके साथ लोगोंने अपने-अपने चर्खे वन्द कर दिये, और स्वयंसेवक सूत इकट्ठा करने लगे। रणजीत और रहीम परीक्षक नियुक्त हुए थे। वे एकान्तमें वैठकर निर्णय करने लगे।

पुरुषोंके दंगलके पश्चात् स्त्रियोंकी प्रतियोगिता आरम्भ हुई। इसमें सम्मिलित होनेवालोंकी संख्या भी पर्याप्त थी। एक वार वह स्थान फिर चर्खेके रवसे मुखरित हो उठा। पुरुप प्रतियोगी भी उनकी चतुरता निरीक्षण कर रहे थे। गुलाव, यशोधरा, नसीमा और माधवी एकाग्रतासे सूत कातनेमें लगी हुई थीं, किन्तु सवसे अधिक क्षिप्रता गुलावमें देखनेको मिल रही थी। मशीनकी भाँति उसके हाथ चल रहे थे, और मकड़ीके जालेके सदृश महीन सूत कतता हुआ तकुएमें लिपटता जा रहा था। तार इतना महीन था कि दर्शकोंको यही दृष्टिगोचर होता था कि केवल चर्खा चल रहा है, किन्तु चुटकीकी रूई जो धीरे-धीरे समाप्त हो रही थी उससे अवश्य सूचित हो रहा था कि सूत काता जा रहा है। नसीमा भी उसीकी तरह सूत कात रही थी। दोनोंकी ओर दर्शक चकित होकर देख रहे थे। समय समाप्त होनेपर वह प्रतियोगिता भी समाप्त हुई, और सूत इकट्ठा किया जाकर परीक्षकोंके समीप भेज दिया गया।

प्रतियोगिताका परिणाम जाननेके लिए परीक्षार्थी और दर्शक सव एक भाँति उत्सुक थे। उनको शान्त करनेके लिए दिवाकरने रंगमंचपर आकर वक्तृता देना प्रारम्भ किया। उसको देखकर उन्होंने करतलध्वनिके साथ उसका स्वागत किया। वह अव भी वहुत निर्वल था, उसमें खड़े होनेकी शक्ति नहीं थी। उसका कण्ठशब्द भी धीमा था, और वह अधिक देर तक वोल न सका। उसकी असहाय अवस्थाको जानकर जनताने उसको वैठ जानेका अनुरोध किया। दिवाकरने कुर्सीपर वैठकर उनको अछूतोंके प्रति उदार होनेके लिए उपदेश देना आरम्भ किया।

थोड़ी देर पश्चात् परीक्षकोंने अपना निर्णय दे दिया। रणजीतने रंगमञ्चपर आकर कहा—"आजका चर्खादंगल वड़ी सफलतासे सम्पन्न हुआ है। पुरुषोंमें १५७ व्यक्तियोंने, और स्त्रियोंमें ८५ स्त्रियोंने आजकी प्रतियोगितामें भाग लिया है। पुरुषोंमें सवसे प्रथम उत्तीर्ण होनेवाला श्री वंशीलाल नामक इसी ग्रामका एक हरिजन नवयुवक है, और स्त्रियोंमें प्रथम स्थान अधिकृत करनेवाली हमारे चिरपरिचित मनोहरकी वहन गुलाव-कुँवर है। सभापति महोदयसे प्रार्थना करूँगा कि दोनोंको पुरस्कार दिया जावे।

किन्तु उस आदेशको कौन सुनता है। स्वतन्त्रताकी वायुने उनमें साहस और शक्ति पर्याप्त मात्रामें प्रदान कर दी थी। वे तीनों एक साथ कूद पड़े। नीचे चक्रधर अपने साथियोंके साथ उनको लोक लेनेके लिए प्रस्तुत था।

इसी समय जेलका घंटा, जो भयंकर आपत्ति तथा किसी कैदीके भाग जानेपर बजा करता है, बजने लगा। रमजानअलीने कहा—"अरे, बड़ी भूल हुई, रस्सा काटना भूल गया। जिस मार्गसे हमलोग आये हैं, उसी मार्गसे वे जेलकी दीवारपर आ जायँगे, और हमारी गतिविधि देखनेका प्रयास करेंगे, इसके अतिरिक्त वे अन्वेषक प्रकाश (सर्च लाइट) द्वारा हमारी गतिविधिका अनुसरण करेंगे। शीघ्रता कीजिये।"

पास ही खड़ी हुई जेलकी मोटरके सदृश मोटरपर वे सब बैठ गये, और वह उन्हें लेकर अपने निर्दिष्ट पथकी ओर अग्रसर हुई।

उधर जेलका सिंहद्वार भी खुल गया, और मोटर साइकिलें तथा मोटरें चारों ओर दौड़ने लगीं।

चक्रधरसे नरेन्द्रने कहा—"आप आगये, अब मैं निश्चिन्त हुआ। कार्यभार अब आप सँभालें, क्योंकि बहुत नाजुक परिस्थिति इस समय है। दीनानाथने रमजानका वेष धारणकर हमारी बड़ी सहायता की है।"

इसी समय जेलके अधिकारियोंकी एक मोटर साइकिल उनके समीप आयी, और ठहरनेका आदेश उसके चालकने दिया।

रमजानने उसको पहचान लिया। उसने मोटरके पिछले भागसे कहा—"कौन, जानमोहम्मद, क्या है? मैं हूं रमजानअली। मुझे कुछ और सवारी न मिली, तो कैदियोंको लानेवाली मोटर मिल गयी। मैं भी कैदियोंको ढूंढ़ रहा हूं। इस ओर मैं जा रहा हूं, तुम किसी दूसरी सिम्त जाओ।"

जानमोहम्मदने रमजानको पहचान कर कहा—"अच्छा, रमजान मियां हैं! क्या बताऊं जल्दीमें बेड़ियोंका बण्डल लेना भूल गया। तुम्हारे पास हो तो दोचार बेड़ियां दे दो।"

विना किसी दुर्घटनाके वे निर्दिष्ट स्थानपर पहुँच गये। मोटरके अन्दर बैठे हुए तीनोंने अपने वेष परिवर्त्तित कर लिये थे। उनके मुख लम्बी दाढ़ी और मूछोंसे ढँके हुए थे, और सब रोमन कैथलिक सम्प्रदायके पादड़ियोंकी भाँति वस्त्र पहने हुए थे। नरेन्द्रने कहा—"जीवनका यह अनुभव बड़ा लोमहर्षक रहा!"

चक्रधरने उत्तर दिया—"जब हम पूर्वीय रणक्षेत्रमें शत्रुओंसे लोहा लेंगे तबका अनुभव इससे भी अधिक लोमहर्षक होगा।"

जंगबहादुरने हँसते हुए कहा—"उसी बलिदानकी तो यह भूमिका है।"

चक्रधर और नरेन्द्र एक मोटरमें बैठ गये, और दूसरीमें रमज़ान और जंगबहादुर। दोनों मोटरें प्रतिकूल दिशाओंमें चल दीं।

पञ्चम खण्ड

१

सर भगवान सिंहने उत्सुकतासे देखते हुए पूछा—"क्या समाचार है सर गबर्ट ?"

सर गबर्ट युक्तप्रान्तके गृह-विभागके सेक्रेटरीने फाइलोंको रखते हुए कहा—"आजके समाचार बड़े भयंकर हैं। कांग्रेसका अधिवेशन बाम्बेमें होने जा रहा है, जिसकी सूचना प्रकाशित हो चुकी है। इस प्रान्तमें भी अशान्तिका विस्फोट होनेवाला है। पुलिस विभाग यद्यपि बहुत सतर्क है, किन्तु हमको अपनी फौजको हर जगह भेज देना चाहिये जो समयपर पुलिसकी सहायता कर सके। भारतीय जनता अत्यन्त सतर्कतासे उपयुक्त अवसर देख रही है, शक्ति हथियानेके लिए। भारतीय पुलिसपर विश्वास करना बुद्धिमत्ता नहीं है।"

मि० जेम्सने फाइल देखते हुए कहा—"नरेन्द्र नामक व्यक्ति लखनऊका रहने वाला है। इसके माता-पिता जीवित नही हैं। उसके पिताके पास अच्छी सम्पत्ति थी, किन्तु नरेन्द्रने उसको उड़ा दिया। वह आवारा घूमता है, इस समय उसके पास रहनेके लिए मकान तक नही है.....।"

सर भगवान सिंहने अधीरतासे पूछा—"मैं यह जानना चाहता हूँ कि ये दोनों कब गिरफ्तार हुए थे ?"

मिस्टर जेम्सने काग़ज़ोंको उलटते हुए कहा—"नरेन्द्र २१ जनवरी सन् १९४२ को, और जंगवहादुर ७ अगस्त सन् १९४१ को। अरे, यह शायद वही युवक है जिसने आपपर हमला किया था। हाँ, ठीक है, आपके अर्धसरकारी पत्र (D. O.) की प्रतिलिपि यह है।"

सर भगवान सिंहने कुछ सोचते हुए कहा—"ये दोनों मेरे ही उद्योगसे गिरफ्तार हुए थे। नरेन्द्र वही है जो मेरे लड़केको वहका रहा था, और जंगव्हादुर, मेरे गाँवकी रियाया है। यह भी वड़ा शातिर वदमाश है। इसीने मेरे गाँवमें वगावत फैलाना चाहा था। ये लोग ज़्यादा दूर नही भाग सकते, घूम-फिरकर एक न एक दिन गाँव वापस आवेंगे ही। आज ही मैं अपने नौकरोंको लिखे देता हूँ कि वे जंगवहादुरकी माँका पता लगावें, वह उससे मिलने ज़रूर जायगा।"

सर रावर्टने हँसते हुए कहा—"पुलिस विभागसे अधिक सतर्क तो आप हैं। आप जैसे भारतीयोंके वलपर ही तो ब्रिटिश शासन यहाँपर स्थापित है।"

सर भगवान सिंह पुलकित हो गये। यद्यपि रावर्ट उनके मातहत थे, किन्तु गौरांग होनेके कारण वे उसका आदर अपने अफसरसे भी अधिक करते थे।

मिस्टर जेम्सने सर रावर्टको अनुमोदन करते हुए कहा—"तभी तो उस दिन हिज एक्सेलन्सीने हमलोगोंके सामने कहा था—"सर भगवान सिंह-जैसे कार्यकुशल व्यक्ति वहुत कम मिलते हैं। इनकी सेवाएँ इतनी अमूल्य हैं जिनका पुरस्कार नही दिया जा सकता"।

सर रावर्टने कहा—"अमूल्य सेवाओंका यदि मूल्य हो, तो वे अमूल्य क्यों कहलावें। यह प्रयत्न अवश्य हो रहा है कि नौ तोपोंकी सलामी और जी० सी० आई० ई० के खितावके साथ कल्याणपुरको भारतीय स्टेट वना दिया जाय।"

मि० जेम्सने चकित होकर कहा—"यह आपने वड़ी .खुशखवरी सुनायी। सर भगवान इस इज्जतके लिए सर्वथा योग्य हैं।"

सर भगवान सिंहने प्रसन्न कण्ठसे कहा—"यह सव आपलोगोंकी कृपा है। आप लोगोंके सहयोगके विना मैं कर ही क्या सकता हूँ। हाँ, तो आपलोगोंकी यह राय है कि पुलिसपर अधिक विश्वास नहीं किया जा सकता, इसलिए अंग्रेजी फौजका प्रवन्ध

होना आवश्यक है। इस सम्बन्धमें मैं फौजी सेक्रेटरीसे परामर्श करूँगा। युद्धसे लौटी हुई अंग्रेजी फौजकी नियुक्ति प्रत्येक नगरमें कर दी जाय, और उसकी जगह भारतीय फौजको भेज दिया जाय।"

सर राबर्ट—"किन्तु भारतीय फौज तो उससे भी अधिक अविश्वसनीय है। बरमा युद्धमें भारतीय सेना शत्रुओंसे पर्याप्त संख्यामें मिल गयी है।"

सर भगवान—"इसका मुझे ध्यान है, किन्तु यहाँकी हालत ज्यादा भयोत्पादक है, हमें यहाँ विनाशका ताण्डव करना है। कांग्रेसको समूल नष्ट कर देना है। इस समय उसको जीवित रखनेसे युद्ध-प्रयासमें बड़ी रुकावट पैदा हो जायगी। ये लोग जापानसे मिलकर हमारा नाश करना चाहते हैं। कांग्रेस इस समय 'पाँचवी श्रेणी' हो रही है। इसको समूल नष्ट करनेमें ही हमारा कल्याण है। क्यों सर राबर्ट आपका क्या विचार है?"

सर राबर्ट—"इस प्रश्नके दो उत्तर नहीं हो सकते। केवल कठिनता यह है कि कांग्रेस निःशस्त्रताका जामा पहने हुए है, जिसपर सशस्त्र आक्रमण होना कठिन है।"

मि० जेम्स—"यह कौन कठिन है? हमारे गुप्तचर उस निःशस्त्र आन्दोलनको बहुत शीघ्र सशस्त्र बना देंगे। मनुष्यको बहुत शीघ्र उग्र किया जा सकता है। जनसमूहको उग्र कर देना नितान्त सरल है।"

सर भगवान—"बेशक, एक मनुष्यकी प्रेरणासे निःशस्त्र आन्दोलन सशस्त्र हो जायगा। आप चिन्ता न कीजिये। इसका भार मेरे ऊपर रहा। मैं तो भारतीय जन-क्रान्तिको आमूल नष्ट कर देनेके लिए कटिबद्ध हूँ।"

सर राबर्ट—"केन्द्रीय सरकारका आदेश प्राप्त हुआ है कि बम्बई अधिवेशनमें ही कांग्रेस ग़ैर-कानूनी संस्था घोषित कर दी जायगी, और उसके सब नेता एक साथ गिरफ्तार हो जायँगे, इसलिए इस प्रान्तकी कांग्रेस और सभी संस्थाएँ तुरन्त ही ग़ैर-कानूनी घोषित कर दी जायँ तथा प्रान्तीय नेता गिरफ्तार कर लिये जायँ। वही हुक्म बतानेके लिए तो आपके पास आया हूँ।"

सर भगवान सिंह—"यही तो मेरा सुझाव था, जो मैंने केन्द्रीय सरकारके सन्मुख रक्खा था। नेताओंको एक साथ गिरफ्तार कर लेनेसे सारी विपत्ति जड़-मूलसे नष्ट हो जायगी। जनताको कुचल देना कुछ कठिन नहीं है। मैं दो दिनमें इस आन्दोलनको समाप्त करनेकी क्षमता रखता हूँ।"

सर राबर्टने प्रशंसापूर्ण नेत्रोंसे उनकी ओर देखा, फिर कहा—"सरकारको आपसे ऐसी ही आशा है।"

सर भगवान—"अब आपलोग जाइये। मैं परामर्शके लिए गवर्नर साहबके पास जा रहा हूँ। आप तमाम जिलेके अफ़सरोंको इसी आशयका आदेश-पत्र लिखवाकर तुरन्त भिजवा दें। अब तो खुलकर खेलना है, कांग्रेसका नाम-निशान मिटा देना है।"

सर राबर्ट और मिस्टर जेम्सके साथ वे भी हिज़ एक्सेलन्सी गवर्नरसे मिलनेके लिए चल दिये।

२

शारदाके आनेसे रमईपुरमें एक नया उत्साह पैदा हो गया था। गाँवके नर-नारी अपनी रानीके प्रति विशेषरूपसे आकृष्ट हुए थे। उन्होंने जब उसकी जयनादसे आकाश कँपा दिया, उस समय उसने एक अभूतपूर्व आनन्द अनुभव किया, जैसा कि आजके पहले उसने कभी नहीं अनुभव किया था। यह जय-जयकार उसकी प्रजाकी आन्तरिक प्रेरणासे उत्पन्न हुआ था, और इस कारण उसमें सत्यताकी ध्वनि थी, जिसने उसके हृदयको भी प्रभावित कर दिया। हर्षसे उसका रोम-रोम खड़ा हो गया। जनताका जयनाद नगण्यसे नगण्य व्यक्तिको रोमाञ्चित कर देता है। माधवी और यशोधराने उससे प्रार्थना की कि वह उनका नेतृत्व ग्रहण करे। जनताने विनय की कि वह उनको सन्मार्गपर परिचालित करे। जो जनता अशिष्ट, उद्धत, उद्दण्ड और बदमाश इत्यादि विशेषणोंसे पुकारी जाती थी, वही इस समय गऊसे भी अधिक शान्त, और सरलचित्त थी। शारदाकी अंगुलिकाके तुच्छ संकेतपर वह अपने प्राणोंको निछावर कर देनेके लिए तैयार थी।

शारदाका आगमन रमईपुरमें दिवाकरको पिताके आज्ञानुसार चलानेके लिए हुआ था, किन्तु यहाँ आकर उसको जो मानसिक शान्ति मिली, जो हर्षावेग उसे प्राप्त हुआ, वह कल्पनातीत था, और धीरे-धीरे वह उन्हींके रंगमें रँगी जा रही थी। माधवी और यशोधरा, नसीम और गुलाब, रूपकुँवरि और नसीबन, उसके सामने इतने कार्यक्रम रख रही थीं कि जिससे उसको यह सोचनेका अवसर ही नहीं मिलता था कि वह किस उद्देश्यसे वहाँ आयी थी। दिवाकरने उसको भी अपनी ओर आकृष्ट कर लिया था, और वह लखनऊ प्रत्यागमनकी बाततक न सोचती थी।

इस समय वह यशोधराको दूसरी दृष्टिसे देख रही थी। उसको माधवीके प्रस्तावका निखरा रूप देखनेको मिला। वास्तवमें वह उसकी पुत्रवधू होनेके लिए सर्वथा उपयुक्त थी। उसने एक शुभ तिथि देखकर उस सम्बन्धको पक्का करनेके लिए यशोधराको आभूषण भी प्रदान कर दिये। उस दिन दिवाकरको मालूम हुआ कि उसका विवाह यशोधरासे निर्णीत हुआ है। उसके सामने एक नया प्रश्न उपस्थित हुआ। उसने शारदाके पास जाकर कहा —"अम्मा, यह तुमने क्या किया?"

शारदाने उसकी ओर विस्मित दृष्टिसे देखते हुए कहा—"क्यों, मुझसे कौनसा अपराध हुआ है?"

"अपराध तो माँ कभी कर ही नहीं सकती, किन्तु जब्र कर सकती है।"

"आखिर कहो, वह क्या?"

"यशोके साथ तुमने मेरा विवाह स्थिर कर दिया?"

"मुझे तो यह नहीं ज्ञात था कि मेरा एकमात्र पुत्र सदा कुँवारा रहेगा, और मैं पुत्रवधूका मुख देखे बिना मर जाऊँगी।"

"अम्मा, देशकी ऐसी विपन्न अवस्थामें तुम पुत्र-वधूका मुख देखनेकी कामना करती हो।"

"कौन माँ इसकी कामना नहीं करती? और मेरा कर्त्तव्य भी तो मुझे पालन करना है। देशसेवा तुम समुचित रूपसे कर सको, इसलिए माधवीने तुम्हारे लिए यशोधराको मनोनीत किया है।"

"क्या इस नाटककी सूत्रधार माधवी है ? वह अभी अज्ञान बालिका है, किन्तु अम्मा, तुमको तो सोचना था। यशोको मैं माधवीके समान ही समझता हूँ। अम्मा, क्षमा करना, इतना गुरुतर अपराध मैं नहीं कर सकूँगा।"

"किन्तु तुम भी यह विचार लेना कि इस प्रस्तावको न माननसे, माधवी और यशोधरा दोनोंकी सुख-शान्ति नष्ट हो जायगी, मेरी चिरसञ्चित अभिलाषा भी छिन्न-भिन्न हो जायगी।"

दिवाकरने कोई उत्तर नहीं दिया, वह चुपचाप चला गया। एकान्तमें जाकर सोचने लगा—"यह क्या हुआ ? मैं क्या विचार रहा था, और घटित क्या हो रहा है ! मेरे भाग्यमें क्या है, यह मैं नहीं जानता। संसारमें मैं केवल अशान्ति लेकर ही उत्पन्न हुआ हूँ। जहाँ जाता हूँ, वहीं अशान्ति उत्पन्न करता हूँ। मेरे कारण पिताके हृदयमें अशान्ति थी ही, अब देखता हूँ कि माताको भी असन्तुष्ट करना पड़ेगा। रणजीतके यहाँ रहनेका कारण शायद अम्मा और माधवीने यही समझा कि मैं यशोधरापर मुग्ध हूँ। संसारमें पवित्र प्रेमकी भावना क्या नहीं समझी जा सकती ? अब माधवीकी ओरसे यह प्रस्ताव उपस्थित हुआ है, तब क्या इसमें यशोधराकी भी अनुमति है ? दोनों एक हृदय और एक प्राण हैं।"

"यशोधराके व्यवहारमें मैं आजकल बहुत परिवर्त्तन देख रहा हूँ। वह मेरे सामने आनेमें संकोच करती है, और मुझसे दूर-दूर रहनेकी चेष्टा करती है। उसकी चितवन, लज्जा और अनुरागसे रञ्जित रहती है। अभीतक मैंने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया था, वयससे उत्पन्न हुई सहज लज्जा ही अनुमान करता था, किन्तु आजकी घटनासे यह स्पष्ट है कि वह मुझे किसी अन्य दृष्टिसे देखती है। किन्तु इसका परिणाम क्या होगा कौन जाने !"

"मैं यह प्रतिज्ञा कर चुका हूँ कि भारतको स्वतन्त्र करनेके पश्चात् ही विवा करूँगा, नहीं तो उसी प्रयासमें प्राण विसर्जित कर दूँगा। स्वातन्त्र्य-संग्रामकी रणभे बजने जा रही है। बम्बईमें कांग्रेसका अधिवेशन होने जा रहा है, जिसमें स्वतंत्रताकी घोष की जायगी। भारतका प्रत्येक नर-नारी अपने प्राणोंकी बाजी लगा देगा, तब क्या

अवसर मेरे हास, विलास और दाम्पत्य-सुख अनुभव करनेका है ? नरकंकालोंकी वेदीपर क्या मेरा विवाह होगा ? मानवोंकी ठठरियोंकी शय्यापर क्या मेरी सुहागरात मनायी जायगी ? रक्तकी धारामे क्या मैं सोहाग माँग भरूँगा ? उफ ! यह अवसर मेरे विवाहका कदापि नही है । समरांगणमें जाते हुए युवकका विवाह करना क्या उचित है ? नहीं, मै विवाह करके अपने आपको भ्रष्ट नहीं कर सकता !"

"विवाहका मुख्य उद्देश्य प्रजाकी सृष्टि है । गुलामोंकी उत्पत्तिसे संसारका क्या उपकार होगा ? पशुओंकी उत्पत्तिसे किसी न किसी रूपमें कल्याण हो सकता है, किन्तु गुलामोंकी उत्पत्तिसे तो कोई उपकार हो ही नहीं सकता । किसी व्रतसे दीक्षित पुरुषके लिए, जब व्रत पूर्ण हो तभी गृहस्थ जीवन व्यतीत करनेका अधिकार मिलता है । हमारे पूर्वजोंमें लक्ष्मण ऐसे ही वीर-व्रती थे, उन्होंने अपने व्रत-कालमें नींद, भोजन और स्त्री—तीनोंका त्याग कर दिया था, तब मैं उनकी सन्तान होकर रण-आह्वानके समय अपना मुख अपनी स्त्रीके आचलमें छिपाता फिरूँ ? नहीं, मैं यह सौदा करनेके लिए कदापि तैयार नहीं हूँ ।"

"तब क्या उपाय करूँ, जिसमें अम्माको कष्ट न हो । उनको प्रसन्न करनेके लिए क्या मुझे अपना बलिदान करना पड़ेगा? माधवी और यशोधराकी प्रसन्नताका भी तो प्रश्न सन्मुख है? कोई मेरे हृदयमें बारम्बार कह रहा है कि मेरे जीवनका यह अन्तिम पटाक्षेप है, तब क्यों मैं एक बालिकाको जिसको मै माधवीके समान प्यार करता हूँ, दुखी बनाऊँ, उसको वैधव्यके अभिशापसे सन्तप्त करूँ ? उसके जीवन-सौख्यको नष्ट करना क्या मेरे लिए उचित होगा ?"

इसी समय माधवीने आकर कहा—"भैया, यह क्या ? अम्मा कह रही है कि तुम विवाह करनेसे इनकार कर रहे हो, यह क्या सत्य है ?"

उसकी आँखें उसके आँसुओंके बँधे हुए प्रवाहमें डूब-उतरा रही थीं । दिवाकर-को सत्य कहनेका साहस न हुआ । उसने उसके अश्रुओंको पोंछते हुए कहा—"मधु तेरा कहना क्या टाल सकता हूँ ? तेरे विवाहके पश्चात् मैं भी तेरे कहनेके अनुसार अवश्य विवाह करूँगा ।"

माधवीने रोती हुई आँखसे हँसते हुए कहा—"तो तुम विवाह करोगे, मुझको और यशोको निराश नहीं करोगे ?"

दिवाकरने कहा—"नहीं ।" और माधवी हर्षसे ओतप्रोत शुभसंवाद सुनानेके लिए चली गयी ।

३

युग-युगसे भारतकी रक्षामें चिन्तित हिमालयके चरणोंमें नरन्द्रने भी अपने साथियोंके साथ आश्रय ग्रहण किया । उसने भी अपने पादपोंकी रोमावलिमें उसके शत-

सहस्र सैनिकोंको छिपा लिया। आजादीके नशेसे मतवाले सिपाही भूख-प्याससे भयभीत नहीं होते थे, किन्तु हिमालय अपने अतिथियोंको कब भूखा रख सकता था, उनके लिए अनेक प्रकारके फल-फूल, कन्द-मूलका प्रबन्ध कर दिया, जिससे उन्हें सात्विक बल प्राप्त हुआ, जो स्वतन्त्र होनेके लिए उन्हें द्विगुणित उत्साहसे प्रेरित करने लगा। हिमालयने अपने दूत पवनके द्वारा उन्हें बल, और दृढ़ताका सन्देश भेजा, और वृक्षोंका मधुर गुञ्जन उन्हें रणभेरीकी भाँति अपनेको बलिदान करानेके निमित्त उत्तेजित करने लगा।

संवत् १९९९ के श्रावणकी वह अमावस्या थी। सूर्य और चंद्र एक ही राशिपर स्थित होकर उन मतवाले सैनिकोंको ब्रिटिश सिंहसे छिपानेके लिए अनवरत वर्षा कर रहे थे, और हिमालयकी तराईके वृक्ष उनके ऊपर अपनी छाया किये हुए थे, जिससे वर्षाका वेग उन मनस्वियोंको प्रतीत नहीं होता था। हिमालयने अपने निम्न श्रेणीके अनुचर-शिला-खण्डों द्वारा उनको जलसे बचानेके लिए प्रबन्ध कर दिया था। आजादीके सिपाही उन्हींपर ठहरे हुए प्रस्थानके लिए उद्यत खड़े थे।

एक ऊँचे शिलाखण्डपर खड़े होकर नरेन्द्र कहने लगा—"साथियो, जिस दिनकी प्रतीक्षा हम वर्षोंसे कर रहे थे, आज वह शुभ अवसर प्राप्त हुआ है। राष्ट्रीय महासभाने भी स्वतन्त्रताकी घोषणा कर दी है। राष्ट्रके कर्णधारोंने भी मुक्तकण्ठसे स्वतन्त्रता प्राप्त करने अथवा उसके प्रयासमें मर जानेका आदेश दिया है। अवसर भी यही उपयुक्त है। ब्रिटेनने जापानसे पराजित होकर अपनी सेनाओंको पीछे हटाते हुए भारतमें आकर आश्रय लिया है, और बरमाको उसके भाग्यके भरोसे त्याग दिया है। हमारे सामने हमारा कार्यक्रम प्रत्यक्ष है। हमें यातायातके सभी मार्गोंको सबसे पहले छिन्न-भिन्न करना है, जिससे ब्रिटिश सेनाएँ समयपर न पहुँच सकें। इसके पश्चात् सब ब्रिटिश कार्यालयोंपर हमें अधि-कार जमाना है। जनता इस समय जाग्रत है, वह भी हमारा साथ देगी, उसकी सहायतासे हमें ब्रिटेनका फौलादी पञ्जा भारतसे सदाके लिए हटा देना है।"

"साथियो, सोते हुए भारतने इस समय करवट बदली है। सैकड़ों वर्षकी दासता-से जर्जर वृद्ध भारत अब धीरे-धीरे उठ रहा है। आपका बल, आपकी शक्ति ही उसे पुनः स्वतन्त्र होनेके लिए सहायता देगी। आपका बल अनंत है, आपका शौर्य असीम है, आपकी शक्ति अक्षय है, एक ही रेलमें, एक ही हुमकमें ब्रिटिश राज्यका अंत हो जायगा। ब्रिटिश सिंह पराजित होकर घायल पड़ा हुआ है, अब आप सहज ही उसको परास्त कर सकते हैं। सावधान, कहीं आनेवाली सन्तति यह न कहे कि इस स्वर्ण-अवसरको आपने आलस्य और अकर्मण्यतासे खो दिया। देखना, कहीं यह प्रयास भी संवत् १९१४ की भाँति निष्फल न हो जावे। सन् १८५७ की यह पुनरावृत्ति है, और अब उसकी तृतीयावृत्ति न होनी चाहिये। स्वाधीन होनेका यह प्रयास हमारा अन्तिम प्रयास होना चाहिये।"

कुछ देरतक ठहर कर नरेन्द्रने अपने साथियोंकी ओर देखा, और फिर कहने लगा—"साथियो, हमारी योजना तैयार है। अब हम एकत्रित होकर नहीं रहेंगे। छोटी-छोटीटुकड़ियोंमें बँट जायँगे, और ये टुकड़ियाँ समग्र भारतवर्षमें बँट जायँगी। टुकड़ियोंके नायकोंके पास हमारे कार्यकी योजना स्पष्ट है। हम मुट्ठीभर आदमी यह दिखा देंगे कि हम भारतके समस्त निवासियोंको उठाकर युद्धके लिए सन्नद्ध कर सकते हैं। हमारी इस छोटी-सी सेनामें भारतके समस्त प्रान्तोंके अधिवासी हैं, हमारा विभाजन भी उसी प्रकार होगा। आपलोग अपने अपने प्रान्तोंमें पहुँचकर जनताको अपने साथ लेकर ब्रिटिश शासनपर अधिकार जमाकर उसे नष्ट कर दें। जिस प्रकार ब्रिटिश शक्ति-समूह एक स्थान-पर केन्द्रित न होकर गाँव-गाँवमें फैला हुआ है, उसकी शक्तिको छिन्न-भिन्न करनेके लिए हमें गाँव-गाँव जाना पड़ेगा। हमने वही योजना तैयार की है।"

एक सैनिकने उठकर कहा—"नेता, इस कार्यके लिए हमारे पास क्या पर्याप्त मनुष्य हैं?"

नरेन्द्रने जोशके साथ कहा—"हमारे एक साथीका यह कथन है कि हमारी संख्या कम है, और वह इस कारण भयभीत होता है। किन्तु उसे अपना बल ज्ञात न होनेसे वह ऐसा अनर्गल कथन कर रहा है। हम रक्तबीज हैं, जहाँ हमारे रक्तकी एक बूँद गिरेगी वहाँ सहस्रों हमारे जैसे वीर तुरन्त जन्म ले लेंगे। स्वाधीनताकी लड़ाईके लिए लड़ैतोंकी कमी कभी इतिहासमें नहीं मिली। कमी रहती है आगीवानकी। जनता तो बारूदकी तरह तैयार रहती है, जहाँ उसका नेतृत्व करनेवाला मिल गया, वह संग्राममें महान शक्तिसे अवतीर्ण हो जाती है। उस बारूदके ढेरमें नेता एक स्फुलिंगका काम करता है, और जिस प्रकार बारूद, अग्निकी चिनगारी पाकर अपने वशमें नहीं रहता, उसी प्रकार नेतासे परिचालित होनेपर वह अवश हो जाती है, दुर्जय होकर शत्रुका दमन करनेमें सफल होती है। आपमेंसे एक एक जवान एक महान सेना स्वयं है, क्योंकि अब आप जहाँ जायँगे वहाँ सेनाकी उत्पत्ति करते जायँगे। सारी शक्तिका केन्द्र जनता है, और जन शब्द ईश्वरका शब्द है, उसकी आज्ञा ईश्वरेच्छा है। ब्रिटिश राज्य यदि आज स्थित है तो केवल जनताके अवलम्बपर। उसके उस अवलम्बको नष्ट कर आप अपने विद्रोहका अवलम्ब बनावें, बस शक्ति आपमें आ गयी! आप एक एक गाँवको गढ़ बना सकते हैं, अभेद्य दुर्ग बना सकते हैं। चालीस करोड़ जनसमूहके समक्ष क्या एक लाख ब्रिटिश सेना ठहर सकती है? चालीस करोड़के जयघोषसे ही एक लाख ब्रिटिश सेना भयविह्वल होकर पलायन करेगी। अब हमारे सामने केवल कार्य है, और शक्ति-विवेचनाका समय समाप्त हो गया है। यह मैं स्वीकार करता हूँ कि हमारे पास वायु शक्ति, सैनिक शक्ति, अस्त्रशस्त्र शक्ति, विध्वंसक बम इत्यादि नहीं हैं, किन्तु हमें अब उसकी आवश्यकता नहीं है। हम अहिंसक सेनाके सिपाही हैं। सत्य हमारी ढाल है, अहिंसा हमारा अस्त्र है, और जनता हमारी शक्ति

है। कुछ दिन पहले मैं अहिंसापर विश्वास नही करता था, अस्त्र-शस्त्र एकत्रित करनेमें लगा हुआ था, बम इत्यादि बनानेमें परिश्रम कर रहा था, किन्तु हमें आज विदित हुआ कि वह प्रयास हमारी भूल थी। अस्त्र-शस्त्रोंसे भी अधिक बल जनतामें है, और जनताका बल विश्वास और लगनमें है, तथा विश्वास और लगनका बल केवल सत्य और अहिंसामें है। हमारा उद्देश्य सत्य है, अतएव ईश्वर हमारी सहायता करेगा। इस संसारमें मनुष्य पराधीन होकर नहीं जन्मा है। वह स्वतन्त्र पैदा हुआ है, अतएव जो उसकी स्वतंत्रतामें विक्षेप करता है उससे युद्ध करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। साथियो, आप निरस्त्र नहीं हैं, आपके पास वह दिव्य शस्त्र है जो हमारे शत्रुओंके पास नही है, हम न्यायके सिद्धान्तपर लड़ रहे हैं, हम ईश्वरीय आदेश पालन करनेके लिए, उसको स्थापित करनेके लिए युद्ध छेड़ रहे हैं। अहिंसा-मार्गके सिपाहियोंको, केवल सत्यका बल चाहिये, वह हमें प्राप्त है। अहिंसाका अर्थ यह है कि हम दूसरेकी वस्तु अपहरण करना नहीं चाहते, दूसरेके प्राप्यपर अपना अधिकार जमाकर उसे वंचित करना नहीं चाहते। हमारी वृत्तियोंमें डाकू, लूटेरोंकी भावना नहीं है, किन्तु हम उन डाकुओंसे युद्ध करने जा रहे हैं, जिन्होंने हमारे देशको, हमारे प्राप्य अधिकारोंसे हमें वंचित कर रक्खा है। हम अपनी मुक्तिके लिए संग्राम छेड़ रहे हैं। हम ईश्वरीय आदेशका पालन करनेके लिए अपने प्राणोंकी बाजी लगा रहे हैं। हमको शत्रुओंके बलसे भयभीत नहीं होना है, क्योकि शत्रु स्वयं भयभीत है। वह हमारी लगन हमारे सत्य प्रयासके सन्मुख कभी नहीं ठहर सकती, क्योंकि साम्राज्यकी स्थापनाका कहीं, किसी भी धर्मशास्त्रमें आदेश नही है और सामाजिक नियमोंके प्रतिकूल है। साम्राज्यकी स्थापना हिंसापर अवलम्बित है, वह दूसरोंके अधिकारोंको पाशविक बलसे पददलित करके स्थापित किया जाता है, उसकी नींव केवल पाशविक बलपर स्थित है। वह सदा शंकित रहता है, क्योंकि उसके नष्ट होनेकी संभावना पद-पदपर, क्षण-क्षणमें है। किन्तु हमलोग तो अपनी स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए युद्ध कर रहे हैं, अतएव हमारा ध्येय सत्य है। हमको अंग्रेज मानवोंसे कोई वैर नहीं है, उन्हें हम अपना दास बनाना नहीं चाहते, उनकी स्वतंत्रता हम अपहरण करना नहीं चाहते, इसलिए हम अहिंसक हैं। हमारे मनमें उनके प्रति हिंसाजनित कोई भाव नहीं है। सत्य और अहिंसाका पुजारी कभी किसी कालमें नहीं हारता। एक अहिंसक व्रतीके शरीरपातसे, वहाँपर शत सहस्रकी संख्यामें वैसे ही दृढ़ व्रती उसका रिक्त स्थान लेनेके लिए आ जाते हैं। साथियो, इसलिए हम कदापि शत्रुसे निर्बल नहीं हैं। संसारके सन्मुख हम ईश्वरीय अस्त्र-प्रयोग कर रहे हैं। इस जर्जर अवस्थामें भी भारत अपना सिद्धान्त कभी त्याग नहीं करेगा। सत्यका अस्त्र वह सदा ग्रहण किये रहा है, उसने अपने पाशविक बलसे कभी साम्राज्यका विस्तार नहीं किया है, इसलिए वह सदा अहिंसक रहा है। अतएव उसके वही चिर पुरातन अस्त्र, इतने वर्षोंकी तपस्याके पश्चात् निखर उठे हैं, और उनमें नवीन सान धर दी गयी है, जिससे

प्राचीन मैल जो अबतक उनको कुंठित बनाये हुए था नष्ट हो गया है । अब आप इन दोनोंके बलसे अवश्य विजयी होंगे।"

नरेन्द्र फिर कहने लगा —"साथियो, हमारा यह अन्तिम मिलन है। मैं नहीं कह सकता कि हममेंसे कितने इस युद्धके पश्चात् जीवित पुन. मिलेंगे, और कितने इस प्रयासमें अपने प्राणोंकी बलि चढ़ा देंगे। अतएव हमको उचित है कि हम अपनी जननी जन्मभूमिसे भी अन्तिम विदा माँग लें, और उसका आशीर्वाद सिरपर धारण कर समरभूमिमें उतरें। आइये, मेरे साथ विदा माँगिये ।

नरेन्द्र थोड़ी देरतक ठहरकर हिमालयकी ओर मुख कर कहने लगा—

(१)

माँ, हमें विदा दे, जाते हैं, विजयकेतु फहराने आज ।
तेरी वेदीपर चढ़कर माँ, अपना शीश चढ़ाने आज ।
सत्य, अहिंसाकी नाचेगी, फिर फिर खंग हमारी आज ।
अरिदल शिरनत यही कहेंगे, "भारत-भूमि तुम्हारी आज"।।

(२)

मलिन वेष यह आँसू कैसे, कम्पित होता है क्यों अंग ।
वीरप्रसू, तू रोती क्यों है, जबतक तीव्र हमारी खंग ।।
तेरे चरणोंकी रज लेकर, जाते है करने रणरंग ।
अब फिर भय ! किसका है जननी, जब आशीष हमारे संग ।।

(३)

उन्नत अरि नत हो जायँगे, बिखर पड़ेंगे उनके तार ।
विश्व काँपता रह जायेगा, जब होगी माँ,रण-हुंकार ।।
विजयदेवि आकर धोएगी, तव चरणको सज नव साज ।
पुलकित होकर हम गाएँगे , "भारत-भूमि हमारी आज"।।

सत्य और अहिंसाके दिव्य अस्त्रोंसे सुसज्जित केसरिया वस्त्र धारण किये हुए जवानोंने भारतकी जय-जयकार की । उनका जयघोष हिमालयके स्वर्णकिरीटसे भी ऊँचा जाकर आकाशमें सर्वत्र फैल गया ।

उन्होंने एकस्वरमें कहा—"भारत छोड़ो ।"

हहर हहर कर उन्मत्त पवन झूमकर हिमालयसे टकराकर प्रतध्वनित करने लगा—"भारत छोड़ो ।"

हिमालय भी अपनी निष्पक्षता भूल गया, और अनायास उसमें योग देते हुए भीषण हुंकारके साथ गगनभेदी नादमें वह कह उठा —"भारत छोड़ो ।"

राष्ट्रीय महासभाका वह आदेश देशके कोने-कोनेमें व्याप्त होकर अपना दैवी चमत्कार जो सत्य और अहिंसाके दिव्य आभासे ओतप्रोत था,प्रकट करनेके लिए अस्थिर हो उठा। तरुण भारत अपनी स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए सजग होकर समरभूमिमें अग्रसर होने लगा।

८

केसरिया वस्त्रोंसे सुसज्जित जंगबहादुरने रमईपुरमें प्रवेश किया। उसने अपनी माँका पता लगा लिया था, और समरभूमिकी अग्निमें पदार्पण करनेके पहले वह अपनी जननीका दर्शन करनेके लिए व्यग्र था। वह सीधा रहीमके घर गया। उस दिन उसकी चौपालमें समग्र ग्रामवासी एकत्रित होकर देशव्यापी युद्धमें सक्रिय भाग लेनेके लिए निर्णय कर रहे थे। स्त्रियाँ और पुरुष सभी उस सभामें सम्मिलित थे, सबके चेहरोंपर एक ही प्रकारकी व्यग्रता थी, और एक ही लगन थी। दिवाकरको अभीतक आरोग्यलाभ पूर्ण रूपसे नहीं हुआ था, किन्तु वह अब निःशक्त भी नहीं था। सब लोग उसकी आज्ञा सुननेके लिए उत्कंठित थे, क्योंकि इस समय वही उनका नेता था।

दिवाकर कह रहा था—"साथियो, अब रणप्रांगणमें कूदनेका अवसर आ गया है। भारतकी राष्ट्रीय महासभाने भी मुक्तकण्ठसे आदेश दे दिया कि आजादी प्राप्त करनेके लिए सभी वैध मार्गोंका अनुसरण करो, और उसे शत्रुओंके हाथसे छीन लो। यही हमारे लिए भी आदेश है। अतएव हमको संगठित होकर उन सब स्थानोंपर अधिकार कर लेना चाहिये जिनके बलसे अंग्रेज हमपर शासन करते हैं। पुलिस, फौज, न्यायालय, डाक, तार, रेल आदि सभी विभाग हमें अपने आधीन करना है। यद्यपि इन विभागोंके कार्यकर्त्ता हमारे ही बन्धु हैं, हमारे ही देशवासी हैं, किन्तु अंग्रजोंने उनको अपने वशमें कर रक्खा है। एक बार उनको समझा-बुझाकर सच्चे मार्गपर लाना है।"

इसी समय वहाँ जंगबहादुर आकर एक किनारे खड़ा हो गया। दिवाकरका वक्तव्य रुकते ही सबके नेत्र उसी ओर उठ गये। उन्होंने जंगबहादुरको कभी देखा नहीं था, और जिन्होंने देखा था वे उसको इस वेपमें देखनेकी कल्पना भी नहीं कर सकते थे। सभी अवाक् होकर उसे देखने लगे।

मनोहरने झपटकर उसको पकड़ लिया और कहा—"यह मुझको सी० आई० डी० मालूम पड़ता है। हमारा भेद लेनेके लिए आया है।"

एक कोलाहल मच गया। चारो ओरसे 'मारो' 'मारो' का शब्द आने लगा। दिवाकरने आगे बढ़ते हुए कहा—"ठहरो, यदि वह सी० आई० डी० है तो भी अन्त में भारतीय है। अपना ही खून है, अपना ही भाई है। इसके अतिरिक्त अहिंसाकी सेनाके सिपाही अपना मनुष्यत्व कभी नहीं खोते।"

लोग जहाँके तहाँ स्थिर रह गये। दिवाकरने उसे पहचानते हुए कहा—"अरे, कौन जंगवहादुर! तुम यहाँ कैसे आये? तुम्हारी अवधि अभी तो समाप्त नहीं हुई।"

"हाँ, मैं जंगवहादुर हूँ। जेल तोड़कर नरेन्द्रके साथ निकल भागा।"

"नरेन्द्र हमारा नेता कहाँ है?"

"जबसे हम दोनों आये तबसे हमारा मुख्य शिविर हिमालयकी तराईमें स्थापित हुआ, और वहींपर सब सदस्य एकत्रित हुए। राष्ट्रीय महासभासे युद्ध घोषित हो जानेपर हमारे मण्डलके सदस्य जिस-जिस प्रान्तके रहनेवाले थे, वहाँपर सेना संगठित करने और अधिकार जमानेके लिए भेज दिये गये। मैं भी इसी उद्देश्यसे अपने गाँवोंकी तरफ आया। मुझे यहाँ आनेपर विदित हुआ कि मेरी माँ इसी गाँवमें है। उसको हमलोग बड़ी ही दीन तथा असहाय अवस्थामें छोड़ गये थे। मातृ-प्रेमने जोश मारा, इसलिए उसको देखने और उसका आशीर्वाद लेनेके लिए चला आया।"

उस मानवसमूहमें रूपकुँवरि भी बैठी हुई थी। उसको पहचानकर सवेग उसकी ओर झपटी, और दूसरे ही क्षण माता-पुत्र एक दूसरेका हृदयस्पन्दन सुनने लगे।

आवेग कम होनेपर रूपकुँवरिने कहा—"बेटा तुम आ गये! तुम्हारा यह वेष देखकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। किस भारतीय नारीका हृदय इस युद्धके अवसरमें अपनी सन्तानको यह केसरिया वेष अपने हाथोंसे पहनानेके लिए आकुल नहीं होगा? इसी समयके लिए तो हम पुत्रसन्तान धारण करती हैं। पहलेसे यह केसरिया जामा पहन कर मेरे दूधकी लाज तुमने रख ली। आओ मेरे लाल, इस युद्धमें हम-तुम दोनों साथ-साथ लड़ेंगे, और साथ ही स्वतन्त्रता लाभ करेंगे, नहीं तो प्राण त्याग करेंगे।"

फिर ग्रामवासियोंको सम्बोधित करके उसने कहा—"भाइयो, यह अपनी तुच्छ भेंट तुम लोगोंको समर्पित करती हूँ। यदि आज इसके पिता यहाँ होते तो उनको भी इसी वेषसे सजाकर युद्धक्षेत्रमें भेजनेका गौरव लाभ करती।"

रहीमने आगे बढ़कर जंगवहादुरको हृदयसे लगाते हुए कहा—"बहन, आज तुमने भी अपने धर्मभाईका सिर गर्वसे ऊँचा कर दिया। तुम्हारा कर्त्तव्यपालन सबको अपना-अपना कर्त्तव्य पालन करनेके लिए उत्तेजना प्रदान करेगा। बेटा, जंगवहादुर, हमारे गाँवकी सेना तुम्हारे बिना अपूर्ण थी।"

ग्रामवासियोंने एकस्वरसे उसकी बातका अनुमोदन किया।

५

नसीमने हँसते हुए कहा—"बहन गुलाबी अब ठीक रहेगा, तुम्हारा दूल्हा भी जेलसे आ गया है, अब दोनों शामिल लड़ाईमें हिस्सा लेना।"

गुलाबने कोई उत्तर नहीं दिया और अपना मुख फिरा लिया। नसीमने देखा कि उसके नेत्र अश्रुप्लावित हैं, जिनको छिपानेकी वह पूरी चेष्टा कर रही है। नसीम तो

अपने हृदयके आह्लाद-श्रोतमें डुबा देनेके लिए बड़ी उत्सुकतासे आयी थी, किन्तु उसकी करुण अवस्था देखकर वह स्तंभित रह गयी। जबसे रूपकुँवरिका प्रस्ताव कि उसके लड़के जंगबहादुरके साथ गुलाबका विवाह कर दिया जाय, उसके पिता द्वारा स्वीकृत हो गया था, तथा मनोहर और उसकी माँने भी जिसका अनुमोदन कर दिया था, तबसे वह सोचने लगी थी कि गुलाबके प्रति जो उसकी धारणा थी कि वह दिवाकरसे प्रेम करने लगी है, सम्भवतः मिथ्या है, केवल उसकी कल्पनामात्र है। यदि उसमें कुछ सत्यता भी थी तो इस नवीन प्रस्तावके सन्मुख उसको त्यागना पड़ेगा। यशोधरा, दिवाकरकी वाग्दत्ता पत्नी है, इसमें किसीको सन्देह न था। माधवीसे जितना हो सका था उतना उसने इस शुभसंवादका प्रचार किया था। किन्तु माधवीको यह स्वप्नमें भी अनुमान न था कि उसके इस प्रचारसे गुलाबको कितनी मार्मिक पीड़ा होती है। और गुलाब उसके इन प्रहारोंको सहिष्णुतासे सहन कर रही थी। इधर कई दिनोंसे, जबसे चर्खादंगलमें उसने दिवाकरके हाथसे पुरस्कार प्राप्त किया था, तथा जिसके लेनेके लिए वह उसमें सम्मिलित हुई थी, तबसे वह उसको प्रेमचिह्न मानकर अपने हृदयसे लगाये रहती थी। उसके शब्द—"देवि, यह उपहार मेरे प्राणोके बचानेके विनिमयमें नही है, यह तो केवल आपके परिश्रम, आपकी निपुणता और योग्यताके परिचायक है," अहर्निश उसके कानोमें गूंजा करते थे। उसको इन शब्दोंमें दिवाकरके हृदयकी थाह मिलती थी, और उसे विश्वास हो गया कि उसका परिश्रम और त्याग निष्फल नहीं गया। प्रेमी सब कुछ सहन कर सकता है, अपने प्राणोको हँसते-हँसते अपने प्रेमीके लिए निछावर कर सकता है, किन्तु उसकी हृदयहीनता सहन करनेमें वह सदैवसे अक्षम रहा है। और यदि उसको अपने प्रेमीका एक भी प्रेम-शब्द सुननेको मिल जाता है, तब वह केवल उसीमें अपनी तपस्या और त्यागको सफल मान लेता है। गुलाबके सन्मुख केवल दिवाकरकी मूर्त्ति रहती थी। उसने अपने मनको उसके चरणोंमें समर्पित कर दिया था। उसने मन ही मन यह प्रतिज्ञा कर ली थी कि वह दिवाकरके अतिरिक्त किसी अन्य पुरुषसे विवाह नहीं करेगी। दिवाकरके साथ विवाह सर्वथा असम्भव है, वह यह निश्चित रूपसे जानती थी, किन्तु फिर भी मन उद्दाम गतिसे उसी ओर चला जा रहा था। जब उसको मालूम हुआ कि रूपकुँवरि उसको अपनी पुत्र-वधू बनाना चाहती है, तो वह उसके इस प्रस्तावपर मन ही मन हँसी, किन्तु दूसरे ही क्षण उसे विदित हुआ कि अब उसके समक्ष अग्निपरीक्षासे भी कठिन अवस्था उत्पन्न हो रही है। आजन्म कुमारी रहनेका आदेश हिन्दू-शास्त्रोंमें नही है। उनको किसी न किसी पुरुषके साथ रहना अनिवार्य है, अतएव उसकी निष्कृतिका मार्ग केवल मृत्यु है। युद्ध-क्षेत्रमें शत्रुसे लड़ते-लड़ते प्राण विसर्जित करना, भारतीय नर-नारीके लिए इससे अधिक गौरवप्रद मृत्यु नहीं है। उसे विश्वास था कि उसके विवाहका अप्रिय प्रसंग आनेके पहले ही वह युद्ध-क्षेत्रमें प्राण दे देगी, अपने हृदयकी वेदना, और अपना गुप्त प्रेम अपने हृदय गह-

पवरमें छिपाये हुए वह चली जायगी। किन्तु जब उसने जंगबहादुरके आनेका समाचार सुना, उसकी समस्त आशाओंपर पानी पड़ गया। उसके विचारों तथा कल्पनाओंके महल क्षणमात्रमें भूमिसात् हो गये। उसकी माँ गंगाने नसीबनसे कहा कि जब जंगबहादुर जेलसे आ गया है तब उसका विवाह भी शीघ्र ही कर देना चाहिये। पश्चिमीय राजपूतानेके समस्त राजपूतोंमें भाद्रपद कृष्णाष्टमीको विवाह होनेकी प्रथा प्राचीन कालसे चली आती है, अतएव उसी तिथिपर गुलाब और जंगबहादुरका विवाह हो जाना चाहिये। नसीबनको कोई आपत्ति नहीं थी, न रहीमको। रूपकुँवरि तो इसके लिए सदा ही प्रस्तुत थी, किन्तु इस समाचारने गुलाबके सारे कार्यक्रमको छिन्न-भिन्न कर दिया। वह अपनी भावनाओंसे युद्ध करने लगी। उसका अस्थिर मन उसे यह कहकर सान्त्वना देने लगा कि अभी जन्माष्टमीमें तीन सप्ताहका विलम्ब है; ब्रिटिश सरकारसे युद्ध छिड़ा हुआ है, इस अवसरमें कई घटनाएँ हो सकती हैं। वह इसी समस्याकी उलझनें सुलझानेमें व्यस्त थी जब नसीमने उससे उपरोक्त वाक्य कहे थे।

नसीमकी हँसी मुखमें ही रह गयी। गुलाबको वह अच्छी तरह जानती थी। धैर्य और सहिष्णुताकी वह प्रतिरूप थी। जन्मकालसे ही वह अपनी विपरीत परिस्थितियोंसे बराबर युद्ध करती हुई चली आ रही थी, जिसने उसको घोरसे घोर दुख सहनेके लिए अभ्यस्त-सा बना दिया था। विपत्तिके समय यदि प्रफुल्लता और हास्य कहीं देखनेको मिलता था, तो वह गुलाबके आननपर, किन्तु आज उस वीरबालाके नेत्रोंमें आँसू देखकर वह सशंकित होकर अपना भी धैर्य खो बैठी। उसने गुलाबका हाथ पकड़ कर कहा—"बहन गुलाबी, आज तुम इतनी दुखित क्यों हो ?"

गुलाबने अपने दुर्दमनीय आँसुओंको दमन करनेकी चेष्टा करते हुए कहा—"कुछ नहीं। कोई खास बात नहीं है। देशकी वर्त्तमान अवस्था विचार कर जी भर आया। न-मालूम इस युद्धमें कितने अपने प्राणोंकी आहुति देंगे, और स्वतन्त्रता भोगनेको कौन जीवित रहेगा ?"

नसीमने उसकी आँखोंके द्वारसे उसका अन्तस्तल देखनेकी चेष्टा करते हुए कहा—"तुम भी मुझसे कभी झूठ बोल सकती हो, इसकी कल्पना कभी मेरे मनमें उदय नहीं हुई थी।"

अपनी-अपनी मानसिक वेदना दोनों छिपानेका प्रयत्न करने लगीं।

नसीमने एक दीर्घ निश्वासके साथ कहा—"गुलाबी, तू दुनियांको धोखा दे सकती है, किन्तु मुझको नहीं।"

"मैंने क्या धोखा दिया है नसीमा ?" उसका आहत स्वर काँपने लगा।

"तू अपनेको भी ठगती है, और मुझको भी। क्या मैं यह प्रत्यक्ष नहीं देख रही हूँ कि जबसे राजकुमारको तूने अपना रक्त दिया है, तबसे तूने अपना हृदय भी उनको दे दिया है ?"

यह सुनकर गुलाबने त्रस्त नयनोंसे उसकी ओर देखा। उसका मुखमण्डल निस्तेज होकर नितान्त श्वेत हो गया ।

"मैं क्या झूठ कहती हूँ? तेरा चेहरा ही मेरी बातका समर्थन कर रहा है। यदि अब भी तू समझती है कि मैं तेरा यह भेद नहीं जानती तो तू मुझको और अपनेको धोखा दे रही है ।"

गुलाबने कोई उत्तर नहीं दिया। वह पृथ्वीके गर्भमें छिपनेके लिए आकुल होने लगी।

"तब तू स्वीकार करती है कि तू राजकुमारसे प्रेम करती है। पगली, जानती है कि इसका क्या परिणाम होगा?"

"हाँ, जानती हूँ, मेरी मृत्यु !"

नसीमकी उत्तेजना समाप्त हो गयी। वह चुपचाप कुछ विचारने लगी। फिर थोड़ी देर बाद उसने कहा—"हाँ, तेरी मौतके साथ साथ मेरी भी तो मृत्यु निश्चित है। तेरे साथ मुझे भी तो मरना पड़ेगा। तू समझती होगी कि मरकर मुझसे अपना पिण्ड छुड़ा लेगी, लेकिन यह तेरी भूल है। तू मुझे धोखा दे सकती है, लेकिन मैं तुझे कभी धोखा देनेकी कल्पना नहीं कर सकती। मुझे भी तेरे साथ मरना पड़ेगा।"

"तुम क्यों मरोगी? तुम्हारा तो विवाह हो चुका है, माता होनेवाली हो, ऐसे समय ऐसी अशुभ कल्पना कल्याणप्रद नहीं है। तुम अब स्वतन्त्र नहीं हो।"

"तुझे अविवाहित रखकर मैंने अपना विवाह कर लिया, उसीका तो प्रायश्चित्त करना है।"

"कैसी पागलों-जैसी बात करती है। तेरा सुख देखकर क्या मुझे ईर्ष्या होती है?"

"मेरे सुखसे चाहे तुझे ईर्ष्या भले ही न हो, किन्तु तेरे दुखसे तो मुझे ईर्ष्या जरूर होती है।"

"यह क्यों ?"

"यह इसलिए कि राजकुमारने तेरे हृदयमें इतना अधिकार जमा लिया है, कि अब वहाँ मेरे लिए किञ्चित् स्थान रिक्त नहीं है।"

दोनोंकी डबडबाई हुई आँखें हँसनेकी चेष्टा करने लगीं।

"मेरे अब्बाने जो तेरा विवाह जंगबहादुरसे करना तय किया है, उसका अब क्या होगा?"

"मैं क्या बताऊँ? तभी तो कहती हूँ कि सारी विपत्तियोंसे छुटकारा मिलनेका उपाय है मृत्यु !"

"उसकी चिन्ता तू मत कर। उससे पहले मैं निपट लूँगी, तब तेरी बारी आवेगी। अम्मासे कहकर यह सम्बन्ध तो तुरन्त तुड़वा दूँगी। राजकुमारको भी इसकी सूचना देनी होगी?"

"उनको सूचना देनेके पूर्व मैं मर जाना कहीं श्रेयस्कर समझूँगी। भला बता तू क्या कहेगी ? यही कहेगी न, 'कि जिसने अपना रक्त देकर आपकी जीवनरक्षा की है, वह आपसे प्रेम करती है, कृपा करके अब उसको आप अपनी पत्नी बना लीजिये।' मैं ऐसे घृणित प्रस्तावकी बात ही नहीं सोच सकती। यदि उन्होंने उत्तर दिया कि 'तुम्हारी सखी अपने रक्तदानका मूल्य ले सकती है' और उन्होंने या यशो दीदीने अपमानित कर घरके बाहर निकाल दिया, तब क्या हमारी दशा होगी। यह कभी सोचा है ?"

"तब उपाय वही है, जो पहलेसे निश्चित कर रक्खा है।"

"पत गवाँकर मरनेसे मृत्युके सारे गौरवको नष्ट कर देना है। वह तो कुत्तोंकी मौतसे भी अधिक गर्हित है। जब अन्तिम अवलम्ब मत्यु ही है तब किसीके सामने भीख माँगे बिना ही क्यों न मर जायँ। अपराध मेरे दिलने किया है, इसका परिणाम मैं भोगूँगी।"

"तू मुझसे अधिक बुद्धिमान है, यह मैं स्वीकार करती हूँ। तू मुझे तर्कमें कभी जीतने नहीं देगी। किन्तु एक बार मैं राजकुमारका मन लेनेकी चेष्टा करूँगी। वे निष्कपट और महान हैं। यशो दीदीसे विवाह करनेके लिए वे तैयार नहीं हैं, यह बात मैंने स्वयं रानी अम्मासे सुनी है। उनसे तो वे साफ इनकार कर गये थे, किन्तु बादमें शायद ढाढस देनेके लिए माधवी दीदीसे कह दिया है।"

थोड़ी देरके लिए गुलाबके नेत्रोंसे आशा झाँकने लगी। किन्तु उसने उस मृग-मरीचिकाको दमन करते हुए कहा—"नहीं नसीमा, इस जन्ममें ऐसी कल्पना असम्भव है। यशो दीदीका प्राप्य मैं कदापि हरण नहीं कर सकती, इस विचारके आनेके पहले मैं मर जाना कहीं उत्तम समझूँगी। नसीमा, इस जीवनमें मिलन नहीं होगा। यदि तू मेरा कहना नहीं मानेगी तो शायद मुझे आत्महत्या करनी पड़े।"

इसी समय माधवीने आकर कहा—"अरे तुम दोनों यहाँ छिप कर बैठी हो ! तुम दोनोंको ढूँढ़ते ढूँढ़ते मैं परेशान हो गयी। राष्ट्रीय झंडा फहरानेकी तैयारी हो रही है, झंडा-अभिवादनमें राष्ट्रीय गानके लिए भैया तुम दोनोंको बुला रहे हैं !"

नसीम और गुलाबकी आँखें एक दूसरेको देखने लगीं, और दूसरे ही क्षण वे नत हो गयीं। माधवीने यह दृष्टिविनियम नहीं देखा। दोनों अपनी अपनी चिन्ताओंका भार लिये उसके साथ चली गयीं।

"भारत छोड़ो" का प्रस्ताव भारतके अहिंसात्मक युद्धका सबसे गौरवपूर्ण स्तम्भ है, और जिस दिन वह प्रस्ताव पास हुआ था, वह दिन भी भारतीय इतिहासमें स्वर्णाक्षरोंसे लिखा जायगा। आठ अगस्त सन् बयालीसका महत्व दस मई सन् १८५७ से अधिक है, क्योंकि वह अहिंसात्मक युद्ध था, और सन् सत्तावनका प्रयास हिंसात्मक था। सन् बयालीस जनताकी जाग्रतिका दिवस था, और सन् सत्तावन कतिपय असन्तुष्ट राजाओंका

पुनः राज्य प्राप्त करनेका प्रयत्न था। उन दिनो "जनताकी आवाज" की उत्पत्ति स्वतन्त्र रूपसे नही हुई थी, वह राजाओके इच्छानुसार परिचालित होती थी, क्योकि जनताका अस्तित्व राजासे भिन्न नही था, और किसी अशतक राजा भी जनता की इच्छा समझ कर अपनी नीति निर्धारित करता था। सन् सत्तावनका विद्रोह, देशको विदेशियोके पञ्जेसे मुक्त करनेका प्रयत्न होते हुए भी, स्वार्थ की भावनाओसे रँगा हुआ था, विशुद्ध आजादी-का प्रयत्न नही था, इसलिए वह प्रयास और वह बलिदान निष्फल गया। सन् वयालीस केवल स्वतत्रता प्राप्त करनेकी भावनासे प्रेरित होकर, उसकी वेदीपर 'स्वय' का बलिदान कर देनेकी अभिलाषासे ओतप्रोत था, किसी जातिविशषके प्रति विद्वेष---हिसात्मक विद्वेष नही था, इस कारण वह सफल हुआ। पाशविक बलके प्रयोगसे फल तुरन्त प्रगट होता है, किन्तु दैविक वल कुछ कालान्तरमे अपना प्रभाव दिखाता है, और वह प्रभाव अमिट होता है। दैविक शक्तियोका प्रभाव धीरे धीरे प्रगट होनका कारण यह है, कि प्रथम उनको विपरीत परिस्थितियोमे, अथवा पाशविक वलसे लड़ना पडता है; पाशविक बल तमोगुणी होनेसे उग्र होता है। यद्यपि उसमे सत्वगुण जैसी स्थिरता और वल नही है, तथापि उग्र होनेसे वह सत्वगुणपर क्षणिक विजय प्राप्त कर लेता है। सत्वगुण आक्रान्त हो जानेपर तमोगुणके हृदयमे प्रवेश कर जहाँ वलका आगार है, अपना युद्ध छेड़ता है। वहाँपर वह विजयी अवश्य होता है, क्योकि तमोगुणका वल वहाँपर नगण्य है। हृदय और मन हार जानेसे भुजाओ और मस्तिष्कका वल नष्ट हो जाता है। इस क्रियाके सम्पन्न होनेमे समय कुछ लगा करता है, इसी कारणसे दैविक शक्तियोका प्रभाव कुछ कालमे दिखायी पड़ता है। वर्षाके जलमे प्लावित नालोका पानी पथरीली भूमिपर कितने वेगसे वहता दिखायी पडता है, किन्तु महानदियोकी धारा समतल मटियाली भूमिपर कितनी मन्थर गतिसे वहती है, इसी प्रकार पाशविक वल नालोके पानीकी भाँति उग्र तथा वेगमय होता है, किन्तु उसमे स्थायित्व नही होता। दैविक वल महानदियोंकी धाराके समान शान्त और असीम होता है। इसीलिए सत्य और अहिंसाके युद्धका फल कुछ कालमे दिखायी पडता है, और जो विजय उसके द्वारा प्राप्त होती है, वह स्थिर और स्थायी होती है। सन् वयालीस इस तथ्यका ज्वलन्त और अकाट्य प्रमाण है।

"भारत छोडो" के प्रस्तावके पास होते ही देशके एक सिरेसे दूसरे सिरेतक आजादी की लहरे उठने लगी। यद्यपि राष्ट्रीय महासभाके कर्णधार, दलित भारतके प्रतीक, विख्यात सत्य और अहिंसाके प्रयोगके आचार्य महापुरुष गान्धीजीके साथही समस्त नेता एक साथ, एक ही समयमे गिरफ्तार हो गये थे, तथापि आजादीका आन्दोलन भीम वेगसे उठ खडा हुआ। 'भारत छोडो' की ध्वनिसे दिग्दिगन्त व्याप्त हो गये और ब्रिटिश राज्य-सत्ता गिरफ्तारियोंके लिए उतारू और तत्पर हो गयी। उसका बल केवल पाशविक दमन पर आधारित था। दमनचक्र बडे वेगसे चलने लगा। लाठी और अश्रुगैसका बल

निष्फल प्रमाणित हो चुका था, इसलिए उससे प्रबलतर अस्त्र बन्दूक, मशीनगन, वायु-यानोंका व्यवहार होने लगा। आजादीकी भावनासे ओत-प्रोत नर-नारी, बालक-वृद्ध, सत्य और अहिंसाके सैनिकोंने अपनी छातियाँ खोल दीं, और उनकी गोलियोंको लूटनेके लिए आतुरतासे एक दूसरेके आगे बढ़ने लगे। बलिदान सन्तुष्ट होकर मुस्कुराने लगा। स्वतन्त्रताका खप्पर रक्तसे भरा जाने लगा। जितनी उसकी पिपासा बढ़ती थी, उससे अधिक रक्त उसके खप्परमें भरनेके लिए दलित नर-नारी, बाल-वृद्ध अपने जर्जर कंकालोंको निचोड़ने लगे।

पाशविक बल केवल पशुसंज्ञक वृत्तियोंका ही दमन कर सकता है, शारीरिक वृत्तियाँ, जो पशुसंज्ञाकी द्योतक हैं, वही नष्ट हो सकती हैं, किन्तु आत्मिक भावना तो अमर है, एक शरीर नष्ट होनके बाद भी वह अपना सौरभ शुष्क पुष्पकी भाँति जीवित रखता है। जब भावनाएँ जीवित हैं, तब वे दूसरे शरीरमें प्रविष्ट होकर उनको उसी मार्गकी ओर अग्रसर करनेके लिए बाध्य करती हैं, इस प्रकार सत्-युद्धके सैनिकोंकी कमी नहीं होने पाती, और अन्तमें पाशविक बल हारकर आत्मिक बलकी शरणमें जाकर त्राण पाता है। सन् १८५७ के बाद जो दमन हुआ था वह सन् बयालीसके दमनके समक्ष फीका पड़ जाता है। उसमें निरीह जनताका नाश नहीं किया गया था, केवल विद्रोहियोंका ही नाश हुआ था, किन्तु सन् बयालीसमें गाँवके गाँव नष्ट कर दिये गये और दूध पीते हुए बालकोंको भी नहीं छोड़ा गया। इसीलिए बयालीसकी कहानी जनताके अमर बलिदानकी कहानी है, जो इतिहासके पृष्ठोंमें रक्तके अक्षरोंसे लिखी जायगी।

पाशविक बल अपने प्रयोगके लिए कोई न कोई बहाना ढूँढा करता है। वह अपनी खूनी वृत्तियाँ न्यायके आवरणमें छिपाना चाहता है। अतएव स्वतन्त्रताके इस आन्दोलनको भी शासकोंने 'युद्ध-प्रयासमें बाधा' उपस्थित करनेके नामसे पुकारा और संसारके समक्ष प्रचार करना आरम्भ किया कि शत्रुओंके पाँचवें दस्तेका यह आन्दोलन है। घटाटोप बादलोंका दल कुछ कालके लिए ही सूर्यको ढँकनेमें समर्थ होता है, उसी प्रकार मिथ्या प्रचार भी सत्यको कुछ समयके लिए आच्छादित करने या दबानेमें कृतकार्य होता है। अन्तमें सत्यकी ही विजय होती है। स्वतन्त्र होनेकी भावना सत्यकी भावना है, इसलिए वह अमर है, और दमन उसको निगल जानेमें कृतकार्य नहीं हुआ।

स्वतन्त्रताका आन्दोलन बड़े वेगसे चलने लगा। शासकोंके दुर्ग, पुलिस स्टेशनोंपर जनताका अधिकार होने लगा। यातायातके साधनोंपर भी उन्होंने कब्जा कर लिया। कचहरी, डाकखानोंपर राष्ट्रीय झंडा फहरा दिया गया। स्वतन्त्रताके जयघोषसे भारत मुखरित हो उठा। अधिकारियोंको स्वप्नमें भी अनुमान नहीं था कि आन्दोलन इतनी तीव्रतासे बढ़ेगा। उन्हें विश्वास था कि नेताओंके गिरफ्तार हो जानेसे यह उठेगा ही नहीं, किन्तु उसकी प्रगति देखकर वे थोड़ी देरके लिए हतबुद्ध हो गये। उन्होंने समस्त शक्तिसे उसे नष्ट

करनेका बीड़ा उठाया। औचित्य तथा अनौचित्यका सब विचार त्याग कर उसके दमनमें वे लग गये। नेतृत्वहीन जनता भी निहत्थी होकर उसका मुकाबला करने लगी।

अहिंसक सैनिकोंको जब मारते मारते वे थक गये तब अधिकारियोंने उन्हें पकड़कर जेलोंमें भरना आरम्भ कर दिया। सावन-भादोंकी नदियोंकी भाँति जेलें उनसे उतराने लगीं। जेलकी यन्त्रणाओंकी कहानी बड़ी करुण और वीभत्स है। उसका वर्णन करनेसे अशिष्टताके अपराधका दोषी होना पड़ेगा। बस, इतना ही कहना यथेष्ट है कि मध्ययुगकी बर्बरता आधुनिक युगकी सर्वश्रेष्ठ बीसवीं शताब्दिकी अमानुषिकताके समक्ष भयसे पीली होकर विचारने लगी—"आधुनिक सभ्यता मुझे व्यर्थ ही कलंक और अपराध लगाती है, जब कि उसका आसन मेरेसे भी उच्च है।" गैस्टापो और नात्सी अत्याचारका वह लघु संस्करण था या वृहत्, इसका निर्णय तो आगामी इतिहासकार ही करेंगे।

७

पंडित जागेश्वरदयालने पागलों जैसी अवस्थामें सर भगवान सिंहके कमरेमें प्रवेश किया। उसको देखते ही उन्होंने सक्रोध कहा—"जागेश्वर, इतने दिनों बाद तुमने आज शक्ल दिखायी है? तुम्हारा जैसा नमकहराम मैंने आज तक नहीं देखा। अनवर और तुम, दोनोंने हमारे हजारों रुपयोंको लेकर मौज उड़ायी, अब कोई नया बहाना लेकर मुझे फिर ठगने आये हो?"

"नहीं हुजूर, आपके सारे रुपयोंका भुगतान करने आया हूँ।" जागेश्वरने अट्टहासके साथ जेबसे नोटोंका बंडल निकालते हुए कहा। सर भगवान सिंह चकित होकर उसकी ओर देखने लगे। जागेश्वरने नोटोंको मेजपर रख दिया। फिर कहा—"हजूरने मुझे कुल सतहत्तर सौ रुपये दिये हैं, जिनमेंसे तीन सौ रुपये तो आपके अर्दली जहूर मोहम्मदने लिये, किन्तु मैंने वह भी रकम अपने पाससे शामिल कर दी है। ये सौ-सौ रुपयोंके सतहत्तर नोट हैं, सँभाल लीजिये।" यह कहकर वह विस्फारित दृष्टिसे चारो ओर देखने लगा।

सर भगवान सिंहका विस्मित भाव जब कुछ शान्त हुआ, तब उन्होंने कहा—"तुम्हारा यह व्यवहार मेरी समझमें नहीं आया! रुपये वापस करनेका क्या कारण है?"

जागेश्वर चुप रहा। वे उसकी ओर क्रुद्ध दृष्टिसे देखने लगे।

"बोलते क्यों नहीं? जवाब दो।"

"आवश्यकता नहीं है। जब रुपयोंकी जरूरत होगी, तब फिर हुजूरकी सेवामें उपस्थित होकर याचना करूँगा।"

"पहले क्या आवश्यकता थी, जो लिये थे?"

"हाँ, पहले इन कागजके टुकड़ोंपर अत्यन्त लोभ था, किन्तु भगवतीकी कृपासे वह लोभ मिट गया। अब ये व्यर्थका भार विदित होते हैं।"

"ऐसी त्यागबुद्धि कबसे आयी?"

"सत्य ही कहूँगा, सत्य कहनेके लिए आया हूँ। दुनियां मुझे पागल कहती है, किन्तु मैं पागल नहीं हूँ। जब संसार त्याग दिया है तब मुझे किसका भय है ? श्रीमान् यह ज्ञान उस दिन उदय हुआ, जब मैंने आपके कुँवरको हँसते हँसते प्राण निछावर करते देखा था। अनवरने मुसलमानोंको, और मैंने हिन्दुओंको, अपने स्वार्थसे अभिभूत होकर दोनोंको लड़नके लिए आमादा कर दिया। नंगी तलवारें, भाले, बल्लम, कटारें, दोनों ओर चमक रही थीं। राजकुमार कितनी निर्भीकतासे उनके मध्यमें आकर खड़े हो गये, और अपनेको बलिदान कर हम दोनोंके महीनोंके परिश्रमको क्षणमात्रमें नष्ट कर दिया। बस, उसी समय मेरी आँखोंका परदा हट गया, सत्यकी झलक और उसका बल दृष्टिगोचर हुआ। मेरे दुष्कर्मोंके चित्र मेरे सामने आने लगे। पश्चात्तापकी अग्नि मुझे जलाने लगी। तभीसे सोच रहा हूँ कि न-मालूम मैंने थोड़ेसे रुपयोंके लिए कितने निरपराध स्त्री, पुरुषों और बच्चोंका खून कराया है, कितने अमानुषिक अत्याचारोंका कारण मैं हुआ हूँ। परितापसे मेरा हृदय दग्ध होने लगा। मेरा मन बार-बार कहने लगा कि प्रायश्चित्तकी प्रथम सीढ़ी है उन रुपयोंको वापस कर देना जिसके लोभने यह अपकर्म मुझसे करवाया। बाल-बच्चे मेरे थे ही नही, जो उनकी चिन्ता होती, घर-बार बेंचकर आज आपकी रकम लाया हूँ।"

सर भगवान सिंहका क्रोध जागेश्वरकी बातोंपर उत्तरोत्तर बढ़ रहा था। राष्ट्रीय आन्दोलनकी सफलता उन्हें रात-दिन शान्तिसे व्यतीत न होने देती थी, इन दिनों वे बड़ी तत्परता और साहससे जनताकी भावनाको कुचलनेमें लगे हुए थे। जागेश्वरकी बातोंने उन्हें और प्रज्वलित कर दिया। उन्होंने गरजकर कहा—"नारकीय कीड़े, तू मेरा विद्रूप करने आया है। जानता है, किससे तू बातें कर रहा है ?"

जागेश्वरने शान्त स्वरमें कहा—"अपने ही जैसे एक मनुष्याकारके सामने, किन्तु जो मनुष्यसे कहीं अधिक भयंकर है। सांसारिक शक्तियोंसे मुझे अब भय नहीं लगता श्रीमान्। मैं मरनेके लिए ही यहाँ आया हूँ। रात-दिनका वृश्चिक-दंशन अब मुझसे सहन नहीं होता। यदि आप मुझे गोलीसे उड़ा देनेकी आज्ञा देंगे, तो मैं उसे सहर्ष स्वीकार करूँगा। वह मेरे लिए मुक्तिका मार्ग होगा।"

सर भगवान सिंह हतबुद्ध रह गये। इतने स्पष्ट रूपसे कहनेका साहस आजतक किसीको नहीं हुआ था।

उन्होंने अपने ओष्ठोंको काटते हुए कहा—"तुम उसी अग्निमें जलो, जिसके भयसे मौत माँगने मेरे पास आये हो। जाओ, मेरे सामनेसे दूर हो, नरकके कीड़े ! जहूर, इस पागलको निकाल दो।"

जागेश्वरने दीनतासे कहा—"नहीं, नहीं, मुझे मृत्युदण्ड दो। जो कुछ उपकार आपके साथ किया हो उसके बदलेमें मुझे मृत्युदण्ड दीजिये। मेरी प्रार्थना स्वीकार कीजिये।"

जहूर घसीटकर जागेश्वरको कमरेके बाहर निकालने लगा। जागेश्वर चिल्लाने लगा। जहूर मोहम्मदने उसको बलात् कमरेसे बाहर निकालना चाहा, किन्तु वह अपने स्थानसे विचलित नहीं हो रहा था। पागलोंका मस्तिष्क बल क्षीण होकर उनमें शारीरिक बलकी बहुलता उत्पन्न करता है।

जागेश्वरने आँखें फाड़कर उनकी ओर देखते हुए कहा—"मुझे मृत्युदण्ड दो। मेरे जीवनका अन्त करो। मैं ब्राह्मण हूँ, तुम दोनोंको अनन्त आशीर्वाद दूँगा। मेरे मारनेका पाप किसीको नहीं लगेगा।"

सर भगवान सिंहने घंटी बजाकर दूसरे नौकरोंको बुलाया। उनके आनेपर उन्होंने जागेश्वरको बँगलेके बाहर निकाल देनेका आदेश दिया।

जागेश्वर वास्तवमें विक्षिप्त हो गया था, उसकी चिल्लाहट अन्तर्भेदी थी, और उसके नेत्र भयसे विस्फारित थे। वह कह रहा था—"इनके कुचक्रमें फँसकर मैंने अपनी आत्माका ख़ून किया है। भगवतीके अभिशापसे जला जा रहा हूँ। निरीह बच्चों और स्त्रियोंका ख़ून मैंने करवाया है। कितने ही घर उजड़वा दिये हैं। वह देखो उनके कंकाल मुझे निगल जानेके लिए बढ़ते चले आ रहे हैं। मेरी रक्षा करो। मुझे मृत्यु-दण्ड दो, मुझे मार डालो..........।"

सर भगवान सिंहने कड़ककर आदेश दिया—"जल्दी इस पागलको निकालो। अब कभी इसको बँगलेमें मत घुसने देना। यों नहीं जायगा, घसीटकर, उठाकर ले जाओ, और पागलखानेमें बन्द करवा दो।"

जहूर अपने साथियोंके साथ पंडित जागेश्वरदयालको घसीटकर ले गया। उनके जानेके बाद वे कमरेमें उत्तेजित अवस्थामें टहलने लगे। इसी समय टेलीफोनकी घंटी बड़ी ज़ोरसे बज उठी।

रिसीवर उठाकर उन्होंने उत्तर दिया—"हलो, हाँ, मैं ही हूँ। मुझे पूर्ण अवकाश है। गवर्नर साहब बुला रहे हैं? अच्छा, अभी आता हूँ।" रिसीवर रखते हुए उन्होंने ज़हूरको मोटर लानेका आदेश दिया। कपड़े बदलकर तुरन्त मोटरपर सवार होकर गवर्नर साहबके बँगले ले चलनेका आदेश दिया।

गवर्नरके प्राइवेट सेक्रेटरी मिस्टर टामसने उनका स्वागत करते हुए कहा—"सर भगवान, मैं आपसे कुछ बातें करना चाहता हूँ।"

सर भगवान सिंहने उत्सुकतासे कहा—"कहिये, मैं सुननेके लिए तैयार हूँ।"

मिस्टर टामसने गंभीरतासे कहा—"आप सरकारके विशिष्ट पुरुषोंमें हैं, और उसके कृपापात्र हैं। किन्तु सबसे आश्चर्यकी यह बात है कि आपका पुत्र विद्रोहियोंसे मिला हुआ है, यही नहीं वह उनका नेता है। आजकी ख़बर है कि उसने रमईपुरके चारों तरफ ...तने पुलिस थाने थे सबपर क़ब्ज़ा कर लिया है, और अपने साथ फौजके समान एक

बड़ी भीड़ लेकर लखनऊपर अधिकार जमाने आ रहा है। आपका यह दो-मुहाँ प्रयत्न सरकारकी समझमें नहीं आ रहा है। आप हमारा भेद लेनेके लिए सरकारसे मिले हुए हैं, और उधर आपका लड़का दिवाकर सिंह सरकारको उलट देनेकी चेष्टा कर रहा है। आपको क्यों न गिरफ्तार कर लिया जावे ?"

सर भगवान सिंह भय और क्रोधसे काँपने लगे। जिसका उन्हें भय था वही सामने आया। यह उन्हें विश्वास था कि दिवाकर सिंहकी कार्यवाहियाँ उन्हें एक न एक दिन अवश्य विपदमें डालेंगी। उन्होंने भय और क्रोधको दमन करते हुए कहा—"यदि सरकार मुझे गिरफ्तार करना चाहती है, तो वह कर सकती है। मैं इस मामलेमें बिल्कुल निरपराध हूँ। मेरा लड़का मेरे वशमें नहीं है। चूँकि यह मेरी जागीर और मेरे पुत्रका मामला है, मैं स्वयं विद्रोहको दमन करनेकी इच्छा करता हूँ। मैं इन बागियोंका, चाहे उनमें मेरा सारा परिवार शामिल हो, जड़-मूलसे नष्ट कर दूँगा। रमईपुरको नष्ट कर जंगलमें परिणत कर दूँगा।"

मिस्टर टामसने दूसरी ओर देखते हुए पूछा—"आप जैसा कह रहे हैं वैसा ही करेंगे, इसपर कैसे भरोसा किया जावे ?"

सर भगवान सिंह निरुत्तर होकर उनकी ओर त्रस्त दृष्टिसे देखने लगे।

मिस्टर टामस कहने लगे—"यों आप सरकारके विश्वासी और विशिष्ट कर्मचारियोंमें हैं यह मैं पहले ही कह चुका हूँ। किन्तु इस समय परिस्थिति ऐसी है, जिससे सरकारको अत्यन्त सतर्कतासे काम करना पड़ रहा है। जब आपका सारा परिवार विद्रोहियोंके साथ शामिल है, तब यह कैसे विश्वास किया जावे कि आप अपने परिवारका साथ न देंगे। स्पष्ट कहनेके लिए क्षमा कीजियेगा।"

सर भगवान सिंहका शरीर पसीनेसे तर हो गया। उन्होंने धीमे स्वरमें कहा—"यदि मैं उनका साथ देना चाहता तो आप मुझे यहाँ न देखते। आपको जिस भाँति मेरी नेकनीयतीका विश्वास हो, वह करनेको तैयार हूँ। मैं एक बार हिज़ एक्सेलन्सीसे मिलना चाहता हूँ।"

मि० टामसने उत्तर दिया—"मुझे अत्यन्त शोकके साथ कहना पड़ता है कि आप उनसे नहीं मिल सकते, क्योंकि इसके विषयमें उनकी स्पष्ट आज्ञा है। आपकी गिरफ्तारीका वारंट निकाल दिया गया है, और आप इस समय अपनेको हिरासतमें समझिये।"

सर भगवान सिंह हताश होकर मि० टामसका मुख निरखने लगे।

थोड़ी देर बाद मि० टामसने कहा—"आपकी दशा देखकर मुझे बड़ी दया आती है। किन्तु क्या करूँ सरकारी हुक्मके सामने लाचार हूँ !"

सर भगवान सिंहने काँपते हुए स्वरसे कहा—"इसके अर्थ तब यह है कि मेरा पद और अधिकार भी मुझसे छीन लिया गया है।"

मि० टामसने आँख चुराते हुए कहा—"यह तो आप स्वयं ही विचारें, मैं क्या कहूँ ?"

दोनों एक दूसरेका मुख देखने लगे। थोड़ी देरमें मि० टामसने कहा—"सर भगवान, सत्य ही आपकी दशासे मुझे बड़ा दुख हो रहा है। आपके साथ मेरी पूर्ण सहानुभूति है। आपके मुक्त होनेका केवल एक उपाय है।"

सर भगवानको आशाकी एक क्षीण रेखा दिखायी दी। उन्होंने बड़ी करुण दृष्टिसे उनकी ओर देखा।

मि० टामसने धीरे धीरे कहना आरम्भ किया—"सरकारके साथ वह बेइमानी होगी, किन्तु आप मेरे मित्र हैं, आपकी सहायता करना भी मेरा परम कर्त्तव्य है।"

सर भगवान सिंहकी जानमें जान आयी। उन्होंने कहा—"आपका यह अहसान मैं आजन्म नहीं भूलूँगा।"

मि० टामस—"वह यही कि मैं आपकी गिरफ्तारीका वारंट तामील न करूँ, और दो दिनके लिए रोक रक्खूँ। इस अवसरमें आप विद्रोहियोंको पूर्णरूपसे दमन कर दें। विद्रोह दमन करनेमें जब आपको सफलता मिल जायगी, तब मैं आपकी सिफ़ारिश करके आपको छुड़वा दूँगा।"

सर भगवान सिंहने जोशके साथ कहा—"यदि मुझे दो दिनका अवकाश मिल जावे तो मैं रमईपुरका नामनिशान मिटा दूँगा। मैं अपने परिवारके किसी व्यक्तिका मोह न करूँगा। और मि० टामस, मैं आपको भी खुश कर दूँगा। कहिये, आपकी क्या सेवा करूँ ?"

यह कहते हुए उन्होंने अपनी जेबसे चेक बुक निकाली और अपने दस्तख़त करके देते हुए कहा—"लीजिये, रुपयोंके अंक आप अपने हाथसे स्वयं भर लें। जितनी रकम चाहें, प्रसन्नतासे लिख लीजिये।"

मि० टामसने बड़ी निस्पृहतासे कहा—"इसकी क्या आवश्यकता है ? यदि आपकी इच्छा है तो आप मेरी स्त्रीके नामसे बीस हजार पौंडका चेक लिख देवें। किन्तु सावधान, आप यहाँसे सीधे जाकर विद्रोहियोंका दमन करें। आप अभीतक अपने पदपर ही नियुक्त समझें, क्योंकि जबतक मैं वारंटकी तामील नहीं करता, तबतक आपके अधिकारोंमें कोई परिवर्त्तन नहीं आता। यह भी सचेत कर देना मैं उचित समझता हूँ कि इन बातोंकी चर्चा आप किसीसे न करें, नहीं तो आप बड़ी मुसीबतमें पड़ जायँगे।"

सर भगवान सिंहने बीस हजार पाउण्डके बराबर तीन लाख रुपयेका चेक लिखकर देते हुए कहा—"मैं मूर्ख नहीं हूँ, मि० टामस। मैं आपके अहसानसे कभी उऋण नहीं हो सकता। दो दिनमें ही इस प्रान्तके सारे विद्रोहको नष्ट कर दूँगा।"

धन्यवाद देकर वे चले गये। उनके जानेके बाद, एक दूसरे कमरेसे मि० जेम्सने निकल कर कहा—"वाह टामस तुमने कमाल किया। क्या बेवकूफ़ बनाया है! मेरी एक छोटी सी .खबरसे तुमने तिलका ताड़ बनाकर कितनी शीघ्रतासे इतनी लम्बी रकम पैदा कर ली!"

मि० टामसने सन्तोषके साथ हँसते हुए कहा—"ये हिन्दुस्थानी राजे निरे बुद्धू होते हैं। इन्हें .जरासा कस भर दो, फिर जो चाहे करवा लो। एडवाइज़र हैं, मगर इतनी बुद्धि नहीं है कि मेरे पास इनकी गिरफ्तारीका वारंट कैसे आयगा? सरकारका काम तो हमेशा कानून कायदेसे सीढ़ी दर-सीढ़ी हुआ करता है। मगर चूँकि हज़रतके कुँवर विद्रोहियोंसे मिले हुए हैं, इसलिए व्यावहारिक ज्ञान बिल्कुल नष्ट हो गया है।"

दोनोंके अट्टहासने उस कमरेको प्रतिध्वनित कर दिया।

मि० जेम्सने हँसते हुए कहा—"एक तीरसे दो शिकार कर डाले। बीस हजार पौंड भी झटक लिये, और विद्रोहको नष्ट करवानेका प्रबन्ध भी कर दिया। वाह, क्या काँटेसे काँटा निकाला है! अब मुझे विश्वास है कि सर भगवान अपने परिवार और गाँवको नष्ट कर देगा।"

मि० टामस सन्तोषके साथ उनकी ओर देखने लगे। फिर धीरे धीरे कहा—"इसमेंसे दस हजार पौंड तो तुम्हारे हैं।" दोनों पुनः हँसने लगे।

८

"आज तुम्हें सही रास्तेपर चलते देखकर मुझे निहायत खुशी हो रही है अनवर! गुमराह अगर शामतक अपने घर आ जाता है तो अधिक अफसोस करनेकी जरूरत नहीं है।"

"काका, हिर्सने अभीतक मेरी आँखोंमें परदा डाल रक्खा था। मेरे लिए सिर्फ एक .ख्याल था, वह यह कि बेइंतिहा दौलतसे अतना घर भर लेना। मेरी समझसे दौलत सारे आरामकी जड़ है, इसलिए हर तरहसे दौलत कमानेकी कोशिश करता था। उसीके लिए अपना ईमान और अपने भाइयोंकी जान बेकार समझकर बेंच दिया था, मगर जबसे उनकी असलियत देखा, तबसे मेरी आँखें खुलीं, और अपने गुनाहोंकी माफी माँगनेके लिए, रहीम काका आपके पास आया हूँ।"

"भाई अनवर, अपने गुनाहोंकी माफी इनसानको अपनेसे खुद माँगनी चाहिये, क्योंकि गुनाह वह अपने ही खिलाफ करता है, दूसरोंके खिलाफ नहीं। इनसानमें दो ताकतें हैं, एक रूहानी और एक दुनियावी। दोनोको यकसाँ तरक्की देनेसे आदमी फरिश्ता हो जाता है, रूहको तरक्की देनेसे वह इनसान होता है, और दुनियावी तरक्की करनेसे वह जानवर होता है। अगर इनसान, जानवर बनता है तो वह जुर्म अपनी रूहके खिलाफ करता है, इसलिए उसको अपनेसे माफी माँगना उचित है।"

"वाकई रहीम काका, मैं अपनी इन्सानियत खोकर शैतान बन बैठा था। लेकिन उस दिन जब मैंने अपनेसे भी बड़ा शैतान देखा, तो मुझे होश आया। अब छिपानेसे क्या फायदा, दर अस्ल मुझे हिन्दू मुसलमानोंमें झगड़ा करानेके लिए महाराजा-कल्याणपुरने नौकर रक्खा था। इससे सस्ता जरिया रुपया पैदा करनेका नहीं था। आमके आम और गुठलीके दाम थे। मैं उस वक्त इसलामके सच्चे मानी नहीं समझता था। मैं समझता था कि इसलामका मतलब है हिन्दुओंकी मुखालफत। मुझे यह नहीं मालूम था कि हिन्दूधर्मने मशरिकमें जिस खुदाई रोशनीको अपने मुल्ककी वजह कतहमें फैलाया है, उसी रौशनीको मगरिबमें अपने मुल्की लिबासमें इसलामने जन्म दिया है। पूरबमें रौशनी जैसे अन्धेरेको दूर करती है, पश्चिममें भी उसी तरह उसको दूर करेगी। दोनों जगह खुदाकी इबादत एकसा है, सिर्फ जबानका फर्क है, और जबानका फर्क इसलिए है कि दोनों मुल्क दूर-दूर बसे हुए हैं। मगर रहीम काका, उस दिन मुझे इन बातोंकी समझ नहीं थी। मैं तो सिर्फ रुपया पैदा करनेकी धुनमें था। उसी हिर्ससे हिन्दुओंके खिलाफ मुसलमानोंको भड़काना शुरू किया। इनसानको इनसानसे लड़ाने लगा, और लगा उनके खूनमें अपना पैसा बटोरने। इसी गाँवको मैंने करीब-करीब बरबाद कर दिया था, मगर राजकुमारने अपना खून देकर मेरे शैतानकी प्यास बुझा दी, और गाँव आबाद रह गया। मैं सोच रहा था कि महाराज साहबका एकलौता बेटा मेरी वजहसे मारा गया है, इसकी सजा जो न मिले थोड़ी है, मगर रहीम काका, जो कुछ मैंने देखा वह इनसानको पागल कर देनेके लिए काफी था। महाराज साहब अपने एकलौते बेटेके मारनेवालेको मुँह मांगा इनाम देनेको तैयार हो गये। उन्होंने साफ अल्फाजमें कहा कि उनके रास्तेका काँटा दूर हो गया है। उसी वक्तसे सोच रहा हूँ कि शैतान अगर कहीं है तो क्या वह महाराजासे ज्यादा खौफनाक है?" रहीमके नेत्रोंसे विस्मय टपकने लगा!

उन्होंने कहा—"महाराजा साहबके परिवारकी अनबनकी वजह अब मालूम हुई। राजकुमार दिवाकर सिंह वाकई सूरमा है। मुल्कपर अपनी जान निछावर करनेवाला है, दुनियामें लोग दौलतके लिए अपनी जान, और अपना ईमान दोनों बेंच देते हैं, मगर राजकुमारने अपने मुल्कके लिए दौलत और राज, ऐश और इशरतको बेंच दिया है। यही इनसानियत है। आज उसी रण बाँकुरेकी बदौलत हमारा तिरंगा झंडा आसमानमें फहरा रहा है, घर-घरमें अमन है, और बच्चा-बच्चा मुल्कपर कुरबान होनके लिए एक दूसरेसे ज्यादा आमादा है। महाराज साहब अन्धे हो रहे हैं, अफसोस यह है कि उनकी आँखोंमें रौशनी उस वक्त आवेगी जब हमलोग दुनियामें न रहेंगे। कहो अनवर अब क्या इरादा है?"

"इरादा और क्या हो सकता है, सिर्फ यह कि मैं भी तुम्हारे साथ कन्धासे कन्धा मिलाकर मुल्कपर कुर्बान हो जाऊँ। आगमें सूखा, और गीला दोनों जलता है। अंग्रेज

हुक्कामके लिए हिन्दू और मुसलमान दोनों दुश्मन हैं, दोनोंसे एक सा ख़तरा है, इसलिए वे काँटेसे काँटा निकाल रहे हैं। हिन्दुओंसे मुसलमानोंको लड़ाकर दोनोंकी ताक़त जाया कर रहे हैं, मगर जब वे गाँव तबाह करते हैं, तब उसके सारे बाशिन्दोंपर गोलियाँ चलाते हैं, वहाँ वे हिन्दू-मुसलमानका लिहाज़ नहीं करते। चूँकि उनकी चालका मैं एक औज़ार था, इसलिए उनकी भेदनीतिका मुझे बखूबी इल्म है। मुल्ककी आज़ादीमें हिन्दू और मुसलमान दोनोंका एकसा फ़ायदा है। तब मुसलमान कैसे इस लड़ाईसे दूर रह सकते हैं। रहीम काका, यही मेरा इरादा है कि जिस ताक़तसे मैंने मुसलमानोंको हिन्दुओंके ख़िलाफ करके उनका खून बहाया है, अब उसी ताक़तसे मैं दोनोंमें इत्तिहाद कायम करूँ और मुल्ककी आज़ादीमें बराबर हिस्सा बटाऊँ।"

"शाबाश! अनवर शाबाश। काश तुम्हारी जैसी अक्ल हरएक इनसानमें, चाहे वह हिन्दू हो, चाहे मुसलमान, आ जावे तो फिरंगी इस मुल्कमें एक दिन नहीं रह सकते। खुदाने पहले जमीन बनाया, फिर इनसान पैदा किया, जो इनसान जिस जमीनपर पैदा हुआ, वह उसके भोगके लिए है, अपनी-अपनी जमीनपर अपना-अपना कब्जा रहे यही स्वराज्य है। गर उस ज़मीनपर कोई गैर-मुल्कवाले क़ब्जा करते हैं, तो वह नाजायज़ है, और उसकी मुख़ालफ़त तबतक करे जबतक वे हमारी जमीनको छोड़ न दें। यह मुख़ालफ़त पीढ़ी दर पीढ़ीतक की जावे, सिर्फ एक ही पीढ़ीका यह फ़र्ज नहीं है।"

"बेशक रहीम काका, मुल्ककी यही ख़िदमत है। मैं इस मुल्कके हरएक मुसलमानके घरमें यह पैगाम ले जाऊँगा, और अब देखूँ कि क्या नतीजा निकलता है। आपने मेरे गुनाहोंको माफ़ कर दिया है, इससे मेरी सारी परेशानी दूर हो गयी। अब मैं जाऊँगा।"

रहीमने अनवरको गले लगाकर विदा किया।

अनवरके जानेके बाद कमरेमें घूमता हुआ वह सोचने लगा—"इस समय मुल्क कितनी मुश्किलातसे गुज़र रहा है। अमीर, गरीब, छोटे-बड़े, नर-नारी, बालक-बूढ़े, किसान-मजदूर सब एक ही रंगमें रंगे हुए दिखायी पड़ते हैं। आज़ादीके लिए सब बेसब्र हैं। अपने प्राणोंको होम देनेके लिए सभी व्यग्र हैं, क्या अब भी मुल्क आज़ाद न होगा? कितना खून बह रहा है, और कितना खून बहानेको लोग तैयार हैं? मज़लूमोंका खून कभी बेकार नहीं जाता, गरीबोंकी हाय कभी निष्फल नहीं जाती। इसका फल ज़रूर देखनेको मिलेगा, चाहे थोड़े दिन बाद ही क्यों न मिले!"

"हिन्दू और मुसलमान, एक ही जिस्मके दो अजो हैं, एक ही माँके दो बेटे हैं। मुझे तो दोनोंमें कोई अन्तर नहीं दिखायी पड़ता। हिन्दू अगर सूर्यको मानते हैं, तो मुसलमान चाँदको, लेकिन चाँद और सूरज खुदाके दोनों नूर हैं। चूँकि हिन्दू सूरजके पुजारी हैं, इसलिए उनकी भाषा संस्कृतके तमाम हुरूफ़ सूरजकी मिलती जुलती शकलें हैं। सूरज गोल है, और उसकी किरणें सीधी हैं। उसकी गोलाई, और किरणोंकी सिधाई लेकर उन्होंने

अपने हुरूफ बनाये हैं। मसलन् 'अ' हुरूफमें ऊपर एक सीधी लकीर, बीचका हिस्सा आधा गोल, और किनारेपर फिर एक सीधी खड़ी रेखा, उसके सामने एक आधा गोल और सिरेपर एक तिरछी सीधी रेखा है, इन सबको मिला देनेसे 'अ' हुरूफ बन जाता है, इसी तरह सब अक्षरोंका विश्लेषण करनेसे यही मालूम होगा कि संस्कृत भाषाके तमाम अक्षरोंपर सूर्यकी छाप है। ठीक यही हाल अरबीके हुरूफोंका है। अरबके बाशिन्दे अथवा मुसलमान चाँदको महत्त्व देते हैं, क्योंकि सूर्य उनके मुल्कमें तपिश पैदा करता है, उन्हें बाहर निकलकर कामकाज करने नहीं देता, मगर चाँद उजालेके साथ अपनी ठंडक भी देता है, इसलिए वे सूरजसे चाँदको मानते हैं। चाँदको बतानेके लिए आधी गोलाई काममें लायी जाती है, और इसकी भी किरणें सीधी होती हैं। अरबी जबानके तमाम हुरूफ अर्धचन्द्र और सीधी लकीरोंसे बने हैं। मसलन अलिफ़ एक सीधी लम्बी लकीर है, यानी चाँदकी किरण पहले ज़मीनपर उतरती है, और 'बे' हुरूफ़ अर्धचन्द्र है। इसी तरह उसके सब हुरूफ़ अर्ध चन्द्रके द्योतक हैं। चाँद और सूरज खुदाकी दोनों आँखें हैं, फिर इनके पुजारी आपसमें क्यों लड़ें? अनवरने साफ़ ज़ाहिर कर दिया है कि चंद खुदगर्ज अपना काम बनानेके लिए दोनोंको लड़ाते हैं। उसने इस तमाशेको खुद किया है और उसका फ़ल भुगता है। क्या ही अच्छा होता कि हरएक हिन्दू और हरएक मुसलमान यह राज़ अच्छी तरह जान लेता।"

"राजकुमार दिवाकर सिंह दरअस्ल इनसान हैं। उन्होंने सारे ऐशो इशरतपर ठोकर लगाकर किसानों और मज़दूरोंसे कन्धा भिड़ा दिया है। उनको आज़ाद करनेके लिए अपने सिरपर काँटोंका ताज पहना है, बदनपर भभूत लगायी है। उन्होंने यह ऐलान कर दिया है कि मुल्क आज़ाद होनेपर मैं इन गाँवोंपर राज नहीं करूँगा, बल्कि गाँवकी पंचायत राज करेगी। उनका हक उतना ही होगा, जितना कि एक किसानका होगा। भला ऐसे इनसानको कौन नहीं चाहेगा, कौन उसके इशारेपर मरनेके लिए तैयार नहीं होगा! उनकी नज़रमें हिन्दू और मुसलमान, ब्राह्मण और भंगी एक हैं। जहाँ ऐसी बराबरी है, वहाँ उसके झंडेके नीचे खड़े होनेमें भी शान है। यही हिन्दुस्थानकी शान है।"

"देखो, वह रणभेरी बज रही है। आज हमारी सेना कूँच कर रही है। हम आजादीका सौदा अपना सिर कटाकर करने जा रहे हैं, हम मौतको चुनौती दे रहे हैं, और गोलियोंको लूटकर अपने जिस्मकी जेबें भरने जा रहे हैं। आजादीकी हरएक लड़ाई करबलेकी लड़ाई है, और हर जगह करबला है जहाँ शहीदोंका खून गिरता है। करबलाका महत्त्व इसीलिए है कि वहाँपर दुनियाके दो जबरदस्त शहीद हसन और हुसैनने अपने खूनसे उस सूखी जमीनको सींचकर हरा भरा गुलज़ार किया था। उन्होंने आज़ाद रहकर एक-एक बूँद पानीके लिए तड़पकर मरना कुबूल किया, मगर बाय अजीदके हाथों अपनी आज़ादी बेंचना मन्जूर नहीं किया। यही इसलाम हमको सिखाता है कि इनसान खुदाका बन्दा है,

आज़ाद पैदा हुआ है, खुद आजन्म आज़ाद रहेगा, और मज़लूमोंको आज़ाद करनेमें अपनी जान कुर्बान कर देगा। कुर्बानी इसलामकी जान है।"

इसी समय फिर रणभेरी जोरसे बज उठी। उसका नाद आकाशमें उठकर सैनिकोंको स्वतन्त्रतापर बलिदान होनेके लिए निमन्त्रण देने लगा। रहीम भी उसमें हाथ बटानेके लिए तेजीसे चला गया।

६

भारतीय राष्ट्रका प्रतीक त्रिगुणात्मक, तिरंगा झंडा बड़े गर्वसे नीलाभ आकाशके नीचे अपने स्वतन्त्र होनेकी घोषणा, वायुके साथ फहराता हुआ कर रहा था। रमईपुरकी जनता केसरिया वर्दी धारण किये आज़ादीके नशेसे झूमती हुई क्रमशः उसकी छायामें एकत्रित हो रही थी। भारतका चिर पुरातन रणवाद्य—ढोल तुमुल नादसे बज रहा था, जिसका रव चतुर्दिक व्याप्त होकर सैनिकोंको बलिदान हो जानेके लिए आह्वान कर रहा था। स्वतंत्रता देवी अपना भक्ष्य ग्रहण करनेके लिए खप्पर निकालकर बड़े वेगसे भागती हुई आ रही थी, और सत्यके सैनिक, अहिंसाके वर्म्मसे सुसज्जित अपना रक्त उसके खप्परमें भरनेके लिए उतावले हो रहे थे, क्योंकि विजय उनके आत्मोत्सर्गके पश्चात् प्राप्त होती है। क्रियाके पश्चात् प्रतिक्रिया होती है, और मरनेके बाद विजय मिलती है, सत् दैविक मार्गका यही नियम है। पाशविक बल तमोगुणका द्योतक है। सृष्टिका संहार ईश्वरमें तमोगुण प्रधान होनेपर होता है। शंकरका प्रलयंकर ताण्डव तमरूपकी पराकाष्ठा है। उसके प्रारम्भ होनेसे सृष्टिका प्रलय आरम्भ होता है, और उसके प्रलयमें स्वयं तमोगुणका लय हो जाता है, तब केवल अवशेष रहता है चिर सनातन सत्, जो सर्वप्रकारसे अहिंसक है, समत्व और मित्रत्व जिसकी दो मुख्य विशेषताएँ हैं।

सैनिकका जीवन, मृत्युके साथ निरन्तर खेलनेवालेका जीवन है, और अहिंसक सैनिकके जीवनका ध्येय तो केवल मृत्युको आलिंगन करना है। सत्यकी वेदीपर आत्म-बलिदान करना वीरत्वकी पराकाष्ठा है। कायरतामें मृत्युसे भय होता है, इसलिए अहिंसामें कायरता नहीं है। अहिंसक सेनानी उत्सर्गकी भावनासे प्रेरित होकर मृत्युकी ओर अग्रसर होता है, तथा अपने ध्येयकी प्राप्तिमें अपना जीवनतक उत्सर्ग करनेके लिए लालायित रहता है। पशुबलके प्रहारपर प्रहार सहता हुआ, प्रत्याक्रमण नहीं करता, क्योंकि प्रत्याक्रमण की भावना असत् है, तामस है।

रमईपुरकी जनता भी इन्हीं भावोंसे ओतप्रोत, स्वतंत्रतापर अपना जीवन निछावर करनेके लिए श्रावण सुदी ११ संवत् १९९९ शनिवारको अखाड़ेवाले मैदानमें एकत्रित हो रही थी। उसमें बाल, युवा, वृद्ध, नर, नारी सभी थे, रुग्ण भी दूरसे उस सेनाके प्रस्थानका उत्सव निरख रहे थे। उस सेनामें नरेंद्र और चक्रधरकी सेना भी आकर सम्मिलित हो गयी थी, इससे उनके हर्षका अन्त ढूँढ़े नहीं मिलता था। नरेंद्र तथा

चक्रधरका परिचय दिवाकर और जंगवहादुरने अपनी सेनाको दिया, और सेना-संचालनका समस्त भार उनको सौंप दिया गया। हिमालयकी तराईसे नरेंद्र और चक्रधरने अपने-अपने क्षेत्रमें पहुँचकर वहाँकी जनताको सैनिक वनाकर, तथा अपना अधिकार जमाते हुए रमईपुरमें आकर दिवाकरकी सेनासे योग किया था। तीनोंके दल अब सम्मिलित होकर लखनऊको अधिकारमें करनेके लिए अग्रसर होनेका विचार कर रहे थे।

रहीम, इमामवख्श और मनोहरके उत्साहका ओर-छोर नहीं मिल रहा था। उनका शारीरिक वल आत्मवलकी प्रभासे देदीप्यमान होकर भारतके प्राचीन गौरवकी इतिहासकी पुनरावृत्ति करने जा रहा था कि शारीरिक वलकी सार्थकता, आर्त्त तथा निर्वलोंकी रक्षा और सत्यपर स्वयंको उत्सर्ग कर देनेमें है। उनके मुखपर आशंकाका कोई भी चिन्ह नहीं दिखायी पड़ता था, उनके कण्ठस्वरमें मर जानेके लिए ललकार थी, उनके नयनोंमें अभयकी तेजमयी ज्योति प्रस्फुटित हो रही थी। अभीतक अखाड़ेमें उनके शारीरिक वल तथा दाँवपेंचकी परीक्षा कुश्तीसे हुआ करती थी, और आज तीनों अपने-अपने आत्मिक वलकी परीक्षा समरक्षेत्रके अखाड़ेमें, स्वतन्त्रताका पुरस्कार प्राप्त करनेके लिए मृत्युसे कुश्ती लड़कर देनेके लिए आतुर हो रहे थे।

तरुणी स्त्रियोंका नेतृत्व नसीम कर रही थी, अपने पिताकी शिक्षाकी परीक्षा देनेके लिए वह भी आज समरमें कूद पड़ी थी। यद्यपि वह गर्भिणी थी किन्तु रणसे मुख मोड़नेके लिए वह किसी प्रकार तैयार न थी। नसीवन और गंगा उसको समझाते-समझाते हार गयीं, किन्तु उसने घरमें वैठना स्वीकार नहीं किया। उसका कथन था कि उसे कोई अधिकार नहीं है, कि वह अपने गर्भस्थ वालकको शिक्षा और क्रियात्मक ज्ञान सीखनेसे रोके, क्योंकि अभिमन्युने तो गर्भमें ही चक्रव्यूहको तोड़नेकी क्रिया सीखी थी। इस युद्धका प्रभाव क्रियात्मक रूपसे उस गर्भस्थ वालकपर पड़ेगा, जिससे उसको वंचित करनेका अधिकार किसको प्राप्त है? और जब गुलावने उससे घरमें रहनेका अनुरोध किया, तो उसने हँसकर कहा--"सखी, रण-प्रांगणमें तो तेरा विवाह होने जा रहा है, यह मुझको अच्छी तरह विदित है, क्या तू चाहती है कि मैं उसे न देखूँ? हम जन्मभर तो साथ रहीं हैं, अब अन्तिम समयमें क्यों साथ छोड़नेके लिए तड़प रही है?" उसकी एक आँखमें आँसू थे और दूसरीमें प्रच्छन्न परिहास।

गुलावने घुड़ककर कहा---"पगली, अगर तू अकेली होती, तो मैं तुझे मरनेसे न रोकती, किन्तु तेरे ऊपर एक वड़ा भारी उत्तरदायित्व है। मैं क्या अपने सामने अपने इमामभाईके प्रतिरूपको नष्ट होते देख सकूँगी? शायद तुझे मालूम नहीं कि वहनको भाईका लड़का, अपनी सन्तानसे भी अधिक प्रिय होता है?"

नसीमने अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे कहा---"गुलावी, यह सौभाग्य मुझे नहीं मिला कि मैं तुझे दिखाती कि वहनकी सन्तान उसके पुत्रसे भी उसको अधिक प्रिय है। किन्तु तू

भय मत कर, तेरा भतीजा इस युद्धमें नहीं मरेगा, और मुझे भी जन्मभर रोनेके लिए जीवित रहना पड़ेगा।" नसीम भविष्यकी कल्पनासे काँप उठी, किन्तु अपने संकल्पसे नहीं हटी।

माधवी और यशोधरा भी इस युद्धमें भाग लेनेके लिए सबके साथ उतर पड़ी थीं। उन्होंने साधारण सैनिककी भाँति लड़ना स्थिर कर, कोई पद ग्रहण नहीं किया था। माधवीने जब हँसकर पूछा कि युद्धका परिणाम क्या होगा तो यशोधराने कहा—"मधु, तू युद्धका परिणाम पूछती है, मैं पूछती हूँ कि मेरा क्या परिणाम होगा? मैं स्वच्छन्दतासे अपनी कल्पनाओंके प्रासादपर चढ़ती हुई जा रही थी। तेरे भाईको प्राप्त करनेकी कल्पना भी नहीं कर रही थी, किन्तु तूने वह आशा मेरे हृदयमें उत्पन्न कर मुझे एक नवीन जगतमें लाकर खड़ा कर दिया। किन्तु आज मरनेके पहले मैं तुझे बता देना चाहती हूँ, कोई मेरे मनमें बार बार कह रहा है कि मधु, तेरी आशा सफल नहीं होगी। उनको प्राप्त करनेके लिए मैंने अभी तक कोई तपस्या नहीं की है। प्रच्छन्नरूपसे किसी दूसरेने उनके हृदयपर अपना अधिकार जमा रक्खा है, और उसका अधिकार इतना गुप्त है कि स्वयं तेरे भाईको नहीं मालूम। वह इतना विशद है कि उसमें तुम्हारे भाई और मैं दोनों समाविष्ट हो गये हैं।"

माधवीने आश्चर्यसे उसकी ओर देखते हुए कहा—"वह कौन है? मैं तो कुछ नहीं जानती।"

यशोधराने पृथ्वीतलकी ओर देखते हुए कहा—"उसको तुम नहीं जान सकती। वह मौन है, अव्यक्त है। किन्तु इतनी शक्तिशालिनी है, कि उसने अपनी तपस्यासे उनके हृदयको जीत लिया है। मैं उसकी प्रतिद्वंद्विनी हूँ, इसलिए कुछ आभास मुझको है। वह है गुलाब, मनोहर भाईकी बहिन।"

माधवी विस्फारित नेत्रोंसे उसकी ओर देखने लगी। यशोधराने कहा—"मधु, तुम्हें विश्वास नहीं होता, तुझे क्या, किसीको हठात् विश्वास नहीं होगा! किन्तु मैं कहती हूँ कि यह सत्य है। मेरा मन मुझसे छल नहीं कर सकता। मैंने अत्यन्त सूक्ष्म दृष्टिसे उसके प्रत्येक मानसिक भावोंको लक्ष्य किया है। उसने अपना जीवन तक उनकी रक्षामें भेंट चढ़ा दिया है। मैं भी उनके लिए वही करती जो उसने किया है, किन्तु भगवानने वह अधिकार केवल उसीके लिए सुरक्षित रक्खा था। उसने अपने रक्तके साथ उनके शरीरमें प्रविष्ट होकर उनके मन, मस्तिष्क और हृदयपर अपना अक्षुण्ण अधिकार जमा लिया है। यही कारण था कि उन्होंने रानी अम्मासे विवाहके लिए इनकार किया था। आजतक क्या उन्होंने रानी अम्माकी कोई बात टाली है? उसमें उनका अपराध नहीं था, वे क्या करें, वे तो स्वयं अवश थे। उसका मौन आकर्षण उनको बलात् अपनी ओर खींच रहा था, और उनको इनकार करनेके अतिरिक्त दूसरा कोई मार्ग नहीं था।"

चक्रधरका परिचय दिवाकर और जगवहादुरने अपनी सेनाको दिया, और सेना-संचालनका समस्त भार उनको सौप दिया गया। हिमालयकी तराईसे नरेंद्र और चक्रधरने अपने-अपने क्षेत्रमे पहुँचकर वहाँकी जनताको सैनिक वनाकर, तथा अपना अधिकार जमाते हुए रमईपुरमे आकर दिवाकरकी सेनासे योग किया था। तीनोके दल अब सम्मिलित होकर लखनऊको अधिकारमे करनेके लिए अग्रसर होनेका विचार कर रहे थे।

रहीम, इमामवख्श और मनोहरके उत्साहका ओर-छोर नही मिल रहा था। उनका शारीरिक वल आत्मवलकी प्रभासे देदीप्यमान होकर भारतके प्राचीन गौरवकी इतिहासकी पुनरावृत्ति करने जा रहा था कि शारीरिक वलकी सार्थकता, आर्त्त तथा निर्वलोंकी रक्षा और सत्यपर स्वयको उत्सर्ग कर देनेमे है। उनके मुखपर आशकाका कोई भी चिन्ह नही दिखायी पडता था, उनके कण्ठस्वरमे मर जानेके लिए ललकार थी, उनके नयनोंमे अभयकी तेजमयी ज्योति प्रस्फुटित हो रही थी। अभीतक अखाड़ेमे उनके शारीरिक वल तथा दाँवपेचकी परीक्षा कुश्तीसे हुआ करती थी, ओर आज तीनो अपने-अपने आत्मिक वलकी परीक्षा समरक्षेत्रके अखाड़ेमे, स्वतन्त्रताका पुरस्कार प्राप्त करनेके लिए मृत्युमे कुश्ती लडकर देनेके लिए आतुर हो रहे थे।

तरुणी स्त्रियोका नेतृत्व नसीम कर रही थी, अपने पिताकी शिक्षाकी परीक्षा देनेके लिए वह भी आज समरमे कूद पडी थी। यद्यपि वह गर्भिणी थी किन्तु रणसे मुख मोडनेके लिए वह किसी प्रकार तैयार न थी। नसीवन और गगा उसको समझाते-समझाते हार गयी, किन्तु उसने घरमे वैठना स्वीकार नही किया। उसका कथन था कि उसे कोई अधिकार नही है, कि वह अपने गर्भरथ वालकको शिक्षा और क्रियात्मक ज्ञान सीखनेसे रोके, क्योकि अभिमन्युने तो गर्भमें ही चक्रव्यूहको तोड़नेकी क्रिया सीखी थी। इस युद्धका प्रभाव क्रियात्मक रूपसे उस गर्भस्थ वालकपर पड़ेगा, जिससे उसको वंचित करनेका अधिकार किसको प्राप्त है? और जव गुलावने उससे घरमे रहनेका अनुरोध किया, तो उसने हँसकर कहा—"सखी, रण-प्रागणमे तो तेरा विवाह होने जा रहा है, यह मुझको अच्छी तरह विदित है, क्या तू चाहती है कि मै उसे न देखूँ? हम जन्मभर तो साथ रही है, अब अन्तिम समयमे क्यो साथ छोड़नेके लिए तड़प रही है?" उसकी एक आँखमे आँसू थे और दूसरीमे प्रच्छन्न परिहास।

गुलावने घुड़ककर कहा—"पगली, अगर तू अकेली होती, तो मै तुझे मरनेमे न रोकती, किन्तु तेरे ऊपर एक वड़ा भारी उत्तरदायित्व है। मै क्या अपने सामने अपने इमामभाईके प्रतिरूपको नष्ट होने देख सकूँगी? शायद तुझे मालूम नही कि वहनको भाईका लड़का, अपनी सन्तानसे भी अधिक प्रिय होता है?"

नसीमने अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे कहा—"गुलावी, यह सौभाग्य मुझे नहीं मिला कि मै तुझे दिखाती कि वहनकी सन्तान उसके पुत्रसे भी उसको अधिक प्रिय है। किन्तु तू

भय मत कर, तेरा भतीजा इस युद्धमें नहीं मरेगा, और मुझे भी जन्मभर रोनेके लिए जीवित रहना पड़ेगा।" नसीम भविष्यकी कल्पनासे काँप उठी, किन्तु अपने संकल्पसे नहीं हटी।

माधवी और यशोधरा भी इस युद्धमें भाग लेनेके लिए सबके साथ उतर पड़ी थीं। उन्होंने साधारण सैनिककी भाँति लड़ना स्थिर कर, कोई पद ग्रहण नहीं किया था। माधवीने जब हँसकर पूछा कि युद्धका परिणाम क्या होगा तो यशोधराने कहा—"मधु, तू युद्धका परिणाम पूछती है, मैं पूछती हूँ कि मेरा क्या परिणाम होगा? मैं स्वच्छन्दतासे अपनी कल्पनाओंके प्रासादपर चढ़ती हुई जा रही थी। तेरे भाईको प्राप्त करनेकी कल्पना भी नहीं कर रही थी, किन्तु तूने वह आशा मेरे हृदयमें उत्पन्न कर मुझे एक नवीन जगतमें लाकर खड़ा कर दिया। किन्तु आज मरनेके पहले मैं तुझे बता देना चाहती हूँ, कोई मेरे मनमें बार बार कह रहा है कि मधु, तेरी आशा सफल नहीं होगी। उनको प्राप्त करनेके लिए मैंने अभी तक कोई तपस्या नहीं की है। प्रच्छन्नरूपसे किसी दूसरेने उनके हृदयपर अपना अधिकार जमा रक्खा है, और उसका अधिकार इतना गुप्त है कि स्वयं तेरे भाईको नहीं मालूम। वह इतना विशद है कि उसमें तुम्हारे भाई और मैं दोनों समाविष्ट हो गये हैं।"

माधवीने आश्चर्यसे उसकी ओर देखते हुए कहा—"वह कौन है? मैं तो कुछ नहीं जानती।"

यशोधराने पृथ्वीतलकी ओर देखते हुए कहा—"उसको तुम नहीं जान सकती। वह मौन है, अव्यक्त है। किन्तु इतनी शक्तिशालिनी है, कि उसने अपनी तपस्यासे उनके हृदयको जीत लिया है। मैं उसकी प्रतिद्वंद्विनी हूँ, इसलिए कुछ आभास मुझको है। वह है गुलाब, मनोहर भाईकी बहिन।"

माधवी विस्फारित नेत्रोंसे उसकी ओर देखने लगी। यशोधराने कहा—"मधु, तुम्हें विश्वास नहीं होता, तुझे क्या, किसीको हठात् विश्वास नहीं होगा! किन्तु मैं कहती हूँ कि यह सत्य है। मेरा मन मुझसे छल नहीं कर सकता। मैंने अत्यन्त सूक्ष्म दृष्टिसे उसके प्रत्येक मानसिक भावोंको लक्ष्य किया है। उसने अपना जीवन तक उनकी रक्षामें भेंट चढ़ा दिया है। मैं भी उनके लिए वही करती जो उसने किया है, किन्तु भगवानने वह अधिकार केवल उसीके लिए सुरक्षित रक्खा था। उसने अपने रक्तके साथ उनके शरीरमें प्रविष्ट होकर उनके मन, मस्तिष्क और हृदयपर अपना अक्षुण्ण अधिकार जमा लिया है। यही कारण था कि उन्होंने रानी अम्मासे विवाहके लिए इनकार किया था। आजतक क्या उन्होंने रानी अम्माकी कोई बात टाली है? उसमें उनका अपराध नहीं था, वे क्या करें, वे तो स्वयं अवश थे। उसका मौन आकर्षण उनको बलात् अपनी ओर खींच रहा था, और उनको इनकार करनेके अतिरिक्त दूसरा कोई मार्ग नहीं था।"

माधवीने मुख विचकाकर कहा—"मैं तेरी बातपर विश्वास नहीं करती। भैयाने मुझसे तो इनकार नहीं किया था ? तेरी आशंका निर्मूल है, इस युद्धके पश्चात् मैं तुझको अपनी भौजाई बनाकर छोड़ूँगी।"

यशोधराने शुष्कतासे हँसते हुए कहा—"यदि हम सब जीवित रहे तो ! युद्धका परिणाम तो निश्चित रहता है, किन्तु सैनिकोंके जीवनका कोई निश्चय नहीं है। मैं तो यही प्रार्थना करती हूँ कि इस युद्धमें वीरगतिको प्राप्त होकर गुलाबका मार्ग साफ कर दूँ। किसीके प्राप्य अधिकारपर हस्तक्षेप न करना और अपनी प्रियतम वस्तुको त्याग देना, क्या अहिंसा नहीं है ?"

माधवी अपने आयत लोचनोंसे उसकी ओर देखने लगी।

रूपकुँवरि और शारदा भी अपने बाल-जीवनकी घटनाएँ याद करने लगीं। स्वदेशको विदेशियोंके अधिकारसे मुक्त करनेकी भावना प्रबल हो उठी। उनका मनो-मालिन्य तो कभी दूर हो गया था, और दोनों पुनः एक दूसरेके निकट पहलेकी भाँति आ गयी थीं। रूपकुँवरि अपने पुत्र जंगबहादुरको पाकर सारा दुख भूल गयी थी, और वह नवीन जोशसे युद्धमें भाग लेनेके लिए आतुर थी। उसके सामने राजपूतानाकी अमर प्रथा जौहर-व्रतका चित्र था। उसमें स्त्रियाँ अपने पति और पुत्रको रणसाजसे सुसज्जित कर स्वयं आत्मघात करती थीं, किन्तु इस युद्धमें तो वह भी कन्धेसे कन्धा भिड़ाकर आत्महत्याके अपराधसे दोषित न होकर, अपना बलिप्रदान कर सकती थी।

शारदाका जीवन कशमकशका जीवन था। उसने अपने निजत्वको अपने पतिकी इच्छामें निमज्जित कर दिया था, किन्तु फिर भी उससे वे असन्तुष्ट रहते थे। उसकी सतत चेष्टाएँ दिवाकरको युद्धसे पराङ्मुख नहीं कर सकीं। जब उसने अपने नैसर्गिक सम्बन्धके अधिकारबलसे उसको घर चलनेका अनुरोध किया तो दिवाकरके कथनने कि 'प्राकृतिक माता-पिताके अधिकारसे सहस्रगुना अधिक अधिकार मातृभूमिका होता है,' उसको चेष्टासे विरत कर दिया था। उसके मनने प्रश्न किया कि 'क्या मातृभूमिका अधिकार पतिके अधिकारसे अधिक नहीं है ?' इस युद्धमें प्राण देनेसे ही उसकी सारी अशान्ति दूर हो सकती थी। वह भी अपने दोनों सन्तानोंके साथ उस प्रज्वलित अग्निमें कूदनेके लिए लालायित हो उठी। दिवाकर तो इसी दिनकी प्रतीक्षा वर्षोंसे कर रहा था। वह युद्धक्षेत्रमें प्राण देनेका सुख स्वप्न सदैव देखा करता था। आज उसकी अभिलाषा पूर्ण होनेका अवसर आ गया था। उसके प्रत्येक अवयवसे साहस, धीरता और हर्ष उमग रहे थे। रणक्षेत्रमें प्रयाण करनेके लिए वह आतुरताका साकार रूप दृष्टिगोचर होता था। उस समय उसके सन्मुख कोई चिन्ता नहीं थी, कोई भय नहीं था, कोई प्रतिबन्ध नहीं था, पिताके रोष की परवाह नहीं थी। केवल मातृभूमिकी वेदीपर निछावर हो जानेकी आकुलता उसके हृदयमें थी। और यात्राके लिए प्रस्थानके समय जब शारदा उसके प्रशस्त

ललाटपर केसरिया तिलक लगा रही थी, तब उसके नेत्रोंके एक कोनेमें एक छोटा सा आँसू झाँकता हुआ दिखायी दिया। दिवाकरने उसे देखा, एक बार उसका हृयद भी माँकी मौन-व्यथासे झंकरित हो उठा। उसने अवरुद्ध कण्ठसे कहा—"अम्मा, इसी दिनके लिए तो तुमने मुझे पाला था। अब जब वह शुभ दिन आया है, तो क्या तुम दुखी हो ?" शारदाने द्रवित व्यथाका वह कण पोंछते हुए कहा—"वत्स, तुम्हें रणक्षेत्रमें भेजनेसे दुखी नहीं होती, दुख यही है कि इसमें तुम्हारे पिताका आशीर्वाद नहीं है; वरन यह युद्ध उनसे है। सुना है कि वह एक बड़ी सेना लेकर हमारा सबका नाश करनेके लिए आ रहे हैं। पिताके विरुद्ध युद्धके लिए पुत्रको सुसज्जित करना पड़ता है, जिसमें दोनों ओरसे मेरी ही हानि है, किन्तु बेटा, यह याद रखना कि पिताके हाथोंसे मरकर तुम स्वर्ग ही नहीं, मोक्ष प्राप्त करोगे। अंग्रेजोंकी भेदनीतिकी यह पराकाष्ठा है कि उन्होंने आज पिता-पुत्रके परम स्नेह-बन्धनको छिन्न-भिन्न कर दोनोंको लड़ा दिया है। जाओ पुत्र, जाओ। अहिंसाके संग्राम द्वारा अपनी जननी, जन्मभूमि और मेरा मुख उज्वल करो। माताएँ पुत्रके निरापद प्रत्यागमनका आशीर्वाद देती हैं, परन्तु मैं तुम्हें यह आशीर्वाद देती हूँ कि तुम रणक्षेत्रमें वीरगतिको प्राप्त हो, सत्यपर अचल रहकर पिताकी गोलीके लिए अपना शिर नत कर देना और उन्हींके चरणोंमें अपने प्राण विसर्जित कर देना।" दिवारक शिरनत हो उनकी चरण-धूलि ले, मस्तकपर धारण कर शीघ्रतासे बाहर आने लगा। द्वारके समीप माधवी और यशोधरा आरती उतारनेके लिए प्रतीक्षा कर रही थीं। माधवीने आगे बढ़ते हुए कहा—"भैया, जरा ठहर जाओ, आज कुछ मेरा भी अधिकार है।" दिवाकरने मनके आवेगको दमन करते हुए कहा—"बहनका अधिकार तो भाईपर प्रत्येक समय, सदैव रहता है।"

माधवीने कहा—"आजका अधिकार तो विजय-तिलक लगाकर आरती उतारनेका है। आओ भैया, तिलक लगवाओ, और विजयी होकर लौटो, यही ईश्वरसे प्रार्थना है।"

अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे माधवी और फिर यशोधराने कुंकुमका रक्त तिलक लगा दिया। यशोधरा जिस समय तिलक कर रही थी, उसके हाथ काँप रहे थे, और कण्ठ अवरुद्ध था। उसको तिलक लगाते देखकर माधवी निःशब्द पदोंसे वहाँसे चली गयी।

दिवाकरने देखा कि माधवी चली गयी है, उसने यशोधरासे कहा—"देवि, आज महाप्रस्थानके दिन तुम्हारे भी नेत्रोंमें आँसू दिखायी पड़ते हैं। यशो, आज भी तुम्हारी वह वाणी मेरे कानोंमें स्पष्ट सुनायी पड़ रही है, जिससे तुमने मुझको सत्य और अहिंसाके धर्ममें दीक्षित किया था। आज उसीकी परीक्षा होनेवाली है।"

यशोधराने साहस सञ्चय करते हुए कहा—"देवता, मेरे सारे अपराधोंको, विहित हों, या अविहित हों, क्षमा करना। और एक प्रार्थना और है, वह यह कि मुझे भी अपने साथ युद्धमें हाथ बँटानेकी आज्ञा प्रदान करो।"

दिवाकरने हँसनेकी चेष्टा करते हुए कहा--"सहर्ष आओ, और मातृभूमिकी वेदीपर अपने जीवनको उत्सर्ग कर दो। ऐसा शुभ अवसर प्रत्येक कालमें, तथा प्रत्येकके जीवनमें नहीं आता।"

यशोधराने नत हो दिवाकरकी चरणधूलि ले कर मस्तकपर धारण करते हुए कहा--"देवता, आशीर्वाद दो कि उस जन्ममें मैं तुम्हारे योग्य हो सकूँ।"

.दिवाकरने प्रश्नभरी दृष्टिसे देखते हुए कहा--"यह क्या, यशो ?"

यशोधराने आयत लोचनोंसे उनकी ओर देखकर कहा--"अपना प्राप्य अधिकार।"

इसी समय ढोल भीम नादसे बज उठा। दिवाकरने जाते हुए कहा--"इसका निर्णय फिर कभी होगा, पगली !"

यशोधराने अस्फुट स्वरमें कहा--"हाँ, इस जीवनके उपरान्त, मेरे देव !"

दिवाकर चला गया। उसने सुना या नहीं, कौन जाने।

इस समय तक सब सैनिक वहाँपर एकत्रित हो गये थे। जो नहीं आये थे, उन्हें आनेके लिए ढोलका शब्द उच्च स्वरसे पुकार रहा था।

झंडा-अभिवादन होने लगा। सैनिक स्त्री-पुरुषोंका दल एक स्वरसे राष्ट्रीय गान गाने लगा।

नरेन्द्रने आगे बढ़कर कहा—"भारत छोड़ो।"

जनताने भी प्रतिध्वनित करते हुए कहा--"भारत छोड़ो।"

"भारत छोड़ो"का भीमनाद दो मील ठहरे हुए शत्रुओंके हृदयमें कंपन पैदा करने लगा।

बादलोंकी ओटमें झाँकते हुए सूर्यदेवने न-मालूम पृथ्वीतलपर क्या देखा कि वे पुनः उसकी आड़में छिप गये। सर भगवानसिंहका ध्यान बरबस उस ओर चला गया, उन्होंने जलते हुए नेत्रोंसे उनकी ओर देखा। विलायती मदिराकी वासना मुखरित होकर सूर्यदेवको भी पीनेके लिए निमंत्रण देने लगी। सर भगवानसिंह अपनी मानसिक उत्तेजनाको जीतनेके लिए मदिराकी उत्तेजनाकी शरणमें गये थे, किन्तु उसने पाँचवीं सेनाके अनुसार उनके शत्रु-क्रोधके साथ योग दिया। इसलिए वे बड़ी विकलतासे मैदानमें टहल रहे थे।

वे कहने लगे--"सब कुछ समाप्त हो गया। वंश-मर्यादा, राज-पाट, सज्जन-आचार सब कुछ नष्ट हो गया। मेरी गिरफ्तारी भी हो गयी, और मेरी पद-मर्यादा भी छिन गयी। अगर इस समय मैं जीवित हूँ, स्वतन्त्र हूँ, अपने पदपर स्थिर हूँ, तो यह मेरे मित्र मि० टामसकी कृपासे है, नहीं तो जेलकी कोठरीमें आत्महत्या करनी पड़ती। यह सब उसी कुलांगार अधम दिवाकरके कारण ही तो घटित हुआ है। यह पुत्ररूपमें मेरा परम

शत्रु उत्पन्न हुआ है। इसको नष्ट कर देनेमें ही मेरा कल्याण है। यदि दो दिनके अवसरमे इसको मैं नष्ट नहीं करता तो मेरा पतन, मेरे वंशका पतन, और मेरे राजका पतन निश्चय है। इसी एक दिनकी अवधिमें मुझे सब करना है। मैं सदैवसे डर रहा था कि एक न एक दिन मुझे अपने कुँवर साहबके कारण जेल जाना पड़ेगा, और राज जब्त हो जायगा, वही आशंका आज सत्यमें परिणत हुई।"

"अब मेरा क्या कर्त्तव्य है? सी० आई० डी० की रिपोर्ट है कि उसने विद्रोहियोंका दल रमईपुरमें इकट्ठा किया है, और वे लखनऊ आकर अधिकार करनेके लिए उतावले हो रहे हैं। यह शायद उन्हें नहीं मालूम कि विद्रोहको कुचलनेका भार मैंने ग्रहण किया है। अभीतक सरकार भी इनको खिला रही थी, उसे आशा थी कि ये लोग शीघ्र ही मार्ग-पर आ जायेंगे, किन्तु अब वह समय समाप्त हो गया है, अब मैं ब्रिटिश सत्ताकी सहा-यतासे इसको आमूल नष्ट करूँगा। संसारकी कोई शक्ति अब इनकी रक्षा नहीं कर सकती। भारतसे मैं विद्रोहका नाम-निशान मिटा दूंगा।"

"शक्तिका ज्ञान इनको नही है। ये समझते हैं कि हम अहिंसाके बलसे स्वराज्य स्थापित कर लेंगे, किन्तु आज उनके विश्वासको मैं भ्रान्तिमें परिणत कर दूंगा। अहिंसाका जाल कांग्रेसियोंने अपना उल्लू सीधा करनेके लिए फैला रक्खा है। आज उस बलकी परीक्षा लेना है मुझको। देखना अब यह है कि मशीनगन, तोप, बम और वायुयानकी सेनाके सन्मुख कायरोंका यह बल कितने दिन ठहरेगा? उनकी शक्तिको नष्ट करना अत्यन्त सहज कार्य है। वे कहते हैं कि हम मरनेके लिए तैयार हैं, हम कहेंगे कि हम तुम्हें मारनेके लिए तैयार हैं।"

"दिवाकर तो पहले ही क्रांतिकारी दलमें था, उसने धीरे धीरे सबको अपने ही रंगमें रंग डाला। माधवीको भी मुझसे छीन लिया, और अन्तमें रानी भी उसीके साथ शामिल हो गयी। कोई परवाह नहीं, मैं अकेला ही सही। रमईपुर बहुत समयसे मेरा सिर दर्द रहा है, उन्होंने मुझे सदैव लांछित किया है, आज उसको जड़-मूलसे नष्ट कर अपना प्रतिशोध चुका लूंगा। उसके एक-एक घरको खेत बना दूंगा, वहाँपर हल चलवा दूंगा, और उसको श्मशान या उससे भी भयंकर बना दूंगा। उनकी दशा देखकर करुणा भी रोवेगी, उनपर जो अत्याचार किया जायगा, उसे देखकर शैतान भी सिहिर उठेगा। मेरी क्रोधाग्निसे त्राण पाना दुष्कर ही नहीं, असंभव है!"

"स्नेह, मोह और ममत्व, ये सब मनुष्यकी कमजोरियाँ हैं, कर्मिष्ठ पुरुषके लिए ये अभिशाप हैं। ये वीरतामें लांछन लगानेवाली हैं। इसके बन्धनोंसे मैं अपनेको बहुत कुछ मुक्त कर चुका हूँ, और जो थोड़ा अवशेष है, उसकी आज ही 'इति' किये देता हूँ। पुत्र, कलत्र, परिवार, सबको अपने कर्त्तव्यकी वेदीपर चढ़ा दूंगा। मैं संसारको दिखा दूंगा कि जो पिता अपने पुत्रका पालन करता है, वही समयपर उसको गोलीका शिकार भी बना

यह आरोप सदैव लगाया जाता है कि वे अपना कर्त्तव्य पालन करनेमें असमर्थ हैं, किन्तु मैं आज आपको दिखा दूंगा कि आप लोगोंकी धारणा असत्य है। इस विद्रोहमें मेरा सारा परिवार शामिल है, परन्तु मैं उसको भी नष्ट कर दूंगा।"

कैप्टेन मारिसने संतुष्ट होकर कहा—"आपपर यह आरोप कदापि नहीं लगाया जा सकता। क्या काले बादलोंमें बिजली नहीं होती ? आप जैसे भारतीयोंके बलपर ही तो ब्रिटिश शासन स्थिर है। आप साम्राज्यके एक स्तम्भ हैं।"

कैप्टेनने उनके पाससे लौटकर सेनाको प्रस्थानका आदेश दिया। मधुर स्वरमें बैंड बज उठा। सिपाहियोंके शस्त्र खून पीनेके लिए सूर्यके प्रकाशमें अपनी जिह्वा लपलपाने लगे। सर भगवानसिंहने अपना पिस्तौल सँभाला और कैप्टेन मारिसके साथ एक जीप मोटरमें बैठकर ताण्डव नृत्य करनेके लिए रमईपुरको प्रस्थान किया।

सूर्यदेव पुनः भयभीत होकर बादलोंकी ओटमें छिप गये।

११

रमईपुरके प्रांगणमें हिंसा और अहिंसाका संग्राम आरम्भ हो गया। पशुबल नव-नवीन वैज्ञानिक शस्त्रोंकी सहायतासे शान्त अहिंसाके दैविक बलका नाश करनेके लिए द्विगुणित उत्साहसे सन्नद्ध हो गया। उग्र तथा तामसिक तेज, जो अन्धकारका द्योतक है, शान्त तथा सात्विक तेजको जो प्रकाश और ज्ञानका द्योतक है, निगलनेका प्रयत्न करने लगा। रमईपुरको चारो दिशाओंसे अंग्रेज सिपाहियोंने घेर लिया, और एक साथ आक्रमण आरम्भ कर दिया।

नरेन्द्रने भी अपनी अहिंसक सेनाको चार भागोंमें विभक्त किया, और क्रमशः दिवाकर, रणजीत, रहीम तथा मनोहरको उसका नायकत्व सौंपकर स्वयं युद्ध परिचालन करने लगा। पूर्वीय द्वारमें दिवाकर, उत्तरमें रणजीत, पश्चिममें रहीम और दक्षिण दिशामें मनोहरने शत्रुसे मोर्चा लेना निश्चित किया, उनको प्रत्याक्रमण करनेका आदेश नहीं था, किन्तु उनके जीवित रहते शत्रुको घुसने देनेकी आज्ञा नहीं थी। शत्रु यदि गाँव-में प्रवेश करे तो उनके आहत या मर जानेके पश्चात्, पहले किसी भाँति भी नहीं। "भारत छोड़ो"के जयनिनादसे आकाश गूंज उठा, और अंग्रेज सैनिक भी उनकी ओर चकित होकर देखने लगे।

उन्हें विश्वास था कि उनको अस्त्र-शस्त्रसे सुसज्जित सेनासे लोहा लेना पड़ेगा, किन्तु जब उन्होंने केसरिया वस्त्रोंको पहने हुए, निशस्त्र बाल, वृद्ध, नर-नारियोंको शांतिके साथ मार्ग रोककर खड़े देखा, जो केवल कह रहे थे "भारत छोड़ो"। वे चकित तथा हतबुद्ध होकर अपने नायकोंकी ओर आज्ञाकी प्रतीक्षामें देखने लगे। नायक भी विस्मृत-सा होकर उनको देखने लगा।

उस सेनाके सञ्चालक कैप्टेन मारिसने कहा—"सर भगवान, क्या आपने इन्हीं

निरीह व्यक्तियोंके मुकाबलेके लिए अंग्रेज सेनाकी सहायता माँगी थी ? इनके पास एक डंडा भी तो नहीं है।"

सर भगवानने विक्षुब्ध कण्ठसे कहा—"कैप्टेन मारिस, आप इनको साधारण न समझें। ये सब विपसे भरे हुए महान आपत्तिकारक है। इन्होंने क्रान्तिको शान्तिके आवरणमे छिपा रक्खा है। ये पृथ्वीकी भाँति अचल है, वायुकी भाँति शक्तिशाली हैं, अग्निके समान तेजोमय हैं, जलकी तरह शीतल है, और आकाश जैसे व्याप्त होकर हमको निर्वीर्य करनेवाले है। इनको समूल नष्ट करनेमे ही हमारा और अंग्रेजजातिका कल्याण है। यदि इनमेसे एक भी जीवित बचेगा तो वह शत-सहस्रोंको अपना ही जैसा बना डालेगा, इसलिए कल्याण इसीमें है कि आप अपनी सेनाको आज्ञा दें कि वह इनपर बन्दूकोका फायर करे।"

कैप्टन मारिसने अपना शिर खुजलाते हुए कहा—"ऐसा करना शायद मेरे लिए असंभव है। इस जघन्य कार्यको तो बकरोंका मारनेवाला कसाई ही कर सकता है, हम सैनिक नही। हम भी मानव है, और ......।"

सर भगवान सिंहका क्रोध बढ रहा था, उन्होने कैप्टेन मारिसकी बात काटकर कहा—"कैप्टेन, आप कर्त्तव्य पालन करनेके लिए, विद्रोहियोको नाश करनेके लिए आये है। आपके सामने जितने खड़े है, वे सब विद्रोही है, अंग्रेजी राज्यको समाप्त करनेवाले हैं। यही नही, आपका अस्तित्व मिटा देनेवाले है।"

कैप्टेन मारिसने एक बार उनकी ओर देखा, और फिर धीर-वीर अहिंसक सेनानियोंकी ओर, जो केवल चिल्ला रहे थे, "भारत छोड़ो", "भारत छोड़ो"। अंग्रेज सैनिक भी चित्र-लिखे-से स्थिर खड़े हुए थे। उन्होंने जर्मनी और जापानी सेनाओंसे मोर्चा लिया था, किन्तु ऐसा युद्ध तो उन्होने कहीं नही देखा था। उनके लिए एक मनोविनोदकी सामग्री थी।

सर भगवान सिंहका क्रोध उत्तरोत्तर बढ़ रहा था। मनुष्य जब अपने क्रोधको प्रकाश नही कर सकता, तब वह क्षुब्ध होकर सारा विवेक खो देता है, और कल्पनातीत अधर्म करनेको सन्नद्ध हो जाता है।

अभीतक उनकी दृष्टि दिवाकरपर नहीं पड़ी थी। उसके केसरिया वस्त्रने उसको अभीतक उनकी दृष्टिसे छिपा रक्खा था। उसको पहचानते ही उनका अवशिष्ट विवेक भी नष्ट हो गया। उन्होंने अपना पिस्तौल निकाला, और जैसे बिडाल मूषकपर, और बाज पक्षियोंपर आक्रमण करता है, उसी वेगसे उन्होंने दिवाकरको लक्ष्यकर गोली चला दी, किन्तु जितने वेगसे गोली चलती है, उससे भी अधिक वेगसे सत्याग्रही सेनासे गुलाब निकली और उसकी गोली अपनी छातीपर झेल ली। गोली हृदयस्थलको भेदती हुई पार हो गयी। गुलाबका शरीर निर्जीव होकर दिवाकरके चरणोंके समीप गिर कर उसकी चरणधूलि लेनेका प्रयत्न करने लगा। दिवाकरके नेत्र मृत गुलाबको स्थिर होकर देखने लगे। सहसा

उसके मस्तिष्कका वह कोष जहाँ पूर्वजन्मकी स्मृतियाँ अस्पष्ट रूपसे रहती हैं, स्मृतिके आलोकसे प्रज्वलित हो उठा। उसने आजके पहले गुलावको भर-पूर नेत्रोंसे कभी नहीं देखा था। उसको देखकर उसे ऐसा मालूम होने लगा कि वह तो उसकी चिरपरिचित है, और अनेकानेक जन्मसे उसके साथ है। वह सब कुछ भूलकर उसकी ओर देखने लगा।

उधर सत्याग्रही सेनाने फिर जयघोष किया। एक भी सैनिक विचलित नहीं हुआ। सभी निर्भय चित्तसे, प्रफुल्लित आननसे, शत्रुओंकी गोलियाँ छातीपर झेलनेके लिए आतुरतासे चिल्ला उठे—"भारत छोड़ो।"

सर भगवान सिंहने जव देखा कि उनकी गोलीसे दिवाकर नहीं, वरन एक तरुणी मरी है, वे इस वार अविवेकसे तड़प उठे। उन्होंने दूसरी वार फायर किया। शारदाका आशीर्वाद सत्य हुआ, और दिवाकरने उसको शिरपर झेला और दूसरे क्षण मृत होकर गुलावके शवपर गिर पड़ा। उसके शिरसे रक्तस्रोत उमगकर गुलावकी माँगमें अचल सुहागका सिन्दूर भरने लगा।

सत्य और अहिंसासे सन्तुष्ट होकर अव्यक्त प्रेम तड़प उठा। उनके युगुल मिनलपर उन्हें आशीर्वाद और वधाई देने लगे।

अहिंसक सैनिक जयघोषसे उस मिलनकी साख भरने लगे।

सर भगवान सिंहने पागलोंकी भाँति चिल्लाकर कहा—"रास्ता छोड़ो।"

सत्याग्रही सेनाने उत्तर दिया—"भारत छोड़ो।"

सर भगवान सिंहने भीम नादसे 'फायर' करनेका आदेश दिया। अंग्रेजी सेना गोलियाँ चलाने लगी, और तरुण भारतके नर-नारी, वाल-वृद्ध स्वतन्त्रताकी वेदीपर चढ़-चढ़कर अपना रक्त प्रदान करने लगे। आजादीके प्यासे नर-नारियोंके शवपर शव गिरते थे, किन्तु उनका स्थान एक क्षण भरके लिए रिक्त नहीं रहता था। दूसरा उमड़कर वहाँ आ जाता, और उसी चावसे, उसी शान्तिसे, धीरतासे अपनी छातियाँ गोलियाँ झेलनेके लिए खोल देते। इसी समय वायुयान भी मशीनगनोंसे सुसज्जित वहाँ आ गया। नरसंहारमें वह भी वड़ी तत्परतासे भाग लेने लगा। तोपें भी धुवाँ उगलने लगीं, और मिट्टीके वने हुए रमईपुरके घर भी गिर-गिरकर अपने अधिवासियोंको अपने उरके नीचे त्राण देने लगे। वे शताब्दियोंसे उनके पूर्वजों और उनकी रक्षा, धूप, वर्षा और शीतसे करते आये थे। आज उनके नाशमें अपनी मिट्टी उनपर डालकर उन्हें अपनेमें मिलानेके लिए उत्साहसे एकके वाद एक गिरने लगे। टैंकोंको भी आदेश दिया गया कि वे अवशिष्ट भागको भी भूमिसात कर दें। थोड़ी ही देरमें उस अहिंसाकी सेनाका एक सैनिक भी जीवित नहीं वचा। रहीम, मनोहर, इमामवख्श, रणजीत, जंगवहादुर, नरेन्द्र, चक्रधर सव भूमिके कण-कणको अपने रक्तसे स्नान कराने लगे।

सर भगवान सिंह विक्षिप्तकी भाँति उस नरसंहारका संचालन वड़ी तत्परतासे

कर रहे थे। वे गाँवमें चारों ओर दौड़-दौड़कर निरीह स्त्री, पुरुषों, बालकों और रुग्णोंको अपने पिस्तौलका शिकार बना रहे थे। उनके विवेकका सर्वथा लोप हो चुका था, वे इस समय पशु-पक्षी किसीको भी जीवित नहीं छोड़ रहे थे। वे बराबर चिल्ला रहे थे, "रास्ता छोड़ो""रास्ता छोड़ो"। उनके नेत्र विस्फारित थे, उनकी मुखाकृति भयंकर, अमानुषिक तथा पैशाचिक थी। रक्तसे सराबोर वे साक्षात् प्रलयंकर शंकरकी भाँति रौद्र तथा वीभत्स रसकी स्थापनामें रत देख पड़ते थे। उनके चारो ओर रमईपुर-निवासियोंके शवके ढेर लगे हुए थे। उनके सहचर भूत, प्रेत, पिशाच, गृद्ध, चील और कौवे अपने आह्लाद-मय गानसे उनको पग-पगपर नरमेध यज्ञ करनेके लिए उत्साहित कर रहे थे।

कैप्टन मारिसने उनकी दशा देखकर अपने सहकारियोंसे कहा—"मालूम होता है कि सर भगवान विक्षिप्त हो गये हैं। जब तक इनके पास पिस्तौलकी गोलियाँ शेष रहेंगी, मनुष्यवध करना नहीं छोड़ेंगे। अब हमारा काम समाप्त हो गया है। विद्रोहियोंका नाश कर दिया गया है। अब हमको यहाँसे शीघ्र चलना उचित है। हेडक्वार्टर पहुँचकर मैं इनके पागल होनेकी सूचना दूंगा, यह काम सिविल गवर्नमेंटका है, वह इसका यथोचित प्रबन्ध करेगी।" उसके सहकारियोंने उसकी बातका अनुमोदन किया। वे भी शीघ्र उस स्थानसे विदा हो जाना चाहते थे। कैप्टन मारिसने अपने जवानोंको एकत्रित होनेका आदेश दिया। वे एक स्थानपर जहाँ शवोंकी संख्या कम थी, एकत्रित होने लगे, उनके एक जवानको भी किंचित् मात्र क्षति नहीं पहुँची थी। उनके मुख गंभीर थे, और उनके चेहरोंपर विजयका उल्लास नहीं था। वे कुम्हिलाये हुए, तेजहीन और कलचालित पुतलोंकी भाँति काम कर रहे थे। वे भयभीत दृष्टिसे चारों ओर देख रहे थे, और स्वयं पराजित-से दृष्टिगोचर हो रहे थे। अभीतक अहिंसाने उनके प्रहारको सहन किया था, और अब इस समयसे वह उनके हृदयमें प्रविष्ट होकर उनको आमूल पराजित करनेके प्रयत्नमें लग गयी थी।

रमईपुर इस समय भयावह श्मशानसे भी अधिक भयंकर दृष्टिगोचर हो रहा था। सत्य और अहिंसाके निर्जीव सैनिक अपने सूक्ष्म शरीरसे वायुके हहर हहर नादमें दृढ़ताके साथ कह रहे थे—"भारत छोड़ो।"

विक्षिप्त सर भगवान सिंह उनके शवोंको रौंद-रौंदकर चिल्ला रहे थे—"रास्ता छोड़ो।"

उनका यह भयंकर शब्द रमईपुरके विध्वस्त खंडहरोंसे टकराकर उनका विद्रूप कर रहा था—"भारत छोड़ो।"

अंग्रेज सेना अपने विध्वंसक अस्त्र-शस्त्रोंको लेकर सर भगवानको उसी विक्षिप्त अवस्थामें छोड़कर चली गयी। उनके पिस्तौलकी गोलियां समाप्त हो चुकी थीं, और वे

अव भी खाली पिस्तौल चला रहे थे, जिससे केवल अस्फुट 'फट' शव्द मात्र प्रगट होकर अपनी और उनकी असमर्थता वता रहा था ।

उस दिन सूर्य भगवान अपना मुख वादलोंकी ओटमें ही छिपाये रहे । उन्हें भी उस नरसंहारके देखनेका साहस नहीं हुआ। वादल गरज-गरजकर शोकका प्रस्ताव पास कर रहे थे, और मानवकी स्वार्थपरता, द्वेष, ईर्ष्या अनधिकार सत्तापर व्यथाके आँसू वहा रहे थे ।

चपला भी उन्मादिनीकी भाँति तड़प-तड़पकर अपनी समवेदना रमईपुरके समूल नाशपर प्रगट कर रही थी ।

सर भगवानने उनकी ओर देखकर कहा—"रास्ता छोड़ो ।"

उनको मालूम हुआ कि वादलोंने गरजकर प्रतिध्वनि की—"भारत छोड़ो ।"

सर भगवान उसको भी अपनी पिस्तौलका शिकार वनानेके लिए उस रक्तपंकिल भूमिमें इधरसे उधर दौड़ने लगे ।

१२

संवत् १९९९ की श्रावण एकादशीको रमईपुर अपना अस्तित्व नष्ट कर निर्जन, भयंकर मरघटमें परिणत हो गया। न रमईपुरके वे निवासी रहे, और न वह चहल-पहल रही। सर्वत्र भाँय भाँयकी प्रतिध्वनि,निर्जनता कर रही थी । उसके गृह समस्त गिराकर भयावह खँडहरोंमें परिवर्त्तित कर दिये गये थे, उसके समस्त निवासी युद्धमें जूझकर अपने शवोंसे उसपर अधिकार जमाये हुए थे । शृगाल, गृद्ध और कुत्तोंकी सेना उनके शवोंके लोथड़ोंके लिए आपसमें युद्ध कर रही थी । यद्यपि उनके खानेके लिए शवोंकी कमी नहीं थी, किन्तु जहाँ कोई एक नया शव निकालता, सव पहलेवालेको छोड़कर उस नव-अन्वेषणकी ओर आकर्षित हो जाते, कि शायद इसमें पहलेकी अपेक्षा अधिक स्वाद हो ।

शारदा, माधवी, यशोधरा, नसीवन, नसीम और अखिया, कुल छः स्त्रियाँ उस नर-संहारसे जीवित वची थीं । शारदा, माधवी और यशोधरा तीनों दिवाकरकी मृत्यु देखकर ही मूर्च्छित हो गयी थीं, और जव नसीवन और नसीमने रहीम और इमामवख्शको प्राण देते देखा, वे भी चेतनाहीन हो गयी थीं। केवल अखिया अपने घरसे दूर खेतोंकी ओर प्रातःकालसे चली गयी थी, और उसने इस युद्धमें सक्रिय भाग नहीं लिया था ।

शारदा, माधवी और यशोधराकी वेहोशी दूर उस समय हुई, जव अंग्रेजी सेना प्रस्थान कर गयी थी, और सर भगवान विक्षिप्तावस्थामें इधर-उधर दौड़ रहे थे । चन्द्रमाका प्रकाश धरातलपर आकर अहिंसा-संग्रामके मृत व्यक्तियोंके पहचाननेका प्रयत्न कर रहा था । माधवीने एक दीर्घ निश्वासके साथ चारों ओर विनाशको देखकर कहा—"अम्मा, सव समाप्त हो गया !"

शारदाने आंसुओंको पोंछते हुए कहा—"हां, सच, आज सब समाप्त हो गया ! हमलोग अभागे थे जो यह विनाश देखनेके लिए रह गये ।"

यह कहकर मां-बेटी दोनों शोकावेगसे अभिभूत होकर एक दूसरेके हृदयसे चिपट गयीं ।

यशोधराने हृदय-विदारक एक दीर्घ निश्वास ली । माधवी व शारदाका ध्यान उस ओर आकर्षित हुआ ।

माधवीने उसको देखकर कहा—"यशो, मेरी यशो, अब क्या होगा ?"

यशोधरा कुछ उत्तर न दे सकी । माधवीने उसको भी अपने हृदयसे लगा लिया ।

थोड़ी दूरपर नसीबन और नसीमकी भी मूर्च्छा दूर हुई । वे भी विस्फारित नत्रोंसे चारों ओरका विनाश देखने लगीं । उनकी आंखोंसे अश्रुओंकी अजस्र धारा बह रही थी । नसीबनने नसीमको अपने हृदयसे लगाते हुए कहा—"बेटी, तुम्हारे अब्बाके साथ, मेरा जमाई भी चला गया ।" आज तुम्हारे अब्बाकी तपस्या सफल हुई । उनके मरनेका मुझे कोई शोक नहीं है, एक दिन तो आखिर मरना ही था, फिर युद्धमें अपने मुल्ककी आजादीके लिए मरे हैं, इससे बढ़कर और मेरे लिए क्या गर्व हो सकता है, मगर बेटी, अभी तो तुम्हारी खेलने खानेकी उम्र थी । हाय, खुदाने यह क्या किया! मेरे दामादकी जगह मुझे क्यों न मार डाला !"

नसीमने आँसुओंको पोंछते हुए दृढ़तासे कहा—"जिस दुखको तुम बूढ़ी होकर बरदाश्त कर सकती हो, क्या मैं जवान होकर उसको झेल नहीं सकती ? अब्बाने तो मुझे हर हालमें ख़ुश रहना सिखलाया है । खुदाकी जैसी मर्जी थी वही हुआ । किसकी ताकत है जो उसके रचे हुए को बिगाड़े । विधवाओंका कलेजा पत्थरका कलेजा होता है । वे सब सहन कर सकती हैं। मनोहर भैयाको छोड़कर क्या वे एक पल भी रह सकते थे ? उन्होंने भी बहादुरोंकी मौत पायी है । वे नहीं हैं,लेकिन उनकी याद तो हमारे साथ रहेगी, फिर वे हमसे कैसे दूर हैं ? हमें अब उठकर अपने कर्ममें लग जाना चाहिये । देखूँ इसमें कितने घायल हैं, जिनकी प्राणरक्षा हो सकती है । अम्माँ, उठो, यह शोक करनेका अवसर नहीं है, कर्म करनेका है । कहीं कोई जानवर इन पवित्र शरीरोंको बरबाद न कर दे ।"

यह कह वह उठ खड़ी हुई । थोड़ी दूरपर यशोधरा, माधवी और शारदा-को बैठे देखकर उनके पास आयी, और पहचानकर कहा—"रानी अम्मा !"

शारदाने आँसू पोंछते हुए कहा—"हाँ, मैं ही हूँ, नसीमा ! बेटी तू भी यह दुख देखनेके लिए जीवित रही ।"

नसीमने यशोधराको उठाते हुए कहा—"यशो बहन, हमको दुखसे कातर न होना चाहिये । हम देशसेविकाएँ हैं, हमारे सामने पहाड़से भी महान कार्य पड़ा है । देखनेसे यही

मालूम होता है कि गाँवका कोई बच्चा भी जीवित नहीं बचा। हमें सारे शवोंकी गति करनी है।"

नसीमके शब्दोंने सबके हृदयमें साहसका सञ्चार किया। वे पाँचों उठ खड़ी हुईं।

इसी समय विक्षिप्त सर भगवान सिंह दौड़ते हुए इनके समीप आ गये। उन्होंने इन लोगोंको देखकर कहा—"रास्ता छोड़ो।"

माधवी और शारदाने कंठस्वरसे उनको पहचाना, यद्यपि उनकी आकृतिसे कोई उन्हें पहचान नहीं सकता था।

माधवीने आगे बढ़कर कहा—"पापा!"

माधवीके कण्ठस्वरने उन्हें क्षणभरके लिए स्तंभित कर दिया। वे उसको चाँदनीके प्रकाशमें पहचाननेका प्रयत्न करने लगे।

माधवीने उनके समीप आकर कहा—"पापा, पापा, क्या अपनी मधुको नही पहचानते?"

सर भगवाने सिंहने एक अट्टहासके साथ कहा—"अरे मधु, तू अभीतक जीवत बची है? सामने खड़ी हो, दिवाकरके दलमें तू भी शामिल है। जानती है उसने क्या किया? उसने मेरा राजपाट, मान, अधिकार, सब छीन लिया, और मुझको गिरफ्तार करा दिया है। क्या अभीतक दिवाकर मरा नहीं? रास्ता छोड़ो।"

यह कहकर उन्होंने कारतूसरहित पिस्तौल उसके ऊपर चलायी। शारदाको उनकी दशा देखकर विश्वास हो गया, कि उनका मस्तिष्क विकृत हो गया है।

माधवीने निःशंक होकर उनके अत्यन्त निकट पहुँचकर कहा—"पापा, आपकी तबियत ख़राब है, आइये, घर चलें!"

सर भगवान सिंहने एक दूसरा अट्टहास करते हुए कहा—"क्या कहती है, घर चलें? रमईपुरका क्या कोई घर अब भी बचा है? अगर बचा है तो उसको मैं नष्ट कर दूंगा। मैंने प्रतिज्ञा की थी कि रमईपुरको उजाड़ कर मानूंगा, रास्ता छोड़ो।"

यह कहकर उन्होंने पिस्तौलसे फिर फायर किया।

माधवीने उनका पिस्तौल लेते हुए कहा—"पापा, आपके सब शत्रु मर गये हैं, रमईपुरके सब घर भूमिसात् हो गये हैं। अब चलिये, आप थोड़ी देर विश्राम कर लीजिये।"

सर भगवानने पिस्तौल बिना आपत्तिके दे दिया, और भयंकरतासे हँसते हुए कहा—"यह तो बता तू कौन है, क्या मुझे मेरे शत्रुओंका गुप्त स्थान बतानेके लिए ले चलती है? चलो, रास्ता छोड़ो।"

माधवीने उनको सरकारी कोठीकी ओर ले चलते हुए कहा—"पापा, क्या आपा मुझे नहीं पहचानते? मैं आपकी मधु हूँ।"

उन्होंने जाते हुए कहा—"हाँ, हाँ, मधु, मधु, दिवाकरकी बहन, सर भगवान सिंहकी राजकुमारी, पहचान गया। तू भी तो मेरी शत्रु है ! बोल, बोल, क्या दिवाकर अभी जिंदा है ? तेरी अम्मा, क्या वह भी अभी मरी नहीं ? अभी मेरे शत्रु जीवित हैं। चलो, रास्ता छोड़ो।"

पिस्तौल हाथमें न होनेसे वे केवल हाथसे ही पिस्तौल चलानेका अभिनय करने लगे।

माधवी, उनको लेकर कोठीकी ओर चली गयी। शृगाल, और उलूक रमईपुरको उजड़ा हुआ देखकर प्रसन्नतासे चिल्लाने लगे। शारदा, नसीम, यशोधरा और नवीवन चन्द्रमाकी चांदनीमें अपने अपने प्रियजनोंके शवोंको ढूंढनेका प्रयत्न करने लगीं।

उनके उच्छ्वासमें रोता हुआ पवन भी सांय-सांय कर अपना योग देने लगा !

श्रावणकी पूर्णिमाका महत्व रमईपुरके विनाशके साथ, नष्ट हो चुका था। वही स्थान था,वही विस्तृत अखाड़ा था, किन्तु मनुष्योंका कहीं चिह्न नहीं था। सृष्टिका नियम यह है कि वस्तु अपना प्रतीक बीज रूपमें पहले छोड़ देती है, फिर नष्ट होती है, किन्तु रमईपुर इस नियमका अपवाद हो रहा था। उसके इतने अधिवासियोंमें एक भी शेष न बचा था, जो शताब्दियोंकी रूढ़िको जीवित रखनेका प्रयत्न करता। अखाड़ेमें भाग लेने-वाले पहलवान और दंगल देखनेवाले दर्शक—गाँवके निवासी, सब काल-कवलित हो गये थे, युद्धक्षेत्रने उनको अपने उदरमें सदाके लिए छिपा लिया था।

जो कभी कोलाहल, आह्लाद तथा उत्फुल्ल कल-कल नादका मुखरित प्रांगण होता था, वह आज, मरघटकी शान्ति लेकर द्रवीभूत करनेवाली अश्रु-मुक्तावलीकी माला पहने हुए था। यद्यपि कल्याणपुर और लखनापुरकी जनताने आकर उस रणमें मरे हुओंके शवोंका सत्कार यथासाध्य किया था, किन्तु यत्र तत्र अब भी कितने ही शव खँडहरोंके नीचे दबे हुए विकराल मुख होकर तथा गल सड़कर अपना शेष अस्तित्व नष्ट करनेमें संलग्न थे। उनकी दुर्गन्धसे रमईपुरका वायुमंडल दूषित हो रहा था।

दिवस तो शोक प्रदर्शित करनेमें बादलोंका काला आवरण पहने हुए, तल्लीन था, किन्तु संध्या के साथ चाँदनी खुलकर रोनेके लिए आतुर हो उठी। रमईपुरके पूर्वकी ओर जहाँ दिवाकरका शरीरपात हुआ था, एक रमणी मूर्त्ति चाँदनीके प्रकाशमें आकर भूमि-पर बैठ गयी। उसके नेत्रोंसे अजस्र अश्रु-धारा बह रही थी, और वह उस स्थानकी मिट्टी बटोरकर एक जगह एकत्रित करने लगी। थोड़ी देरमें एक छोटा-सा स्तूप बन गया। वह उस ओर देखकर कहने लगी—"मृत्तिके,उन दोनोंकी अन्तिम शय्या तो तेरे ही क्रोड़में बनी थी ! तू कितनी पवित्र है, और कितनी भाग्यशालिनी है ! मेरी बहन गुलाबके अव्यक्त प्रेमका रहस्य तूने ही भेदन किया था, और उन दोनोंको तूने ही अपने उरमें सदाके लिए छिपा लिया ! जनकनंदिनी सीताको भी तूने ऐसे ही कठिन समयमें फटकर आश्रय दिया

था, और भगवान रामचंद्रको तड़पनेके लिए, अथवा पश्चात्तापके लिए छोड़ दिया था, किन्तु तूने उस दिन गुलावके साथ मेरे प्रियतमको भी मुझसे छीनकर उसको समर्पित कर दिया। गुलाव नामके साथ तेरा यह पक्षपात असह्य है। यह स्वीकार करती हूँ कि गुलाव वृक्षका जीवन तेरे ही में निहित है, किन्तु मेरी सखी या सौत गुलावका तेरेसे उतना ही सम्बंध है, जितना कि मेरा। वता, तूने मुझे क्यों कलपनेके लिए छोड़ दिया ?"

"आज श्रावणकी पूर्णिमा है। एक वर्ष पहले आजके दूसरे दिन वे मेरे यहाँ रणजीत भैयाके साथ आये थे। वहुत दिनोंके वाद आये थे, इसलिए उन्होंने मुझे नहीं पहचाना, परन्तु जव पहचाना तो वाल्यकालकी क्रीड़ाओंके साथ! मेरे हृदयमें उनके लिए भाईका-सा स्नेह था परन्तु माधवीने न-मालूम यह आग क्यों लगा दी? मेरे मनमें आकाशकुसुम हस्तगत करनेकी इच्छा जागरित कर दी। मैं भी उस लोभमें पड़ गयी, और उनको अपना पति स्वीकार कर लिया। रानी अम्माने भी माधवीके प्रस्तावको स्वीकार किया। मेरी आशा, सत्यमें परिणत होनेका सुखस्वप्न देखने लगी। किन्तु इसी वीचमें न जाने कहाँसे गुलाव अकस्मात् प्रगट हो गयी और उसने उनको मुझसे छीनकर जन्मभर रोनेके लिए साधन उत्पन्न कर दिया।"

"भारतीय स्त्री-जाति केवल एक वार विवाह करती है, वह एक वार अपना जीवन केवल एक पुरुषके चरणोंपर उत्सर्ग करती है। विवाहकी वाह्य क्रियासे ही क्या विवाह सम्पन्न होता है? विवाहका सम्वन्ध आत्मासे है। आत्माने जिसके चरणोंमें अपनेको उत्सर्ग कर दिया, उसीके साथ विवाह सम्पन्न हो गया, फिर चाहे उसकी वाह्य क्रिया हो या न हो, क्योंकि विवाहका नाम उत्सर्ग है। विवाह द्वारा पति-पत्नी परस्पर जीवनको उत्सर्ग करनेकी प्रतिज्ञा करते हैं, और वह प्रतिज्ञा मैं कर चुकी हूँ, इसलिए उनके साथ मेरा विवाह सम्पन्न हो गया है।"

"वैधव्य-जीवन, कठिन घोर तपस्याका जीवन है। तपस्याके पश्चात् ही वाञ्छित फल प्राप्त होता है। पार्वतीने भी तो महादेवको प्राप्त करनेके लिए कितना कठिन तप किया था? तपस्यासे ही क्षुद्र व्यक्ति महानताको प्राप्त होता है। और विवाह तो साम्यका स्पष्टी-करण है। सम जीवोंके विवाहमें ही आनन्द है, अतएव उस महान पुरुषसे विवाह करनेके लिए मुझे भी तपस्या करनी पड़ेगी। शायद भगवानने तपस्या करनेका अवसर मुझको विधवा वनाकर दिया है। यही भगवानका संकेत है!"

"वे चले गये उसके साथ जो जन्म-जन्मांतर तपस्या करके इस धरापर गुलाव ही की भाँति सुरभिप्रकीर्ण करनेके लिए अवतरित हुई थी। इस मिट्टीके एक एक कणमें उनके मिलनकी कहानी छिपी हुई है। इसने दोनोंके रक्तसे स्नान किया है, अतएव यह भी उनके मिलनकी भाँति पवित्र है, और महान है। यही धूल मेरी निशिदिन पूजाकी अनगढ़ मूर्त्ति होगी, और मेरी मनस्कामनाकी पूर्त्तिका साधन होगी। यह मुझे प्राणोंसे भी प्रिय होकर

अटूट श्रद्धा, प्रेम, और भक्तिकी उत्साहमयी प्रेरणा प्रदान करेगी। इसमें उनके संयुक्त मिलनकी सुरभि मुझे अपने कर्त्तव्यमार्गकी ओर सदैव अग्रसर किये रहेगी।"

यह कहकर वह रमणी जो वास्तवमें यशोधरा थी, रक्तसिक्त धूलको बटोरकर अपने अञ्चलमें बाँधने लगी। इसी समय निःशब्द पदोंसे एक और रमणीने आकर कहा—"यशो बहन, इस पवित्र मिट्टीमेंसे मुझे भी एक भाग देना पड़ेगा।"

यशोधराने चौंककर देखा, सामने नसीम खड़ी हुई रो रही थी।

नसीम कहने लगी—"यशो बहन, यहींपर मेरी सखी गुलाबका शरीर गिरा था। सत्य ही उसका विवाह हो गया। उस समय तोपों, और बन्दूकोंके रवकी शहनाई बज रही थी, गोलियोंका सेहरा वे दोनों पहने हुए थे, रक्तके छींटे फूलोंकी तरह लुटाये जा रहे थे। बहन, सचमुच गुलाबकी इच्छा पूरी हो गयी, और वह अपने साथ अपने स्वामीको भी लेकर चली गयी—जन्मभरके लिए विदा हो गयी।"

यशोधराने सिसकते हुए कहा—"वह भाग्यवान थी, नसीमा, उसकी तपस्या पूर्ण हो गयी थी, और अब उसके भोगका समय आया था।"

नसीमाने पूछा—"यशो बहन, क्या तुम उसके प्रेमको जानती हो?"

यशोधरा ने धीमे स्वरमें कहा—"हाँ, जानती हूँ। उस घड़ीसे जानती हूँ, जब उसने अपने प्राणोंको उत्सर्ग कर मुझे दूर हटा दिया था। उसने अपने अव्यक्त प्रेमसे उनको ही नहीं वरन् मुझको भी अभिभूत कर दिया था। मैं भी उसके सामने अपनेको नितान्त निःशक्त पाती थी। उसको देखकर ईर्ष्या नहीं, स्नेह जागरित होता था; घृणा नहीं, प्रेम उत्पन्न होता था; द्वेष नहीं, श्रद्धा जन्म लेती थी। बहन नसीमा, गुलाबने केवल अपना प्राप्य ग्रहण किया है। मैं उन दोनोंके योग्य नहीं थी इसलिए मुझको यहीं तपस्याके लिए छोड़ दिया है। किन्तु मैं भी उनको छोड़ूंगी नहीं। इस जन्ममें नहीं, अगले जीवनमें तो अवश्य ही उन दोनोंको प्राप्त करूँगी।"

इसी समय माधवी शारदाके साथ वहाँ आ गयी। शारदाने अश्रुओंके वेगका दमन करते हुए कहा—"कौन, यशो?"

यशोधराने एक लम्बी निश्वास लेकर कहा—"हाँ, रानी अम्मा, मैं ही हूँ, तुम्हारी विधवा बहू।"

माधवी और शारदा दोनों कटे हुए वृक्षकी भाँति गिर पड़ीं। शारदाने उसकी पीठपर हाथ फेरते हुए सान्त्वना भरे कण्ठसे कहा—"बेटी, यह क्या अकथ्य कहती हो! अभी तुम्हारा विवाह कहाँ हुआ है?"

यशोधराने सिसकते हुए कहा—"रानी अम्मा, तुम भी नारी हो, और उसका कर्त्तव्य समझती हो। विवाह तो आत्माके आत्मसमर्पणका नाम है, और नारी अपने जीवनमें आत्मसमर्पण केवल एक बार, और एक ही पुरुषको करती है। अब अम्मा तुम्हीं कहो,

विवाहकी कौन क्रिया अवशेष है !" कहते कहते उसका कण्ठ आवेगसे अवरुद्ध हो गया। शारदा उसको अब सान्त्वना नहीं दे सकी। उसने उसको अपने हृदयसे मातृहारा बालिका-की भाँति लगा लिया। उसका हृदय मौन भाषामें उसके साथ समवेदना प्रगट करने लगा।

माधवीने उस पवित्र भूमिपर श्रावणी पूर्णिमाका चिन्ह रक्षा-बंधनके सूत्र रखते हुए कहा—"ठीक एक साल पहले इसी समय मैंने तुम्हारे जीवित हाथोंमें रक्षा बाँधी थी, तुम इतनी जल्दी मेरा स्नेहबंधन तोड़कर चले जाओगे, इसका स्वप्नमें भी अनुमान न था।"रोते रोते वह उसी भूमिपर गिर पड़ी।

नसीमने उसे उठाते हुए कहा—"बहन उठो! कौन कहता है कि वे मर गये हैं! इस पृथ्वीके कण कणमें समाविष्ट होकर, वायुकी सुरभिमें परिणत होकर आज भी वे जीवित हैं, और सदैव जीवित रहेंगे।"

इसी समय बैशाखीके सहारे चलता हुआ एक मनुष्याकार उधरसे जा रहा था। नसीमने उसको ललकार कर पूछा—"कौन है ?"

वह ठहर गया, और थोड़ी देर ठहरकर उसने कहा—"मैं हूँ अब्दुल गनी, साँई। रमईपुर यहाँसे कितनी दूर है ! शायद मैं रास्ता भूल गया हूँ।"

नसीमाने साँईको पहचान कर कहा—"इतने दिन कहाँ रहे साँई ! तुम्हारी लगायी हुई आगसे सारा गाँव जलकर भस्म हो गया है! आज क्या उसकी राख कुरेदने आये हो ?"

साँईने चकित होकर पूछा—"तब रमईपुर यही है ? रहीम काका कहाँ हैं, नसीमा ? यह मैं क्या देख रहा हूँ, सारा गाँव उजड़ गया है ?"

नसीमाने कहा—"हाँ साँई, गाँवका बच्चा बच्चा, सिवाय मेरे और मेरी माँ और तुम्हारे साथी ईदूकी स्त्रीके इसी जमीनमें समा गये,और आराम कर रहे हैं। तुम्हारी लगाई हुई आगको तो राजकुमार और अब्बाने मिलकर बुझा दिया था, मगर आज़ादीकी लड़ाईमें सारा गाँव और सारे घर समा गये। साँई तुम्हारी मसजिदमें अब कोई नमाज़ पढ़नेवाला बाक़ी नहीं बचा।"

अब्दुलगनीके हाथसे बैसाखी छूट गयी और वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। उस पवित्र भूमिसे चिपटकर वह भी सिसकने लगा,उस समय चाँदनीमें दौड़ता हुआ एक दूसरा मनुष्य आया। उसके हाथमें एक छोटी सी लकड़ी थी, जिसको वह पिस्तौलकी भाँति पकड़े हुआ था। वे विक्षिप्त सर भगवान सिंह थे।

उन्होंने उसके पास आकर एक अट्टहास किया, और कहा—"रोओ, रोओ, सब लोग जी भर कर रोओ। यहींपर मैंने अपने परम शत्रुको अपनी गोलीका शिकार बनाकर अपना प्रतिशोध लिया था। जानते हो तुम, वह कौन था ? वह था यू० पी० गवर्नमेन्टके एडवाइज़र हिज़ हाइनेस महाराजाधिराज आफ़ कल्याणपुरका एकलौता पुत्र राज-

कुमार दिवाकर सिंह। उसको मैंने कुत्तोंकी मौत मारा है। हिरण्यकश्यप नपुंसक था, वह अपने पुत्रको मारनेमें सफल नहीं हुआ, किन्तु मैंने एक क्षणमें उसको ही नहीं उसके सारे साथियोंको यमलोक पहुँचा दिया। हः हः हः, रास्ता छोड़ो। रास्ता छोड़ो।"

शारदाने उठकर माधवीसे कहा—"मधु चलो, अपने पिताको घर ले चलो। हमलोग इधर चले आये और सूना पाकर वे भी चले आये हैं। पुत्रके प्रति अब कर्त्तव्य समाप्त हो गया है, अब पतिके प्रति कर्त्तव्य पालन शेष रह गया। बसो, मेरी पुत्रवधू, आओ, तुम भी अपने श्वसुरके प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करो। स्त्री-जातिका जन्म केवल कर्त्तव्य-पालनके लिए हुआ है। कहीं वह बहनके रूपमें, कहीं माताके रूपमें, और कहीं पत्नीके रूपमें पुरुष जातिके प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करती सृष्टिके आदिसे है, और उसके अन्ततक जायगी। उसके एक आँखमें आँसू, और एक आँखमें सुहाग होता है। हास्य और रुदनके साम्यका नाम स्त्री है, स्नेह और करुणाके योगका नाम नारी है।"

वे चारों स्त्रियाँ मिलकर सर भगवान सिंहको पकड़कर धीरे-धीरे घरकी ओर ले जाने लगीं। वे भी निरीह बालककी भाँति बिना किसी आपत्तिके उनके साथ चुपचाप कुछ सोचते हुए जाने लगे।

रमईपुर, उजड़ा हुआ रमईपुर, मौनस्वरसे रो रहा था। नील गगनपर सिसकता हुआ चन्द्रमा उसी समय अपने शोकाश्रु काले बादलोंसे पोंछने लगा।

उन्होंने जाते हुए मंद स्वरमें सुना—कोई कह रहा था,

शहीदोंकी चिताओंपर जुड़ेंगे हर बरस मेले।
वतनपर मरनेवालोंका यही बाक़ी निशाँ होगा!

साँय साँयके साथ समीर भी सिसक सिसककर साख भरने लगा।

"इति"